विश्वासघात

लेखक
श्री गुरुदत्त

भारती साहित्य सदन
नई-देहली

विश्वासघ

लेखक

श्री गुरुदत्त

भारती साहित्य सदन
नई-देहली

प्रकाशक
भारती साहित्य सदन,
३०/६० कनॉट सरकस, नई दिल्ली—१

द्वितीय संस्करण
मूल्य ५॥)

१९५७

मुद्रक :
श्री गोपीनाथ सेठ,
नवीन प्रेस दिल्ली

प्राक्कथन

हावड़ा के पुल पर खड़े होकर पुल के नीचे से बहते गन्दे जल को देख और उसमें अनेक प्रकार तथा आकार के जहाज नौकाओं अथवा बजरों को तरते देख एक विशेष प्रकार का भाव मन में उत्पन्न होता है। मन पूछता है कि जिस पानी में अनेकों नगरों का मल-मूत्र, अनेकों कारखानों का कचरा और नौकाओं के असंख्य यात्रियों का थूक-नाक मिली हुई है, क्या यही पतित-पावनी गंगा का जल है ?

हरिद्वार तथा उससे भी ऊपर गंगोत्तरी में जो शीतल स्वच्छ, मधुर और पावन जल है क्या यह वही है जो इस पुल के नीचे से गधाता हुआ चला जाता है ? दूर पूर्वी किनारे के एक घाट पर अमावस्या के पर्व पर स्नानार्थ आए असंख्य नर-नारी दिखाई देते हैं। दूर-दूर के गाँव तथा नगरों से आए ये लोग इस हुगली के पानी में डुबकी लगाने को व्याकुल प्रतीत होते हैं। यह क्यों ? यह तो वह पतित-पावनी *गंगा नहीं जिसके दर्शन मात्र अथवा नाम-स्मरण से पापी देवता बन* जाते हैं।

कलकत्ता के घाट पर गंगा के स्नान करनेवाले के मुख से 'हर हर गंगे' के "गंगे" क्या अनर्गल है ? इसमें सार पूछने को लालसावाले जिज्ञासु को भक्त के मन में बैठने की आवश्यकता है।

"ओ भक्त ! देखो जल में यह क्या बहता जा रहा है ?"

किसी जहाज से छोड़ी गंदे तेल की धारा थी।

"जय गंगा मैया की।" भक्त के मुख से अनायास निकल गया। उसने प्रश्नकर्ता के मुख की ओर देखते हुए कहा "वह देखो कौन स्नान कर रही है ?"

जिज्ञासु की दृष्टि उस ओर घूम गई। एक कुबड़ी काली, बूढ़ी गले तक पानी में पैठी हुई सूर्य की ओर मुख कर भगवान की प्रार्थना कर रही थी। जिज्ञासु की समझ में कुछ नहीं आया। उसने प्रश्न भरी दृष्टि से भक्त की ओर देखा। भक्त ने पूछा, कैसी है वह भक्तिनी ?

'अति कुरूपा है।'

आँखोंवाले अन्धे ! उसकी आत्मा में बैठ कर देखो। आज निर्धन अपाहज और निस्सहाय लोगों का एक-मात्र आश्रय यह बनी हुई है। सत्य मार्ग की पथिक संसार पथ का मार्ग लाँघकर उस आलोक में लीन होने वाली है जिसमें लीन होने के लिए संसार लालायित रहता है।

परन्तु मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं मिला।

बाहरी रूप रंग देखने वालों को वास्तविक श्रेष्ठता दिखाई नहीं देती। भाई ! संसार में जो कुछ दिखाई देता है, कितना कुरूप है ? परन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता कि सब कुछ सत्ताहीन है। भगवान शिव की जटाओं से सचित जल इस नदी के जल के कण-कण में व्यापक है। उसका तो एक बिन्दुमात्र पूर्ण सागर को पवित्र करने की सामर्थ्य रखता है।"

'यह मन की भावना मात्र है भक्त ! डुबकी लगाकर देखो कि भगवान की जटाओं से निकला जल शरीर को लगता है अथवा उस जहाज से फेंका हुआ कचरा ?

इस भावना में कुछ तत्त्व है क्या ? यह प्रश्न मन में उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। परन्तु संसार में कहीं शुद्ध पवित्रता मिलती भी है ? प्रकृति में प्राय सब वस्तुएँ मिश्रित तथा अन्य वस्तुओं से संयुक्त अवस्था में पाई जाती है और बुद्धिमान पुरुष मल-मलों को निकाल शुद्ध वस्तु उपलब्ध कर लेते है।

भारतीय संस्कृति भी गंगा की पवित्र धारा की भाँति बहुत ही प्राचीन काल से चली आती है। वेदों के काल से चली हुई ब्राह्मण

ग्रन्थ उपनिषद् दर्शन शास्त्र अथवा रामायण महाभारत इत्यादि कालों में समृद्ध होता हुई और फिर बौद्ध वेदान्त वष्णव इत्यादि मतों से विख्यात होती हुई यहतो चली आई है। पीछे इस सभ्यता में कचरा और कूडा करकट भी सम्मिलित हुआ है और अब हुगली नदी की भाँति एक अति विस्तृत मिश्रित और ऊपर से मला प्रवाह बन गई है।

इस प्रवाह में अभी भी वह शुद्ध निर्मल और पावन ज्योति विद्यमान है। आँखों के पीछे मस्तिष्क न रखनवाले के लिए वह गंगा पानी है। परन्तु दिव्य-दृष्टि रखनवाले जानते हैं कि इसमें अभी भी मोती माणिक्य भरे पड़े हैं। भारतीय सभ्यता गंगा की भाँति हुगली का पानी नहीं प्रत्युत वह पवित्र जल है जो त्रिपुरारि की जटाओं से निकलता है।

वास्तविक सभ्यता आज हिन्दुस्तानी तहज़ीब बनन जा रही है। वह हुगली का मटियाला गंधाता हुआ जल बनन जा रहा है। उसमें स्नान करन का भय यह होनेवाला है कि विदेशी सभ्यता का कचरा स्नान करने वाले पर लिपटने वाला है। इस पर भी देखनवाले इसको पूर्ण रूप में परिवर्तित हो गया समझते हैं। हाँ समझने वाले इस हुगली के पानी में गंगोत्तरी के जल को व्यापक मानते हैं।

कुछ ऐसी बातें हैं जो इस सभ्यता की रीढ़ की हड्डी हैं। पुनर्जन्म कर्म फल विद्वानों का मान विचार स्वातन्त्र्य व्यक्ति से समाज की श्रेष्ठता चरित्र महिमा इत्यादि इस सभ्यता के अमिट अंग हैं। ये सब के सब वदिक-काल से आज तक अक्षुण्ण चले आते हैं। भारतीय सभ्यता की ये वस्तुएँ सार-रूप हैं। जब जब भारतीयों ने इनको छोड़ा है और विदेशी मिले हुए कचरे को भारतीय सभ्यता माना है तब तब ही देश तथा जाति आर्थिक मानसिक और आत्मिक पतन की ओर गई है।

आज अग्रेज़ियत और मुसलमानियत देश में इसका पवित्र विचार

धारा को दूषित कर रही हैं। यह सम्भव है कि इन दोनों का रूप दूसरे देशों में यहाँ से भिन्न हो परन्तु इससे क्या होता है ? वास्तविक बात तो उस रूप से है जो यहाँ प्राप्य है। किसी अन्य स्थान किसी अन्य काल और परिस्थितियों में ये सभ्यताएं कुछ अन्य रूप रखती हों तो रखें हमारा वास्ता तो यहाँ की बातों से है।

जब कचरा अधिक होने लगता है तो मनुष्य पवित्रता के स्रोत पर पहुँच डुबकी लगाने की सोचता है। यदि वर्तमान सभ्यता वेदों की पवित्र सभ्यता का गदला रूप है और गदलापन इतना अधिक है कि असल को खोज निकालना कठिन हो रहा हो तो इसके स्रोत वेदों में डुबकी लगाने की आवश्यकता है।

आज एक कम्पोज़िट सिविलिज़ेशन की स्थापना का यत्न चल रहा है। क्या यह हावड़ा के गंदे जल की भाँति नहीं ? कदाचित् यह यत्न सामयिक राजनीतिक उलझन को सुलझाने के लिए हो। सामयिक सुविधाओं के लिए गंगोत्री से साफ जल में हावड़ा अथवा अन्य तट वर्ती नगरों का मैला मिलाकर जनता के सामने उपस्थित करने के समान यह नहीं है क्या ?

गंगा की महिमा यमुना घाघरा इत्यादि उसमें मिलनेवाली नदियों के कारण नहीं है। उसमें मिला हुआ कीचड़ अथवा मल उसकी शोभा को बढ़ाता नहीं है। उसकी महिमा उसके स्रोत के निर्मल जल के कारण है। बुद्धिमान मल को पृथक कर सार को प्राप्त कर भोग करता है। यही परम साधना है।

यह उपन्यास है। ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख कहानी का वातावरण बनाने के लिए किया गया है। पात्रों का नाम स्थान और घटनाओं की तिथियाँ सब की सब कल्पित हैं। इनका वास्तविक बातों से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

—गुरुदत्त

राष्ट्र पुरुष

१

"मैं फिरोजपुर जा रहा था। दूसरे दर्जे का टिकट ले, प्लेटफॉर्म नम्बर एक पर पहुँचा तो कलकत्ता मेल धक-धक करती हुई आ खड़ी हुई। फिरोजपुर के लिए गाड़ी प्लेटफॉर्म नम्बर सात पर खड़ी थी और वहाँ जाने के लिए एक नम्बर के पूरे प्लेटफॉर्म को लाँघना पड़ता था।

"कलकत्ता से आ रहे यात्रियों के स्वागत के लिए, आये हुए उनके मित्रों और सम्बन्धियों की भारी भीड़ थी। इससे प्लेटफॉर्म से लाँघना कठिन हो रहा था। जब तक मैं एक नम्बर के प्लेटफॉर्म को लाँघकर सात नम्बर पर जाता, कलकत्ता की गाड़ी के मुसाफिर, गाड़ी से उतर, कुलियों से सामान उठवा स्टेशन से बाहर जाने लगे थे। उस समय मेरी दृष्टि एक मुसाफिर पर पड़ी।

"मुसाफिर सिर से नंगा, सफेद कुर्ता और धोती पहिने था। धोती का एक छोर कंधे पर डाले और पाँव में मोटे चमड़े की चप्पल पहिने, वह भीड़ से एक ओर हो, अनिश्चित मन से कुछ सोच रहा प्रतीत होता था।

"मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि मैंने उसको कहीं देखा है। मैं उसके समीप से निकल गया। समीप से निकलते समय मैंने उसको एक गम्भीर साँस लेते देखा। मेरा मन अपनी पूर्व स्मृतियों को टटोलने लगा। मैं याद कर रहा था कि मैंने उसको कहाँ देखा है। इतने में मैं कुछ दूर निकल गया। इस समय मुझको कुछ याद हो आया परन्तु मैं सोचता था कि यह कैसे हो सकता है? उसको तो अण्डमन में होना चाहिए था।

यह सोच में आगे बढ़ना चाहता था, परन्तु मेरे पाँव रुक गए। मन के पट पर चित्रित चित्र ने कहा, 'यही तो हैं।'

"मैं लौट पड़ा। देखा कि वे वहीं पर खड़े प्लैटफॉर्म पर लटक रही घड़ी को देख रहे थे। जब मैं उनके पास आकर खड़ा हुआ, तब भी वे सिर उठाए घड़ी की ओर ही देख रहे थे। इतनी बड़ी घड़ी में समय देखने के लिए इतनी देरी नहीं लगनी चाहिए थी। इससे मैं समझ गया कि वे कुछ सोच रहे हैं।

"मुझे समीप खड़ा देख उनका ध्यान उखड़ा और वे मेरी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगे। मैंने अब समीप से देखा तो मुझको विश्वास हो गया। मेरे मुख से निकल गया, 'प्रोफेसर साहब!'

"संतोष की एक क्षीण रेखा उनके मुख पर दिखाई दी, परन्तु वह शीघ्र ही विलीन हो गई। उन्होंने मुझसे केवल यह कहा, 'मैंने पहिचाना नहीं।'

"मैंने मन में समझा कि मेरे पहिचानने में भूल नहीं हुई। मैंने झुककर उनके चरण-स्पर्श किये। उन्होंने मुझको बाहों से पकड़कर उठा लिया और गले लगा लिया।

'आप यहाँ कैसे!' कहते-कहते मेरा गला रुँध गया और आँखें भीग गईं। उन्होंने बाहर निकलने के दरवाजे की ओर चलते हुए कहा, 'मैं छूट गया हूँ। यहाँ तक तो सरकारी टिकट से पहुँच गया हूँ। अब सोच रहा था कि किधर जाऊँ। न जाने परिचितों में कौन-कौन कहाँ-कहाँ है?'

'मैं अपना फिरोज़पुर जाना भूल गया और उनके साथ ही लौट पड़ा। मैंने कहा, 'आइये! मेरे साथ आइये।'

'कहाँ?'

"मैंने उत्तर दिया, 'मेरे साथ मेरे घर, मोहनलाल रोड पर। मैं आपका विद्यार्थी हूँ और आपके विचारों का प्रशंसक हूँ। आप जब अमेरिका से फार्मास्यूटिकल शिक्षा लेकर आए थे, तो आपके पास कभी कभी भगत करने आया करता था।'

"हम दोनों रेल के स्टेशन से बाहर आ गए। मैंने देखा कि प्रोफेसर साहब का बिस्तर इत्यादि कुछ नहीं। मैंने पूछा, 'आपका सामान ?'

'भगवान् का धन्यवाद है कि जान वापस आ गई है।'

"यह बात सत्य ही थी। प्रोफेसर साहब को फाँसी की आज्ञा हो चुकी थी। फाँसी से आधा घण्टा पूर्व प्राणदण्ड के स्थान, आजन्म कैद का दण्ड उन्हें मिला था और फाँसी की टिकटिकी पर लटकाये जाने के स्थान वे अण्डमन भेज दिये गये थे। ताँगे में बैठते हुए उन्होंने कहा, 'यह सब कुछ पुनः देखने की आशा नहीं थी।'

"ये भाई परमानन्द जी थे। मैंने अपनी राष्ट्रीयता की दीक्षा सब प्रथम उनसे ही प्राप्त की थी। आर्य समाज मन्दिर में व्याख्यान देते हुए आपने 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' का पाठ पढ़ाया था।

"छः वर्ष तक अण्डेमन में रहने के कारण, उनका मन हिल गया था। अतएव भाई जी का अपनी स्त्री से पुनर्मिलन अति हृदय-विदारक घटना थी। जब से वे कैद हुए थे, उनकी स्त्री आर्य कन्या पाठशाला में बीस रुपये महीना पर पढ़ाने का काम कर, अपना तथा अपने बच्चों का पालन कर रही थी। उसे सूचना मिली तो वह उनको लेने आई। यह दम्पति मिलन दुःख तथा उल्लास का एक विचित्र मिश्रण था।

"समय बदल चुका था और भाई जी की स्त्री के मन में, एक क्षीण किरण की भाँति अपने पति से पुनः मिलन की आशा बनी हुई थी परन्तु इस मिलन के पूर्व जो अन्तिम समाचार उसे मिला था, वह भाई जी के आमरण अनशन करने का था। इससे उनको इस प्रकार सामने खड़ा देख, उसके मन में उठते भावों का उल्लेख करना असम्भव है। यह केवल अनुभव का विषय ही है।

"भाई जी सन् १९१५ में जेल भेजे गए थे और अब १९२१ था। देश की अवस्था में भारी परिवर्तन आ चुका था। महात्मा गांधी देश के मनोनीत नेता बन चुके थे।

"खिलाफत आन्दोलन चला और बन्द हो गया। इस आन्दोलन की

'हिंदुस्तानी कौम' रखा था। साठ वर्ष के निरन्तर प्रचार और घोषणाओं के पश्चात् भी मुसलमानों ने यह निर्विवाद सत्य प्रकट कर दिया है कि वे हिंदुओं तथा अन्य मत के लोगों से एक पृथक् जाति हैं। उन्होंने मुस्लिम लीग को, जो मुसलमानों को एक पृथक् जाति मानती है और उनके लिये एक पृथक् देश माँग रही है, ६६ प्रतिशत मत दिये हैं।"

"परन्तु पिताजी!" चेतनानन्द का कहना था, "हिन्दुओं ने तो बहुमत से कांग्रेस को अपनाया है।"

"ठीक! परन्तु इस बात पर कि तुम अंग्रेज़ों को भारत से निकाल देने का काम कर रहे हो और तुम लोग अखण्ड भारत के लिये यत्न करोगे। यह दोनों बातें हिंदुओं को प्रिय हैं। इससे हिंदुओं ने तुम्हें वोट दिये हैं। यह दोनों बातें मुसलमान पसन्द नहीं करते, जिससे उन्होंने तुमको वोट नहीं दिये। अब कांग्रेस के लिये केवल दो मार्ग रह गये हैं। या तो निर्वाचन पर दिये अपने वचन पर दृढ़ रहें और पूर्ण मुसलमान जाति का विरोध करें तथा यदि आवश्यकता पड़े तो उन पर शासन करें। या एक दूसरा मार्ग है कि हिंदुओं से किया वचन भङ्ग करें और पाकिस्तान बनने की स्वीकृति दें। अपने को हिन्दू-मुसलमान, दोनों का प्रतिनिधि तो अब वे कह नहीं सकते।"

चेतनानन्द को अपने पिता के ये वाक्य रुचिकर प्रतीत नहीं हो रहे थे। उसने उन वाक्यों को कड़ुवा घूँटकर पी लिया और कहा, "आप निश्चिन्त रहिये। इन दोनों में से एक भी बात नहीं होगी।"

"अच्छी बात है। यद्यपि मुझे तुम्हारे कहने का विश्वास नहीं, तो भी धीरज से प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त और कोई उपाय भी तो नहीं है। देखो, मैं तुम्हें अपने गुरु का परिचय देता हूँ।"

इतना कह जीवनलाल ने अपने पुत्र को अपनी आपबीती सुना दी, जो प्रथम अध्याय में लिखी जा चुकी है।

"आप भाई परमानन्द जी को अपना गुरु मानते हैं?"

कहा था कि इसकी नाति देश को रसातल में पहुँचा देगी।"

"यह सब भ्रम है पिता जी।"

"भ्रम नहीं," जीवनलाल ने जोश में आकर कहा, 'मैं तुम्हें एक अपने अनुभव की बात बताता हूँ। महात्मा गांधी ने कोहाट में हिन्दू मुसलमानों के झगड़े के पश्चात् आत्मशुद्धि के लिए तीस दिन का व्रत रखा था। इस झगड़े में मुसलमानों ने हिन्दुओं की पूर्ण जनता को कोहाट से बाहर निकाल दिया था अथवा मार डाला था। इससे महात्माजी को भारी दुःख हुआ। उन्होंने अपने विश्वस्त लोगों को कोहाट भेजकर वहाँ का विवरण मँगवाया। ऐसा कहा जाता है कि इस जाँच के पश्चात् महात्माजी को विश्वास हो गया था कि इस झगड़े में पूर्ण दोष मुसलमानों का था। परन्तु जब वक्तव्य देने का समय आया तो महात्माजी ने वहाँ के मुसलमानों को दोष देने के स्थान पंजाब के सिक्खों और आर्यसमाजियों की निन्दा की थी।

"मालाबार में भी जब हिन्दू मुसलमानों का झगड़ा हुआ था, तो दोष मुसलमानों का था और महात्माजी ने मालाबार के मोपलों को दण्ड से बचाने का यत्न किया था।

"ऐसी अवस्था में, मैं भाईजी के कहने को भ्रम नहीं मानता। वह सत्य ही प्रतीत होता है।"

चेतनानन्द और उसके पिता के विचारों में आकाश-पाताल का अन्तर था। चेतनानन्द कई वर्ष से कांग्रेस का कार्य कर रहा था। १९४२ के आन्दोलन में बन्दी बनाकर दो वर्ष तक जेल में रखा जा चुका था।

पिता पुत्र का संवाद तब बन्द हुआ, जब बगल के कमरे से किसी ने आवाज़ दी, "मम्मी! देखो कौन आई हैं।" पश्चात् दो लड़कियों के हँसने का शब्द हुआ।

चेतनानन्द, हँसी की आवाज़ पहिचान, उठ खड़ा हुआ और पिताजी से बोला, "मैं ज़रा देखूँ कौन आया है।"

जीवनलाल की हँसी निकल गई और उसने उर्दू का 'मिलाप' उठा

'हिन्दुस्तानी कौम' रखा था। साठ वर्ष के निरन्तर प्रचार और योजनाओं के पश्चात् भी मुसलमानों ने यह निर्विवाद सत्य प्रकट कर दिया है कि वे हिन्दुओं तथा अन्य मत के लोगों से एक पृथक् जाति हैं। उन्होंने मुस्लिम लीग को, जो मुसलमानों को एक पृथक् जाति मानती है और उनके लिये एक पृथक् देश माँग रही है, ६६ प्रतिशत मत दिये हैं।"

"परन्तु पिताजी!" चेतनानन्द का कहना था, "हिन्दुओं ने तो सबमत से कांग्रेस को अपनाया है।"

"ठीक! परन्तु इस शर्त पर कि तुम अँग्रेज़ों को भारत से निकाल देने का काम कर रहे हो और तुम लोग अखण्ड भारत के लिये यत्न करोगे। यह दोनों बातें हिन्दुओं को प्रिय हैं। इससे हिन्दुओं ने तुम्हें वोट दिये हैं। यह दोनों बातें मुसलमान पसन्द नहीं करते, जिससे उन्होंने तुमको वोट नहीं दिये। अब कांग्रेस के लिये केवल दो मार्ग रह गये हैं। या तो निर्वाचन पर दिये अपने वचन पर दृढ़ रहें और पूर्ण मुसलमान जाति का विरोध करें तथा यदि आवश्यकता पड़े तो उन पर शासन करें। या एक दूसरा मार्ग है कि हिन्दुओं से दिया वचन भङ्ग करें और पाकिस्तान बनने की स्वीकृति दें। अपने को हिन्दू-मुसलमान, दोनों का प्रतिनिधि तो अब ये कह नहीं सकते।"

चेतनानन्द को अपने पिता के ये वाक्य रुचिकर प्रतीत नहीं हो रहे थे। उसने उन वाक्यों को कड़ुवा घूँटकर पी लिया और कहा, "आप निश्चिन्त रहिये। इन दोनों में से एक भी बात नहीं होगी।"

"अच्छी बात है। यद्यपि मुझे तुम्हारे कहने का विश्वास नहीं, तो भी धीरज से प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त और कोई उपाय भी तो नहीं है। देखो, मैं तुम्हें अपने गुरु का परिचय देता हूँ।"

इतना कह जीवनलाल ने अपने पुत्र को अपनी आपबीती सुना दी, जो प्रथम अध्याय में लिखी जा चुकी है।

"आप भाई परमानन्द जी को अपना गुरु मानते हैं!"

पढ़ना आरम्भ कर दिया। चेतनानन्द बाहर निकल गया।

३

चेतनानन्द पिता के कमरे से निकल दूसरे कमरे में, जहाँ से लड़कियों के हँसने की आवाज़ आई थी, चला गया। एक लड़की ने उसे देख कहा, "भैया! देखो, किसे पकड़ लाई हूँ।"

दूसरी लड़की ने सोफ़ा पर से उठ, हाथ जोड़ उसे नमस्कार की। चेतनानन्द ने हाथ जोड़ कहा, "ओह पार्वती! सुनाओ, कैसे आज मन में दया आ गई?" फिर उसने दूसरी लड़की को, जिसने उसे भैया कह कर पुकारा था, कहा, "रेखा! कहाँ पा गई हो तुम इसे?"

रेखा और पार्वती सोफ़ा पर बैठ गईं और चेतनानन्द उसी सोफ़ा पर रेखा के दूसरी ओर बैठ गया। रेखा ने एक बाँह पार्वती के गले में और एक चेतनानन्द के गले में डालकर कहा, "भैया! मैं तुम से नाराज़ हूँ। तुमने यह इंग्लैण्ड क्या लखा सब संसार की ही सुद्ध-बुद्ध बिसार दी। मैं आज इनके घर गई और इनसे कहा कि मिलने नहीं आतीं, तो ये कहने लगीं कि मेरे भैया भी इनसे मिलने कब गये हैं। मैं समझ गई और जबरदस्ती इनको पकड़ लाई हूँ। लो अब दोनों को मिला देती हूँ।"

इतना कह उसने दोनों की गर्दनों को, जिनके गिर्द उसने बाँह डाली हुई थीं, मिलाने का यत्न किया। इस समय रेखा की माँ आ गई और उनको इस प्रकार रेखा की बाँहों से छूटने का यत्न करते देख हँस पड़ी। माँ ने हँसते हुए कहा, "क्या कर रही हो, रेखा?"

"दोनों में मनमुटाव मिटा रही हूँ।" रेखा ने बाँहें निकाल, दोनों को मुक्त करते हुए कहा, "माँ! अब तुम आ गई हो। लो अपने पुत्र और पुत्र-वधू को..."

पार्वती ने रेखा के मुख पर हाथ रख, उसको आगे कहने से रोक दिया। रेखा की माँ हँस पड़ी और पार्वती का मुख लज्जा से लाल हो

दोनों हाथों की तलियों में दबाते हुए पूछा ।

"यह तो आपके अधीन है ।"

"मैं तो इस अवसर की उत्कण्ठा से प्रतीक्षा कर रहा हूँ ।"

"इसी कारण मुझे यहाँ आकर पूछना पड़ा है न ! उत्कण्ठा का विचित्र लक्षण है यह !"

चेतनानन्द ने लज्जा का भाव बना कहा, "यह बात नहीं प्रिये ! कहो तो मैं अभी अपने विवाह की तिथि निश्चित कर लूँ !"

"पहले अपने और मेरे माता पिता से तो पूछ लीजिए । तिथि तो निश्चय हो जायेगी ।"

"क्यों ? तुम्हारी क्या आयु है पार्वती ?"

इस प्रश्न से पार्वती का मुख लज्जा से लाल हो गया । वह इसका प्रयोजन नहीं समझी । इस पर भी चेतनानन्द की उत्तर की प्रतीक्षा करते देख बोली "आज तक इतना कुछ हो जाने पर, आपको आयु पूछने की क्या सूझी है ? मैं समझती हूँ कि आपसे कम उमर की ही हूँ ।"

चेतनानन्द को अपनी भूल का ज्ञान हुआ, तो क्षमा माँगने लगा, "प्रिये ! मैं तुम्हें आयु में बूढ़ी समझ नहीं पूछ रहा । मेरा अभिप्राय यह है कि तुम सज्ञान हो गई हो । कानून से भी हम अपने विषय में स्वयं निर्णय कर सकते हैं । अतएव तिथि का निर्णय कर अपने माता पिता को सूचित कर देना पर्याप्त होगा ।"

पार्वती इस सफाई से सन्तुष्ट तो हो गई, परन्तु इस योजना पर अपना विचार स्थिर नहीं कर सकी । वह बोली, "बात तो आप ठीक कहते हैं, परन्तु मुझसे यह कहा नहीं जा सकेगा । मुझे तो लज्जा लगती है । पिताजी के सम्मुख तो मुझसे यह बात निकल ही नहीं सकेगी ।"

"बहुत कठोर हैं वे ?"

"नहीं ! मुझमें लज्जा अधिक है ।"

"तो उनसे भी मैं ही जाकर कह दूँगा । तुम चुपचाप मेरे साथ खड़ी रहना ।"

दोनों परिवारों के युवा वर्ग में घनिष्ठता पर्याप्त मात्रा में थी।

रेवा की माँ का अपने पति जीवनलाल से विचार सामञ्जस्य नहीं था। जीवनलाल सरल और शुद्ध विचारों का आदमी था। उसके मस्तिष्क में देश, राष्ट्र, वेद, शास्त्र, आचार व्यवहार की भारी महिमा थी। जीवनलाल की स्त्री सुभद्रा के मस्तिष्क में साड़ी, जम्पर, भूषण, शृङ्गार, खाना-पीना और सज धज की महिमा भरी हुई थी।

सुभद्रा जीवनलाल की दूसरी स्त्री थी। जीवनलाल के व्यापार में व्यस्त रहने के कारण, चेतनानन्द और रेवा माँ के प्रभाव में पले थे। चेतनानन्द कांग्रेस के भँवर में पड़ राजनीतिक क्षेत्र में जा पहुँचा था। मोटे खद्दर के कपड़े, सिर पर सफेद खद्दर की टोपी और पाँव में चप्पल पहनता था। वह शरीर में हृष्ट पुष्ट और अच्छा खासा सुन्दर युवक था। रेवा इसके विपरीत थी। स्वस्थ परन्तु छरहरे शरीर की, अठारह-उन्नीस वर्ष की युवती थी। उन्टी साड़ी, सिर के बाल बहुत घने, परन्तु कटे हुए, जो केवल कन्धों तक ही पहुँचते थे, बारीक रेशम की टाइट जैकेट, जो साड़ी से ऊपर ही रह जाती थी, पहनती थी। होठों और गालों पर हलकी सुर्खी और पाउडर का हलका सा छींटा लगाती थी। प्राय हाथों और पाँवों के नाखूनों पर गहरा लाल चमकदार रंग लगा रहता था।

जैसे भाई-बहिन के रहन-सहन और पहरावे में अन्तर था, वैसे ही दोनों के स्वभाव में भी अन्तर था। भाई गम्भीर तथा दृढ़ विचार परन्तु मोटी बुद्धि रखता था बहुत चचल, चपल और अत्यन्त तीव्र बुद्धि वाली थी। चलते फिरते अथवा बैठे-बैठे बातें करते, वह निश्चल नहीं रह सकती थी। उसका कोई-न-कोई अग चलता ही रहता था।

रेवा ने बी० ए० पास तो पार्वती के साथ ही कर लिया था, परन्तु यह अभी तक किसी कार्य में नहीं लगी थी। उसका काम 'यंग-विमेन्स क्रिश्चियन ऐसोसिएशन' की क्लब में जाना, खेलना कूदना या सिनेमा देखना था। पार्वती के छोटे भाई महेश से उसका परिचय हुआ और पश्चात् प्रेम हो गया। दोनों प्राय मिलते रहते थे।

"तो मैं नहीं जानती।"

"यह रेवा के साथ उसका घूमना ठीक नहीं है।"

पार्वती चुप रही, परन्तु उसका हृदय धक धक करने लगा। आज पहली बार उसके पिता ने रेवा के विषय में यह कहा था। इससे उसे डर लग गया था कि कहीं चेतनानन्द के विषय में भी कुछ कह न दें।

पार्वती की माँ बहुत पढ़ी लिखी स्त्री नहीं थी। इस पर भी घर के काम-काज में अति सुघड़ थी। उसने बिना किसी नौकर की सहायता के, घर की देख-रेख भली भाँति कर रखी थी। उसके दोनों बच्चे, पार्वती और महेश, उसकी भाँति पण्डितजी से डरते थे और परिवार की मान मर्यादा का ध्यान रखते थे। पण्डितजी की स्त्री और बच्चे, सब, कभी भी पण्डितजी के कहने का उल्लंघन नहीं कर सकते थे।

चेतनानन्द के, अपने वचनानुसार, न आने से पार्वती के मन में क्षोभ हो रहा था। कुछ महीनों से चेतनानन्द उसकी उपेक्षा करता प्रतीत होता था, परन्तु अभी तक तो यह उपेक्षा उसके निर्वाचन-कार्य में संलग्न होने के कारण मानी जा रही थी। अब निर्वाचन समाप्त हो चुके थे और निर्वाचन के परिणाम भी घोषित हो चुके थे। इससे पार्वती, चेतनानन्द के न आने पर, क्षुब्ध हो रही थी।

रात, पार्वती चौका-बासन करती थी। आज उसका मन इस कार्य में नहीं लगा। इससे उसने माँ से कहा, "माँ! मेरा सिर दर्द करने लगा है। क्या मैं जा, सो रहूँ?"

उसकी माँ ने आँखें उठा पार्वती के मुख पर देखा। वह कुछ फीका दिखाई दिया। इससे उसने कहा, "थोड़ा चूर्ण खा लो। शायद वायु बन रही है।"

पार्वती 'अच्छा' कह ऊपर की छत पर अपने कमरे में जा लेट रही।

चेतनानन्द आया तो पार्वती की माँ चौका-बासन कर चुकी थी। दरवाजे का खटखटाना सुन, बाहर आ दरवाज़ा खोल, चेतनानन्द को खड़ा देख बोली, "आइये! महेश तो घर है नहीं और पारो के सिर में

"तो मैं नहीं जानती।"

"यह रेवा के साथ उसका घूमना ठीक नहीं है।"

पार्वती चुप रही, परन्तु उसका हृदय धक धक करने लगा। आज
ली बार उसके पिता ने रेवा के विषय में यह कहा था। इससे उसे
र लग गया था कि कहीं चेतनानन्द के विषय में भी कुछ कह न दें।

पार्वती की माँ बहुत पढ़ी लिखी स्त्री नहीं थी। इस पर भी घर के
काम काज में अति सुघड़ थी। उसने बिना किसी नौकर की सहायता के,
घर की देखरेख भली भाँति कर रखी थी। उसके दोनों बच्चे, पार्वती
और महेश, उसकी भाँति पण्डितजी से डरते थे और परिवार की मान
मर्यादा का ध्यान रखते थे। पण्डितजी की स्त्री और बच्चे, सब, कभी भी
पण्डितजी के कहने का उल्लंघन नहीं कर सकते थे।

चेतनानन्द के, अपने वचनानुसार, न आने से पार्वती के मन में
क्षोभ हो रहा था। कुछ महीनों से चेतनानन्द उसकी उपेक्षा करत
प्रतीत होता था, परन्तु अभी तक तो यह उपेक्षा उसके निर्वाचन-का
में संलग्न होने के कारण मानी जा रही थी। अब निर्वाचन समाप्त
चुके थे और निर्वाचन के परिणाम भी घोषित हो चुके थे। इससे पार्व
चेतनानन्द के न आने पर, क्षुब्ध हो रही थी।

रात, पार्वती चौका-बासन करती थी। आज उसका मन इस काय
में नहीं लगा। इससे उसने माँ से कहा, "माँ! मेरा सिर दर्द करने लगा
है। क्या मैं जा, सो रहूँ?"

उसकी माँ ने आँखें उठा पार्वती के मुख पर देखा। वह कुछ फीका
दिखाई दिया। इससे उसने कहा, "थोड़ा चूर्ण खा लो। शायद वायु
बन रही है।"

पार्वती 'अच्छा' कह ऊपर की छत पर अपने कमरे में जा लेट रही।

चेतनानन्द आया तो पार्वती की माँ चौका-बासन कर चुकी थी।
दरवाजे का खटखटाना सुन, बाहर आ दरवाजा खोल, चेतनानन्द को
खड़ा देख बोली, "आइये! महेश तो घर है नहीं और पार्वती के सिर में

"तो मैं नहीं जानती।"

"यह रेखा के साथ उसका घूमना ठीक नहीं है।"

पार्वती चुप रही, परन्तु उसका हृदय धक धक करने लगा। आज पहली बार उसके पिता ने रेखा के विषय में यह कहा था। इससे उसे डर लग गया था कि कहीं चेतनानन्द के विषय में भी कुछ कह न दें।

पार्वती की माँ बहुत पढ़ी लिखी स्त्री नहीं थी। इस पर भी घर के काम काज में अति सुघड़ थी। उसने बिना किसी नौकर की सहायता के, घर की देख-रेख भली भाँति कर रखी थी। उसके दोनों बच्चे, पार्वती और महेश, उसकी भाँति पण्डितजी से डरते थे और परिवार की मान मर्यादा का ध्यान रखते थे। पण्डितजी की स्त्री और बच्चे, सब, कभी भी पण्डितजी के कहने का उल्लंघन नहीं कर सकते थे।

चेतनानन्द के, अपने वचनानुसार, न आने से पार्वती के मन में क्षोभ हो रहा था। कुछ महीनों से चेतनानन्द उसकी उपेक्षा करता प्रतीत होता था, परन्तु अभी तक तो यह उपेक्षा उसके निर्वाचन-कार्य में संलग्न होने के कारण मानी जा रही थी। अब निर्वाचन समाप्त हो चुके थे और निर्वाचन के परिणाम भी घोषित हो चुके थे। इससे पार्वती, चेतनानन्द के न आने पर, क्षुब्ध हो रही थी।

रात, पार्वती चौका-बासन करती थी। आज उसका मन इस कार्य में नहीं लगा। इससे उसने माँ से कहा, "माँ! मेरा सिर दर्द करने लगा है। क्या मैं जा, सो रहूँ ?'

उसकी माँ ने आँखें उठा पार्वती के मुख पर देखा। वह कुछ फीका दिखाई दिया। इससे उसने कहा, "थोड़ा चूर्ण खा लो। शायद वायु बन रही है।"

पार्वती 'अच्छा' कह ऊपर की छत पर अपने कमरे में जा लेट रही।

चेतनानन्द आया तो पार्वती की माँ चौका बासन कर चुकी थी। दरवाजे का खटखटाना सुन, बाहर आ दरवाजा खोल, चेतनानन्द को खड़ा देख बोली, "आइये! महेश तो घर है नहीं और पारो के सिर में

महेश को देख कहा, "देखो, पिताजी के आने से पहिले भोजन कर लो।"

"माँ! मैं तो खा आया हूँ।"

"कहाँ से?"

"होटल में खा लिया है।"

माँ चुपचाप मुख देखती रह गई। वह रेवा के सम्मुख अधिक कहना नहीं चाहती थी। इस समय पण्डितजी घूमकर लौट आये। सबको बैठक में एकत्रित देख पूछने लगे, "क्या बात है?"

"कुछ नहीं।" पार्वती की माँ ने कहा, "महेश इत्यादि आये तो दरवाजा खोलने चली आई थी।"

पण्डितजी ने महेश आदि में चेतनानन्द को भी समझ लिया। इससे चेतनानन्द से पूछने लगे, "किधर गये थे आप लोग?"

प्रश्न चेतनानन्द से पूछा गया था, इसस महेश ने उत्तर न दे चुप रहना ठीक समझा। चेतनानन्द ने बात बदलकर कहा, "मुझे आपसे और माता जी से कुछ काम है। मैं आना तो जल्दी चाहता था, परन्तु कांग्रेस पार्टी की मीटिंग में देरी हो गई।"

"हाँ, क्या काम है?" श्रीधर ने गम्भीर हो पूछा।

"पृथक में बात करना चाहता हूँ।"

इससे पण्डितजी ने सतर्क हो चेतनानन्द की ओर देखा। फिर कुछ सोचकर कहा, "तो मेरे स्वाध्याय के कमरे में आ जाओ।"

चेतनानन्द ने पार्वती की ओर देखा और उठकर पण्डितजी के साथ चलने को तैयार हो गया। पार्वती भी उठ खड़ी हुई। रेवा ने इस समय सबको गम्भीर हुआ देख कहा, "भैया! मैं जाती हूँ। मेरी मोटर मेरे पास है।" और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए उसने हाथ उठा सबको 'बाई बाइ' कहा और बैठक स बाहर निकल गई।

पण्डितजी ने चेतनानन्द की ओर देख कहा, "इधर आ जाओ।"

४

चेतनानन्द ने पार्वती की माँ को भी बुला लिया। नन्दू अपने कमरे में चला गया। पण्डित जी अपने स्वाध्याय करने के कमरे में पहुँच टेलीफोन पर बैठ गये। पार्वती की माँ उनके समीप बैठ गई। पार्वती और चेतनानन्द टेलीफोन के समीप रखी कुर्सियों पर बैठ गये। पण्डित जी दत्तचित्त हो चेतनानन्द की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगे।

चेतनानन्द ने अपने मन की बात कहनी आरम्भ कर दी, "मैं तीन वर्ष से पार्वती देवी को जानता हूँ और अब तक हम कई बार मिल चुके हैं। हमने इनसे परस्पर विचार-विनिमय कर विवाह करने का निश्चय कर लिया है। अगले रविवार सायं चार बजे विवाह करने का समय निश्चित हुआ है।"

पण्डित जी ने सुना और माथे पर त्योरी चढ़ा लीं। चेतनानन्द चुपचाप अपने कथन का उत्तर सुनने की प्रतीक्षा करने लगा। पार्वती का मुख सूख गया था और वह भूमि की ओर देख रही थी। पार्वती की माँ का मुख विस्मय में खुला रह गया।

सबसे पहिले धीरज [illegible] हुआ। उसने अपनी डायरी उठाई और उसके पन्ने उलट, रविवार का पन्ना निकाला। अपना 'फाउन्टेन पेन' उठा, खोल, पन्ने पर लिख लिया। लिखते लिखते बोलता गया, 'आज चार बजे सायं, श्री चेतनानन्द पार्वती देवी से विवाह करेंगे।'

इतना लिख कलम और डायरी को बन्द कर, अपने-अपने स्थान पर रख, पण्डित जी ने कहा, 'सूचना के लिए अति धन्यवाद है चेतनानन्द। अब तुम जा सकते हो।'

चेतनानन्द इस व्यवहार के लिए तैयार नहीं था। वह तो कल्पना था कि या तो पण्डित जी उनके विवाह के निश्चय पर आपत्ति उठायेंगे अथवा विवाह-सम्बन्धी प्रबन्ध पर बातचीत करेंगे। दोनों में से कोई बात नहीं हुई। पण्डित जी ने इसे डायरी पर लिखा, जैसे किसी साधारण परिचित के घर विवाह हो। चेतनानन्द चाहता था कि कुछ और कहे,

महेश को देख कहा, "देखो, पिताजी के आने से पहिले भोजन कर लो।"

"माँ! मैं तो खा आया हूँ।"

"कहाँ से?"

"होटल में खा लिया है।"

माँ चुपचाप मुख देखती रह गई। वह रेवा के सम्मुख अधिक कहना नहीं चाहती थी। इस समय पण्डितजी घूमकर लौट आये। सबको बैठक में एकत्रित देख पूछने लगे, "क्या बात है?"

"कुछ नहीं।" पार्वती की माँ ने कहा, 'महेश इत्यादि आये तो दरवाज़ा खोलने चली आई थी।"

पण्डितजी ने महेश आदि में चेतनानन्द को भी समझ लिया। इससे चेतनानन्द से पूछने लगे, "किधर गये थे आप लोग?'

प्रश्न चेतनानन्द से पूछा गया था, इससे महेश ने उत्तर न दे चुप रहना ठीक समझा। चेतनानन्द ने बात बदलकर कहा, "मुझे आपसे और माता जी से कुछ काम है। मैं आना तो जल्दी चाहता था, परन्तु कांग्रेस पार्टी की मीटिंग में देरी हो गई।"

"हाँ, क्या काम है?' श्रीधर ने गम्भीर हो पूछा।

"पृथक में बात करना चाहता हूँ।"

इससे पण्डितजी ने सतर्क हो चेतनानन्द की ओर देखा। फिर कुछ सोचकर कहा, "तो मेरे स्वाध्याय के कमरे में आ जाओ।"

चेतनानन्द ने पार्वती की ओर देखा और उठकर पण्डितजी के साथ चलने को तैयार हो गया। पार्वती भी उठ खड़ी हुई। रेवा ने इस समय सबको गम्भीर हुआ देख कहा, "भैया! मैं जाती हूँ। मेरी मोटर मेरे पास है।" और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए उसने हाथ उठा सबको 'बाई-बाई' कहा और बैठक से बाहर निकल गई।

पण्डितजी ने चेतनानन्द की ओर देख कहा, "इधर आ जाओ।"

४

चेतनानन्द ने पार्वती की माँ को भी बुला लिया। महेश अपने कमरे में चला गया। पण्डित जी अपने स्वाध्याय करने के कमरे में पहुँच तख्तपोश पर बैठ गये। पार्वती की माँ उनके समीप बैठ गई। पार्वती और चेतनानन्द तख्तपोश के सामने रखी कुर्सियों पर बैठ गये। पण्डित जी दत्तचित्त हो चेतनानन्द की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगे।

चेतनानन्द ने अपने मन की बात कहनी आरम्भ कर दी, "मैं तीन वर्ष से पार्वती देवी को जानता हूँ और आप भी मुझे कई बार मिल चुके हैं। हमने परस्पर विचार विनिमय कर विवाह करने का निश्चय कर लिया है। अगले रविवार सायं चार बजे विवाह करने का समय निश्चित हुआ है।"

पण्डित जी ने सुना और माथे पर त्योरी चढ़ा ली। चेतनानन्द चुपचाप अपने कथन का उत्तर सुनने की प्रतीक्षा करने लगा। पार्वती का मुख सूख गया था और वह भूमि की ओर देख रही थी। पार्वती की माँ का मुख विस्मय में खुला रह गया।

सबसे पहिले श्रीधर स्वस्थचित्त हुआ। उसने अपनी डायरी उठाई और उसके पन्ने उलट, रविवार का पन्ना निकाला। अपना 'फाउन्टेन पेन' उठा, खोल, पन्ने पर लिख दिया। लिखते लिखते बोलता गया, 'आज चार बजे सायं, श्री चेतनानन्द पार्वती देवी से विवाह करेंगे।

इतना लिख कलम और डायरी को बन्द कर, अपने-अपने स्थान पर रख, पण्डित जी ने कहा, "सूचना के लिए अति धन्यवाद है चेतनानन्द। अब तुम जा सकते हो।"

चेतनानन्द इस व्यवहार के लिए तैयार नहीं था। वह तो समझता था कि या तो पण्डित जी उनके विवाह के निश्चय पर आपत्ति उठावेंगे अथवा विवाह-सम्बन्धी प्रबन्ध पर बातचीत करेंगे। दोनों में से कोई बात नहीं हुई। पण्डित जी ने इस डायरी पर लिखा जैसे किसी साधारण परिचित के घर विवाह हो। चेतनानन्द चाहता था कि कुछ और कहे,

परन्तु पण्डित जी के कहने पर कि वह जा सकता है, विवश हो उठा, हाथ जोड़ नमस्कार कही और बाहर चला आया। पार्वती भी उसके पीछे-पीछे बाहर निकल आई। बाहर बैठक में पहुँच चेतनानन्द ने पार्वती से कहा, "कल मध्याह्न के भोजन के समय आना। मैं अपने माता पिता को भी सूचित कर देना चाहता हूँ।"

पार्वती पत्थर की मूर्ति की भाँति खड़ी थी। उसका गला सूख गया था और उसके मुख से आवाज नहीं निकल रही थी। चेतनानन्द ने पार्वती का हाथ पकड़ दबाया, नमस्कार कही और चल दिया

पार्वती बैठक में कितनी ही देर तक खड़ी रही और अपने पिता के व्यवहार पर विचार करती रही। वह समझ नहीं सकी थी कि पिताजी प्रसन्न थे अथवा रुष्ट। उसे चेतना तब हुई, जब उसकी माँ ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, "पारो!"

पार्वती ने घूमकर माँ की ओर देखा। माँ ने कहा, "जाओ आराम करो। सिर-दर्द बढ़ जायेगा।"

रात को सोने के समय पार्वती की माँ ने अपने पति से पूछा, "पार्वती के विषय में क्या सोचा है आपने?"

"मुझे सोचने के लिए कहा ही किसने है?"

"फिर भी आप बड़े हैं। बच्चों का ख्याल रखना आपका काम है।"

"जब बालक सयाने (बालिग) हो जाते हैं तो उनको अधिकार हो जाता है कि वे अपने माता पिता की अवहेलना कर सकें।"

"वे बच्चे हैं। आपको तो बचपना नहीं करना।"

"देखो, पारो की माँ! मेरे पास न तो समय है कि मैं एक निश्चय हो चुकी बात पर विचार करूँ, न ही मेरा अधिकार रहा है। जाओ, सो जाओ।"

पं० श्रीधर बड़ा नियन्त्रण रखने वाले थे। इस कारण उनसे कही बात को न करने की शक्ति किसी में नहीं थी। माँ चुपचाप वहाँ से निकली तो पारो के कमरे में आ पहुँची। पार्वती लैम्प बुझा, खाट पर

लेटी रो रही थी। उसने, अब तक मन में पूर्ण परिस्थिति का विश्लेषण कर लिया था। उसको अपने पिता की इस विषय में, अस्वीकृति समझ आई थी। इस कारण, पिता की इच्छा का उल्लंघन करे अथवा न, विचार कर रो पड़ी थी। आज तक घर में किसी ने भी पिता की इच्छा का विरोध नहीं किया था।

माँ कमरे में दबे पाँव पहुँची थी। अन्धेरे में पार्वती को सिसकियाँ भरते सुन, एक दो क्षण चुप खड़ी रही। पश्चात् उसने, स्विच दबा, लैम्प जला दिया। प्रकाश होने पर पार्वती ने उठकर माँ को खड़े देखा तो और भी विह्वल हो रोने लगी। माँ उसकी चारपाई पर बैठ गई और उसकी पीठ पर हाथ फेर पूछने लगी, "पारो बेटा! रोती हो?"

"मैं क्या करूँ माँ। समझ में नहीं आता। पिताजी नाराज हैं और मैं उनकी इच्छा का विरोध करूँ अथवा न?"

'देखो बेटी! यदि तो तुम्हारा इच्छा उससे विवाह करने की है तो कर लो। पिताजी मान जावेंगे। इसमें रोने की कोई बात नहीं।"

"माँ! तुम क्या समझती हो?"

"मैं तो तुम्हारे जितना पढ़ी नहीं। मेरी माँ ने तुम्हारे पिता को देखा, पसन्द किया और मेरा विवाह कर दिया। मैंने अपनी माँ की समझ पर विश्वास किया और खुशी-खुशी ससुराल चली आई। तुम्हारे पिता देवता हैं। उन्होंने कभी भी मुझसे कठोर बात नहीं कही।'

"माँ! मेरा दिल तो करता है, परन्तु पिता जी की अस्वीकृति खलती है।"

"तुम चिन्ता न करो बेटी! मैं उनसे कल बातचीत करूँगी।"

६

अगले दिन जीवनलाल के घर एक और ही घटना घटी। पार्वती मध्याह्न के समय वहाँ पहुँची तो चेतनानन्द उसे अपनी माँ के सम्मुख ले गया और कहने लगा, "माँ! हमारा विवाह इस रविवार को होना

पुन आरम्भ हो रहा था।

चेतमानन्द बिना इस बात का विचार किय कि उसका पिता इस विवाह के विरुद्ध है, इसकी तैयारी करता गया। इसमें उसकी माँ उसको प्रोत्साहन दे रही थी।

विवाह 'स्पेशल मैरेज ऐक्ट' के अनुसार करने का प्रबन्ध किया गया। मैजिस्ट्रेट की फीस जमा करा दी गइ और नगर कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में विवाह की रस्म करने का आयोजन हो गया।

चेतनानन्द के पिता ने स्पष्ट कह दिया था कि वह विवाह पर नहीं जाएगा। उसकी माँ और बहन, दोना जाने वाली थीं। पार्वती इस सब में ऐसे तैयारी कर रही थी, जैसे कोइ निर्जीव वस्तु धकेलकर ले जाइ जा रही हो। उसकी माँ ने उसे इतना बता दिया था कि उसके पिता दर्शक के रूप में विवाह में जाने का विचार रखते हैं, पिता के रूप में नहीं। वह स्वय भी उनके साथ वहाँ उपस्थित होगी।

पार्वती ने, उस रात के पश्चात्, जब चेतनानन्द ने विवाह करने का निश्चय उसके पिता को सुनाया था, पिता के सम्मुख उपस्थित होना ठीक नहीं समझा। उसे लज्जा और भय प्रतीत होता था। वह समझती थी कि उसे देखते ही पिताजी का क्रोध फूट पड़ेगा और उसे भय था कि वे कहीं श्राप न दे बैठें।

विवाह से एक दिन पूर्व, अर्थात् शनिवार तक तो वह अपने निश्चय पर दृढ़ थी। इस पर भी धीरे धीरे, उसका मन दुर्बल पड़ता जाता था। उसके पिता ने उसको आशीर्वाद देने में अरुचि प्रकट की थी। चेतनानन्द के पिता ने तो स्पष्ट अपना विरोध प्रकट किया था। उनकी उस दिन की बात, 'मेरे मूर्ख पुत्र को वर कर भूल कर रही हो' बार-बार उसके मन में आ रही थी। चेतनानन्द ने उसे समझाया था कि उसके पिता, उसके कांग्रेस में कार्य करने के कारण उससे क्रुद्ध हैं। पर पार्वती को इस पर विश्वास नहीं होता था।

शनिवार को, स्कूल पढ़ाने के लिये जब वह जाने लगी, तो

चेतनानन्द मकान के बाहर मोटर लिए आ पहुँचा। वह उस मोटर में बैठा स्कूल छोड़ने ले चला। मार्ग में उसने रविवार का कार्यक्रम समझा दिया। उसने बताया "कल सायं चार बजे मैजिस्ट्रेट नगर काग्रेस कमेटी के कार्यालय में आवेगा। तीन बजे रेवा माटर लेकर तुम्हें लेने आवेगी और ठीक पौने चार बजे तुम उसके साथ वहाँ पहुँच जाना। मैं स्वयं नहीं आ सकूँगा।

'विवाह के पश्चात् वहीं पर चाय पार्टी का प्रबन्ध है। चाय-पार्टी के पश्चात् हम सीधे हवाई जहाज़ के अड्डे पर पहुँच जाएंगे। वहाँ मैंने दो सीटें बम्बई के लिए रिज़र्व की हुई हैं। सोमवार प्रातः हम बम्बई पहुँच जाएँगे। वहाँ ताज होटल में मैंने एक डबल-सीटेड कमरा आठ दिन के लिए रिज़र्व करवा रखा है।'

पार्वती ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप सुन रही थी, पर भीतर ही भीतर उसे यह सब कुछ विचित्र प्रतीत हो रहा था।

चेतनानन्द कुछ समय तक उसके मनोभावों का अनुमान लगाता रहा। पश्चात् बोला, "पारो प्रिये! ठीक समझ गई हो न? हाँ, तुम्हें घर से लेकर कुछ नहीं आना। तुम्हारे विवाह के समय पहिनने के कपड़े और बम्बई में रहने के समय के लिये कपड़े मैंने बनवा लिए हैं। कल के पहनने के कपड़े रेवा तुम्हारे पास लेकर आएगी। बम्बई साथ जाने वाले कपड़े हवाई जहाज पर पहुँच जावेंगे।

"यदि तुम्हारी माता अथवा पिताजी कुछ देना चाहें तो कहना कि वहाँ पधारें और जो कुछ देना चाहते हैं, स्वयं दें। यदि न देना चाहें तब भी कुछ हानि नहीं। वह आवें तो उनकी अत्यन्त कृपा होगी।'

पार्वती चुपचाप सुनती रही। उसकी आँखें, माता पिता की बात सुन, भीग गईं।

८

रविवार के दिन चेतनानन्द खाना खा, रेवा को पार्वती के कपड़े

दे और उसे सब समझा, मोटर में सवार हो कांग्रेस के दफ्तर में आ पहुँचा। दफ्तर के बाहर एक खुला मैदान था। वहाँ पाँच सौ के लगभग लोगों की चाय का प्रबन्ध फ्लैफिन्स्टन होटल वालों के द्वारा किया जा रहा था। ऊपर, जहाँ मैजिस्ट्रेट के सम्मुख विवाह की रस्म होने वाली थी, रॉयल-नर्सरी वालों ने कमरा सजा दिया था। उस कमरे को पुष्प मण्डप का रूप दे दिया गया था।

प्रबन्ध को देख और जहाँ कहीं कोई त्रुटि प्रतीत हुई, उसे ठीक करने को कह, वह अपने मित्र सराजुदीन पराचा के घर आ पहुँचा।

बैरिस्टर सराजुद्दीन पराचा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का सदस्य था। जब चेतनानन्द उनके घर पहुँचा तो बैरिस्टर साहब घर पर नहीं थे। उनकी बीबी मुमताज बेगम ने चेतनानन्द को बहुत आदर के भाव से बैठाया और कहा, "बैरिस्टर साहब आते ही होंगे, बैठिये।"

चेतनानन्द ने एक सोफा पर बैठते हुए कहा, "बैरिस्टर साहब से तो मिलने का वक्त मुकर्रिर था।"

"तो ठहरिए न, क्या कुछ पीने को मँगवाऊँ?"

"हाँ, अगर रैफ्रिजरेटर में ठण्डा किया हुआ पानी हो।"

मुमताज ने नौकर को आवाज़ दी और पानी लाने को कह दिया। पश्चात् इधर उधर की बातें होने लगीं।

"आज आप चाय-पार्टी पर आ रही हैं या नहीं?"

"जी वाह, यह भी खूब कही। 'इन्वाइट' करके भी न करना चाहते हैं आप?"

"नहीं, नहीं, मेरा यह मतलब नहीं। मैं पूछ रहा था कि आप भूलीं तो नहीं? खैर, बैरिस्टर साहब भी तो साथ आ रहे हैं न?"

"उनकी तो उनसे ही पूछ लीजियेगा। आप बम्बई से कब लौटियेगा?"

"सिर्फ आठ दिन वहाँ रहने का विचार है। बाद में आॉल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक दिल्ली में होनी है। मिसेज़ को वहाँ, माँ के पास

छोड़ दिल्ली भी तो जाना है।"

"मिसेज़ को यहाँ किसलिए छोड़ जाइएगा ? क्या वह 'प्रिज़ेन्टेबल' (दूसरों के सामने लाने योग्य वस्तु) नहीं हैं ?"

"बहुत सुन्दर है वह। मुझे डर ही लगा रहता है कि कहीं किसी की नज़र न लग जाए।"

"ओह ! यह बात है। ठीक है, तब तो उसे महफूज़ (सुरक्षित) रखना ही चाहिये। दिल्ली में तो गाँठ कतर बहुत हैं और उसके कतरकर ले जाए जाने का डर होना ही चाहिये।"

"हाँ, मगर अब तो दिल्लीवाले लाहौर में भी आने लगे हैं।"

"और उनमें एक मैं हूँ।"

इस समय सराजदीन साहब आ गए। चेतनानन्द को बैठा देख बहुत स्नेह से हाथ बढ़ाकर, मिलाते हुए बोले, "तो आ गये चेतनानन्द ! सुनाओ सब इन्तज़ाम ठीक हो गया है या नहीं ?"

"मालूम तो होता है। आप तो आइयेगा न ?"

"सुना है आपके स्वसुर साहब पुराने ख्याल के हिन्दू हैं ?"

"हाँ।"

"तो क्या लड़की भी वैसी ही है ?"

"नहीं, वह तो निहायत ही आज़ाद ख्याल वाली लड़की है।"

"मैं चाहता था कि हवाई जहाज़ के अड्डे पर जाने से पहिले हमारे घर की रौनक बढ़ाते।"

"सो तो है ही। मैं यह कहने आया हूँ कि मैं अपनी मोटर यहाँ छोड़ जाऊँगा और आप अपनी गाड़ी में हमें 'एयरोड्रोम' पर छोड़ आइयेगा।"

"तो ठीक है। यह पक्की रही।"

चेतनानन्द वहाँ से अपने घर गया। रवा और उसकी माँ अपने घर से पार्वती के घर को जा चुकी थीं। चेतनानन्द खद्दर के कपड़े पहन और दो कपड़ों से लदे सूट-केस नौकर से उठवा, मोटर में रखवा 'एयरोड्रोम' ले गया। वहाँ उनको तुलवा, बुक करवा दिया।

इस समय तीन बज चुके थे। इससे वह सीधा परी महल, जहाँ कांग्रेस कमेटी का कार्यालय था, जा पहुँचा। रेवा और उसकी माँ अभी नहीं पहुँची थीं। चेतनानन्द चाय-पार्टी का प्रबन्ध देखने चला गया। वहाँ सब ठीक था, कार्यालय की सजावट देखने चला आया। वह बहुत सुन्दर सजाया गया था। एक खम्भे पर रंग रंग के गुलाब के फूल लगे थे। चेतनानन्द ने एक लाल फूल उतारा और अपनी अचकन के बटन होल में लगा लिया। इस प्रकार प्रबन्ध से सन्तुष्ट हो, मेहमानों के स्वागत के लिए कुछ मित्रों को खड़ा कर स्वयं पार्वती की प्रतीक्षा करने लगा।

ठीक पौने चार बजे पण्डित श्रीधर और पार्वती की माँ आईं। स्वागत करने वालों ने उन्हें कार्यालय में बैठाया। चार बजे रेवा अकेली मोटर में आई और चेतनानन्द, उसे अकेली आते देख लपककर उसके समीप पहुँचा और पूछने लगा, "सब आ गये रेवा?"

"पार्वती आ गई भैया?" उलटा रेवा ने प्रश्न कर दिया।

"नहीं तो।'

"तो वह घर पर नहीं है। उसकी माँ से मैंने पूछा तो उन्होंने बताया कि दो बजे की गई हुई है। वे तो घर को ताला लगाकर चले आए हैं।"

चेतनानन्द का मुख विवर्ण हो गया। उसका गला सूख गया। उसने मराये गले से पूछा, "कहीं पण्डितजी ने तो उसे घर में कैद नहीं कर दिया?"

"नहीं भैया! मैं मकान को भीतर और बाहर से देख आई हूँ। महेश मेरे साथ था। वह घर से डेढ़ से अढ़ाई बजे तक अनुपस्थित रहा था और पार्वती उसी बीच में गई थी।

"पार्वती की माताजी विवाह के अवसर पर एक सोने का हार देना चाहती हैं। जब उन्होंने पण्डितजी से पूछा तो उत्तर मिला कि वह उसकी माँ का है और वह उसकी स्वामिनी है। यदि चाहे तो दे सकती है। वह हार पार्वती की माताजी अपने साथ लाई हैं। मम्मी को महेश के साथ वहाँ, घर के बाहर छोड़, मैं यहाँ देखने चली आई हूँ।"

चेतनानन्द के मस्तिष्क में चक्कर आने लगे थे। वह नहीं समझ सका कि क्या हुआ है।

इतने में सराजदीन साहब अपनी स्त्री मुम्ताज बेगम के साथ आ गये। उन्हें बैठने को कह, मोटर में बैठ पार्वती के घर पता करने चला गया। वहाँ उसकी माता तथा महेश घर के सामने खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे। वह वहाँ से लौट आया। कांग्रेस कार्यालय में पहुँचा तो मजिस्ट्रेट आ चुका था। चेतनानन्द को आया देख सब मित्र उससे मिलने के लिए आगे बढ़े। परन्तु वह सबको छोड़ पार्वती के माता पिता के पास जा पहुँचा। वे पुष्प-मण्डप के बाहर खड़े विवाह-संस्कार के होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। चेतनानन्द ने पार्वती की माँ से पूछा, "पार्वती नहीं आई। आपको मालूम है कि वह कहाँ है?"

"हम समझते थे कि वह तुम्हारे घर गई है?"

"नहीं, हमारे घर नहीं गई।"

"तो फिर कहाँ गई?" पार्वती की माँ के मन में एक भय समा गया। पण्डित श्रीधर गम्भीर खड़ा रहा। जब चेतनानन्द घबराया हुआ कांग्रेस कार्यालय से बाहर निकल गया तो पण्डित श्रीधर ने अपनी स्त्री से कहा, "कुछ गड़बड़ हो गई है। मूर्ख लड़की कहीं आत्मघात न कर बैठे। कई दिन से मैं उसे चिन्तित देख रहा हूँ।"

पार्वती की माँ की आँखों में आँसू छलकने लगे थे। पण्डितजी ने देखा तो बोले, "चलो, चलकर पारो का पता करना चाहिए।"

साढ़े पाँच बजे मैजिस्ट्रेट वापस चला गया। मेहमान भी एक-एक दो-दो कर लौट गए। रेवा और महेश एक गाड़ी में लौटे। चेतनानन्द और उसकी माँ दूसरी गाड़ी में। ये सब मोहनलाल रोड वाले मकान में पहुँच गए। लाला जायनलाल मध्याह्न का खाना खा, घर से चले गए थे और अभी तक लौटे नहीं थे।

चेतनानन्द बैठक में पहुँच सोफा पर ऐसे बैठा, जैसे देह मन का पत्थर लुढ़क पड़ता है। उसकी माँ कपड़े बदलने अपने कमरे में चली

आई। रेवा और महेश उसके साथ सहानुभूति प्रकट करने वहीं बैठ गए।

एकाएक चेतनानन्द को स्मरण हो आया कि हवाई जहाज का टिकट वापस किया जा सकता है। उसने घड़ी में समय देखा। हवाई जहाज जाने में अभी दो घण्टे थ। उसने महेश से कहा, "महेश भैया! मेरा एक काम तो कर दो। 'एयर इण्डिया' क कार्यालय में चले जाओ और ये टिकट वापस कर आओ। दस प्रतिशत काटकर रकम मिल जावेगी। दफ्तर 'माल' पर है और रेवा तुम्हें मोटर में ले जावेगी।"

इतना कह उसने जेब में से दो टिकट निकाल महेश को दे दिए महेश और रेवा जाने लगे तो चेतनानन्द ने एक बात और कह दी "ताज बम्बई में तार दे देना कि चेतनानन्द ने जो कमरा रिज़र्व करवा है, कैन्सिल कर दें।

"जाओ भैया! यह काम कर दो। एक हजार पोंड मे जाता बच जाएगा।"

रेवा और महेश कमरे से बाहर निकल आए। रेवा अपने कमरे मे गई तो महेश भी उसके साथ था। उसने पेट्रोल के 'कूपन' निकालने के लिए मेज का दराज खोला तो उसमें आठ-नौ सौ रुपये क नोट पड़े दिखाई दिए। रेवा रुपयों को देख सोचने लगी। एकाएक उसने नोट उठा अपने पर्स में रख लिए और महेश को साथ ले नीचे उतर आई।

मकान के नीचे गैरिज में मोटर गाड़ी रख दी गई थी। रेवा दो क्षण तक गैरिज के बाहर खड़ी विचार करती रही। पश्चात् बोली, "ताँगे में चलेंगे। जितनी देर पेट्रोल डलवाने में लगेगी, उतनी देर म तो हम वहाँ पहुँच ही जावेंगे।"

मकान से महेश और रेवा मोरी दरवाजे की ओर चल पड़े। कु दूर जाने पर ताँगा मिला, तो दोनों सवार हो माल पर जा पहुँचे। क पहुँच रेवा ने हवाई जहाज क कार्यालय में क्लर्क स पूछा, "कार्यालय बस कितनी देर में 'एयरोड्रोम' जायेगी?"

क्लर्क ने पूछा, "आपका नाम?"

"मिस्टर और मिसेज़ आनन्द ।'

"हाँ, आपकी सीटें रिज़र्व हैं ।"

महेश रेवा की बात सुन हँसने वाला था कि रेवा ने अपना पाँव उसके पाँव पर रखकर सङ्केत कर दिया । वह अचम्भे में मुख देखता रह गया । कार्यालय के क्लर्क ने बताया, "बस जाने में अभी डेढ़ घण्टा है । ठीक साढ़े सात यहाँ से चलेगी ।"

रेवा ने कलाई पर बँधी घड़ी देखी और कहा, "अच्छी बात है । उससे पहिले हम आ जायेंगे ।" पश्चात् उसने महेश की ओर घूमकर कहा, "चलिए, खाना खा लें ।"

महेश 'किंकर्तव्यविमूढ़' की भाँति रेवा की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखता रहा । वहाँ से बाहर आ, उसने पूछा, "मैं कुछ समझा नहीं ?"

"मेरी इच्छा बम्बई सैर करने जाने की हो गई है ।'

"मुझको साथ लेकर ?"

"हाँ, देखिए महेश जी ! ताज होटल में कमरा रिज़र्व है ही । वहाँ हम पति-पत्नी बनकर रहेंगे ।"

"वण्डरफुल !" महेश ने खड़े हो रेवा की आँखों में देखते हुए कहा । रेवा ने महेश का हाथ पकड़ दबाते हुए कहा, "आज की दुर्घटना से मुझे यह समझ आई है कि हमारे विवाह की भी स्वीकृति हमारे माता-पिता नहीं देंगे । मेरी माँ अभी तक आपको आदर की दृष्टि से देखती थीं, परन्तु अब आपकी बहन की करतूत के कारण आपसे घृणा करने लगेंगी ।

"ऐसी अवस्था में हमें अपना विवाह स्वयं ही कर लेना चाहिए। पीछे माँ अवश्य, अपना नाक रखने के लिए, पिताजी से आपके कारोबार के लिए धन दिलवा देंगी ।"

महेश का मस्तिष्क इतनी साहस की बात सुन घूमने लगा था । वह चुप रहा । दोनों 'पैलगीज़ होटेल' में जा खाना खाने लगे । महेश अति गम्भीर हो अनिश्चित माधुर्य के पाने की आशा में स्वप्न देखने लगा । रेवा ने उसे गम्भीर देख पूछा, "आपको पसन्द नहीं आई मेरी योजना ?"

"भला इसमें न पसन्द करने की बात ही क्या है ? मगर मैं सोचता हूँ कि क्या इतनी मीठी और सुन्दरी बात सत्य होगी ?"

"यत्न करना हमारा काम है ।"

८

जीवनलाल ने देखा कि विवाह जैसी बात में भी चेतनानन्द उससे राय करने को तैयार नहीं । इससे उसके मन में यह बात बैठ गई कि उसकी स्त्री सुभद्रा और उसका लड़का तथा लड़की उसे मूर्ख समझते हैं । इससे उसने इन लोगों से पृथक् हो, अपने काम धन्धे और अपनी सम्पत्ति के प्रबन्ध की योजना बनानी आरम्भ कर दी ।

दो दिन में उसकी योजना बन गई । उसने अपनी सम्पत्ति की सूची बना डाली और वसीयत लिखने का विचार स्थिर कर लिया ।

उसका एक लंगोटिया मित्र पण्डित अम्बिकाप्रसाद था, जो हाईकोर्ट का वकील रह चुका था । अब काम धन्धा छोड़, वानप्रस्थ लिये हुए था । फिर भी कभी-कभी किसी सिद्धान्तात्मक बात पर कोई मुकद्दमा आ खड़ा होता तो सिद्धान्त की प्रतिष्ठा स्थिर रखने के लिए निःशुल्क ही भिड़ जाता था ।

अम्बिकाप्रसाद आयु बड़ी हो जाने के कारण कुछ झक्की अवश्य हो गया था, इस पर भी उसका मस्तिष्क खूब चलता था । गम्भीर-से गम्भीर कानूनी पेंचों का विश्लेषण इस प्रकार करता था कि न्यायाधीश दाँतों तले उँगली दबा लेते थे ।

पण्डित अम्बिकाप्रसाद और जीवनलाल आर्य समाज के प्राचीन सदस्यों में थे । तब से दोनों में घनिष्ठता थी । यह जीवनलाल का दूसरा विवाह था । उसकी पहली स्त्री दस वर्ष का निरसन्तान विवाहित जीवन व्यतीत कर स्वर्गवास हो गई थी । उसका दूसरा विवाह राय साहब कमल नारायण की लड़की सुभद्रा से हुआ था ।

जिस दिन चेतनानन्द ने अपने विवाह करने की सम्मति दी, उसके

तीसरे दिन जीवनलाल ने पं० अम्बिकाप्रसाद को टेलीफ़ोन से अपनी इच्छा प्रकट कर दी। उसने कहा, 'मेरा विचार वसीयत लिखने का है और आपसे उसमें सहायता चाहता हूँ।'

"ओह! बहुत रुपया इकट्ठा कर लिया प्रतीत होता है।" अम्बिका प्रसाद ने व्यंग्य के भाव में कहा।

"हाँ, आप जैसे मित्रों के आशीर्वाद से।"

"पर लाला जीवनलाल! एक ही तो लड़का है। फिर यह झगड़ा करने से क्या प्रयोजन है?'

"बात यह है कि पुत्र को शिक्षा-दीक्षा देकर, योग्य बना देना तो पिता का कर्त्तव्य है परन्तु उसकी सब बेहूदगियों के लिए, उसे धन देते रहना, पिता के कर्त्तव्यों में नहीं आता। यह धन उनको मिलना चाहिए, जो इसके अधिकारी हैं और जिन्होंने इसके पैदा करने में सहायता दी है।"

"तो यह बात है।" अम्बिकाप्रसाद ने हँसी में पूछा, "परन्तु मित्र! यह धन उपार्जन करने में कौन-कौन सहायक हुए हैं?'

'बहुत लोग हैं। शायद पूर्ण हिन्दू-समाज है। इतना तो निश्चय ही है कि मेरी स्त्री, मेरी लड़की और लड़का इसमें कोई भाग नहीं रखते।"

"अच्छी बात है।" वकील साहब ने कह दिया, "आप रविवार के दिन आ जाइए। मध्याह्न का भोजन यहीं ही करियेगा। पश्चात् आपका काम कर दूँगा।'

"भोजन की छोड़िये, आपका ।'

"भाई! बहुत दिन के बाद ऐसा अवसर मिला है। ठीक है न हम ~ ।"

जीवनलाल ने कुछ विचारकर कहा, "अच्छी बात है परन्तु ऐसा करिए, मैं मध्याह्न पश्चात् आऊँगा और रात के खाने तक ठहरूँगा।'

बात तय हो गई।

रविवार दो बजे चपरासी उन्हें अम्बिकाप्रसाद के बैठक-स्थान में ले

गया। वकील साहब खाना खा, आधा घण्टा आराम कर चुके थे। जीवनलाल को एक कपड़े में, अपने कारोबार के रजिस्टर और लेखा जोखा के अन्य कागज़ात लपेट, लाते हुए देख हँस पड़े। वे बोले, "तो यह पापों की गठरी यहाँ उठा लाए हो जीवनलाल!"

जीवनलाल ने अपना बस्ता मेज़ पर रखते हुए कहा, "भाई! या... के हाइकोर्ट से तो कितने ही अपराधियों को छुड़ाया होगा। अब क... हमारा मुकद्दमा बड़े न्यायालय में कर मुक्त कराओ तो जानें।"

पण्डित अम्बिकाप्रसाद ने खिलखिलाकर हँसते हुए कहा, "वहाँ से छूटना सुगम है। यहाँ के न्यायाधीश तो केवल न्याय करना जानते हैं और भगवान् तो दयानिधि भी हैं। प्रायश्चित् करने पर मनुष्य दया का भागी बन जाता है।"

"प्रायश्चित् के निमित्त ही तो यह वसीयत लिखाने आया हूँ। आप चेतनानन्द को तो जानते ही हैं। उसकी एक बहन है, रेवा। दोनों को उनकी माँ ने बिगाड़ रखा है। एक तो विकृत राजनीति में कूद पड़ा है और दूसरी क्लब, डांसिंग और सिनेमा की शौकीन हो गई है।

"लड़का कांग्रेस टिकट पर प्रान्तीय धारा सभा में सदस्य बन भगवान् ही बन बैठा है। मुझे उसकी बेहूदगियों पर आपत्ति न होती यदि वह पारिवारिक जीवन पर विश्वास रखता। मैंने खून पसीना एक कर धन कमाया है और वह उस धन के बल-बूते पर परिवार की भावना को ही मिटाना चाहता है। मुझे यह सह्य नहीं है। एक दिन एक लड़की के मेरे सामने खड़ा कर बोला, 'मैं इस रविवार इससे विवाह कर रहा हूँ, आप पधारिएगा।' बताइए, एक पुत्र पिता को सब इस प्रकार अप... विवाह की सूचना देता है तो परिवार कहाँ गया और फिर पिता उ... परिवार के लिए क्यों कुछ करे?

"अब लड़की की बात भी सुन लीजिए। मुझको 'पापा' और... को 'मम्मी' कहती है। क्लब जाने के अतिरिक्त और कुछ काम न... सिर के बाल कटवा लिए हैं और सज धजकर शुतर-बेमुहारों की

घूमती फिरती है।

"मैं समझता हूँ कि ये दोनों मेरी मेहनत के भागी नहीं हो सकते। इस कारण मैंने वसीयत लिख देनी उचित समझी है।

"मेरे पास सब सम्पत्ति तीस लाख रुपये से ऊपर है। अचल सम्पत्ति पन्द्रह लाख की है और चल बैंक तथा 'डिफेन्स-बॉन्ड्ज़' अथवा शेयर्ज़ में दस लाख के लगभग है। पाँच लाख मेरा व्यापार में लगा हुआ है।

"इसको मैं इस प्रकार देना चाहता हूँ। मेरी सब अचल सम्पत्ति आर्य प्रतिनिधि सभा को वेद प्रचार के लिए। मेरी चल सम्पत्ति की आय में से मेरी स्त्री को दो सौ रुपये मासिक उसके मरणपर्यन्त। मेरी लड़की को उसके विवाह के खर्चे के अतिरिक्त और कुछ नहीं। चेतनानन्द की स्त्री, पार्वती को दो-सौ रुपये मासिक आजीवन। पश्चात् यह धन भी आर्य प्रतिनिधि सभा को वेद प्रचार के लिए मिल जाए। मेरा व्यापार में लगा धन, मेरे मरने के पश्चात् व्यापार में कार्य करने वाले कर्मचारियों में उस अनुपात में, जिसमें उन्हें वेतन मिलता हो, बाँट दिया जावे।

"मेरे रहने के मकान में, मेरी स्त्री, जब तक रहना चाहे, रह सके। पश्चात् यह भी वेद प्रचार के लिए हो जावे।'

"इस सबका क्या मतलब है जीवनलाल!'

"यह धन बहुत रुचि से एकत्रित किया था परन्तु अब इसके भोगने में रुचि नहीं रहा। यह सब राय साहब की लाडली ने बिगाड़ दिया है। उसे मेरा सीधा-साधा पहरावा पसन्द नहीं, मेरी पगड़ी में बातें पसन्द नहीं, मेरा आर्य समाज में जाना और भगवान् में निष्ठा रखनी पसन्द नहीं। मैं व्यापार में लगा रहा हूँ और उसने लड़के-लड़की को अपने ही साँचे में ढाल लिया है।

"मुझको ऐसा प्रतीत हो रहा है कि एक दिन माँ-बेटा मुझे सत्तर बहत्तर गया घोषित कर मकान में बन्द कर देंगे और रोटी का टुकड़ा ऐसे डाल दिया करेंगे, जैसे किसी जानवर को डाल दिया जाता है। जो मुझसे विवाह-जैसे कार्य में राय लेना पसन्द नहीं करते, वे भला मेरे

बुढ़ापे में मेरी क्या परवाह करेंगे !"

विवाह की चर्चा सुन पण्डित अम्बिका प्रसाद गम्भीर हो पूछने लगा, "और तो सब ठीक है, परन्तु यह चेतनानन्द की बीवी का जन्म भर का प्रबन्ध करने में क्या प्रयोजन है !"

"एक भले घर की भोली भाली लड़की को वरगला कर, विवाह कर यह उसे कष्ट देगा। ऐसा मेरा अनुमान है।"

"किसकी लड़की है यह ?"

"आप जानते तो हैं उन्हें। पण्डित श्रीधर, जिन्होंने सांख्य मीमांसा नामक पुस्तक लिखी है।"

"ओह ! तो यह बात है। अब समझा हूँ। परन्तु अच्छा ठहरो।"

पण्डित अम्बिका प्रसाद ने मेज़ पर रखी घंटी बजाई और चपरासी के आने पर बोले, "घर में मीरा दवी को बुला लाओ।"

जीवनलाल इस बात को समझ नहीं सका और विस्मय में मित्र का मुख देखता रहा। पण्डित अम्बिका प्रसाद मुस्करा रहा था।

मीरा आई तो उसे सम्मुख रखी कुर्सी पर बैठने को कह वकील साहब ने उसका परिचय जीवनलाल को करा दिया, "यह मेरी दूसरी लड़की है। विधवा है और सनातन धर्म कन्या विद्यालय में मुख्याध्यापिका है। श्रीधर जी की लड़की पार्वती इन्हीं के विद्यालय में पढ़ाने का कार्य करती है।"

पश्चात् मीरा को जीवनलाल का परिचय करा दिया, "देखो बेटी मीरा ! यह मेरे चिरकाल के मित्र लाला जीवनलाल हैं। कल जिस अध्यापिका की कथा तुम सुना रही थीं, वह इनके लड़के से विवाह करने वाली है। इन्होंने उसके लिए अपनी वसीयत में दो सौ रुपये मासिक लिख दिये हैं। मैं समझता हूँ, मीरा ! तुम उसे बता सकती हो, जिससे उसे विवाह करने में संकोच न रहे।"

"परन्तु, पिताजी !" मीरा ने आँखें नीची किये हुए कहा, "पार्वती तो विवाह कराने जाने से स्थान यहाँ आ गई है और विवाह न कराने

का निश्चय कर बैठी है।"

"विवाह नहीं करायगी?" लाला जीवनलाल ने अचम्भे में पूछा।

मीरा ने सिर हिला अपने कहने का समर्थन कर दिया।

"तो उसे दो सौ रुपये मासिक के स्थान पर पाँच सौ मासिक मिलने का विधान कर दीजिये।"

"वाह।" पंडित अम्बिका प्रसाद ने चकित हो कहा।

लाला जीवनलाल ने वैसे ही गम्भीर भाव धारण रखते हुए कहा, "पंडितजी। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि लड़की को चेतनानन्द की बेहूदगी का ज्ञान हो गया है। उसने चेतनानन्द को शायद इसलिए वरने का विचार किया होगा कि वह एक धनी का पुत्र है और अब उसके वरने का विचार छोड़ भारी त्याग कर रही है। मैं इस त्याग का फल उसे देना चाहता हूँ।"

पंडित अम्बिका प्रसाद ने मीरा से पूछा, "तुम तो कहती थीं कि वह अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध विवाह के लिए जा रही है?"

"जी। कल तक उसका यही विचार था। मैंने उसे यह सम्मति दी थी कि ऐसी अवस्था में उतावली करनी उचित नहीं। विचार कर और अपने आचरण से अपने बड़ों को अपने अनुकूल कर लेना चाहिए। वह इस बात को मानती थी, परन्तु कहती थी कि विवाह कर लेना भी तो आचरण है और इससे दोनों के माता पिता शीघ्र उनके विचारों के अनुकूल हो जाएँगे। यद्यपि मैंने कहा था कि यह तो उन्हें विवश कर बात मनाने का आयोजन है। जिस विषय में उन्हें अनुकूल बनाना है, उसको करने के पीछे अनुकूल करने का यत्न तो उनका अपमान करना हो जावेगा इस पर भी वह नहीं मानी थी।

"मुझे उसने अपने घर बारह बजे बुलाया था। मैंने वहाँ जाना उचित नहीं समझा और नौकर के हाथ कहला भेजा था कि मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं। वह नौकर के साथ ही यहाँ चली आई है। कहती है कि उसे मेरे कहने में सार प्रतीत होता है। वह विवाह पर नहीं जायेगी।"

"तो वह अब यहाँ पर ही है ?" जीवनलाल ने पूछा।

"जी हाँ।"

"उसे आप यहाँ बुला सकेंगी ?"

"मैं कह नहीं सकती कि वह यहाँ आना पसन्द करेगी या नहीं।"

"उसे कहो कि मैं बुलाता हूँ तो शायद आ जावेगी। मैं उसके इस निश्चय का कारण जानना चाहता हूँ।"

जब पार्वती आई तो पंडित अम्बिका प्रसाद ने उससे पूछना आरम्भ कर दिया, "तो आप विवाह पर नहीं जा रहीं ?"

पार्वती आँखें नीची किये बैठी थी। उसने उसी प्रकार बैठे हुए कह दिया, "जी नहीं।"

"क्या हम जान सकते हैं, क्यों ?"

"लालाजी ने जो कहा था कि उनके मूर्ख पुत्र को वर मैं मूर्खता कर रही हूँ।"

इस पर लाला जीवनलाल ने कहा, "पर यह तो कितने ही दिन की बात है। आजकल में कोई नई बात हुई है क्या ?"

"जरा मोटी बुद्धि है, सोच धीरे धीरे आती है।" पार्वती ने वैसे ही आँखें नीची किये मुस्कराते हुए कहा।

"तो तुम्हें अपनी भूल का ज्ञान हो गया है ?"

"जी हाँ।"

"अपने आप या किसी के कहने पर ?"

"तीन दिन हुए मैंने अपनी माता जी से पूछा था कि वे मेरे विवाह पर आयेंगी क्या ? उन्होंने उत्तर दिया कि वे पिताजी की स्वीकृति के बिना नहीं आवेंगी।

"मैंने पूछा कि क्या उनको इतनी भी स्वतन्त्रता नहीं कि वह अपनी लड़की के विवाह पर अपनी इच्छा से जा सकें। माताजी का कहना था कि मेरा विवाह परिवार का विषय है। एक बाहर के व्यक्ति को घर में ला बैठाने की बात है। इससे परिवार की स्वीकृति के बिना ऐसा काम नहीं

किया जा सकता। उनका कहना था कि मैंने परिवार के पुरुषों की स्वीकृति के बिना यह करने का यत्न किया है। इससे ठीक नहीं किया।

"यह बात थी, जो कई दिनों से मेरे मस्तिष्क में चक्कर काट रही थी। कल बहन मीरा बी ने यही बात एक दूसरे ढंग से कहा। मैं रात भर सोचती रही और एकाएक मेरे मन में यह आया कि विशेष रूप में हिन्दुओं में और साधारण रूप में भारतवासियों में विवाह एक पारिवारिक कार्य है। इससे परिवार की स्वीकृति आवश्यक है।

"यह सोच मैंने विवाह स्थगित करने का निश्चय कर लिया है। इसी कारण मैं वहाँ नहीं आ रही।"

६

रात बारह बजे, चेतनानन्द के कमरे का दरवाज़ा उसकी माँ ने खटखटाया। वह घबराकर उठा और दरवाज़ा खोल पूछने लगा, 'क्या है माँ!"

"रेवा कहाँ है?"

"अपने कमरे में सो रही होगी।"

"वहाँ नहीं है। कांग्रेस कार्यालय से आने के पश्चात् तो मैंने उसे देखा ही नहीं।"

"तो वह हवाई जहाज के दफ्तर से लौटी नहीं?"

'वहाँ किस काम से गई थी?"

चेतनानन्द चुप कर गया। उसने उठ हवाई जहाज के कार्यालय में टेलीफोन कर दिया। दफ्तर बन्द था। बहुत देर तक घण्टी बजती रही, परन्तु कोई नहीं बोला। अन्त में चिन्तित हो उसने माँ से कहा, "मैंने महेश को और उसे हवाई जहाज के कार्यालय में टिकट वापस करने भेजा था। ऐसा प्रतीत होता है कि वे दोनों बम्बई चले गये हैं। रेवा के पास कुछ रुपये थे क्या?"

"हाँ क्यों नहीं! घर का सब खर्चा तो उसी के पास रहता है।"

"तो निश्चित्, दोनों चले गए हैं।"

"तुम्हारे पिताजी को कहूँ ?"

"व्यर्थ है। मैं कल बम्बई जाऊँगा और उन्हें पकड़ लाऊँगा।"

प्रातःकाल महेश की माँ महेश का पता करने आई। उसे चेतनानन्द ने यह कह टाल दिया कि उसे विशेष काम से बम्बई भेजा गया है।

"हमें कहकर भी नहीं गया।" महेश की माँ का कहना था।

"यह तो आपके घर वालों का स्वभाव है। पार्वती का पता मिला ?"

"अपनी एक सहेली के घर चली गई थी। उसका विचार विवाह स्थगित करने का हो गया था। महेश कब तक लौटेगा ?"

"तीन-चार दिन में आ जावेगा।"

चेतनानन्द ने महेश के साथ रेवा के भाग जाने की बात उसकी माँ को नहीं बताई। परन्तु जीवनलाल से बात छुपी नहीं रह सकी।

वह जब स्नानादि से छुट्टी पा प्रातः का अल्पाहार करने बैठा, तो उसने रेवा को, पूर्ववत् आँखें मलते हुए बिस्तर से उठकर आ चाय पीते नहीं देखा। जब उसने उसके विषय में पूछा तो उसकी माँ ने बहाना लगा बात टालने की कोशिश की।

"सो उसे उठाओ, नौ बज रहे हैं।" इतना कहते हुए उसने नौकर को आवाज़ दे दी, "रामू!"

वह आया तो उसे आज्ञा दे दी, "रेवा बीबी का दरवाज़ा खटखटा कर कहो, बाबूजी बुलाते हैं।"

"आ जाएगी। आखिर जल्दी किस बात की पड़ी है ?"

जीवनलाल ने नौकर को डाँटकर कहा, "जाओ! दरवाज़ा खटखटा दो।"

नौकर गया तो आकर कहने लगा, "रेवा बीबी कमरे में नहीं हैं।"

"टट्टी पेशाब को गई होगी।" माँ ने कह दिया।

जीवनलाल को जल्दी थी। उसने छावनी जाना था और उसकी अपनी गाड़ी 'सर्विस' के लिए कम्पनी गई हुई थी। इस कारण वह रेवा की गाड़ी में जाना चाहता था। अल्पाहार समाप्त कर उठते हुए उसने

रेवा की माँ से कहा, "जल्दी रेवा की गाड़ी की चाबी ला दो। मुझे उसकी गाड़ी छावनी जाने के लिए चाहिये।"

रेवा की माँ उसके कमरे में गई। यदि चाबी पड़ी मिल जाती तो बात बन जाती।

परन्तु चाबी तो रेवा के हैंड-बैग में बम्बई चली गई थी। लालाजी ने मकान के नीचे उतर, 'गैरेज' के बाहर खड़े हो, चाबी की प्रतीक्षा करनी आरम्भ कर दी। जब पन्द्रह मिनट तक चाबी नहीं आई तो उसने ड्राइवर को, जो समीप खड़ा था, कहा "जाओ भाई! चाबी ले आओ। देरी क्यों हो रही है?"

ड्राइवर गया तो वह भी नहीं लौटा। इस पर जीवनलाल स्वयं रेवा के कमरे में जा पहुँचा। वहाँ उसने रेवा की माँ को चीज़ों को उलट-पुलट करते और चाबी ढूँढते देखा। अब जीवनलाल ने सशंक हो पूछा, "तुम ढूँढ रही हो? रेवा कहाँ है?"

रेवा की माँ ढूँढना छोड़ चुपचाप खड़ी हो गई। इससे तो जीवनलाल का सन्देह पक्का हो गया। उसने पूछा, "क्या है? चुप क्यों हो, देवीजी?"

"नीचे अपने कमरे में चलिए, मैं चाबी लेकर आती हूँ।"

जीवनलाल ड्राइवर को वहाँ खड़ा देख समझ गया कि कोई गम्भीर बात है, जो उसके सामने नहीं बताई जा रही। वह नीचे बीच की मंजिल में अपने कमरे में चला गया। रेवा की माँ, बिना चाबी के, उसके कमरे में पहुँच, दरवाजा भीतर से बन्द कर बोली, "रेवा बम्बई गई है।"

"बम्बई? क्यों?"

"ऐसे ही घूमने।"

"कब गई है?"

"रात हवाई जहाज से।"

"पर चेतनानन्द तो अभी यहीं ही था। किसके साथ गई है?"

"मैं 'मई' महाशय के साथ।"

रेखा की माँ के मुख का रंग उड़ गया था। जीवनलाल ने त्योरी चढ़ाकर कहा, "मुझसे झूठ क्यों बोला था?"

वह चुप रही। जीवनलाल नीचे उतर, भाड़े की टैक्सी मँगवा, काम पर चला गया।

१०

चेतनानन्द को बम्बई में रेखा और महेश को ढूँढ लेने में कठिनाई नहीं पड़ी। ताज होटल के रजिस्टर में 'चेतनानन्द विद वाइफ' लिखा मिला। वह दिन भर वहाँ होटल में उनकी प्रतीक्षा करता रहा। रात को खाने के समय दोनों आए तो चेतनानन्द को अपनी प्रतीक्षा करते देख उन्हें विस्मय नहीं हुआ। वे उसकी पीछे-पीछे आने की आशा करते थे। चेतनानन्द उनके साथ ही ठहरा। रेखा ने उसे बता दिया कि उन्होंने विवाह कर लिया है।

"विवाह? भला यह कैसे?"

"प्रातःकाल उदय होते सूर्य को नमस्कार कर हमने परस्पर पति-पत्नी होने का वचन दे दिया।

"बस?"

"और क्या?"

"इसकी भी क्या आवश्यकता थी?" चेतनानन्द ने व्यंग में कहा।

"मैं भी यही सोचती थी, पर ये माने ही नहीं।"

अगले दिन चेतनानन्द ने हवाई जहाज के दो टिकट खरीद रेखा से कहा, "चलो।"

"तो आप हमारे साथ नहीं जा रहे क्या?" रेखा ने पूछा।

"चल तो रहा हूँ।"

"पर टिकट तो दो ही खरीदे हैं?"

"एक मेरा और एक तुम्हारा।"

"और ये?" महेश की ओर देखते हुए उसने पूछा।

"मैं ?" चेतनानन्द ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "ये जायेंगे जहन्नुम में।"

"पर भाई साहब।" महेश ने गम्भीर हो कहा, "वहाँ भी तो टिकट के बिना नहीं जा सकता।"

"तो संखिया खाकर मर जाओ।"

"उसके लिए भी तो दाम नहीं हैं।"

"तो मैं क्या करूँ ?" चेतनानन्द ने उसकी ओर पीठ कर कहा।

उत्तर रेवा ने दिया, "भैया ! तुम लाहौर जाओ ! हम दोनों इकट्ठे ही जहन्नुम जायेंगे।"

"मैं इसे पुलिस के हवाले कर दूँगा।"

"क्यों ?"

"तुम नहीं जानती क्यों ? यह तुम्हें घर से भगाकर लाया है।"

"परन्तु बात इससे उलटी है।" महेश ने रेवा की बातों से साहस पा कहा।

"चुप रहो।" चेतनानन्द ने उसे डाँटकर कहा।

रेवा ने महेश की बाँह में बाँह डालकर कहा, "आज हमारा प्रोग्राम 'रेलिफेल्ग केयूज' देखने का है न ? चलो।" फिर चेतनानन्द की ओर घूमकर और हाथ हिलाकर बोली, "चीयरो।"

चेतनानन्द उनका मार्ग रोक खड़ा हो गया और बोला, "देखो रेवा। बहुत हल्ला न करो। नहीं तो सबके सामने पीट दूँगा।"

"भैया ! तुम क्या करने को कहते हो ?"

"लाहौर वापस चलो।"

"बहुत अच्छा। साथ रेलगाड़ी से लौट चलेंगे।"

"हवाई जहाज से क्यों नहीं ?"

"उसके लिए दाम नहीं हैं।"

"दाम तो मैं दे रहा हूँ।"

"हम दोनों का ?" रेवा ने प्रश्न हो पूछा।

"नहीं। केवल तुम्हारे टिकट का।"

"तो मैं नहीं जाऊँगी। हम दोनों इकट्ठे जायेंगे।"

रेवा के हठ से चेतनानन्द विवश हो गया। वह एक टिकट और खरीद लाया। तीनों हवाई जहाज में सवार हो लाहौर जा पहुँचे।

लाहौर 'एयरोड्रोम' पर, चेतनानन्द ने हाथ जोड़, मिन्नत कर महेश को अपने घर चल जाने को कहा। रेवा ने भी यही उचित समझा और महेश से कहा, "मैं पत्र लिखूँगी। उसकी प्रतीक्षा करना।"

घर पहुँच उसे माता के सामने उपस्थित होना पड़ा। माँ ने डाँटकर कहा, "रेवा! एक लड़के के साथ अकेले जाते तुम्हें लज्जा नहीं लगी?"

"एक लड़का नहीं, मम्मी! महेश जी थे। हमने विवाह कर लिया है।"

"झूठ है।"

"सच कहती हूँ मम्मी! जब हम बम्बई पहुँचे तो सीधे चौपाटी पर चले गये। वहाँ सागर की तरंगों पर कल्लोल करती सूर्य किरणों को साक्षी कर हमने पति-पत्नी बन रहने का वचन ले लिया। पश्चात् हम एक दिन और एक रात पति-पत्नी रूप में बम्बई में रहे भी हैं।"

"चुप।" माता ने डाँटकर कहा। "क्या पागलों की-सी बातें करती हो? विवाह इस प्रकार थोड़े ही होता है?"

"मम्मी! मेरा विवाह महेश जी से हो गया है।"

"नहीं हुआ। तुम्हारा विवाह मैं किसी बहुत धनी के लड़के से करूँगी।"

"तो महेश में कौन खराबी है?" जीवनलाल ने कमरे में प्रवेश करते हुए पूछा।

"आप भी विचित्र बात करते हैं! भला ऐसे लड़के से मैं लड़की का विवाह कैसे कर सकती हूँ?"

"कैसे लड़के से? वह अन्धा है, लँगड़ा है, काना है, क्या खराबी है उसमें?"

"वह गरीब है।"

"तो मैं उसे अमीर कर दूँगा।"

"रेवा से दो वर्ष आयु में छोटा है।"

"यह कोई कारण नहीं।"

"पर आप उसमें कौन विशेषता देख रहे हैं?"

"विशेषता तो तुम्हारी लाड़ली ने देखी है। मैं तो कहता हूँ कि एक हिन्दू लड़की जब किसी की पत्नी हो गई तो जीवन-भर के लिए हो गई। इसे ही तो पतिव्रत धर्म कहते हैं। यही एक हिन्दू स्त्री की विशेषता है।"

"मुझे आपकी बातें समझ में नहीं आ रहीं। एक बच्चा भूल कर बैठा, तो बस जन्म भर के लिए फाँसी चढ़ गया।"

"श्रीमती जी! हिन्दुओं में तलाक का रिवाज अभी नहीं चला, जिससे भूल सुधारी जा सके।"

"पर मैं पूछती हूँ विवाह ही कहाँ हुआ है, जो तलाक की बात पैदा हो गई है?"

"वास्तविक विवाह, अर्थात् संयोग समागम तो हो ही गया है। संस्कार ही नहीं हुआ न? सो हम एक आध दिन में कर देंगे। इसे हमारे शास्त्र में गन्धर्व-विवाह कहते हैं।"

"लोगों में हमारी भारी बदनामी हो जावेगी।"

"बदनामी तो हो चुकी है। अब तो बिखरे धान को बटोरने की बात रह गई है।"

परन्तु यह बात सुभद्रा की समझ में नहीं आई और वह रेवा के महेश से विवाह के लिए राजी नहीं हुई।

रेवा को आज विदित हुआ कि उसका पिता कितना विशाल हृदय रखता है। इससे पूर्व तो उसकी माँ ने उसके मस्तिष्क में यह बात बैठा रखी थी कि सोसायटी के विषय में उसके पिता को कुछ ज्ञान नहीं है। वे तो धन कमाने की मशीन हैं। न कभी क्लब में गये हैं और न ही पढ़े-लिखे सभ्य लोगों में कभी बैठे हैं। आज की बात से रेवा को समझ

आया कि उसका पिता उसकी माँ से अधिक संसार का ज्ञान रखता है। उसकी सब बातें युक्तियुक्त थीं।

जब जीवनलाल की बात सुभद्रा ने नहीं मानी तो वह कमरे से बाहर निकल आया। फिर कुछ सोचकर लौटा और रेवा से कहने लगा, "जब माँ की बात सुन लो तो मेरे कमरे में आना।"

इतना कह वह अपने कमरे में चला गया। रेवा भी पिता के पीछे जाने लगी तो माँ ने डाँटकर कहा, "देखो रेवा! महेश बहुत ही गरीब लड़का है। अभी बी० ए० भी पास नहीं किया। तुम्हारा खर्चा वह सहन नहीं कर सकेगा और पूर्ण जीवन एक नरक का रूप बन जायगा।

"तुम्हारे पिता को कुछ भी ज्ञान नहीं। वे संसार की बातों से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। घास-फूस बेच धन बटोरने के सिवाय और कुछ भी नहीं जानते। मेरी बात याद रखो, यदि तुमने महेश से विवाह किया तो तुम *मेरे लिए मर गई और मैं तुम्हारे लिए।*"

रेवा बिना उत्तर दिये माँ के कमरे से बाहर निकल गई। वह पिता के कमरे में जाना चाहती थी कि चेतनानन्द मार्ग में मिला और पूछने लगा, 'माँ क्या कहती हैं?"

"कहती हैं किसी और से विवाह हो।"

'पार्वती ने मुझे धोखा दिया है, रेवा!"

"तो बहन का पाप भाई पर लादना चाहते हैं!"

इतना कह वह पिता के कमरे में चली गई। पिता ने उसे सामने कुर्सी पर बैठाकर कहना आरम्भ कर दिया, "सुनो रेवा! मैं हिन्दू हूँ, आर्यसमाजी हूँ। तुम्हारी माँ ने तुम लोगों को न तो हिन्दू जाति की, न आर्यसमाज की महानता समझने का अवसर दिया है। इसी से तुम लोग मेरी आंतरिक भावना को समझ नहीं सके।

"यह तो ठीक है कि जीवन-नौका बहुत सोच-समझकर चलानी चाहिए। इस पर भी जल्दी जल्दी जीवन के परीक्षण बदलने से मनुष्य किसी परिणाम पर नहीं पहुँच सकता। विवाह भी जीवन की भावनाओं

और शक्तियों के साथ एक प्रकार का परीक्षण ही है। यह परीक्षण एक जीवन में एक बार ही हो सकता है। एक बार वचन दिया तो फिर सुख दुःख, अमीरी-गरीबी, रुग्ण अथवा निरोगावस्था, सब समय इस सम्बन्ध को स्थिर रखने में ही कल्याण है।

"यदि तुम मुझसे सम्बन्ध जाने से पूर्व पूछतीं तो शायद मैं तुम्हारा महेश से विवाह पसन्द न करता परन्तु जब तुमने उससे विवाह का वचन दे ही दिया है तो मैं तुम्हारे सम्बन्ध विच्छेद को पसन्द नहीं करता।

"हम एक जन्म को अपने पूर्ण जीवन का एक बहुत छोटा भाग मानते हैं। अनेकों जन्म तथा मरण एक जीवन में होते हैं। पूर्ण जीवन के ध्यान को समझ एक आयु तो एक अति अल्प-काल प्रतीत होने लगती है। इस अल्प काल के किंचित् दुःख के लिए वचन-भंग तो एक ऐसा काम है, जो आत्मा को जन्म जन्मान्तर के लिए कलुषित करने का सामर्थ्य रखता है।

"इससे मैं कहता हूँ कि यदि तुमने महेश से विवाह सच्चे प्रेमवश किया है तो हो गया। अब इस निभाने का ढङ्ग सोचो।"

"पिताजी!" रेवा की आँखों में आँसू छलकने लगे थे। "मुझे नहीं मालूम था कि आप इतने अच्छे और दयालु हैं।"

"तो सुनो, यदि महेश से तुम्हारा विवाह हो गया तो मैं उसे अपने कारोबार में साझीदार बना लूँगा। आशा करता हूँ कि तुम लोग अपना जीवन आनन्द से व्यतीत कर सकोगे। अब तुम जाओ और आराम करो। मुझे कुछ सोचने का अवसर दो।"

रेवा अपने कमरे में जाकर सोचने लगी। उसे आशा के विरुद्ध अपने पिता के व्यवहार में साक्षात् भगवान् का हाथ दिखाई दिया। बम्बई में महेश ने कहा था कि सूर्य उसका इष्टदेव है और उसका नाम लेकर यदि विवाह करेंगे तो वह अवश्य उनकी सहायता करेगा। उस समय वह इस मानसिक भ्रम पर हँसी थी। आज पिता को अपनी बात और इच्छाओं में सहायक पा, उसे जहाँ विस्मय हुआ था, वहाँ महेश के

कहने पर विश्वास भी हुआ था।

अगले दिन उसने महेश को पत्र लिखा, 'मेरे पिताजी ने मेरा आपसे विवाह स्वीकार कर लिया है। उन्होंने कहा है कि यदि विवाह हुआ तो वे आपको अपने कारोबार में पत्तीदार बना लेंगे। इससे आपको लगभग एक सहस्र रुपया मासिक तुरन्त मिलने लग जायेगा।

"मुझे कल सायंकाल गोल बाग़ में, लाला लाजपतराय की मूर्ति के समीप मिलियेगा। घर पर नहीं आइयगा। मेरी माँ और भाई विवाह का विरोध कर रहे हैं।"

११

महेश घर पहुँच चुपचाप माँ के सामने आ खड़ा हुआ। माँ ने उसे देख पूछा, "कब आये हो बेटा? जिस काम गये थे, कर आये हो न?"

महेश ये प्रश्न सुन चकित रह गया। वह नहीं समझा कि किस काम के विषय में माँ पूछ रही है। फिर सब बात एक दम न बताने का निश्चय कर बोला, "हाँ माँ! पर अब बहुत थक गया हूँ। स्नान कर सोना चाहता हूँ। पिताजी कहाँ हैं?"

"अपने कमरे में आराम कर रहे हैं। उनकी चिन्ता न करो। मैं बता दूँगी।"

"दीदी कहाँ है? स्कूल जाती है अभी?"

"हाँ, क्यों? अच्छा, विवाह के विषय में पूछ रहे हो? विवाह नहीं हुआ और पारो नियमित रूप से स्कूल जा रही है।"

महेश सायंकाल उठा तो उसके पिता बैठक में बैठे मित्रों से बात चीत कर रहे थे। महेश वहाँ पहुँच गया। पण्डितजी ने उसे देख पूछा, "क्या काम था बम्बई में? जाने से पहले मिल तो जाते।"

महेश को अब फिर अचम्भा हुआ। उसने वहाँ फिर गोल-मोल बात कर दी, "कांग्रेस कमेटी का कुछ काम था।"

"देखो महेश! यह कांग्रेस के जाल में फँसकर अपनी शक्ति का

अन्याय न करो।'

महेश को तो यह आशा थी कि घर पहुँचते ही खूब पीटा जाएगा और बुरा भला कहा जावेगा। अब बात इतनी सुगमता से टलती देख चुप कर रहा। कुछ काल तक वहाँ बैठ घूमने चला गया। रात को भोजन कर सो रहा।

तीसरे दिन उसे रेवा का पत्र मिला। पढ़कर चकित रह गया। साय गोल बाग में जा, लाला लाजपतराय की मूर्ति के नीचे खड़ा हो प्रतीक्षा करने लगा। दूर से रेवा को पैदल आते देख उससे मिलने के लिए बाग पर ही जा पहुँचा। दोनों ने घास पर एक ओर खड़े होकर अपने अपने घर की बात बताई। महेश ने बताया कि उसके पिताजी को तो सन्देह भी नहीं हुआ कि वह किस कारण बम्बई गया था।

रेवा का कहना था, "उनसे भी तो स्वीकृति लेनी है।"

"यही तो सोच रहा हूँ कि कैसे बात करूँ?"

"मैं दो दिन से यही सोच रही हूँ। कई योजनाएँ बनाई हैं, पर कोई भी ठीक नहीं जँची। एक बात है जो कुछ ठीक प्रतीत होती है। आप मुझे एक पत्र लिखिए। उसमें मेरी अपने से विवाह की स्वीकृति माँगिए। इस पर मैं आपकी माताजी को लिखूँगी।"

महेश को यह योजना पसन्द नहीं आई, इस पर भी उसने और कोई योजना न पा रेवा को पत्र लिखने का विचार पक्का कर लिया। घर पहुँच, उसने पत्र लिखना आरम्भ किया। लिखकर जब पढ़ा तो पसन्द नहीं आया। अतएव फाड़कर फेंक दिया। फिर एक और लिखा। वह भी पसन्द नहीं आया। इसे भी फाड़कर फेंकने वाला था कि पावती कमरे में आकर बोली, "महेश! चलो पिताजी बुलाते हैं।"

महेश ने पत्र को समेटते हुए पूछा, "क्या है दीदी?"

"तुम्हारे कान खींचे जाएँगे। तुमने झूठ बोला है।"

महेश समझ गया कि दाल में कुछ काला है। बात भी कुछ ऐसी थी। बम्बई जाने का रहस्य खुल गया था। बैंक में उसके पिता और

रेवा के पिता बैठे थे। महेश अपराधियों की भाँति उनके सम्मुख जा खड़ा हुआ। बात पण्डित श्रीधर ने शुरू की। उन्होंने कहा, "महेश! तुम्हें अपनी करतूतों पर लज्जा अनुभव करना चाहिए। तुम्हारे जैसे पुत्र के होने से मुझसे आँखें ऊँची नहीं की जातीं। मैं नहीं समझ सका कि इनके परिवार की जो हानि तुमने पहुँचाई है, उसका मूल्य कैसे दूँ। मैंने तो अपना सिर नंगा कर इनके पाँव पर रख दिया है कि इस पर जूते लगाएँ, जिससे तुम्हारे जैसे नीच पुत्र को जन्म देने का प्रायश्चित्त हो सके।'

महेश का मुख, पिताजी की ऐसी दीनता की बातें करते सुन, पीला पड़ गया। उसका हृदय धक धक करने लगा और आँखें तरल हो उठीं।

श्रीधर ने फिर कहा, "क्षमा याचना करो इनसे। रखो इनके चरणों पर सिर। तुम्हारा अपराध क्षमा करने योग्य तो नहीं। शायद ये तुम पर दया कर दें।"

महेश भूमि पर बैठ गया और झुककर सिर भूमि के साथ लगा सिसकियाँ भर रोने लगा। जीवनलाल ने उसे हाथों से पकड़कर उठा लिया और अपने सामने कुर्सी पर बैठा लिया। पण्डित श्रीधर ने गले में दुपट्टा डाल लाला जीवनलाल को कहा, "बाप-बेटा दोनों के आप मालिक हैं। जो दण्ड उचित समझें दें।"

जीवनलाल ने गम्भीर भाव में कहा, 'मैं यही चाहता हूँ। महेश के काम का मूल्य माँगने ही तो आया हूँ।

"क्या मूल्य मैं दे सकता हूँ?"

"इस अपराध का एक ही मूल्य है और वह है आपका लड़का। इसे मुझे दे दीजिए। इसे रेवा से विवाह करना होगा।'

महेश का मुख खिल उठा। श्रीधर लाला जीवनलाल का, रेवा तथा महेश के सम्बन्ध आने की कथा सुनाते समय, क्रोध देख चुका था। अब इस समय विवाह के प्रस्ताव से चकित रह गया। जीवनलाल ने

में पति-पत्नी का सम्बन्ध बन जावे तो उसे विवाह कर पक्का कर देना चाहिये। लड़की ने घरवालों का जो अपमान हुआ है, उसका केवल यही एक प्रतिकार है।

"यदि तो इन दोनों की प्रकृति मिलती है तो ये सुखी रहेंगे और यदि इन्होंने केवल वासनावश यह खराबी की है तो जन्म भर के लिए इनको परस्पर बाँधकर दण्ड देने में ही भलाई है।

"बताओ महेश!" उसके पिता ने पूछा।

महेश का मुख देदीप्यमान हो उठा था। उसके लज्जा और दुःख के आँसू सुख के आँसुओं में बदल गये थे। उसने केवल यह कहा, "जैसी आज्ञा हो।"

जीवनलाल ने मुस्कराते हुए कहा, "आज्ञा माँगते हो अब!

इसके पश्चात् जीवनलाल उठ खड़ा हुआ और पण्डित श्रीधर से बोला, 'महेश की माँ और बहन को कल मध्याह्न के पश्चात् हमारे घर पर भेज दीजियेगा। विवाह की तिथि निश्चय कर बता दूँगा।'

अगले दिन जब महेश की माँ और पार्वती जीवनलाल के घर आईं, तो रेवा की माँ और चेतनानन्द गायब थे। चेतनानन्द को गुजराँवाला जाने का काम याद आ गया और रेवा की माँ ने तो स्पष्ट कह दिया था कि वह अपनी लड़की का विवाह इन ब्राह्मणों के घर नहीं करना चाहती। इतना कह वह अपने बाप के घर चली गई थी।

जीवनलाल ने स्वयं ही महेश की माँ और पार्वती का स्वागत किया। उन्हें फल दिये, मिठाइयाँ दीं और साथ ही एक सहस्र रुपया नकद दिया।

विवाह के समय भी चेतनानन्द को आवश्यक कार्य से बम्बई जाना बन गया और रेवा की माँ के पेट में पीड़ा होने लगी। रेवा का विवाह उनकी अनुपस्थिति में ही हो गया।

१०

रेवा को अपनी ससुराल का वातावरण सर्वथा भिन्न प्रतीत हुआ।

उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस घर में उसे अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। यद्यपि घरवाले उससे अपना आचार और व्यवहार ठीक रखने की आशा करते थे, तो भी कभी किसी ने उसे आज्ञा नहीं की थी। उसकी सास प्रत्येक का स्वयं करती थी और उसे करते देख रेखा को भी वही करना ठीक प्रतीत होता था। उससे उलट करने में उसे लज्जा अनुभव होने लगी थी।

उसने देखा कि उसकी माँ की भाँति उसकी सास अपने पति की निन्दा नहीं करती। वह सन्तोष और प्रसन्नता से जीवन के सुख दुःख सहन करती है। एक दिन रेखा ने पूछ ही लिया, "पिताजी इतनी मेहनत करते हैं पर प्राप्ति बहुत कम होती है।"

"बेटी!" सास ने उत्तर दिया, 'वे मेहनत धन कमाने के लिए नहीं करते।"

'तो किस लिए करते हैं?"

'ऋषि ऋण उतारने के लिए। हमारे पूर्वजों में जो विद्वान् थे, उन्हें हम ऋषि कहते हैं। उन्होंने हमें वेद, शास्त्र, पुराण और अनेकानेक विद्याओं के ग्रन्थ वरासत में दिये हैं। उनकी देन को जीवित रखने के लिए, प्रत्येक काल में कुछ लोग अपना सर्वस्व न्योछावर कर, उनके बनाये ग्रन्थों को पढ़ते और पढ़ाते हैं और साथ ही उनसे कहे पथ पर चल, उनसे दी विद्या में उन्नति करते हैं। यदि किसी काल में ऐसा करनेवाला कोई न रहे तो समाज उन ऋषियों के ऋण से मुक्त नहीं हो सकता और ऋण के बोझे के नीचे पिसकर नष्ट हो जाता है।'

"तो समाज को, उन्हें खान, पहरने और रहने को तो देना चाहिए!'

"देती तो है। अब देखो न, तुम्हारे पिताजी ने ही उन्हें तुम जैसी लड़की दे डाली है।"

एक दिन रेखा महेश के साथ अपने माता पिता के घर गई हुई थी। चेतनानन्द भी वहाँ आया हुआ था। चेतनानन्द को विदित हो चुका

था कि उसके पिता ने वसीयत लिख दी है। वह चाहता था कि उसे पता चल जाए कि वसीयत में क्या है। इस कारण जब सब भोजन कर चुके तो वहीं खाने की मेज पर बैठे-बैठे ही, वह पूछने लगा, 'पिताजी! आपने वसीयत लिख दी है क्या?'

"हाँ चेतन! उसमें मैंने तुमको कुछ नहीं दिया।"

"कुछ नहीं!

"तुमको पढ़ा लिखाकर योग्य बना दिया है। क्या यह कम है?'

'और महेश को?"

"महेश को वसीयत से तो कुछ नहीं मिला। हाँ, वह मेरे व्यापार में चार आने का भागीदार बन गया है। इसने पढ़ना लिखना छोड़ मेरे साथ काम करना आरम्भ कर दिया है।'

"और रेवा को?"

"कुछ नहीं दिया।"

'यह मकान!'

"मेरे मरने के पश्चात्, यदि तुम्हारी माँ जीती रही तो इस मकान में रह सकेगी।"

"बस!'

"उसे मरण-पर्यन्त दो सौ रुपया मासिक भी मिलेगा।

"यह तो कुछ नहीं!"

"मैं समझता हूँ कि यह ठीक है।"

"और यह सब धन-वैभव किसको दिया है आपने?'

"आर्य समाज को, वेद प्रचार के लिए।"

चेतनानन्द खिलखिलाकर हँस पड़ा। जीवनलाल ने मुस्कराते हुए आगे कहा, 'हाँ, एक बात और है। मैंने पार्वती को जीवन काल के लिए पाँच सौ रुपया मासिक देने को लिख दिया है।

'तो हमारा बिस्तर गोल है इस घर से!'

"मैंने यह नहीं कहा। व्यापार में मेरा पाँच लाख लग रहा है।

इसकी वार्षिक आय लगभग चालीस हजार होती है। मेरे बारह आने के हिस्से में मुझे लगभग तीस हजार वार्षिक मिलेगा। इसमें से मैं तुमको कुछ तो दे सकता हूँ। बताओ तुम क्या चाहते हो?"

"मैं कुछ नहीं चाहता।"

महेश यह सब-कुछ सुन रहा था। उसने अपने मन में उठ रहे भावों को प्रकट करना उचित समझ कहा, "पिताजी! एक बात कहूँ?"

"हाँ महेश! कहो, क्या कहते हो?"

"मैं कुछ ऐसा समझ रहा हूँ कि मैंने भाई चेतनानन्द के स्थान पर अनधिकार स्वत्व कर लिया है। इससे मैं अपने आप में बहुत छोटा अनुभव कर रहा हूँ।"

"यह तुम्हारा भ्रम है महेश! देखो, मेरा व्यापार चेतनानन्द और उसकी माँ को पसन्द नहीं। मैं अब बूढ़ा होता जा रहा हूँ और इस बने बनाए काम को बिगड़ने से बचाने के लिए मुझे किसी सहायक की आवश्यकता थी। कोई भी सहायक होता तो मैं उसे अपना पत्तीदार बना लेता। अतएव मैंने तुम्हारे साथ कोई भी अनुचित रियायत नहीं की।"

"मैं रियायत की बात नहीं कर रहा, पिताजी! मेरा अभिप्राय तो यह है कि आपका प्रेम भाई साहब के लिए कम हो गया है।"

"यह बात भी नहीं।" जीवनलाल ने गम्भीर हो कहा, "बात यह है कि मनुष्य अपने बच्चों से प्रेम करता है क्योंकि उसके भीतर पशुपन का अंश विराजमान है। ज्यों-ज्यों वह मननशील हो अपने में मानवता का विकास करता जाता है, उसके प्रेम का क्षेत्र अपने परिवार की सीमा को लाँघ विस्तृत होता जाता है। मनुष्य के लिए आचार विचार, सिद्धान्त और जीवन लक्ष्य अधिक महत्ता वाले बनते जाते हैं।

"चेतनानन्द मेरा लड़का है अवश्य, परन्तु उसकी विचारधारा अपने देश की नहीं है। मुझे भारतीयता पसन्द है। उसे भारत की बातें जंगली पन प्रतीत होती हैं। अब विवाह की बात ही देख लो। तुम दोनों ने चेतनानन्द से अधिक अपराध किया था। इस पर भी अपराध की श्रेणी

में अन्तर था। तुमने वासनावश अपने कर्त्तव्य की अवहेलना की थी। वासना एक प्रबल शक्ति है और इसके वशीभूत हो कोई अनुचित कार्य कर डालना क्षम्य हो सकता है। तुमने विवाह कर उस अपराध का प्रायश्चित्त कर लिया है। परन्तु चेतनानन्द ने जो उच्छृंखलता की है, वह किसी वासना जैसी विवशता के कारण नहीं की। प्रत्युत उसने सोच विचारकर और सब-कुछ जानकर परिवार व्यवस्था पर लात मारी थी। विवाह से एक बाहर के व्यक्ति को परिवार में लाना होता है। इसने उसके लिए परिवार के लोगों से राय करना उचित नहीं समझी। यदि इसने यह किया है तो फिर इसको परिवार से कुछ आशा नहीं करनी चाहिये।'

महेश चेतनानन्द के व्यवहार की यह विवेचना सुन चकित रह गया। उसने अपने पिताजी को परिवार की महत्ता पर बहुत सुना था। आज अपने श्वसुर को भी उसी बात पर बल देते सुन, उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। एक संशय उसके मन में अभी भी था। उसके निवारण के लिए वह पूछने लगा, "आपने कहा है कि भाई साहब की विचारधारा भारतीय नहीं है। क्या परिवार प्रथा भारतीय है और यह भारतीयता का प्रधान अंग है?

प्रधान लक्षण तो नहीं, परन्तु एक लक्षण अवश्य है। परिवार प्रथा से इकाई एक व्यक्ति न होकर एक परिवार हो जाता है। इससे एक व्यक्ति की श्रेष्ठता या भ्रष्टाचार उसके परिवार का माना जाता है और अपने प्रत्येक व्यक्ति के आचरण को ठीक रखना परिवार का कर्त्तव्य हो जाता है। इस प्रकार समाज में एकाकी भावना कम हो समष्टि की भावना उत्पन्न होती है। यह भारतीयता का एक आवश्यक अंग है।"

चेतनानन्द ने कहा, "यह सब वाग्आडम्बर है। हिन्दू समाज में वनिमायन बहुत घट गया है और उसका परिणाम ही यह परिवार-प्रथा है। मैं इसे एक व्यक्ति के व्यक्तित्व पर आघात मानता हूँ। मैं अपने व्यक्तित्व को आपके लाखों पर भी न्योछावर नहीं कर सकता।'

इतना कह चेतनानन्द उठ, घर से बाहर निकल गया।

स्वराज्य की आशा में

१

बम्बई की वुर्लो नाम की एक बस्ती में, एक खद्दरधारी युवक हाथ में उस दिन के 'बाम्बे क्रॉनिकल' की एक प्रति लिए, लम्बे लम्बे पग उठाता हुआ मकानों के एक समूह (Block) की ओर जा रहा था। मकानों के कई समूह बने थे, जो प्राय चार चार छत के थे। प्रत्येक मकान-समूह के सामने दो या तीन नल, पानी भरने के लिए और स्नानादि के लिए लगे हुए थे। स्त्रियाँ घरों की सफाई और चौका बासन में लगी थीं और पुरुष कारखानों में काम पर गये हुए थे। प्रत्येक नल पर पानी भरने वाली स्त्रियों की भीड़ लगी थी।

मकानों के समूह में कमरों की पंक्तियाँ थीं और आगे बरामदे थे, जिनमें रसोई के लिए चूल्हे चौके बने थे। कई मकानों में दो कमरे थे और कइयों में केवल एक ही था। कमरों के पिछली तरफ खिड़कियाँ और रोशनदान थे।

कमरे छोटे-छोटे थे। एक में दो चारपाई लग जाने पर कठिनाई से खड़े होने को स्थान बचता था। जब किसी मकान में दो कमरे होते, तो एक की बगल में दूसरा होता और एक से दूसरे में जाने को मार्ग होता। पाखाने बरामदे के अन्त में सब मकानों के साँझे थे।

वह युवक एक मकान समूह के सामने से लाँघकर दूसरे समूह में, बीच के सीढ़ियों पर चढ़, दूसरी छत पर पहुँच गया। वहाँ एक सौ पचपन नम्बर के कमरे के सम्मुख बरामदे में जा खड़ा हुआ। बरामदे में एक

आर इदवादा बनी हुई थी। इसके बीच बन चौक में एक चौदह-पन्द्रह वर्ष की लड़की बतन समेट रही थी। वह खद्दरधारी युवक को आया देख बोली, "नमस्कार दादा!"

"अभी काम स छुट्टी नहीं पाई, दुनिया!'

"आज बाबा रोज से ज्यादा बीमार हैं। इससे काम समाप्त करने में देरी हो गई है।"

"तो फिर दौरा पड़ गया है क्या?"

"बहुत ज़ोर का। इस समय कुछ आराम हुआ है। वे सो ये हैं तो काम करने बैठी हूँ।"

"अच्छी बात है। निपटकर जल्दी आओ।"

"अभी आई।'

दुनिया लड़की का नाम नहीं था। दुबली-पतली होने से बाबा ने प्रेम में यह नाम द रखा था। लड़की का असली नाम लक्ष्मी था।

लक्ष्मी का बाबा दमा से पीड़ित था। पिछली रात भर साँस का दौरा चलता रहा था और वह सो नहीं सका था। अब कुछ शान्ति हुई तो वह सो गया। सिर की ओर बड़-बड़े तकिये रखकर उसका सिर ऊँचा किया हुआ था। वह खद्दरधारी युवक आधा मिनट तक समीप खड़ा, बूढ़े के क्षीण पात मुख को देखता रहा। पश्चात् वह बगल के कमरे में चला गया। इस कमरे में खाट नहीं थी। भूमि पर दरी बिछी थी और उस पर एक चादर थी, जो अधमैली हो रही थी।

युवक चादर के ऊपर बैठ गया और हाथ में पकड़े समाचार-पत्र को पढ़ने लगा। लक्ष्मी ने चौका-बासन का काम समाप्त कर, एक गिलास में उष्ण दूध ले, कमरे में आ खाट के समीप तिपाई पर रख दिया। बाबा को कुछ समय तक सोते देख वह दूसरे कमरे में आ गई।

लड़की का रंग गन्दमी था। नख-शिख सुन्दर और छोटा-सा मुख, जिसमें बड़ी-बड़ी आँखें थीं, माथा चौड़ा और बाल घुँघराले थे। उसकी रंग की छींट की कुर्ती और उसी कपड़े का लहँगा पहने था। सिर से नंगी

और पाँव में चाँदी की दो बारीक कड़ियाँ थीं।

जब लड़की आई तो युवक ने मन भरकर उसको सिर से पाँव तक देखा। जब लड़की से उसकी दृष्टि मिली तो लड़की ने आँखें भूमि की ओर कर लीं। उसने पूछा, "जल लाऊँ?"

युवक ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "नहीं, इधर मेरे पास आकर बैठो।"

लड़की युवक के सम्मुख पलथी मारकर बैठ गई। युवक ने कहा, "देखो दुनिया! बाबा तुम्हारे अब बहुत दिन जी नहीं सकते। तुम्हारे भैया तो जैसे हैं, तुम जानती हो। तब तुम कहाँ जाओगी?"

दुनिया की आँखें तरल हो उठीं। उसने कहा, "सच? बाबा की अवस्था बहुत खराब है?"

"मैं जानता हूँ। मैंने डॉक्टरी पढ़ी है। इससे कहता हूँ कि हमें बाबा के सम्मुख कुछ निश्चय कर लेना चाहिए।"

"क्या निश्चय कर लेना चाहिये?" लड़की ने आँखें नीची किये हुए धीमी आवाज़ में पूछा।

"यही, कि तुम कहाँ रहोगी? भैया राम तो नित्य रात को शराब पीकर आवेगा और तुम्हारा वहाँ रहना कठिन हो जावेगा।"

"कठिन क्यों होगा?"

"तुमसे भैया राम का कोई शराबी मित्र विवाह कर लेगा।"

"मैं विवाह नहीं करूँगी। इसी कारण तो आपसे पढ़ती हूँ।"

"ठीक! पर तुम्हें पढ़ने कौन देगा?"

"तो क्या करूँगी?"

"मेरे साथ मेरे घर पर चलकर रहना। मेरी पत्नी बनकर। बाबा से आज मैं कह दूँगा और बात पक्की कर लूँगा।"

"पर मैंने तो पढ़ना है। क्या आप मुझे पढ़ायेंगे?"

"अरे बाबा! हाँ! अच्छा अब अपनी पुस्तक और कापी निकालो।"

लक्ष्मी उठी और दीवार में लगी अलमारी में से हिन्दी की पाँचवीं

पुस्तक निकाल पढ़ने बैठ गई। युवक उसे बहुत ध्यान से पढ़ाता रहा। अभी पन्द्रह समाप्त नहीं हुए थे कि बाबा के खाँसने का शब्द हुआ। लक्ष्मी किताब वहीं छोड़, बाबा की चारपाई के समीप आ खड़ी हो देखने लगी। बाबा ने आँखें खोलीं और लक्ष्मी को सामने खड़ा देख पूछा, "सदाशिव आया है बेटी ?"

"हाँ बाबा ! दूध लाऊँ ?"

"आज भूख नहीं मालूम हो रही। अच्छा देखो गरम है या ठंडा ?"

लक्ष्मी ने तिपाई पर रखे गिलास को हाथ लगाकर देखा और बोली, "अभी गरम किए देती हूँ।"

सदाशिव भी अब वहाँ आ गया था। लक्ष्मी दूध गरम करने बाहर चली गई। सदाशिव बाबा की चारपाई के बाजू पर बैठ गया। बाबा ने उसे देख कहा "मुझे उठाओ, सदाशिव।"

सदाशिव ने हाथ का आश्रय दे उसे उठाया। बाबा थोड़ा खाँस, और गले में अटकी बलगम निकाल, चारपाई के नीचे रखे टीन के डब्बे में थूक, बोला, "देखा सदाशिव ! अब मैं हार गया हूँ। मुझसे और जीते नहीं बनता। मैं चाहता था कि लक्ष्मी का विवाह अपने हाथों करता, परन्तु भगवान् को यह मंजूर नहीं है। मेरा शरीर ठण्डा पड़ता जाता है।"

कुछ साँस ले और खखार निकाल बाबा ने फिर कहा, "मैं जीता रहता तो लक्ष्मी का विवाह तुमसे कर देता। यह दो मास में पन्द्रह वर्ष की हो जावेगी। परन्तु अब इतनी प्रतीक्षा करने का समय नहीं रहा। देखो तुम उसके पति हुए। बताओ मंजूर है ?"

सदाशिव चुपचाप बैठा रहा। बूढ़े ने फिर कहा, "विवाह संस्कार करने को अब समय नहीं है। वह तुम अवसर देख, करा लेना।"

बूढ़े को खाँसी आने लगी थी। लक्ष्मी दूध गरम कर लाई। सदाशिव ने लक्ष्मी के हाथ से गिलास पकड़ बाबा के मुख से लगा दिया। उसने तीन-चार घूँट पिये और दूध की गरमी से दो बड़-बड़ खखार

निकाल कुछ शान्ति अनुभव करने लगा। बाबा ने लक्ष्मी को कहा, "बेटी! इधर आओ। यहाँ बैठो।"

लक्ष्मी खाट पर सदाशिव के दूसरी ओर बैठ गई। बाबा ने लक्ष्मी का हाथ पकड़कर कहा, "बेटी! मुझे अपना अन्त समय आ गया प्रतीत होता है। इससे अपना एक शेष कर्तव्य पूरा कर देना चाहता हूँ। मैं तुम्हारा विवाह नहीं कर सका। सो वह अब सदाशिव से करता हूँ।"

इतना कह बाबा ने लक्ष्मी का हाथ सदाशिव की ओर बढ़ाया। सदाशिव ने हाथ बढ़ा उसे पकड़ लिया। अब बाबा ने कहा, "बेटी! आज से ये तुम्हारे पति हुए। तुमने इनके साथ पतिव्रता स्त्री बनकर रहना है। जन्म भर तुम इनको अपना देवता मान, इनकी आज्ञानुसार चलना।"

इतने से ही बाबा को हँफनी चढ़ गई। उसने कुछ समय तक चुप रह हँफनी रोकी और फिर कहा, "तुम्हारा भाई रामे आ जाता तो अच्छा था। मैं उसे भी कह देता । सदाशिव! किसी को भेज बुला लो। शायद वह समय पर आ जावे।"

बाबा का साँस उखड़ने लगा था। सदाशिव ने लक्ष्मी से कहा, "मीना की माँ से कहो, कारखाने से बुला लावे। उसका घरवाला वहीं काम करता है।"

२

रामे के आने से पूर्व ही बाबा ने साँस तोड़ दिया था।

रामे ने पिता का संस्कार किया। चौथे दिवस का शोक समागम भी हो गया। इतने दिन तक सदाशिव रामे के पास रहा और उसे सान्त्वना देता रहा। पाँचवें दिन रामे अपने काम पर जाने लगा तो सदाशिव भी जाने को तैयार हो गया। रामे ने उसे जाते देख कहा, "लक्ष्मी को पढ़ाने के लिए आपके आने की आवश्यकता नहीं। जवान लड़की के साथ अकेले में आपका मिलना ठीक नहीं है।"

"पर," सदाशिव ने कहा, "बाबा की इच्छा थी कि लक्ष्मी का

विवाह मुझसे हो। उन्होंने मरते समय उसका हाथ मेरे हाथ में पकड़ा दिया था।

"मुझे इसका विश्वास नहीं आता। मैं लक्ष्मी का विवाह कहीं करूँगा, कह नहीं सकता। हाँ। मैं तुम्हें फिर कहता हूँ अब हमारे घर में नहीं आना। नहीं तो ठीक नहीं होगा।"

सदाशिव ने कहा, "राने भैया! क्रोध करने की आवश्यकता नहीं। मैंने जो कुछ कहा है, सत्य है। यदि यह सत्य न भी मानो, तब भी मैं पढ़ा लिखा और सब प्रकार से योग्य वर हूँ। मैं चाहता हूँ कि उसका विवाह शीघ्र कर दिया जावे।'

"अच्छा, अच्छा! अब तुम जाओ। मैं तुम्हारे प्रस्ताव को उचित समझूँगा तो बुला लूँगा।

विवश सदाशिव चला गया। इस पर भी वह आशा करता था कि लक्ष्मी के लिए उससे अच्छा वर और नहीं मिलेगा और शीघ्र ही राने उसके पास आकर बात-चीत करेगा।

सदाशिव की आशा पूरी नहीं हुई। आशा के विपरीत उसे मीना के भाई ने सूचना दी कि लक्ष्मी का विवाह मन्नू जमादार से होना निश्चय हुआ है। मीना के भाई का नाम गोविन्द था और उसके माता पिता राने के पड़ोस में रहते थे। सदाशिव गोविन्द को जानता था, इससे उसे देख उसने पूछा, "गोविन्द! सुनाओ भाई! कैसे आये हो?"

"बाबूजी! एक बहुत जरूरी काम से आया हूँ।" गोविन्द का उत्तर था, "कई दिन से आपको ढूँढ रहा था। आज यहाँ की कांग्रेस कमेटी के मन्त्री से पूछकर यहाँ पहुँचा हूँ।"

सदाशिव एक मन्दिर के पुजारी का लड़का था और उसी मन्दिर के पिछवाड़े में अपने पिता के साथ रहता था। १६४२ में एम० बी० बी० एस० पास किया तो 'क्विट इण्डिया' आन्दोलन के भँवर में फँस गया। १६४५ में छूटा तो उसमें लोक सेवा की भावना जाग उठी। वह कारखाना के कर्मचारियों के बच्चों को लिखना-पढ़ना सिखाने लगा।

उसकी सेवायें नि शुल्क थीं। इससे वह कुछ काल में ही एक विख्यात सार्वजनिक कार्य-कर्ता हो गया। १९४६ में वह कांग्रेस के टिकट पर बम्बई धारा-सभा का सदस्य निर्वाचित हो गया। इस निर्वाचन में कामगार यूनियन ने उसका विरोध किया था। इस पर निर्वाचन में सफल होने पर यूनियन के लोग उसके विरोधी हो गये। राने यूनियन का एक प्रमुख कार्यकर्ता था। उसने सदाशिव की निन्दा करनी आरम्भ कर दी। सब कामगार यूनियन के सदस्यों ने अपने बच्चे उसकी पाठशाला से उठा लिये और फिर एक दिन उसकी पाठशाला के सामान को लूट उसे ताला लगा दिया।

राने के पिता को यूनियन के लोगों का यह काम अच्छा नहीं लगा। उसकी लड़की लक्ष्मी भी उस पाठशाला में पढ़ने जाती थी। इससे लक्ष्मी की शिक्षा जारी रखने के लिए वह सदाशिव को अपने घर ले आया। जब उसे पता लगा कि घर आकर पढ़ाने का भी वह कुछ नहीं लेगा, तो वह उसे देवता समझने लगा।

लक्ष्मी को घर पर पढ़ाते हुए दो मास के लगभग हो चुके थे कि राने के बाप का देहान्त हो गया। यह मार्च १९४६ की बात थी।

गोविन्द ने जब कहा कि वह एक आवश्यक काम से आया है, तो सदाशिव ने समझा कि लक्ष्मी के विषय में बातचीत करना चाहता है। इससे वह उसे एक ओर पृथक् में ले जाकर पूछने लगा, "हाँ, क्या बात है?"

"बाबूजी! लक्ष्मी का विवाह होने वाला है।"

"किससे?"

"मन्नू जमादार से। वह राने की मील में फोरमैन है।"

सदाशिव के मुख का रंग उड़ गया। अपने मन के भावों को छुपाते हुए उसने पूछा, "तुमको किसने बताया है?"

"लक्ष्मी ने स्वयं कहा है। उसने मुझको कहा है कि आपको ढूँढ कर बता दूँ। वह माँ के सामने कहती थी कि उसके बाबा ने उसका

विवाह आपसे कर दिया था।"

सदाशिव गम्भीर हो खड़ा रहा। गोविन्द ने अपना कहना जारी रखा, "लक्ष्मी कहती थी कि आप आकर उसे ले जावें। मन्नू मुसलमान है और वह उसकी बीवी बनना नहीं चाहती।"

सदाशिव ने गोविन्द को यह कहकर लौटा दिया कि वह आवेगा। इस पर भी वह दिन-भर सोचता रहा कि क्या करे। वह सोचता था कि राने और कारखाने के अन्य कर्मचारी उसकी चलने नहीं देंगे।

उसने उस इलाके के कांग्रेस के मन्त्री को बुलाकर उससे राय ली। मन्त्री, मौलाना अब्दुल इलाम रिज़वी ने सदाशिव की कहानी सुनी। उसने तहकीकात करने का वचन दे, सदाशिव को राने के घर जाने से रोक दिया।

३

लक्ष्मी को जब पता चला कि उसका विवाह किसी और से होने वाला है तो उसने अपने भाई से पूछा, "भैया! मेरा विवाह किससे कर रहे हो?"

"चुप रहो! तुम्हें यह पूछने लज्जा नहीं लगती?"

"पर बात यह है कि मेरा विवाह बाबा ने – ।"

राने ने एक चपत उसके मुख पर लगाकर कहा, "चुप रहो। उसका नाम नहीं लेना।"

लक्ष्मी चुप कर रही और रात भर सोचती रही कि क्या करे। उसने अपने बाबा से सुन रखा था कि हिन्दुओं में जब एक बार विवाह हो जावे तो फिर टूट नहीं सकता और वह अपने को विवाहिता समझती थी।

अगले दिन जब उसका भाई मील में काम करने चला गया तो वह अपने पड़ोस में माना की माँ के पास गई और पूछने लगी, "चाची! मुझे एक बात बताओगी?"

"हाँ, बेटी! कहो क्या बात है?"

"बाबा जब मरने लगे तो मेरा विवाह मास्टर जी से कर गये थे।"

"कैसे?"

"उन्होंने मेरा हाथ उनके हाथ में पकड़ाकर कहा था कि मैं उनकी धर्मपत्नी हो गई। मुझे जन्म भर उनकी पतिव्रता स्त्री बनकर रहना चाहिये।"

"तब तो दुनिया! तुम भाग्यवान् हो। मास्टर बहुत अच्छे आदमी हैं। पढ़े लिखे हैं और पुजारी के लड़के हैं।"

"पर चाची! भैया मेरा विवाह किसी और से करना चाहते हैं। मैं चाहती हूँ कि मास्टरजी को सूचना भेज बुलवा दो।"

मीना की माँ ने मीना के पिता को रानी के पास भेज पता किया कि लक्ष्मी का विवाह किससे होने वाला है। जब पता लगा कि लक्ष्मी का विवाह मन्नू जमादार से होने वाला है, तो सदाशिव को ढूँढने और बुलाने के लिये गोविन्द को भेजा गया।

सदाशिव का समाचार मिला कि वह आ रहा है परन्तु वह नहीं आया। इधर विवाह की तैयारियाँ धूम धाम से हो रही थीं। उसी गृह समूह में कुछ मुसलमान रहते थे। वे भी इस विवाह में रुचि दिखाने लगे।

मीना के पिता ने पुनः गोविन्द को सदाशिव के पास भेजा। इस बार उसने यह संदेशा भेजा कि वह सरकार में कार्यवाही कर रहा है। इस सब देश को पहुँचे भी बहुत दिन हो गये। लक्ष्मी रो राकर दिन गुजार रही थी। मीना की माँ से उसका रोना देखा नहीं जाता था। इससे एक रात उसने अपने पति से कहा, "धिक्कार है तुम लोगों के हिन्दू होने पर। एक हिन्दू लड़की का जबरदस्ती मुसलमान से विवाह किया जा रहा है और तुम लोगों के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।"

"मैं क्या करूँ? मुझे कुछ समझ में नहीं आता।"

"उस बेचारी बच्ची को बचाओ। जैसे भी हो बचाओ। बेचारी मलेच्छ के घर जायेगी तो अनर्थ हो जायेगा।"

मीना का बाप समझता था कि यह ठीक नहीं हो रहा, पर यह सोचता था कि जब लड़की का बड़ा भाई उसका विवाह कर रहा है तो वह किस प्रकार रोक सकता है। इस पर भी अपनी स्त्री से डाँटे-फटकारे जाने पर वह अपने मित्रों से बात करने पर तैयार हो गया। सबने मिलकर यह निश्चय किया कि इलाका कांग्रेस कमेटी के मन्त्री के पास जाकर सहायता माँगी जावे। मौलाना रिज़वी के पास ये लोग पहुँचे तो उसने पूछा, "आप लोगों को इस मामले में क्यों दिलचस्पी है?"

मीना के बाप ने उत्तर दिया, "हम लोग गने के पड़ोसी हैं।"

"मगर पड़ोसी होने से उसकी बहन के विवाह में दखल देने का हक़ कैसे हो गया?"

"शादी तो साहब हो चुकी है।"

"क्या भँवर चढ़ गये हैं?"

"भँवर तो नहीं चढ़े, पर जब लड़की का हाथ पकड़ा दिया गया तो भँवर चढ़ने के बराबर हो ही जाता है।"

"भाई! कानून इसको ऐसा नहीं मानता। देखो, मेरी राय मानो। अपना काम सँभालो। कहीं ऐसा न हो कि हिन्दू मुसलमान फसाद हो जावे। इससे कांग्रेसी सरकार बदनाम हो जावेगी।"

"पर मौलाना साहब! लड़की एक मुसलमान से विवाह करना नहीं चाहती।"

"यही तो मैं कह रहा हूँ। लड़की नाबालिग है। उसका विवाह करना उसके भाई का हक़ है और अगर तुम लोगों ने इसमें दखल दिया तो झगड़ा हो जाने का इमकान है। स्वराज्य, जो अब मिलने ही वाला है, दूर हट जावेगा।"

मीना का पिता और उसके साथी कांग्रेस-कार्यालय से बाहर निकल आए। इस समय उनकी दृष्टि सदाशिव पर पड़ी। वह भी कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में आ रहा था। वह तो बिना उनकी ओर ध्यान दिए कार्यालय में चला जाता, परन्तु मीना के पिता ने उसे रोककर कहा,

"मास्टरजी! लक्ष्मी आपकी प्रतीक्षा कर रही है। आपने आने को कहा था, पर आए नहीं।"

सदाशिव खड़ा हो एक क्षण तक उन लोगों का मुख देखता रहा। पश्चात् सोचकर बोला, "भाई! मैं विवश हूँ। देश का हित मेरी इच्छा के विरुद्ध बैठता है।"

मीना के पिता ने कहा, "यही मौलाना साहब कह रहे थे। परन्तु हमको तो समझ नहीं आता कि अन्याय के आधार पर स्वराज्य कैसे मिलेगा?"

सदाशिव ने मुस्कराकर कहा, "यह बात तुम लोगों के समझने की नहीं है। इस समय हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा नहीं होना चाहिये। इसके लिए जो भी कुर्बानी की जाए, कम है।"

यह कह सदाशिव कांग्रेस कार्यालय में चला गया। मीना का पिता और उसके साथी विस्मय में एक दूसरे का मुख देखते रह गए।

मीना के पिता ने कहा "भाई! मुझसे मीना का रोना नहीं देखा जाता। पर हम कर ही क्या सकते हैं?"

इस पर उनमें से एक बोला, "अभी एक उपाय और है। लड़की मुसलमान से विवाही जा रही है, इसमें कोई मुसलमान हमारी सहायता नहीं करेगा। एक आदमी बम्बई में है, जो दुःखी हिन्दुओं की सुनने वाला है। मैं उसके पास जाता हूँ।"

"कौन है वह?"

"हमारी मील में एक हिन्दू औरत काम करती थी। उसे एक दिन कुछ मुसलमान गुण्डे उठाकर ले गए। रास्ते में वह औरत शोर मचाती जाती थी। एक साहब मोटर में जाते जाते रुक गए। उन्होंने पिस्तौल दिखाकर उस औरत को छुड़ाया। औरत को उठा ले जाने वालों को पकड़वाया और मुकद्दमा कर दण्ड दिलवाया। यही नहीं, उस औरत और उसके घर वाले को मील के बाहर नौकरी दिलवा दी। मैं उस आदमी के घर का पता जानता हूँ और उसको सूचना देना चाहता हूँ।"

सब उसका मुख देखते रहे और वह ताँगे में सवार हो, कालवा देवी रोड की ओर चला गया।

४

सदाशिव मन में यह सोच रहा था कि एक लड़की मुसलमान के घर जाती है या हिन्दू के इसकी हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिलने से कोई तुलना नहीं। एक बार स्वराज्य मिल गया तो सहस्रों स्त्रियाँ पुरुष सुख शान्ति और स्वतन्त्रता का जीवन व्यतीत करने लगेंगे। देश धनवान होगा। सबको खाने, पहनने और रहने को साधन प्राप्त होंगे।

वह दुनिया से प्रेम करता था। पर उसका प्रेम अन्धा नहीं था। वह अपने देश की स्वतन्त्रता से, दुनिया से कहीं अधिक, प्रेम करता था। अतएव वह अपने मन में दुनिया को देश की स्वतन्त्रता की वेदी पर स्वाहा कर चुका था। उसने निश्चय कर लिया था कि वह रोने से मिलने नहीं जावेगा।

एक दिन वह सत्यनारायण के मन्दिर में बैठा चरखा कात रहा था कि एक आदमी पतलून और 'बुश-शर्ट' पहिने मोटर में उससे मिलने आया। सदाशिव ने मन्दिर के बाहर मोटर का शब्द सुना और फिर एक हृष्ट पुष्ट पञ्जाबी को अपने सामने आ यह प्रश्न करते सुना "क्या मैं सदाशिवजी से बात कर रहा हूँ?"

"जी हाँ। आइये, बैठिए।" सदाशिव ने चटाई पर, जिस पर वह स्वयं बैठा था, बैठने को स्थान देकर कहा।

नवागन्तुक चटाई पर बैठ गया। वह जूता पहिने था। इससे उसने टाँगें चटाई के नीचे रखीं। सदाशिव ने चर्खा चलाते हुए पूछा, "आज्ञा करिये।"

"मेरा नाम खुशीराम है। मैं 'लॉ जनल प्रेस' का मैनेजर हूँ। कुछ सार्वजनिक कामों में रुचि रखता हूँ, इससे लोग मेरे पास सहायता के लिए आया करते हैं। मेरे पास एक [illegible]

नम्बर दो, टेनमेण्ट नम्बर १५५ में, एक लड़की लक्ष्मी दवी का विवा
आपसे होने का वचन हो चुका है। अब उसका भाई लड़की की इच्छा
के विरुद्ध, एक मुसलमान से उसका विवाह करना चाहता है। क्या य
ठीक है?"

"विवाह का वचन तो हुआ है, पर इसे विवाह नहीं कह सकते
कानून मेरे हक में नहीं है।"

"मैं समझता हूँ कि आप लड़की के बालिग होने तक विवाह पर
'इजक्शन जारी करवा सकते हैं।"

"इससे हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा हो जाने की सम्भावना है।"

खुशीराम की हँसी निकल गई। उसने कहा, "किसी को, झगड़े से
डरकर अपनी बीवी छोड़ते मैंने पहले कभी नहीं देखा?"

सदाशिव को इससे लज्जा अनुभव हुई। परन्तु खुशीराम को एक
व्यापारी समझ और उसे देश की परिस्थिति से अनभिज्ञ मान, वह अपने
मन के भावों को बता नहीं सका। उसने केवल यह कहा, "आपको
वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान नहीं है।"

"क्या आप उसका ज्ञान करा देंगे?'

सदाशिव ने चरखे से ध्यान हटाकर कहा, "क्या करेंगे जानकर?'

"ज्ञान प्राप्ति से लोग क्या करते हैं? आप तो बहुत पढ़े लिखे युवक
प्रतीत होते हैं। ज्ञान प्राप्ति आचरण सुधारने के काम आती है। क्या मैं
भूल कर रहा हूँ?"

सदाशिव ने चरखे पर तार निकालने का प्रयत्न किया पर तार टूट
गई। इससे पूनी को एक ओर रख, चरखे से मुख मोड़, खुशीराम की
ओर देखते हुए कहने लगा, "मेरा अभिप्राय यह है कि यह आपका
काम नहीं है। आप इसमें हस्तक्षेप कर क्या करेंगे?'

"ठीक! आपको उस लड़की से विवाह करने पर मैं विवश नहीं
कर सकता, परन्तु एक हिन्दू लड़की का एक मुसलमान से विवाह किया
जाना एक भिन्न बात है। इसमें हस्तक्षेप ऐसे ही है, जैसे आप लोगों का,

मेरा मतलब कांग्रेस का, विदेशी कपड़ा की दुकानों पर धरना देना था।'

"यह तो एक जातीय प्रश्न था। जाति का धन विदेश में जाने से रोकना हमारा अधिकार है।'

"भाई सदाशिव जी! यही कारण है मेरे इस बात में हस्तक्षेप करने का। स्त्री, जाति का एक अत्यावश्यक अंग है। इसे कोई दूसरा ले जावे तो जाति की हानि होगी। जाति को इस हानि से बचाना हम सबका फर्ज नहीं है क्या? यदि आप लक्ष्मी से विवाह नहीं करेंगे तो मैं उसका विवाह किसी अन्य हिन्दू से करने का यत्न करूँगा।"

"तो मुसलमानों को आप अपने में नहीं समझते? उनको कोई और जाति समझते हैं?"

"मेरे समझने अथवा न समझने का तो प्रश्न ही नहीं रह गया। मुसलमान स्वयं अपने को हमसे पृथक् जाति मानते हैं। आपने पिछले निर्वाचनों के परिणामों को तो अवश्य पढ़ा होगा?"

"यह तो मुस्लिम-लीग के भ्रमजनक प्रचार का परिणाम हुआ है।"

'मैं भी यही मानता हूँ। साथ ही यह भी मानता हूँ कि मुस्लिम लीग से पहिले, ऐसे ही भ्रमजनक प्रचार के करनेवाले सर सैयद अहमद हुए थे और उससे भी पहिले समय समय पर हमें काफिर कहनेवाले और बहुत से हो चुके हैं। जब तक इस प्रकार का भ्रममूलक प्रचार करनेवालों का असर मुसलमानों पर है, तब तक तो हम अपनी लड़कियों को उपहार के रूप में उनको नहीं दे सकते।'

"आपकी जो इच्छा हो, करें।' सदाशिव ने वादविवाद बन्द करते हुए कहा, "मैं इस झगड़े में पड़ना नहीं चाहता। आपके मस्तिष्क में साम्प्रदायिकता इतनी भरी हुई है कि आप देश का सत्यानाश करके छोड़ेंगे। मुझे आपकी युक्तियाँ ठीक प्रतीत नहीं होतीं।'

इतना कह सदाशिव अपना चरखा कातने लगा।

५

लक्ष्मी सर्वथा निराश हो गई थी। मीना की माँ ने भी कह दिया था कि सदाशिव इस विषय में कुछ नहीं कर सकता। वह सोचती थी कि शायद यह स्वप्न था और उसमें सत्यता नहीं थी। उसके अपने मन में एक मुसलमान की स्त्री बनने के चित्र खिचने लगे। इससे उसके मन में एक प्रकार की ग्लानि उत्पन्न होने लगी।

एक दिन उसने भीतर के कमरे में बैठे बैठे सुना कि मन्नू जमादार, जिससे उसका विवाह होने वाला था, बाहर के कमरे में बैठा उसके भाई से विवाह की बातें कर रहा है। बाहर के कमरे से भीतर के कमरे में आने का द्वार बन्द था। वह अनिच्छा रखते हुए भी उठी और द्वार की दरार में से देखने और सुनने लगी।

मन्नू प्रौढावस्था का पुरुष था। घनी मूछें और दाढ़ी रखता था। देखने में सदाशिव से अधिक शक्तिशाली, परन्तु गन्दा और मैला प्रतीत होता था। सदाशिव के मुख पर सौम्यता और आकर्षण था और मन्नू के मुख पर क्रूरता थी।

रामे कह रहा था, "भाई मन्नू! विवाह तो मैजिस्ट्रेट बुलाकर हो जावेगा, परन्तु सब खर्चा तुमको करना पड़ेगा। मेरे पास खर्च करने को कुछ नहीं। सब बाबा की बीमारी और मृत्यु पर खर्च हो चुका है।"

"मैजिस्ट्रेट को बुलाने पर पच्चीस रुपये फ़ीस लग जावेगी। इससे मेरी राय है कि हम सब लोग कचहरी चले जावें। वहाँ पर सब कुछ हो जावेगा। केवल एक स्टाम्प-पेपर पर प्रार्थना-पत्र देना होगा। फिर घर पर मुल्ला बुलाकर निकाह पढ़ाने में भी तो खर्चा होगा।"

"इसकी क्या ज़रूरत है?" रामे का प्रश्न था।'

"मेरी वह नहीं मानती न।

इस पर मन्नू के साथ आए लोग रामे को अपने साथ बाहर ले गये और बाहर बरामदे में जाकर कुछ बातचीत करने लगे। पीछे मन्नू भी उनमें जा सम्मिलित हुआ। जब वे सब लोग चले गये तो रामे भीतर

आया। बाहर का दरवाज़ा बन्द कर, हाथ में पकड़े नोटों को गि
लगा। लक्ष्मी यह सब-कुछ दरवाज़े की झीथ में से देख रही थी। उ
राने को यह कहते सुना था कि उसके पास खर्च करने को रुपया
है। अब उसने देखा कि दस दस रुपये के कितने ही नोट उसके
हैं। वह समझ नहीं सकी कि ये सब रुपये उसके पास कहाँ से आए है

इस समय लक्ष्मी ने दरवाज़ा खोल दिया। राने ने लक्ष्मी को
वाज़े के पास खड़े देख प्रसन्नता से फूलते हुए कहा, "देखो तुमि
तुम्हारे लिए बढ़िया कपड़े और भूषण खरीदने को इतने रुपये लाया हूँ

"भैया! कहाँ से लाए हो ये रुपये?"

"कहीं से भी हुए, पर हैं ये सब तुम्हारे लिए।"

लक्ष्मी यह कहना चाहती थी कि उसे इनकी आवश्यकता न
परन्तु उसे भय था कि ऐसा कहने पर पीटी जावेगी। इससे चुप रही।

अगले दिन वह मीना के घर गई हुई थी कि एक स्त्री उससे मि
आई। वह लक्ष्मी का घर बन्द देख पड़ोस में मीना की माँ का दरवा
खटखटाने लगी। जब मीना ने दरवाज़ा खोला तो उस स्त्री ने पू
"नम्बर १५५ में जो लक्ष्मी रहती है, वह कहाँ गई है?"

"क्यों! क्या काम है?"

"उससे मिलना है।"

मीना ने लक्ष्मी की ओर देखकर कहा, "वह बैठी है।"

इस पर वह स्त्री मकान के भीतर हो गई और पूछने लगी, "
लक्ष्मी हो?"

"हाँ, क्यों?" लक्ष्मी ने पूछा।

"मैं तुमसे मिलने आई हूँ। अपने घर नहीं चलोगी?"

"आप कौन हैं? यहीं बैठ जाइये। यह," उसने मीना की माँ
ओर देखकर कहा—"चाची हैं।"

"अच्छी बात है!"

इस समय मीना की माँ ने एक चटाई निकाल बिछा दी और आ

हुई स्त्री से कहने लगी, "आप बैठिये।"

उस स्त्री ने कहा, "मैं इस लड़की के विवाह के विषय में बातचीत करने आई हूँ।"

सब चटाई पर बैठ गईं। उस स्त्री ने अपना परिचय देकर कहा, "यहाँ के एक रहनेवाले ने एक प्रार्थना-पत्र दिया है कि एक हिन्दू नाबालिग लड़की का विवाह, उसकी इच्छा के विरुद्ध एक मुसलमान से किया जा रहा है। मैं यह जानने आई हूँ कि यह सच है क्या?"

उत्तर मीना की माँ ने दिया। उसने कहा, "बात तो आपकी सच है, पर आप क्या कर सकती हैं और आप कौन हैं?'

उस स्त्री ने कहा, "यदि लक्ष्मी यह कहे कि वह उससे विवाह नहीं करना चाहती, तो मैं उसकी सहायता कर सकती हूँ।'

मीना की माँ ने पूछा, "कैसे?"

"मैं विवाह रुकाने का यत्न करूँगी।"

"परन्तु मीना के पिता तो कहते थे कि जब लक्ष्मी का भाई उसका विवाह करने के लिए राज़ी है तो इसको कोई भी रोक नहीं सकता।'

"यह बात नहीं। यदि यह मैजिस्ट्रेट के सामने कहे कि वह मन्नू से विवाह नहीं करना चाहती और अपने इस कहने पर डटी रहे तो इसके भाई की इच्छा नहीं चल सकती।'

"सच?" लक्ष्मी ने प्रसन्नता से उछलते हुए कहा। परन्तु तुरन्त ही उसका मुख मलिन पड़ गया। उसने कुछ सोचकर कहा, "एक सदाशिव मास्टर जी हैं। बाबा ने उनको मेरे साथ विवाह कर लेने को कहा था। चाचाजी उनके पास गये थे, परन्तु उन्होंने कहा कि यदि इस विवाह को रोकने का यत्न किया गया तो हिन्दू मुसलमानों में झगड़ा हो जावेगा। उनका कहना है कि झगड़े में खून की नदियाँ बह जाने की सम्भावना है।'

उस औरत ने हँसते हुए कहा, "शायद सदाशिव तुमसे विवाह करना नहीं चाहता। इसी से वह बहाना लगा रहा है। देखो लक्ष्मी।

सम्भवतः तुमसे विवाह करता है या नहीं, मैं नहीं जानती। हाँ, हिन्दू मुसलमान के झगड़े से डरकर तुम्हें एक मुसलमान से विवाह करने की आवश्यकता नहीं। तुमने सीता और राम की कथा सुनी है क्या? रावण सीता से बलपूर्वक विवाह करना चाहता था। इसलिए राम ने लंका को फूँक डाला और रावण के परिवार के लोगों को मार डाला। लंका के युद्ध में सहस्रों मारे गये पर सीता को छुड़ा लिया गया। स्त्रियों की मान प्रतिष्ठा स्थिर रखने के लिए युद्ध हो जाते हैं। इससे तुम्हें डरना नहीं चाहिए। एक पद्मिनी के हरने के लिए एक सम्राट् ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था। उसकी रक्षा के लिए चित्तौड़ के वीर सहस्रों की संख्या में युद्ध करते हुए मारे गये थे और जब वे लड़कर भी उसकी रक्षा नहीं कर सके तो पद्मिनी ने जलती चिता में बैठ अपने प्राणान्त कर दिये थे। अपनी इच्छा के विरुद्ध किसी दूसरे की बीवी बनना उसे स्वीकार नहीं हुआ।'

इन कथाओं को सुन लक्ष्मी के मन में छुपी हुई ग्लानि उभर उठी। उसने आवेश में आ पूछा, "तो मैं क्या करूँ?'

"कल सरकारी अफ़सर यहाँ आवेंगे और तुमसे पूछेंगे। तुम उनको अपना निश्चय बताना। यदि यह बात दृढ़ता से कह सकोगी तो वे तुम्हारा विवाह मन्नू से रोक देंगे और तुम्हारी रक्षा का प्रबन्ध कर देंगे।"

"अच्छी बात है। जब वे आवेंगे तो मैं कह दूँगी परन्तु विवाह के दिन समीप आते जाते हैं।'

"डरो नहीं। मैं उनके साथ आऊँगा। और हाँ आज मेरे आने की और कल किसी सरकारी अफ़सर के आने की बात किसी से नहीं कहना।'

अगला दिन रविवार था। मील बन्द थी। रात्रे शनिवार रात को पेट भर शराब पीकर आया था और रात भर लकड़ी के लट्ठे की भाँति सोया रहा। रविवार के दिन वह ग्यारह बजे दोपहर के समय उठा और चाय पी, शौचादि में लग गया। अभी स्नान कर घर में आया ही था कि एक मैजिस्ट्रेट दो कॉन्स्टेबलों के साथ वहाँ आ पहुँचा। उनके पहुँचने के

हुई स्त्री से कहने लगी, "आप बैठिये।"

उस स्त्री ने कहा, "मैं इस लड़की के विवाह के विषय में बातचीत करने आई हूँ।"

सब चटाई पर बैठ गई। उस स्त्री ने अपना परिचय देकर कहा, "यहाँ के एक रहनेवाले ने एक प्रार्थना-पत्र दिया है कि एक हिंदू नाबालिग लड़की का विवाह, उसकी इच्छा के विरुद्ध एक मुसलमान से किया जा रहा है। मैं यह जानने आई हूँ कि यह सच है क्या?"

उत्तर मीना की माँ ने दिया। उसने कहा, "बात तो आपकी सच है, पर आप क्या कर सकती हैं और आप कौन हैं?"

उस स्त्री ने कहा, "यदि लक्ष्मी यह कहे कि वह उससे विवाह नहीं करना चाहती, तो मैं उसकी सहायता कर सकती हूँ।"

मीना की माँ ने पूछा, "कैसे?"

"मैं विवाह रुकाने का यत्न करूँगी।"

"परन्तु मीना के पिता तो कहते थे कि जब लक्ष्मी का भाई उसका विवाह करने के लिए राज़ी है तो इसको कोई भी रोक नहीं सकता।"

"यह बात नहीं। यदि यह मैजिस्ट्रेट के सामने कह दे कि वह मन्नू से विवाह नहीं करना चाहती और अपने इस कहने पर डटी रहे तो इसके भाई की इच्छा नहीं चल सकती।"

"सच?" लक्ष्मी ने प्रसन्नता से उछलते हुए कहा। परन्तु तुरन्त ही उसका मुख मलिन पड़ गया। उसने कुछ सोचकर कहा, "एक सदाशिव मास्टर जी हैं। बाबा ने उनको मेरे साथ विवाह कर लेने को कहा था। चाचाजी उनके पास गये थे, परन्तु उन्होंने कहा कि यदि इस विवाह को रोकने का यत्न किया गया तो हिन्दू मुसलमानों में झगड़ा हो जायेगा। उनका कहना है कि झगड़े में खून की नदियाँ बह जाने की सम्भावना है।"

उस औरत ने हँसते हुए कहा, "शायद सदाशिव तुमसे विवाह करना नहीं चाहता। इसी से यह बहाना लगा रहा है। देखो लक्ष्मी।

सदाशिव तुमसे विवाह करता है या नहीं, मैं नहीं जानती। हाँ, हिन्दू मुसलमान के झगड़े से डरकर तुम्हें एक मुसलमान से विवाह करने की आवश्यकता नहीं। तुमने सीता और राम की कथा सुनी है न? रावण सीता से बलपूर्वक विवाह करना चाहता था। इसलिए राम ने लंका को फूँक डाला और रावण के परिवार के लोगों को मार डाला। लंका के युद्ध में सहस्रों मारे गये पर सीता को छुड़ा लिया गया। स्त्रियों का मान प्रतिष्ठा स्थिर रखने के लिए युद्ध हो जाते हैं। इससे तुम्हें डरना नहीं चाहिए। एक पद्मिनी के हरने के लिए एक सम्राट् ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था। उसकी रक्षा के लिए चित्तौड़ के वीर सहस्रों की संख्या में युद्ध करते हुए मारे गये थे और जब वे लड़कर भी उसकी रक्षा नहीं कर सके तो पद्मिनी ने जलती चिता में बैठ अपने प्राणान्त कर दिये थे। अपनी इच्छा के विरुद्ध किसी दूसरे की बात मानना उसे स्वीकार नहीं हुआ।'

इन कथाओं को सुन लक्ष्मी के मन में छुपी हुई ग्लानि उभर उठी। उसने आवेश में आ पूछा, "तो मैं क्या करूँ?"

"कल सरकारी अफसर यहाँ आवेंगे और तुमसे पूछेंगे। तुम उनको अपना निश्चय बताना। यदि यह बात तुमने कह दी तो वे तुम्हारा विवाह मन्सूख कर देंगे और तुम्हारी रक्षा का प्रबन्ध कर देंगे।"

"अच्छी बात है। जब वे आवेंगे तो मैं कह दूँगी, परन्तु विवाह के दिन समीप आते जाते हैं।

"डरो नहीं। मैं उनके साथ आऊँगी। पर हाँ, आज मेरे आने की और इस किसी सरकारी अफसर के आने की बात किसी से नहीं कहना।

अगला दिन रविवार था। मौलवी साहब गये। रात सदाशिव रात को पेट भर शराब पीकर आया था और रात भर लक्ष्मी के हाथ के नीचे सोया रहा। रविवार के दिन वह ग्यारह बजे [illegible] के [illegible] चाय पी, शौचादि से लग गया। [illegible] स्नान कर घर में आया ही था कि एक मैजिस्ट्रेट और कॉन्स्टेबलों के साथ [illegible] आ पहुँचा। [illegible] पूछने के

साथ ही वह स्त्री, जो पिछले दिन लक्ष्मी से बात कर गई थी, दो अन्य स्त्रियों और एक वकील को साथ लिए हुए वहाँ पहुँच गए।

राने उन सबको वहाँ अपने मकान के सामने खड़ा देख विस्मय करने लगा। लक्ष्मी चौक में बैठी रसोई कर रही थी। वह उस स्त्री को आया देख सब समझ गई और चौक से उठ कमरे में चली गई।

एक कॉन्स्टेबल ने मकान का नम्बर पढ़ राने से पूछा, "यहाँ कौन रहता है?"

"मैं रहता हूँ। क्या बात है?"

"तुम्हारा नाम?"

"रान।"

"लक्ष्मी, तुम्हारी बहन है?"

"हाँ।"

"तो ठीक है। यहाँ बाहर बरामदे में चारपाई और कुर्सियाँ लगा दो।"

रान एक कुर्सी अपने घर में से और दो कुर्सियाँ अपने पड़ोसियों के घर से ले आया। मैजिस्ट्रेट, वकील और पहिले दिन वाली स्त्री, सब कुर्सियों पर बैठ गए। दो अन्य स्त्रियाँ खाट पर बैठ गई और कॉन्स्टेबल खड़े रहे।

मैजिस्ट्रेट ने राने से कहा, "लक्ष्मी को बुलाओ।"

लक्ष्मी किवाड़ के पीछे खड़ी सब कुछ सुन रही थी। अतएव मैजिस्ट्रेट के कहते ही बाहर आकर खड़ी हो गई।

मैजिस्ट्रेट ने इस मुकद्दमे की फाइल, चमड़े के अपने 'पोर्टमेन्टू' से निकाली। फाइल में रखे प्रार्थना पत्र को निकाल और उसका कुछ काल तक अध्ययन कर कलम निकाल, लिखने को तैयार हो पूछने लगा—

"तुम्हारा क्या नाम है?"

"लक्ष्मी।"

"बाप का नाम?"

"काका।"

"राम तुम्हारा क्या लगता है?"

"सगा भाई है।"

"काका जीता है?"

"मर गए हैं। एक मास से ऊपर हो गया है।"

"तुम्हारी आयु कितनी है?"

"अभी पन्द्रह की नहीं हुई।"

"तुम्हारा विवाह होने वाला है?"

"भैया कहते हैं दो सप्ताह में होगा। तब तक मैं पन्द्रह वर्ष की हो जाऊँगी।"

"विवाह किससे होने वाला है?"

"भैया के अफ़सर हैं। नाम मन्नू जमादार है।"

वह कौन जाति है?

"मुसलमान है। मैं उससे विवाह करना नहीं चाहती।"

"क्यों?"

"वह मुसलमान है और शराब पीता है।"

इतना लिख मैजिस्ट्रेट ने लक्ष्मी के हस्ताक्षर करवा लिए। पश्चात् राम के बयान हुए।

"नाम?"

"राम।"

"क्या काम करते हो?"

"कपड़ा मील में बुनाई का काम करता हूँ।"

"मन्नू को जानते हो?"

"जानता हूँ।"

"उससे लक्ष्मी का विवाह करना चाहते हो?"

"हाँ।"

"वह शराब पीता है क्या?"

"पीता होगा। मैं नहीं जानता।"

"तुम शराब पीते हो?"

"हाँ, कभी-कभी।"

"बस ठीक है। हस्ताक्षर कर दो।"

इसके पश्चात् दो पड़ोसियों के बयान हुए। उन्होंने बताया कि मन्नू शराब पीता है और जब लक्ष्मी उससे विवाह करने से इन्कार करती है तो राने उसे पीटता है।"

अन्त में मैजिस्ट्रेट ने यह आज्ञा लिख दी कि "लक्ष्मी को आर्य समाज कन्या पाठशाला में रखा जावे और वहाँ की मुख्याधिष्ठात्री से इसकी रसीद ले ली जावे। लक्ष्मी जब तक बालिग न हो जावे, उसका विवाह न किया जावे।

"राने की पाँच-सौ की ज़मानत और पाँच-सौ का मुचलका ले लिया जावे, जिससे वह कोई अनियमित बात न कर सके।"

यह सब कार्यवाही खुशीराम के प्रयत्न से हुई थी। शनिवार को आने वाली स्त्री, खुशीराम की धर्मपत्नी राधा थी। वह रविवार को भी आई थी और उसके साथ आने वाली स्त्री आर्य समाज कन्या पाठशाला की मुख्याधिष्ठात्री थी। लक्ष्मी उसके साथ चली गई।

६

रविवार के दिन कर्मचारी यूनियन की कार्यकारिणी की बैठक थी। मन्नू जमादार इसका एक सदस्य था। कार्यवाही समाप्त हुई तो किसी ने जमादार के विवाह की बात चला दी।

"कहाँ?" सबके मुख से निकल गया।

"यहीं। इनकी मील में राने नाम का हमारा सदस्य है। उसकी बहन लक्ष्मी से।"

"तो बहुत मुबारिक हो मन्नू भाई!" यूनियन के प्रधान ने मन्नू से हाथ मिलाते हुए कहा।

इस प्रकार बातें हो रही थीं कि राम आया और मन्नू को एक ओर ले जाकर, उसने जो-कुछ घर पर हुआ था, बता दिया। मन्नू यह सुन पागल हो उठा। उसने राम को साथ ले कार्यकारिणी के सदस्यों के समक्ष आ सब बात बता दी। सब ने बात सुनी तो क्रोध और विस्मय में बैठे रह गये। यूनियन के प्रधान ने पूछा, 'तुमने कहा नहीं कि तुम उसके भाई हो और उसके कुदरती 'गार्जियन' हो?'

"सब-कुछ कहा था। मेरे पड़ोसियों ने मेरे विरुद्ध साक्षी दी। लक्ष्मी ने भी यही कहा कि वह मन्नू से विवाह करना नहीं चाहती क्योंकि वह मुसलमान है।"

यूनियन के प्रधान ने दाँत पीसते हुए कहा, "यह हिन्दू इतना बदकार कौम है कि देश में से साम्प्रदायिकता की आग बुझने नहीं देती। हम तो यह समझते हैं कि यह सरमायादारों का षड्यन्त्र है। हमारी हर कोशिश यह होना चाहिये कि लोगों का ध्यान मज़हब से हटाकर दुनियादारी की ओर लगावें।

मन्नू ने कहा, "भाई जान! यह सरमायादारों की बात नहीं। यह तो कांग्रेसी लोगों की शरारत मालूम होता है। सदाशिव एक कांग्रेसी नेता है। लक्ष्मी उससे प्रेम करती है। उसने ही अफसरों से मिल-जुलकर यह सब-कुछ किया मालूम होता है।"

प्रधान ने सभा विसर्जित कर दी और मन्नू को पीछे रोक लिया। जब दोनों अकेल रह गए तो उसने मन्नू से कहा, "देखो मन्नू भाई! हमारा उसूल (सिद्धान्त) यह है कि मकसद के हासिल करने (लक्ष्य प्राप्ति) के लिए हरएक तरीका इस्तेमाल हो सकता है। इसलिए मेरा यह कहना है कि तुम इसे हिन्दू मुसलमान सवाल बनाकर मुसल्मानों से मदद ले सकते हो। जब झगड़ा होगा तो हमारी यूनियन के मुसलमान मेम्बर तुम्हारी मदद करेंगे।"

"पर यूनियन में फूट पड़ जावगी?

"इसकी चिन्ता न करो। हमारे लोग डिसिप्लिन में ऐसे बँधे हुए हैं

कि ये हमारे कामों की नीति मान लेते हैं। हमारे सब लोग समझते हैं कि End justifies the means (उपायों की श्रेष्ठता का अनुमान उद्देश्यों की श्रेष्ठता से लगता है।)"

मन्नू को लक्ष्मी की सूरत बहुत भाती थी, इससे वह विवाह के लिए बहुत लालायित हो रहा था। अपनी संस्था के प्रधान से मार्ग प्रदर्शन किए जाने पर, वह मुस्लिम लीग के कार्यालय में जा पहुँचा। वहाँ उसकी 'नैशनल मुस्लिम गार्ड्स' के कप्तान से मुलाकात हुई। उसने इसकी कथा सुनी और सोचकर कहा, "भाई! तुम पता करो कि लड़की कहाँ रखी है। देखो, हमें कायदे आज़म की खुफ़िया हिदायत (आज्ञा) मिली है कि हम बम्बई में 'डायरेक्ट ऐक्शन' की तैयारी करें। डायरेक्ट ऐक्शन के दिन हम तुम्हें कुछ गार्ड्स दे देंगे। तुम उनको और अपनी यूनियन के मुसलमान मेम्बरों को साथ लेकर उस लड़कियों के स्कूल पर धावा बोल देना। फिर एक लड़की क्या, सब तुम्हारे अधिकार में होंगी।"

मन्नू आशा बाँध वहाँ से लौटा और अपनी मील में मुसलमान कर्मचारियों को संगठित करने लगा। मील के समय के पश्चात् मुस्लिम नैशनल गार्ड्स का एक आदमी आकर लाठी चलाना, कुश्ती करना, गदका इत्यादि सिखाने लगा। रात तथा अन्य हिन्दू कर्मचारियों को बताया जाता था कि मज़दूरों का राज्य स्थापित करने के लिए तैयारी की जा रही है। जब प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त हो जाती तो चुने हुए लोगों की दरगाह शाह मुराद में, छुरा चलाना, बन्दूक चलानी, और लड़ाई के दूसरे ढंग सीखने के लिए भेजा जाने लगा। बम्बई की प्रत्येक मसजिद में यह तैयारी हो रही थी। कर्मचारी यूनियन के मुस्लिम सदस्यों को यह आज्ञा हो गई थी कि वे नित्य मसजिदों में जाया करें। कभी कोई ईमानदार सदस्य पूछ लेता कि इससे तो साम्प्रदायिकता बढ़ेगी तो यूनियन का प्रधान आँख झपककर कह देता, "चुपचाप करते जाओ।"

मन्नू जमादार सप्ताह में एक-दो बार मुस्लिम लीग के कार्यालय में आकर अपने काम की प्रगति [illegible]

मुस्लिम गार्ड्स के कप्तान से उसे प्रोत्साहन मिला करता था।

एक दिन कप्तान ने पूछा, "जमादार कितने आदमी तैयार हैं?

"तीन सौ से ऊपर हैं!"

"उनमें कितने छुरा चलाना जानते हैं?"

"पचास से ऊपर हैं।"

यह सब कप्तान ने अपनी किताब में लिख लिया।

मन्नू ने पूछा, "क्यों साहब! हमारी कब ज़रूरत होगी?"

"अभी तैयारी काफ़ी नहीं। कोशिश करते जाओ।"

७

'मौण्ट प्लैजेण्ट' मालाबार हिल्ज़, बँगला नम्बर दस पर एक दिन भारी चहल-पहल थी। मिस्टर मुहम्मद अली जिन्ना, प्रेज़िडेण्ट मुस्लिम लीग, दिल्ली से लौट आए थे और उनके अपने घर में मुस्लिम-लीग की कार्यकारिणी की बैठक हो रही थी। बाहर लॉन में समाचार-पत्रों के संवाद-दाताओं की भीड़ लगी थी। कोठी के बाहर मुस्लिम नैशनल गार्ड्स के वॉलण्टीयर खड़े पहरा दे रहे थे।

भीतर एक कमरे में एक दर्जन से अधिक लोग बैठे कायदे आज़म की प्रतीक्षा कर रहे थे। कायदे आज़म मिस्टर जिन्ना, एक दूसरे कमरे में नैशनल मुस्लिम गार्ड्स के भिन्न-भिन्न स्थानों के कप्तानों से मिल रहे थे। कप्तान अपने अपने स्थान की तैयारी का वृत्तान्त सुना रहे थे। कितने वॉलण्टीयर भर्ती हुए थे और कितने क्या-क्या जानते हैं? आग लगाने के कितने बम्ब बने, इत्यादि सूचनाएँ दी जा रही थीं।

अन्त में कायदे आज़म ने मुस्लिम गार्डों के कप्तानों को कार्यक्रम समझाया, "हम लोगों ने मुसलमानों के लिए हिन्दुस्तान का एक हिस्सा पाने की माँग की हुई है। अब इंग्लैंड में मज़दूर सरकार बन चुकी है। यह सरकार टोरी सरकार से ज़्यादा ईमानदार है। सरकार हमारी माँग के पीछे ताकत देखना चाहती है। कैबिनेट मिशन से बातचीत करते

हुए, कई बार मुझसे कहा गया कि कांग्रेस के पीछे तो पूर्ण देश है। सन् १६४२ के उपद्रवों में भी बीस हज़ार से ऊपर लोग कैद हुए थे, जिन्होंने मुआफी नहीं माँगी थी। मुस्लिम-लीग के पास ऐसी कोई ताकत नहीं और यदि मुल्क के एक हिस्से का राज्य मुस्लिम-लीग को दे दिया गया तो वे कैसे उसमें हुकूमत कायम करने में कामयाब हो सकेंगे? मुसीबत यह है कि जहाँ पाकिस्तान बनना है, वहाँ ही हमारी ताकत कम है। सूबा सरहद्दी, पंजाब, बंगाल और मालाबार इन सब जगहों पर न तो काबिले जिकर कोई लीडर है, न ही कोई लड़ने मरने वाला आवाम। हैदराबाद हमारा गढ़ ज़रूर है, परन्तु वहाँ जनता हिन्दू है।

"अब यह काम मैंने तुम लोगों को दिया है कि एक तो अपने में इतना डिसिप्लिन पैदा करो कि बिना हुक्म तुमने कुछ नहीं करना, चाहे दूसरी ओर से तुम पर गोली चले। दूसरे जब आज्ञा मिले तो हिन्दुओं से दोस्ती, हमसायापन अथवा रहम नहीं दिखाना। आपने तो अपना फ़र्ज बजा लाना है।

"मकसद एक है। कम से-कम उन इलाकों को, जहाँ पाकिस्तान बनना है, हिन्दुओं से खाली करना है। या तो उनको डरा धमकाकर वहाँ से भगा देना है, या उन सबको मुसलमान बना लेना है। पाकिस्तान के लिए दो शहर बहुत ज़रूरी हैं। एक कलकत्ता और दूसरा लाहौर। दोनों को हिन्दुओं से खाली करना है। यहाँ से इनको भगा दो, मुसलमान बना लो नहीं तो मौत के घाट उतार दो।

"अब आप लोग जाओ और हुक्म का इन्तज़ार करो।"

इसके पश्चात् कायदे आज़म मुस्लिम-लीग की वर्किंग कमेटी की मीटिंग में जा पहुँचे। वहाँ 'डायरेक्ट ऐक्शन' को आरम्भ करने के स्थान, ढंग और समय पर विचार हो रहा था। इस कार्य को आरम्भ करने के लिए तीन स्थान विचाराधीन थे। एक बम्बई, दूसरा लाहौर और तीसरा कलकत्ता।

जब कायदे आज़म को बातचीत के विषय का पता चला तो उसने कहा, "मैंने अभी नैशनल गार्ड्स के कप्तानों से बातचीत की है। उन लोगों से जो खबर मिली है, उससे मेरा यह ख्याल है कि बम्बई में नैशनल गार्ड्स की तादाद बहुत कम है। यहाँ मरहठे और खास तौर पर भट्टी लोग लड़ाके हैं और भारी तादाद में हैं। यहाँ सरकार कांग्रेसी है मगर महात्मा गांधी की अहिंसात्मक नीति के माननेवालों की तादाद बहुत कम है। यहाँ हिन्दू-महासभा का जोर भी काफी है। इन तमाम वजूहात से डॉयरेक्ट ऐक्शन शुरू करने के लिए बम्बई अच्छी जगह नहीं है। मैं शुरू शुरू में नाकामयाबी देखना नहीं चाहता।

"लाहौर में यूनियनिस्ट पार्टी का सिक्खों और कांग्रेसियों से समझौता हो जाने से, सरकार हमारे हाथ में नहीं आ सकी। यहाँ आर्यसमाज का जोर है और हिन्दू मुसलमानों से बहुत ज्यादा तादाद में रहते हैं। इसलिये मैं इस काम को शुरू करने के लिये लाहौर को भी ठीक जगह नहीं समझता।

"इस लड़ाई का शुरू ऐसी जगह से होना चाहिये, जहाँ हमें पूरी कामयाबी हासिल हो सके। सब कोई काम अच्छे तरीके से शुरू हो जावे तो उसे आधे से ज्यादा कामयाब हो गया समझ लेना चाहिये।

"इसलिए मैंने फैसला कर लिया है कि यह काम कलकत्ता में शुरू किया जावे। वहाँ हिन्दुओं की आबादी ज्यादा तो है पर यह आबादी उन लोगों की है, जो या तो धोतीपोश बाबू हैं या बलदार पगड़ी पहनने वाले मारवाड़ी। न वहाँ आर्यसमाज का जोर है और न ही हिन्दू महासभा का। कलकत्ता क्लर्कों का शहर है। वहाँ मुसलमानी सरकार है। वहाँ के प्रीमियर हमारी वर्किङ्ग कमेटी के मेम्बर हैं और वहाँ के गवर्नर हिन्दुओं के विरोधी हैं। कलकत्ता पुलिस में ज्यादा मुसलमान हैं।

"मैं चाहता हूँ कि पहिले दिन ही इतना खौफ पैदा कर दिया जावे कि बङ्गाली और मारवाड़ी एक दूसरे पर गिरते-पड़ते ऐसे भागें कि कलकत्ता से जाने वाली सड़कों पर स्थान न रहे। इस डायरेक्ट-ऐक्शन का यह असर होना चाहिये कि कलकत्ता की हिन्दुओं की साठ प्रतिशत

आबादी तीन दिन में कम होकर चालीस प्रतिशत् रह जाय।"

८

बाहर घास के मैदान में समाचार पत्रों के सवाददाता बैठ बैठ थक गये तो छोटी छोटी टोलियों में बैठ या तो ताश खेलने लगे या हँसी ठट्ठा करने लगे। इनमें एक मिस कर्टिस 'न्यूयार्क टाइम्स' की सवाददात्री थी। वह तीस-बत्तीस वर्ष की अमरीकन युवती, दुबली पतली, परन्तु चंचल और चमकदार आँखों वाली थी। वह सवाददाताओं की टोलियों में इधर-उधर घूम रही थी। हिन्दुस्तानी पत्रों के प्रतिनिधि उसका, स्त्री होने के नाते, आदर करते थे और उसे देख हँसी की बातें बन्द कर देते थे। इससे मिस कर्टिस यह समझती थी कि ये लोग उससे कोई समाचार छुपा रहे हैं। यह बात उसकी बेचैनी बना रही थी।

उत्तरी भारत के रहने वाले कुछ सवाददाता एक पृथक् मण्डली बनाए घास पर बैठे थे। पंजाबियों के विशेष हास्यप्रद गुणों का उल्लेख हो रहा था। सीधे, सरल, हँसोड़ मुख और मोटी बुद्धि के पंजाबियों की बातें हो रही थीं। एक सुना रहा था, "पंजाब के एक मन्त्री एक साथ सर खिज़र के यहाँ खाना खा रहे थे। खाना बहुत स्वादिष्ट था और कई 'कोर्सिज़' थे। खाने के साथ बढ़िया स्कॉच ह्विस्की का भी प्रबन्ध था।

"इस प्रकार खाते-खाते बहुत देर हो गई और मन्त्री-महोदय कुछ अधिक पी जाने के कारण अपनी कोठी को जाना कठिन अनुभव कर रहे थे। सर खिज़र ने कह दिया कि श्रीमान् रात को उनकी कोठी पर ही रह जायें तो ठीक है।

"मन्त्री महोदय ने धन्यवाद दिया और मान गये।

"उनके लिए एक कमरे में बिस्तर लगवा दिया गया और वे सोने की पोशाक पहन बिस्तर पर लेट गए। एकाएक वे उठे और उन्हीं कपड़ों में अपनी मोटर में, जो कोठी के पिछवारे में खड़ी थी, बैठकर उसे स्टार्ट करने लगे। सर खिज़र कोठी के बरामदे में खड़े एक और मेहमान को

विदा कर रहे थे। उनकी दृष्टि उन मोटर स्टार्ट करते हुए मंत्री महोदय की ओर चली गई। उन्होंने समीप जा पूछा, 'ऑनरेबल मन्त्री किधर जा रहे हैं?'

मैं समझता हूँ कि 'मिसेज' को बता आऊँ कि मैं रात यहाँ से आ नहीं सकता।' '

सब खिलखिलाकर हँस पड़े। इस हँसी की ध्वनि को सुन मिस कर्टिस इस मण्डली की ओर आ पूछने लगी, "वट प्लैजेन्ट न्यूज़ हैव यू गॉट? (कौनसा आनन्दप्रद समाचार आपको मिला है?)'

"आश्चर्य! आश्चर्य!! समाचार तो बहुत हैं।" ट्रिब्यून दैनिक के संवाददाता ने उससे कहा। अन्य सब लोग चुप कर गये। वह उसके पास आकर बैठ गई। ट्रिब्यून दैनिक के संवाददाता ने उसका अपने साथियों से परिचय कराया, 'यह हैं मिस कर्टिस ऑफ 'न्यूयॉर्क टाइम्स'। मुझे आपके दर्शन का सौभाग्य १६४४ में गांधी जिन्ना वार्तालाप के समय हुआ था।"

"हाँ, मुझे याद है," मिस कर्टिस ने कहा, "आपने मुझसे शर्त लगाई थी कि मिस्टर जिन्ना संवाददाताओं को पानी भी नहीं पूछेगा। मैंने कहा था कि अंग्रेज़ी पढ़ा लिखा आदमी इतना तो सभ्य होगा ही घर आए हुए लोगों को चाय-पानी पूछ ले। वह शर्त आप जीते थे और मुझे आपको उस रात ताज में डिनर खिलाना पड़ा था।"

"आपकी स्मरण शक्ति बहुत अच्छी है, मिस कर्टिस। आज का 'स्कूप' यह है कि वर्किंग कमेटी की बैठक के पश्चात् मिस्टर जिन्ना कोठी के बाहर भी नहीं आयेंगे और चपरासी के हाथ यह कहला भेजेंगे कि उनके पास देने को कोई समाचार नहीं है। बताओ शर्त लगाती है?'

मिस कर्टिस ने कहा, 'मैं समझती हूँ कि आप 'स्कूप' लगाने में बहुत चतुर हैं। इस कारण शर्त नहीं लगाती परन्तु इतना बता देना चाहती हूँ कि मुझसे विशेष भेंट होगी।

एक भद्दी काया वाले, दिल्ली के एक पत्र के प्रतिनिधि ने कहा, "यह

तो आपकी सुन्दर चमत्कार आँखों के दर्शन के लिए हो सकता है। इसमें, यदि ये शर्त लगायेंगे तो निश्चय हार जायेंगे।"

"आपकी प्रशंसा के लिए धन्यवाद।" मिस कर्टिस ने कहा।

मिस्टर सिंह ने कहा, "यदि मिस कर्टिस शर्त लगाएँ तो मैं हारने के लिए भी तैयार हूँ। इनके साथ 'डिनर' खाने के आनन्द के लिए हार भी पसन्द है।"

"शर्त मंजूर है।" मिस कर्टिस ने कहा।

इस समय सायंकाल के पाँच बज रहे थे। भीतर से चपरासी आया और समीप आकर पूछने लगा, "मिस कर्टिस कौन हैं?"

मिस कर्टिस ने पूछा, "क्या है?"

"आपको साहब भीतर बुलाते हैं।"

मिस्टर सिंह के एक साथी ने कहा, "आप हार गये, खाना खिलाना होगा?"

"उनके साथ खाना खाने का आनन्द प्राप्त करने योग्य है। यह हार नहीं।"

इस समय मुस्लिम लीग के मन्त्री महोदय बाहर आए और बोले, "कायदे आजम साहब का कहना है कि उनके पास आपको देने लायक कोई समाचार नहीं। आप लोग जा सकते हैं।"

सब संवाददाता मिस्टर सिंह का मुख देखने लगे। वे हैरान थे कि उसे यह सब कैसे सूझी थी। मिस्टर सिंह ने सबसे आगे हो मन्त्री से पूछा, "पर साहब! इतना तो आप भी बता सकते हैं कि 'वर्किंग कमेटी' की बैठक समाप्त हो गई है या नहीं? क्या यह कल भी जारी रहेगी?'

मन्त्री ने बता दिया, 'खतम हो गई।"

"क्या यह सत्य नहीं कि वर्किंग कमेटी के मेम्बरों को कायदे आजम ने डाँटा है?"

मन्त्री हँस पड़ा और बोला, "मिस्टर सिंह! तुम इतने पुराने काम करने वाले होते हुए यह भी नहीं जानते कि कोई भी डाँट खाने वाला

इसे स्वीकार नहीं करेगा।"

सब हँस पड़े।

मिस्टर सिंह ने शिकायत के रूप में कह दिया, "जनाब ! मुस्लिम लीग के प्रधान ने एक औरत को विशेष मुलाकात इनायत कर मुझे शत में हरा दिया है। मैंने शत लगाई थी कि अन्य संवाददाताओं से उसे तरजीह नहीं दी जावेगी।"

एक और ने पूछ लिया, "डायरेक्ट ऐक्शन का फैसला हो गया है क्या ?"

मन्त्री ने मुस्कराते हुए कहा, "जो कुछ फैसला हुआ है या होगा, सब आप लोगों के सामने अमली सूरत में आ जायगा। खुदा हाफिज।"

इतना कह मन्त्री कोठी के भीतर चला गया। सब एक-दूसरे का मुख देखते रह गए। किसी ने मिस्टर सिंह से कहा, "आओ चलें।"

"भाई ! मुझे मिस कर्निस की प्रतीक्षा करनी है। उसके साथ 'डिनर' खाना है।"

मिस्टर सिंह अकेला कोठी के बाहर खड़ा रहा। मिस कर्निस एक घण्टा-भर कायदे आज़म के साथ बातें करती रही। जब वह बाहर निकली तो अँधेरा हो चुका था। अन्य सब संवाददाता जा चुके थे। उसने मिस्टर सिंह को खड़ा देख पूछा, "ओह, आप अभी हैं ?"

"हाँ, आपको 'डिनर' पर ले जाना है। आज शर्त मैं हारा हूँ।"

मिस कर्निस ने हँसते हुए कहा, "मुझे मालूम था कि मिस्टर जिन्ना अमेरिकन पत्रों में कुछ छपवाना चाहेंगे और इसलिए मुझसे भेंट करेंगे। मेरा अनुमान ठीक निकला है।"

दोनों टैक्सी-स्टैंड की ओर चल पड़े। साथ चलते-चलते मिस्टर सिंह ने कहा, "मिस कर्निस ! मैं आपको एक और 'स्कूप' देता हूँ। मिस्टर जिन्ना ने अमरिका को यह सूचना दी है कि अंग्रेज़ी मज़दूर सरकार और हिन्दू-कांग्रेसी मिलकर मुसलमानों के विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहे हैं। मुस्लिम लीग ने इस षड्यन्त्र का विरोध करने का निश्चय कर लिया

है। ये इस अपवित्र मेल को तोड़ने का भरसक यत्न करेंगे। उसे अमेरिका को यह बताना है कि हिन्दुस्तान के मुसलमानों के साथ दुनिया भर के मुसलमानों की हमदर्दी है। यदि उनसे अच्छा व्यवहार नहीं हुआ तो मुस्लिम देशों का समूह अमेरिका तथा इंग्लैण्ड का विरोधी दल बन जावेगा।"

मिस कर्टिस खिलखिलाकर हँस पड़ी और चुप रही। मिस्टर सिंह ने कहना जारी रखा, "रात को 'मानचेस्टर-गार्जियन' के संवाददाता से वह मिल रहा है।"

मिस कर्टिस ने अचम्भा प्रगट करते हुए पूछा, "आपको किसने कहा है यह?"

मिस्टर सिंह हँस पड़ा और अपनी बात कहता गया, "ब्रिटेन के समाचार-पत्रों से वह यह कहना चाहता है कि हिन्दुओं की संख्या हिन्दुस्तान में अधिक है, जिससे वे धींगामस्ती कर मुसलमानों को गुलाम बनाना चाहते हैं। जब एक बार देश का विभाजन मान लिया गया तो फिर उनको इकट्ठे बाँधकर रखना हिन्दुओं की जबरदस्ती है।"

इस समय वे टैक्सी स्टैंड पर पहुँच गये। वहाँ से वे टैक्सी में बैठ 'ताज' की ओर चल पड़े। मार्ग में मिस कर्टिस ने पूछा, "मिस्टर सिंह! आप हिन्दू हैं?"

"मैं संवाददाता हूँ।"

मिस कर्टिस ने मुस्कराकर कहा, "मेरे पूछने का अभिप्राय यह है कि क्या आप पाकिस्तान बनना पसन्द करते हैं?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"यह प्रश्न अब्राहम लिंकन से पूछा जाना चाहिये था।"

"हमें 'युनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका' को एक रखने के लिए भयंकर युद्ध करना पड़ा था परन्तु मैं देखती हूँ कि यहाँ के नेता युद्ध लड़ने से घबराते हैं। मेरा मतलब यह है कि कांग्रेसी नेता डरपोक हैं।"

"ठीक नहीं कहा जा सकता। वे अपने निश्चय पर दृढ़ हैं। केवल युद्ध करने को ठीक तरीका नहीं समझते।"

"तो क्या उन्होंने युद्ध से कोई अच्छा तरीका मालूम कर लिया है?"

"हाँ! महात्मा गांधी का अहिंसात्मक सत्याग्रह। इस ढंग से हमने ब्रिटिश जैसी शक्तिशाली जाति को हिला दिया है।"

मिस कर्ग्सि खिलखिलाकर हँस पड़ीं, "देखो मिस्टर सिंह!" उसने कहा, "महात्मा गांधी का तरीका न केवल असफल रहा है, प्रत्युत हानिकर भी सिद्ध हुआ है। उन्होंने दक्षिणी अमरीका में सत्याग्रह किया था। उसका परिणाम यह हुआ है कि वहाँ के अफसर हिंदुस्तानियों के अधिक विरोधी हो गए हैं और हिंदुस्तानी, अमरीका के असली रहने वालों से दूर हो गए हैं। मैं यह भविष्यवाणी करती हूँ कि दक्षिणी अमरीका की समस्या बिना युद्ध के नहीं सुलझेगी। जो कौम उसके लिए तैयारी नहीं करती, वह पिस जाएगी और मर जाएगी।

"फिर देखो महात्माजी ने खलाफत के लिए सत्याग्रह किया। उसका परिणाम क्या हुआ है? खलाफत का नामोनिशान नहीं रहा। यदि यह मानें कि महात्माजी ने खलाफत का प्रश्न मुसलमानों को खुश करने के लिए किया था, तो वह भी सफल नहीं हुआ। वे खुश नहीं हुए प्रत्युत यह बात संशयरहित है कि पिछले तीस वर्षों में हिंदुस्तान के मुसलमान हिंदुओं से दूर हुए हैं।

"यह बात भी ग़लत है कि 'क्विट इण्डिया' आन्दोलन के प्रभाव से हिंदुस्तान को कुछ मिला है या मिलने वाला है। इस आन्दोलन का यदि कुछ प्रभाव अंग्रेजों पर या हम लोगों पर हुआ है, तो यह कि हमारा हिंदुओं पर भरोसा कम हुआ है। अंग्रेज अब बिना पाकिस्तान बनाए और हिंदुस्तान को, इस प्रकार बिना कमजोर किए यहाँ स्वराज्य नहीं देंगे।

"अंग्रेज़ कौम में विकास हो रहा है। उनकी राजनीतिक संस्थाओं में भी विकास हो रहा है। इस विकास को दोनों महायुद्धों ने सहायता

दी है। फिर बाबू सुभाष चन्द्र बोस ने भी अँग्रेजी कौम के दिमाग में विकास की गति को तीव्र किया है।

"सब से बड़ा कारण अँग्रेजों के मानसिक विकास के तेज होने का, रूस में सोवियट सरकार का बनना और उसकी उन्नति करना है। प्रजातन्त्रवादियों को भावी युद्ध में हिन्दुस्तानी फौजी शक्ति की आवश्यकता, हिन्दुस्तान को स्वराज्य दिलाने में कारण बन गई है।"

"पर हम लोग समझते हैं," मिस्टर सिंह ने कहा, "कि महात्माजी के आन्दोलन ने संसार को यह सिद्ध कर दिया है कि हम ईमानदार लोग हैं। हम किसी से लड़ना नहीं चाहते और किसी को हम से डरना नहीं है। इन्हीं कारणों से अँग्रेज हमको स्वराज्य देने पर विवश हो गए हैं।"

"यदि मैं एक बात कहूँ तो नाराज़ तो न होंगे?"

"अजी नहीं, आपकी बातों में मज़ा आता है।"

"तब सुनो। महात्माजी को जब क्रिप्स योजना दी जा चुकी थी, तब भी उन्होंने सैबोटेज करने वाला आन्दोलन चलाने में संकोच नहीं किया। इससे हम महात्माजी को किञ्चित् भर भी विश्वास के योग्य नहीं मानते। हम मिस्टर जिन्ना को अधिक विश्वास योग्य समझते हैं। अब भी यदि कैबिनेट मिशन के साथ कोई समझौता हुआ है तो यह मौलाना आज़ाद और खान अब्दुल गफ्फार खाँ के प्रयत्नों से हुआ है। महात्मा गांधी तो मानते ही नहीं थे।"

"मेरा विचार है कि आप लोग हमको समझ ही नहीं सकते।" मिस्टर सिंह ने निरुत्तर हो कहा।

"हाँ। आप, अर्थात् मिस्टर सिंह को समझना कठिन है। परन्तु महात्मा गांधी को हम भली भाँति समझते हैं। वे न तो इतिहास जानते हैं न ही मनोविज्ञान। उनका राजनीति का ज्ञान सर्वथा प्रारम्भिक है।"

"आप ऐसा कहकर उन सब लोगों को मूर्ख कह रही हैं, जो महात्माजी को भगवान् का अवतार समझते हैं।"

... सन्देह नहीं किया परन्तु

भगवान् भी तो दण्ड देने के लिए अवतार लेते हैं। महात्मा गांधी हिन्दुस्तानियों को, विशेष रूप से हिन्दुओं को, उनके पापों का फल देने में लगे हुए हैं। वे इन लोगों को दुनियाँ के पर्दे से मिटा देना चाहते हैं।"

इस समय वे होटल 'ताज' के सामने आ पहुँचे थे। मिस्टर सिंह ने कहा, "लो हम आ गए। आइये, इस घृणित राजनीति को छोड़ आपके प्रसन्नता से रोशन मुख को देखने का आनन्द पाऊँ।'

मिस कर्टिस ने मुस्कराते हुए और तिरछी दृष्टि से देखते हुए कहा, "मैं आपको इतना 'गैलेंट' नहीं समझती थी।'

दोनों होटल में घुस गए।

६

सदाशिव को जब मालूम हुआ कि लक्ष्मी को रानी से पृथक् कर आर्य कन्या पाठशाला के बोर्डिङ्ग हॉउस में रख दिया गया है तो उसके मन में बहुत प्रसन्नता हुई। इसके पश्चात् जब उसने देखा कि किसी प्रकार का हिन्दू-मुस्लिम फसाद नहीं हुआ तो वह अपनी आत्मा की दुर्बलता पर लज्जित हुआ।

उसके मन में लक्ष्मी के लिए अनुराग था, परन्तु झगड़े से डरकर ही वह अपने मन के भावों को दबाए हुए था। जब उसने देखा कि लक्ष्मी के आर्य कन्या पाठशाला में ले जाए जाने पर भी किसी प्रकार का झगड़ा नहीं हुआ, तो उसके मन में पुनः उससे सम्बन्ध उत्पन्न करने की इच्छा होने लगी। इस इच्छा की पूर्ति के लिए, एक दिन वह कन्या पाठशाला की मुख्याधिष्ठात्री के पास जा पहुँचा। वह उसे नहीं जानती थी। इस कारण उसने सदाशिव को राधा देवी के पास भेज दिया। राधा देवी उस कन्या पाठशाला की मैनेजर थीं।

सदाशिव जब राधा देवी से मिलने गया तो वह खुशीराम तथा अपने बच्चों के साथ सायंकाल का अल्पाहार कर रही थी। नौकर ने सदाशिव का पत्ता राधा देवी के सामने रखा तो उसकी हँसी निकल गई। खुशीराम

ने अचम्भे में उसकी ओर देखा तो उसने कहा, "श्रीमान् सदाशिवजी आये हैं।"

"क्या काम हो सकता है उसका तुम्हारे साथ?"

"लक्ष्मी के सम्बन्ध की ही बात होगी। उसका मुझसे और क्या प्रयोजन हो सकता है!"

"अब लक्ष्मी से उसका क्या सम्बन्ध है? विवाह तो उससे हो नहीं सकता।"

"मैं समझती हूँ कि बुला लूँ।"

उसने नौकर को कहा, "उनको ले आओ।"

सदाशिव आया तो उसको चाय का निमन्त्रण दे दिया गया। एक आध बार न करने पर उसने चाय स्वीकार कर ली। इस समय उसने खुशीराम को पहिचान लिया। खुशीराम ने सदाशिव को नमस्ते कहकर पूछा, "आपने मुझको पहिचाना है या नहीं?"

"आप मुझसे मन्दिर में मिलने आये थे न?"

"आपकी स्मरणशक्ति बहुत अच्छी है। उस समय आपने मेरा कहना नहीं माना था।"

"मैं समझता हूँ कि उस समय मेरे न करने से कुछ हानि नहीं हुई। मैं कांग्रेस असेम्बली पार्टी का सदस्य होने से, यदि इसमें हस्तक्षेप करता तो बहुत हल्ला-गुल्ला होता। आपका काम भी दुस्तर हो जाता।"

"हानि तो हुई है और आपको। आप उस लड़की की नज़रों में गिर गए हैं। वह आपसे घृणा करने लगी है। हमारी दृष्टि में तो कांग्रेस और भी पतित हो गई है।"

"इसमें कांग्रेस का क्या सम्बन्ध है? जो कुछ मैंने किया था और जो कुछ मैं अब कर रहा हूँ, वह सब अपने आप कर रहा हूँ।"

राधा इस पर मुस्कराई और कहने लगी, "अभी तो आप कह रहे थे कि कांग्रेस असेम्बली पार्टी का सदस्य होने से आपका इस बात में दख

इससे सदाशिव कुछ लज्जित हुआ परन्तु शीघ्र ही अपने को सँभाल कर कहने लगा, "वह बात दूसरी है। उसका कांग्रेस के सिद्धान्तों से कोई सम्बन्ध नहीं। वह तो मैंने एक नीति की बात कही है।'

'यही तो हम सोच रहे हैं कि कांग्रेस की नीति और उसके नेताओं की नीति में कुछ अन्तर है क्या?" खुशीराम ने कहा। "आप उस लड़की को, जिसको अपनी स्त्री बनाना चाहते थे, इसलिए छोड़ बैठे थे कि ऐसा करने से हिन्दू-मुस्लिम फ़साद होने की सम्भावना थी। आप जैसे कांग्रेसी नेता से यह व्यवहार कांग्रेस के मन्तव्यों के कारण कहूँ अथवा आपकी मानसिक दुर्बलता के, आप ही बता सकते हैं।'

'मैं अब सोचता हूँ कि यह व्यवहार मेरे मन की दुर्बलता के कारण ही कहना चाहिए।"

'तो ठीक है। इस पर तो मेरा यह विश्वास ठीक ही निकला है कि लक्ष्मी पर इमन दुगुनी भलाई की है। एक उसको मुसलमान बन जाने से बचाया है और दूसरे उसको एक दुर्बलात्मा की बीवी बनने से।'

'पर मैं तो उसको मिलने की स्वीकृति माँगने आया हूँ।"

"किस लिए? क्या काम है?" राधा देवी ने पूछा।

"आप जानती हैं कि मेरा उससे सम्बन्ध रहा है।"

"मैं समझता हूँ कि यह सम्बन्ध टूट चुका है। आपने अपने विचार से तो उसको एक ऐसे आदमी के हाथ सौंप दिया था, जिसके पास जाने से वह घृणा करती थी। अब आपका उससे मिलने का क्या अधिकार हो सकता है?'

'मैं अपने उस समय के व्यवहार से लज्जित हूँ। उसके लिए मैं उससे क्षमा माँगना चाहता हूँ। इसलिए मैं उससे मिलना चाहता हूँ। साथ ही मैं यत्न करना चाहता हूँ कि उससे अपना पुराना सम्बन्ध उत्पन्न करूँ।' सदाशिव ने आँखें नीची किये हुए कहा।

"तो यदि, अब भी उससे विवाह करने पर हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा होने की सम्भावना हो गई तो क्या करोगे?'

"यह मैं इस समय कैसे बता सकता हूं ? इस समय तो किसी झगड़े की सम्भावना प्रतीत नहीं होती।"

इस पर खुशीराम ने बात टोककर कहा, "देखिये पण्डित सदाशिव! आपको भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि इस लड़की पर एक मुसलमान की नज़र है। यदि तो आप उससे इस लड़की की रक्षा कर सकते हैं, या कम-से-कम उसकी रक्षा के लिए जी-जान की बाज़ी लगा सकते हैं, तब तो उसके पीछे पीछे भागने की ज़रूरत है। नहीं तो विवाह का कहीं और प्रबन्ध कर लीजिये।

"जब मेरा उससे विवाह हो जायगा, तब मैं इस विषय पर सोच लूँगा।"

"क्या सोच लीजियेगा ? आप तो उस दिन कहते थे कि हिन्दू मुस्लिम फ़साद हो जाने पर स्वराज्य मिलने से रह जायेगा। मेरा प्रश्न तो यह है कि क्या अब भी आप अपनी बीबी को प्रत्याशित स्वराज्य पर न्योछावर कर देंगे ?"

"स्वराज्य बीबी से कहीं अधिक प्रिय है।"

"मैं समझता हूँ कि इस लड़की से आपका विवाह उचित नहीं।"

"इसस ही क्यों ?'

"तुम उसके अधिकारी नहीं हो।"

"अधिकार पाने के लिए क्या करना चाहिए ?'

"उसके प्रति अपना कर्तव्य-पालन करना होगा।'

"कर्तव्य कर्तव्य में विरोध हो तो किसका पालन करना होगा ?"

"कर्तव्य-कर्तव्य में विरोध नहीं होता। सत्य एक है। मिथ्या और सत्य का विरोध तो होता है। सत्य-सत्य में विरोध नहीं हो सकता। बुद्धि में भ्रम हो जाने से मिथ्या वस्तु सत्य दिखाई देने लगती है। इसी से विरोधाभास होता है।'

"मुझे उसके पाने का यत्न तो करने दीजिये।"

"वह आप जैसे विचार के आदमी से विवाह पसन्द नहीं करेगी।"

"आप अपने आप ही उसकी बात न कहिये। उसे स्वयं कहने दीजिये। मैं समझता हूँ कि मुझको उससे मिलने की स्वीकृति दे दीजिये। मैं विद्यालय की मुख्याधिष्ठात्री जी से मिलने गया था। उसने लक्ष्मी से मिलने की स्वीकृति के लिए आपके पास भेजा है।"

"यह तो ठीक है कि उससे मिलने के लिए मैं स्वीकृति दे सकती हूँ, परन्तु मैं सोचती हूँ कि यह क्यों दूँ?" राधा ने कहा।

"इसलिये राधा देवी जी! मैं चाहता हूँ कि मुझको उससे मेल-जोल उत्पन्न करने का अवसर दीजिये। अभी उसके बालिग होने में तीन वर्ष हैं, तब तक स्वराज्य मिलने का फैसला भी हो जावेगा। यदि उसकी इच्छा हुई तो मैं उससे मिलता रहा करूँगा और समय आने पर विवाह हो सकेगा।"

"यद्यपि मुझको आपका कहना ठीक प्रतीत नहीं होता, इस पर भी मैं आपको जवाब देना लक्ष्मी का ही काम समझ, आपको उससे मिलने की चिट्ठी दे देती हूँ। हाँ, अगर वह पसन्द नहीं करेगी तो आपसे मिलने की स्वीकृति वापस ले ली जावेगी।"

"मुझको स्वीकार है।"

१०

जब मन्नू को यह पता लगा कि बम्बई में डायरेक्ट ऐक्शन नहीं चलेगा, तो वह बहुत निराश हुआ। इस समय एक घटना घटी और वह लक्ष्मी को पा गया।

मन्नू जमादार के कारखाने के लोग छुरे और बन्दूक चलाने का अभ्यास करने दरगाह शाह मुराद में जाया करते थे। मन्नू भी उनके साथ जाया करता था। शाह मुराद का वली, मन्नू को उन सब लोगों का अफसर जान, उससे भारी मेल-जोल रखने लगा था। उसे अपने रहने के मकान पर ले जाया करता और उसको खिलाया-पिलाया करता था। धीरे धीरे दोनों में भारी हेल-मेल उत्पन्न हो गया था।

एक दिन दरगाह के वली, शाह इब्राहीम ने उसको एक ओर ले जाकर कहा, "जमादार! एक खुफिया काम है। कर सकते हो?"

"हाँ हज़रत! जान तक हाज़िर है। बताइये क्या काम है?"

"मील एरिया में, सत्यनारायण के मन्दिर में एक पण्डित सदाशिव रहता है। उसको बाँधकर आज रात यहाँ लाना है।"

"मैं उसको जानता हूँ। वह तो बम्बई कौन्सिल का मेम्बर है।"

"मैं सब-कुछ जानता हूँ। उसकी सख्त ज़रूरत है। बताओ उसे ला सकोगे?"

"क्यों नहीं।"

बात तय हो गई। यह वही रात थी, जिस शाम को सदाशिव लक्ष्मी से मिलने की स्वीकृति राधा से लेकर आया था। अगले दिन उसको लक्ष्मी से मिलने जाना था और स्वीकृति की चिट्ठी उसकी जेब में थी। लक्ष्मी से मिलकर अपनी सफाई की योजना बनाता हुआ वह खाट पर लेटा ही था कि किसी ने उसके कमरे का दरवाज़ा धीरे से खटखटाया। उसका पिता दूसरे कमरे में सो रहा था। सदाशिव ने दरवाज़ा खोला तो दो आदमियों ने उसके हाथ पकड़ लिये और एक ने उसके मुख पर हाथ रख उसे बोलने से रोक दिया। चौथे ने अपनी जेब से रूमाल निकाल उसके मुख में ठूँस दिया और फिर एक रस्सी से उसके हाथ-पाँव बाँध दिये।

इसके पश्चात् उस आदमी ने सदाशिव की जेब और सन्दूक की तलाशी ली। उन लोगों का इसमें नकदी ढूँढने का प्रयोजन था, परन्तु मिलीं चिट्ठियाँ और कागज़। एक चिट्ठी बहुत बढ़िया लिफ़ाफ़े में थी और मन्नू के साथी ने उसे खोल डाला और पढ़ा। लिखा था, "सदाशिवजी को लक्ष्मी से मिलने दिया जावे। मिलने के पश्चात् लक्ष्मी को मेरे पास भेज देना ।" मन्नू ने चिट्ठी सुनी, तो कुछ सोच, प्रसन्न हो, अपनी जेब में रख ली। उसने अपने साथियों से कहा, "यह काम की चीज़ मिली है।"

सदाशिव को दरगाह में पहुँचा, मन्नू दरगाह के वली से मिलकर उस चिट्ठी के प्रयोग करने की योजना बनाने लगा।

अगले दिन आर्य समाज कन्या पाठशाला के फाटक पर कुछ लोग जो पोशाक से हिन्दू मालूम होते थे, एक मोटर टैक्सी में और मोटर साइकिलों पर पहुँचे। उनमें से एक भीतर गया और राधा देवी की चिट्ठी मुख्याधिष्ठात्री के पास ले गया। उसने स्कूल का एक नौकरानी के साथ लक्ष्मी को प्रतीक्षा करने के कमरे में भेज दिया। लक्ष्मी सदाशिव से मिलना नहीं चाहती थी, परन्तु राधा देवी की चिट्ठी देख बाहर कमरे में आ गई। वहाँ एक अपरिचित आदमी को बैठे देख विस्मय में खड़ी रह गई। उस आदमी ने कहा, "सदाशिवजी ने मोटर भेजी है। वे चाहते हैं कि पन्द्रह मिनट के लिए तुम उनसे मिल आओ।"

"मैं उनसे मिलना नहीं चाहती।" लक्ष्मी का उत्तर था।

अभी लक्ष्मी के मुख से बात पूरी निकलने भी नहीं पाई थी कि पाँच-छः आदमी नंगे छुरे लिये हुए भीतर घुस आए और चपरासी और लक्ष्मी के साथ आई नौकरानी को भयभीत कर, लक्ष्मी को उठा, मोटर में लाद, भाग गये।

यह सब इतनी जल्दी हुआ कि किसी को शोर मचाने का समय ही नहीं मिला। जब तक स्कूल में शोर मचता, मोटर और साइकिलों में सवार लोग मीलों दूर निकल गये थे।

पुलिस और राधा देवी को सूचना भेज दी गई। सूचना पाते ही खुशीराम, राधा देवी और पुलिस सार्जेण्ट वहाँ आ उपस्थित हुए। जब पूर्ण घटना सुनी गई तो सदाशिव को अपराधी समझ लेना स्वाभाविक ही था। सदाशिव के घर पर धावा बोला गया। उसे घर से पहिली रात को ही चला गया सुन सब की यह धारणा पक्की हो गई कि वह ही लक्ष्मी को ले भागा है परन्तु सदाशिव का पिता अपने पुत्र को ऐसा घृणित काम करने वाला नहीं मानता था। उसने बलपूर्वक कहा कि उसका पुत्र ऐसा नहीं है। इस पर भी पूर्ण घटनाचक्र सदाशिव के विरुद्ध

था और उसके पिता के कहने का किसी को विश्वास नहीं आया।

पुलिस ने सदाशिव के विरुद्ध रिपोर्ट लिख ली। रात को सदाशिव का पिता, एकनाथ खुशीराम के घर आया और फिर अपना विचार बताने लगा। उसने कहा, "बाबू जी! यह लड़का ऐसा नहीं जैसा आप समझ रहे हैं। मैं उसे जानता हूँ। उसमें इस प्रकार की नीचता करने का साहस नहीं हो सकता।"

एकाएक राधा को एक बात सूझी। उसने कहा, "मन्नू का पता करना चाहिए। हो सकता है कि सदाशिव ने मन्नू को लक्ष्मी को भगा ले जाने की योजना में सहायता दी हो और हमारी चिट्ठी उसे दे देने पर कुछ दिन के लिए बम्बई से ग़ायब हो गया हो।"

"यह बात तो लक्ष्मी को स्वयं ले जाने से भी अधिक घृणित है।"

"काम की अच्छाई-बुराई का विचार पीछे करेंगे। पहले मन्नू की तलाश होनी चाहिए।"

खुशीराम ने अपनी मोटर निकलवाई और पुलिस-स्टेशन जा पहुँचा। वहाँ सुपरिण्टेण्डेण्ट से मिल उसने अपना सन्देह बता दिया। पुलिस अफसर यह विचार सुन हँस पड़ा और सन्देह में सिर हिलाने लगा।

खुशीराम ने अपने विचार की पुष्टि में बताया, "मैं सदाशिव से एक-दो बार पहले भी मिला हूँ। मेरा अनुमान है कि वह इतने साहस का काम नहीं कर सकता। साथ ही मन्नू एक गुण्डा है। उससे सब कुछ सम्भव है।"

पुलिस अफ़सर ने गम्भीर हो पूछा, "यह विचार परिवर्तन एक हिन्दू के स्थान एक मुसलमान को फँसाने के लिए तो उत्पन्न नहीं हुआ? देखिये मि० खुशीराम! आपके खिलाफ हमारे रिकार्ड में बहुत बातें हैं। एक तो यह कि आप लाहौर से एक मुसलमान लड़की को भगाकर यहाँ लाये हुए हैं। दूसरा, आप यहाँ हिन्दू मुसलमान झगड़ा उत्पन्न कराने का यत्न करते रहते हैं। तीसरे, आपने जो यतीमखाना खोल रखा है, वह मुसलमान बच्चों को हिन्दू बनाने के लिए है। ऐसी अवस्था में आपका

किसी मुसलमान के विरुद्ध कुछ भी कहना माननीय नहीं हो सकता।"

खुशीराम यह सुन अवाक् सुन्न रह गया। अपने को सँभाल उसने कहा, 'मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि ये सब रिपोर्टें निराधार हैं।"

"आपका रिकार्ड ठीक करना मेरा काम नहीं है। यह तो खुफिया पुलिस का काम है। फिर भी मैं पूछता हूँ कि क्या यह ठीक नहीं कि आपकी बीबी एक मुसलमान की लड़की है?'

'ठीक है और मेरा विवाह आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व मुसलमानी तरीके से हुआ था। मेरी बीबी का नाम रहीमन था। मेरा उससे प्रेम हो गया तो उसके सरपरस्तों ने हठकर मुझे मुसलमान हो जाने पर विवश कर दिया। इस प्रकार मुसलमान बना लिये जाने पर मेरे विचार तो बदले नहीं प्रत्युत उसके विचारों में परिवर्तन हो गया। धीरे धीरे उसके विचार हिन्दुओं के से होते गये और उसने स्वयं अपना नाम रहीमन से बदल राधा रख लिया। अब तो वह हिन्दू-संगठन कार्य में मेरी सहायता करती है। यह वही है, जो दिन के समय मेरे साथ आई थी।

' लाहौर में जब मुसलमानों को पता लगा कि न तो मैं मुसलमान हुआ और न ही रहीमन मुसलमान रही तो वे मेरी जान लेने पर तैयार हो गये। इससे मैंने लाहौर छोड़ बम्बई नौकरी कर ली। अब बतलाइये मैंने कौन पाप किया है?"

"तो आपने हिन्दू तरीके से विवाह नहीं किया?"

"जी नहीं।"

"तो आपके बच्चे क्या होंगे? हिन्दू या मुसलमान?"

"जो उनकी इच्छा होगी, हो जावेंगे। वे अभी बालिग नहीं हैं।"

"परन्तु यहाँ आप मुसलमान बच्चों को हिन्दू बना रहे हैं।"

"यह बात भी मिथ्या है। यतीमखाना निरीक्षण के लिए सदैव खुला है। आप या कोई भी पुलिस अफसर जाकर देख सकता है।"

"इस पर भी मैं मन्नू के विषय में जाँच नहीं कर सकता। मैं आपकी सूचना खुफिया पुलिस में भेज दूँगा, परन्तु वे इसमें जाँच पड़ताल करेंगे

या नहीं, मैं नहीं जानता।"

११

एकनाथ, सदाशिव के पिता, को लड़के के लापता हो जाने का भारी शोक था। वह स्वयं भी पुलिस, इलाका कांग्रेस कमेटी के मन्त्री, और फिर प्रान्त के मुख्य मन्त्री के पास गया। परन्तु सब स्थानों से उसे लौटना पड़ा। वह कहता, "श्रीमान जी! मेरा लड़का ऐसा नहीं है। उसने किसी लड़की का हरण नहीं किया। उस पर झूठा लाञ्छन लगाया जा रहा है।"

इसके उत्तर में सब लोग कहते, 'पण्डित जी! आप ठीक कहते हैं परन्तु हम क्या कर सकते हैं? प्रमाण उसके विरुद्ध जा रहे हैं।"

केवल खुशीराम और राधा ही, पण्डित एकनाथ की बात पर विश्वास करते थे। परन्तु जब तक कोई सुराग न मिले तब तक क्या कर सकते थे? यही कारण था कि सदाशिव का पिता उनसे प्रायः मिलने आ जाया करता था।

एक दिन अंग्रेजी में एक टाइप की हुई चिट्ठी पण्डित एकनाथ को मिली और वह उसे पढ़वाने के लिए खुशीराम के पास ले आया। खुशीराम ने वह चिट्ठी पढ़कर सुनाई। लिखा था, "यह सूचना पुजारी एकनाथ के लिए है। उसे यह बताया जाता है कि उसका लड़का सदाशिव सही सलामत है। उसके लिए कुछ दिन तक छुपकर रहना अच्छा समझा गया है। आप इसकी चिन्ता न करें। सब काम समय पर ठीक हो जायेगा।"

इस समय तक बम्बई भर में सदाशिव के एक लड़की को लेकर भाग जाने की बात फैल चुकी थी। उसके बम्बई की धारा सभा के सदस्य होने से उसकी बदनामी और भी अधिक हुई थी। खुशीराम इस चिट्ठी से सन्तुष्ट नहीं हुआ। जहाँ इससे उस पर लगे आरोप की सफाई किंचित् मात्र भी नहीं हो रही थी, वहाँ इससे उसके मार दिए जाने की सम्भावना

अधिक प्रतीत होने लगी थी। यदि वह जीवित होता तो वह स्वयं चिट्ठी लिखता। इस पर भी खुशीराम ने एकनाथ को सांत्वना दे दी, "आप चिन्ता नहीं करें। हमें आशा करनी चाहिये कि शीघ्र ही उसके अपने हाथ की लिखी चिट्ठी भी आ जावेगी।"

एकनाथ के चले जाने के बाद खुशीराम ने इस मामले में स्वयं ही कुछ करने का निश्चय कर लिया। उसने महावीर दल के दलपति से इस विषय में बात की और इसका परिणाम यह हुआ कि दो स्वयंसेवक मन्नू का पता करने पर लगा दिये गए। वे नित्य रात को अपनी खोज का परिणाम खुशीराम को बताने आने लगे। पहले ही दिन उसे यह बताया गया कि मन्नू जमादार ने मील से नौकरी छोड़ दी है। अगले दिन पता मिला कि उसने मकान बदल लिया है। इनसे यह बात तो पक्की हो गई कि लक्ष्मी के लापता होने में उसका हाथ भी है। यह पता किया गया कि मन्नू किस तारीख से मील से अनुपस्थित है। उसके मील से गैरहाज़िर होने की तारीख और लक्ष्मी के अपहरण की तारीख का एक होना एक भारी प्रमाण था, जिसके पुलिस को बताने से पुलिस भी मन्नू की तलाश में लग गई।

इस समय एकनाथ को सदाशिव के अपने हाथ का लिखा एक पत्र मिला। इस पत्र ने जहाँ खुशीराम के भय का निवारण किया, वहाँ पुलिस और महावीर-दल के स्वयंसेवकों की यह धारणा बन गई कि मन्नू के लोगों ने ही सदाशिव को कैद कर रखा है। इससे मन्नू की तलाश जोरों से होने लगी।

मन्नू के असली निवास-स्थान का पता किया गया। वह यू० पी० के ज़िला बुलन्दशहर का रहने वाला था। खोज उसके घर तक भेजी गई। वहाँ से पता चला कि जब से उसकी बीवी का देहान्त हुआ है, तब से वह घर नहीं आया। समय बीतने पर पुलिस की ओर से खोज ढीली पड़ गई, परन्तु महावीर संघ की ओर से खोज जारी रही।

इसके उपरान्त एक पत्र रियासत हैदराबाद के भरिया नाम के एक

गाँव से आया। यह भी सदाशिव के अपने हाथ का लिखा हुआ था। इस पत्र ने एक नई परिस्थिति उत्पन्न कर दी। स्वयंसेवकों की खोज मटिया में जा पहुँची। इस खोज के परिणाम के आने से पूर्व ही सदा शिव बम्बई आ पहुँचा। लक्ष्मी उसके साथ नहीं थी।

१०

बम्बई मलुगा में एक बहुत बड़ा अहाता है, जिसके चारों ओर बीस फुट ऊँची दीवार से इर्द-गिर्द घनी हुई है। इस अहाते में जाने को केवल मात्र एक दरवाज़ा है और यहाँ पर दो वृद्ध चौकीदार हाथ में तस्बीह लिए दिन-रात पहरा देते हैं।

दरवाज़े का बड़ा फाटक तो सप्ताह में केवल एक दिन, अर्थात् जुम्मे के दिन खुलता है। इस दिन लोग सहस्रों की संख्या में नमाज़ पढ़ने आते हैं। सप्ताह के शेष छः दिन फाटक तो बन्द रहता है पर उसमें की खिड़की प्रातः छः बजे से लेकर रात के दस बजे तक खुली रहती है। वर्ष में एक दिन और भी फाटक खुलता है। रमज़ान के महीने की पहली जुमेरात और जुमे को फाटक चौबीस घण्टे खुला रहता है। इस दिन इस अहाते में शाह मुराद के मक़बरे पर उर्स होता है। दूर-दूर से शायर, कव्वाल, रागी और नाचनेवाली रक्कासा आती हैं। इस दिन शाह मुराद के मक़बरे की ज़ियारत होती है।

अहाते में एक बहुत खुला मैदान है। मैदान के एक ओर शाह मुराद का मक़बरा है। एक विशाल गुम्बद के नीचे क़ब्र बनी है, जिस पर हरे रंग का रेशमी कपड़ा बिछा रहता है।

इस मक़बरे में गुम्बद के नीचे क़ब्र के चारों ओर गाने-बजाने वाले बैठ जाते हैं और अपने अपने दिल के भावों को शायरी अथवा कव्वाली और गीतों में सुना अपने दिल को हल्का करते हैं।

बाहर से लोग भी सुनने आते हैं, मगर वे प्रायः रात होने से पूर्व ही चले जाते हैं। जो शायर, गाने और नाचने वाले आते हैं, उन्हें प्रात

काल सूर्य निकलने से पू खाना दिया जाता है। इन लोगों ने अगले दिन, अर्थात् जुमे के दिन रोज़ा (व्रत) रखना होता है। सूर्यास्त तक कुछ भी खाना नहीं होता। इस कारण अच्छा पौष्टिक खाना बनवाया और खिलाया जाता है।

दरगाह के एक वली हैं। ये प्रायः पूर्व वली के जाशीन (उत्तराधिकारी) उसके मरने पर बनाए जाते हैं। वर्तमान काल के वली पीर इब्राहीम एक दूध समान श्वेत सिर के बालों और दाढ़ी वाले वृद्ध हैं। वे काला चोगा और उसके नीचे काले रंग की तहमत पहना करते हैं। रमज़ान में उस के दिन वे शायरों, कव्वालों और नाचने-गानेवालियों की महफ़िल में सदैव शामिल होते हैं।

इस बार विशेष समारोह था। जुमेरात की शाम को दरवाज़ा खुला तो गाने-बजानेवाले आने आरम्भ हो गए। रात के दस बजते-बजते लगभग तीन सौ गाने-बजानेवाले अपनी अपनी सारंगी, ढमकीरी लिए एकत्रित हो गए।

रात के बारह बजे तक इक्के-दुक्के गानेवाले गाते बजाते रहे। पश्चात् मक़बरे के बिल्कुल सामने, मैदान के दूसरे कोने में लोग, जो नींद अनुभव कर रहे थे, जाकर सो गए। पीर साहब भी अब उठे और मैदान के उसी कोने में, एक मकान में, जो उनकी आरामगाह (निवास स्थान) कहा जाता था, चले गए। इस समय तक दर्शक प्रायः लौट गए थे।

भोजन बनाने वाले रात-भर खाना बनाते रहे। ठीक चार बजे मुल्ला ने आज़ान दी अर्थात् मोमिनों को खुदा की इबादत के लिए आह्वान किया। सब लोग उठे और मैदान के बीचोंबीच, स्वच्छ जल के एक तालाब के किनारे वुज़ू करके (हाथ-मुँह धोने) एकत्रित हो गए।

इस प्रकार शौचादि से निवृत्त हो सब लोग मक़बरे में एकत्रित हुए। वहाँ नमाज़ पढ़ी गई। नमाज़ के पश्चात् सदैव की भाँति वली इब्राहीम साहब का 'वाज़' हुआ। उन्होंने कहा, "हाज़रीन! इन्सानी फ़ितरत का

को पीर साहब की आरामगाह में ले जाया गया। वहाँ उसे एक हट्टे-कट्टे पंजाबी मुसलमान दारोगा के हवाले कर दिया गया। दारोगा सदाशिव को एक कमरे में ले गया। वहाँ उसके मुख से पट्टी खोल उसने कहा, "अभी यहाँ आराम करिए। सुबह मालिक आपसे बात करेंगे।"

सदाशिव बहुत दुःख अनुभव कर रहा था। उसने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "तुम कौन हो?"

"इस आरामगाह का दारोगा हूँ।"

"मैं इस आरामगाह में रहना नहीं चाहता।"

"सब काम इन्सान की अपनी मरजी के मुताबिक नहीं होते।"

"पर मैं पूछता हूँ कि मुझे यहाँ क्यों लाया गया है?"

"मैं आपको यहाँ नहीं लाया। इसलिए बता नहीं सकता कि क्या आप यहाँ लाये गए हैं।"

"तो कौन मुझे यहाँ लाया है? किस के हुक्म से तुम मेरी खातिर कर रहे हो?"

"अब रात बहुत हो चुकी है। यह देखिए, आपके लिए पलंग लगा है। कल सुबह यहाँ के मालिक आपसे मिलेंगे। यह सब वही बता सकेंगे।"

सदाशिव बहुत छटपटाया, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला। उसने पलंग की ओर देखा जो उसके लिए लगाया गया कहा गया था। दूध समान श्वेत चादर और ऊपर ओढ़ने को रेशमी दुहर तथा रेशमी फूलदार तकिए लगे थे। पलंग के सिरहाने के समीप एक तिपाई रखी थी। उस पर एक पीतल के लोटे में पानी था। लोटा ऊपर से ढँपा हुआ था। दारोगा ने कहा, "ज़रूरत हो तो यह पानी ले सकते हैं।" इतना कह वह चला गया।

कोमल बिस्तर पर सोने का अवसर सदाशिव को जीवन में पहली बार मिला था। साथ ही आधी रात तक पकड़-धकड़ में व्यतीत हो गई थी। इस भाग-दौड़ की थकावट से जब वह बिस्तर पर लेटा तो गहरी नींद सो गया। बहुत दिन चढ़ने पर उसको जगाया गया। जगाने वाली

एक औरत थी। सदाशिव को किसी स्त्री के कोमल स्वर, प्रात उठते ही, सुनने का मृदु अनुभव, जीवन में पहली बार ही मिला था। उसकी माँ का देहान्त तो उसके होश सँभालने के पहले ही हो चुका था। उसके पिता का स्वर बहुत कर्कश था। आज एक स्त्री का अपने सिरहाने खड़े, सिर पर हाथ फेरते हुए यह कहते सुन, 'उठो बेटा! दिन बहुत निकल आया है। उसका पूर्ण शरीर पुलकित हो उठा।

सदाशिव ने आँख खोल देखा। तीस-पैंतीस वर्ष की एक स्त्री, साफ रेशमी कपड़े पहिने, झुक, उसके मुख पर देख रही थी और कह रही थी, "उठकर तैयार हो जाइए। मालिक आ रहे हैं।"

कुछ काल तक तो उसे समझ ही नहीं आया कि वह स्वप्न देख रहा है या वास्तव में ही वह ऐसी मधुर अवस्था में है।

जब उसे सब स्मरण हो आया तो एक क्षण के लिए उसके माथे पर त्योरी चढ़ गई। फिर तुरन्त ही उसे बिस्तर की कोमलता, उस स्त्री का कोमल स्पर्श, मृदु-मुस्कान और स्नेह भरी दृष्टि का ज्ञान हुआ। वह इनसे सुख अनुभव करने लगा। उसने पूछा, "क्या समय होगा?"

"साढ़े नौ। अब उठिए। हज़रत आ रहे हैं। वे आपसे कुछ बात चीत करना चाहते हैं।

"कौन हज़रत?"

"पीर इब्राहीम साहब वली दरगाह शाह मुराद। आप उनकी आराम गाह में हैं। उनकी आप पर ख़ास रहमत (दयादृष्टि) है।"

"और आप कौन हैं?"

'मैं उनकी ख़ादिमा (दासी) हूँ।"

"आप नौकरानी मालूम नहीं होतीं।' यह कहते हुए सदाशिव उठकर पलंग पर बैठ गया।

वह स्त्री पलंग के समीप खड़ी-खड़ी ही कहती गई, "आपका ख्याल दुरुस्त है, मगर हम सब लोग हज़रत के मुरीद हैं। हमारा एतक़ाद शाह मुराद पर मुस्तक़िल (पक्का) है। इससे हम इस दरगाह और

इसके यली हज़रत की खिदमत के लिए चौबीस घण्टे मुस्तैद रहते हैं देखिये, इस खूँटी पर आपके पहनने के कपड़े टँगे हैं। यह साथ गुसलखाना है। गुसल कर, साफ कपड़े पहिन तैयार हो जाइये। आ घण्टे में हज़रत तशरीफ़ लावेंगे।"

इतना कह वह औरत सलाम कर चली गई। सदाशिव इस सबक कारण जानने का यत्न करता हुआ उठा और स्नानादि के लिए सा के कमरे में चला गया।

स्नानादि से छुट्टी पा, कपड़े पहिन, कमरे में रखी कुर्सी पर बैठा ही था कि यली अपने साधारण पहरावे में, हाथ में याकूत के पत्थर की तस्बीह (माला) लिये, उसे फेरता हुआ आ खड़ा हुआ। सदाशिव एक वयोवृद्ध, परन्तु अति सुन्दर, सौम्य और सम्य मूर्ति को अपने सम्मुख खड़ा देख, उसका आदर करने के लिए अनायास ही खड़ा हो गया। यली मुस्कराया और अति प्रेम से उसकी ओर देखने लगा। सदाशिव इन बातों से इतना प्रभावित हुआ कि मुख से कुछ कह नहीं सका। यली एक कुर्सी पर बैठ गया और सदाशिव को हाथ के संकेत से बैठने को कह पूछने लगा, "बताओ सदाशिव! रात को कुछ तकलीफ़ तो नहीं हुई!"

अब सदाशिव को यली के सम्मोहनी प्रभाव से चेतना हुई और उसने कहा, "जी, कष्ट तो कुछ नहीं हुआ परन्तु मुझे क्यों लाया गया है और मुझे क्यों घर नहीं जाने दिया जाता?"

"तुम्हारी भलाई के लिए। अल्लाह परवरदिगार के हुक्म से ही मैंने तुम्हें यहाँ लाकर रखा है। उसकी ही रहमत से मुझे यह हिदायत (आज्ञा) हुई है कि मैं तुम्हारे मुस्तकबिल को रोशन कर दूँ। उसके नूर से तुम्हारी ज़िन्दगी को मुनव्वर कर दूँ। ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे नेक कामों की गूँज ने बहिश्त में परवरदिगार के अर्श (सिंहासन) को जुम्बिश दी है। इससे उनके फरिश्ते ने मुझे तुम्हारी मदद के लिए कहा है।"

"पर हजरत ! मेरे पिता तो रो-रोकर पागल हो रहे होंगे।"

"उनको खबर भेज दी गई है। वह खुश हैं। खुदा ने उनकी रुह को तस्कीन (शान्ति) बख्शी है।"

"पर मुझे कैसे पता चले ?"

"वक्त पर सब पता चल जायेगा। देखो सदाशिव ! मुझे अपना दोस्त और हमदर्द समझो। जो कुछ भी तुम्हें तकलीफ हो, मुझसे कहो। उस रहीम अपने मालिक की मेहरबानी से मैं तुम्हारे सब शकूक रफ़ा कर सकूँगा।"

"एक गुज़ारिश और है। मुझे आर्य कन्या पाठशाला में एक लड़की से मिलने जाना है। उससे मिलकर मैं लौट आऊँगा।"

"वह लड़की तुम्हें नहीं चाहती। उससे मिलकर दिल को दुःखी करने की जरूरत नहीं। खुदा का हुक्म है कि मैं तुम्हारे लिए ऐसा बन्दोबस्त करूँ कि तुम उसके खास बन्दों में एक हो जाओ। अब तुम अपना दिल बहलाओ। अभी तुम्हारे पास सूत कातने को चरखा और पढ़ने को किताबें आ जावेंगी। मेरी आरामगाह के पीछे एक बहुत बड़ा मैदान है। उसमें रंग-रंग के फूल लगे हैं। तुम वहाँ टहलने के लिये जा सकते हो। शाम के वक्त तुम्हारे घूमने को मोटर मिलेगी।"

इतना कह वला वहाँ से उठा और उसके सिर से छः इंच ऊपर अपना हाथ रख, दुआ दे चला गया।

सदाशिव विस्मय में डूबा हुआ वहीं बैठा रहा। वह अपने मन में इस सबका अर्थ लगा नहीं सका था। दस मामूली हैसियत के आदमी को इतना बना-चनाकर रखने का अभिप्राय, उसे समझ नहीं आया।

यदि वो उसे पकड़कर समुद्र में फेंक दिया होता तो वह समझता कि किसी ने द्वेष-भाव से उसके साथ यह किया है, परन्तु उसकी सेवा सुश्रूषा इतनी हुई थी कि इसे वह किसी निकृष्ट उद्देश्य से होती समझ नहीं सका। आखिर कोई उसकी सेवा सुश्रूषा क्यों करेगा ? यह कुछ भी जान नहीं सका।

वह अभी इन विचारों में लीन बैठा था कि वही औरत जो उसे सोये से जगाने आई थी, आ गई। वह उसे इस प्रकार बैठे देख पूछने लगी, "आप तो ब्राह्मण के हाथ का बना खाते होंगे ?"

"जेल में तो मैं सबके साथ मिलकर खाता रहा हूँ। जेल में हमारे मुसलमान साथी खाना बनाते थे और हम सब मिलकर खाते थे।"

"यह बात हज़रत को मालूम थी मगर उन्होंने फ़रमाया है कि यह जेल नहीं है। यहाँ आप अपनी मर्ज़ी से जो और जैसा खाना चाहें, खा सकते हैं।"

"मुझे मुसलमानों के साथ खाने में कोई परहज़ नहीं है।"

"ला हौल विला कूवत इल्ला ब इल्लाह। भला खुदा के सिवा और कौन अच्छा है! इस दुनिया में हम सब उसके बन्दे हैं। तो आइये।"

साथ के कमरे में एक साफ सुथरे स्थान पर, चाँदी के थाल और कटोरियों में भोजन परसा हुआ एक लकड़ी के पटरे पर रखा था। चौकी के सामने एक और चाँदी बैठने के लिए लगी थी। पटरे के दूसरी ओर एक आसन बिछा था। वह औरत सदाशिव को वहाँ ले आई और नल में हाथ धुला, चौकी पर बैठा, पूछने लगी, "अगर आपको परहेज न हो तो क्या मैं यहाँ बैठ सकती हूँ ?"

"हाँ, बिना तकल्लुफ के।"

सदाशिव ने खाना आरम्भ कर दिया। भोजन बहुत ही स्वादु था। ज़ाफ़रानी चावल का पलाओ था, जिसमें बादाम, पिस्ता और भाँति भाँति के मेवे पड़े थे कई प्रकार के व्यंजन थे, सब्जियाँ थीं और कई तरह की चटनी, अचार इत्यादि थे। जब सदाशिव खा रहा था, वह औरत कह रही थी, "आपकी फराग दिली से तो हमारा काम हल्का हो गया है। आपके लिए शहर से ब्राह्मण रसोइया मँगवाया गया है, मगर अब तो इस खादिमा और इसकी लड़की को खिदमत करने का मौका मिलेगा।"

"अच्छा तो आपकी लड़की भी यहीं है !

"सब हजरत की मेहरबानी है ।

सदाशिव स्वादिष्ट भोजन का स्वाद ले रहा था । उसने उस औरत की ओर देखकर पूछा, "मुझे अभी तक यह समझ नहीं आया कि मेरी इतनी सेवा-सुश्रूषा क्यों की जा रही है ।'

"हजरत जिस पर मेहरबान होते हैं, उसके साथ ऐसा ही होता है । वे कहा करते हैं कि रात को इबादत करते-करते खुदा उनको बताया करता है कि वे किसको क्या दें !

"वे खुद भी यही कहते थे ।"

'तो आपने कोई भारी सवाब (पुण्य) का काम किया है, जिससे खुदा की यह हिदायत उनको हुई है ।

अपनी जानकारी में तो मैंने कोई ऐसी बात नहीं की ।

"खुदा आपकी बाबत आपसे भी ज्यादा जानता है । आप जिसे मामूली बात समझते हैं, वह उसकी नजर में बहुत बड़ी बात भी हो सकती है ।'

इस युक्ति का कोई जवाब नहीं था । इस पर वह अपने जीवन के कामों का अवलोकन करने लगा । वह इस प्रकार छोटी-छोटी घटनाओं को बढ़ा-चढ़ाकर देखने लगा । कभी सोचता कि छोटे-छोटे बच्चों को निःशुल्क पढ़ाना शायद ऐसा पुण्य काम है । कभी हिंदू-मुसलमान एकता के उत्पन्न करने में अपनी मंगेतर को भी दे देना, वह ऐसा पुण्य का काम समझता था ।

भोजन समाप्त हुआ । उसने हाथ धोये । इस समय औरत ने आवाज दी, 'खनीजा ! पान लाना ।"

आवाज सुन एक लड़की गंगा-जमुनी तश्तरी में चूना कत्था लगे हुए पान के पत्ते, सुपारी, सौंफ, इलायची आदि लेकर आ गई ।

सदाशिव लड़की को देख चकित रह गया । वह अत्यन्त सुन्दर थी । कोमल, गौर वर्णीय और पन्द्रह सोलह वर्ष की दिखाई देती थी ।

सदाशिव कभी पान नहीं खाता था, परन्तु इस लड़की के हाथ से पान खाने को सौभाग्य मान, पान उठा, उसमें सुपारी, इलायची आदि रख मुख में डालकर पूछने लगा, "तो यह आपकी लड़की है ?"

लड़की लज्जा से भूमि की ओर देख रही थी। उस औरत ने उत्तर दिया, "खुदा का फ़ज़ल है।"

पान चबाते हुए सदाशिव ने कहा, "मैं नहीं जानता कि किस पुण्य के प्रताप से मुझे यह सब कुछ प्राप्त हो रहा है।"

१४

सदाशिव को वली का मेहमान बने एक सप्ताह से ऊपर हो गया था। खनीज़ा और उसकी माँ दोनों उसकी सेवा में थीं। लड़की उसके साथ आरामगाह के पिछवारे के बाग में टहलती और मोटर में उसके साथ बाहर घूमने भी जाती थी। वह उसे खाना खिलाती, पान लगा देती और फिर घण्टों ही बैठ उससे बातें करती। माँ का काम था सदाशिव के कपड़े तैयार करना, उसका बिस्तर लगाना और उसके खाने का प्रबन्ध करना।

एक दो दिन तक तो सदाशिव को लक्ष्मी और अपने पिता का ध्यान आता रहा, पश्चात् खनीज़ा के प्रेम के नशा में वह सब कुछ भूल गया। उसने वली से, जिससे वह नित्य मिलता था, उनके विषय में पूछना भी छोड़ दिया। उसे अब बाहर जाने की लालसा भी नहीं रही थी।

एक सप्ताह सुख-स्वप्न की भाँति व्यतीत हो गया। सदा की भाँति मध्याह्न के भोजन के उपरान्त खनीज़ा और वह, दोनों वली के सामने उपस्थित हुए। उसने इनसे मिलने का यह समय नियत कर रखा था। दोनों को अपने सम्मुख बैठा उसने पूछा, "सदाशिव ! बताओ कुछ कष्ट तो नहीं ?"

"हुज़ूर ! बहुत आनन्द में हूँ।"

"तुम्हारे पिता का समाचार मिला है।"

"कैसे हैं व ?"

'ठीक हैं। लाग उनके पास पहुँचकर कह रहे हैं कि तुम जीवित नहीं हो। इससे कुछ फिकरमन्द हैं। मैं समझता हूँ एक चिट्ठी लिख दो। इतने से काम चल जावगा। लिखो कि तुम सब तरह से ठीक हो। अभी काम से फ़ुरसत नहीं। जल्दी आजाओगे।'

सदाशिव ने पिता को हिन्दी में पत्र लिख दिया। पत्र वली साहब ने लेकर अपने पास रख लिया और कहा, "इससे कैसी पट रही है ! कुछ दिक तो नहीं करती ?'

"हज़रत ! यह तो कहती है कि मैं इससे विवाह कर लूँ।"

"और तुम क्या कहते हो ?"

"मैं मैं तो इसका बेदाम का गुलाम हूँ। दिन-रात यह मेरे दिलो दिमाग़ पर हकूमत करती है। दिन को तो यह हरदम मेरे साथ रहती है और रात को मेरे स्वप्नों में मौजूद होती है।'

"तो तुम दोनों की शादी कर दी जावे ?"

सदाशिव ने खनीजा की ओर घूमकर देखा। वह फ़र्श पर लकीरें खींच रही थी। सदाशिव ने घूमकर वली साहब की ओर देखा और कुछ सोचकर कहा "यदि पिताजी को यहाँ बुला सकता तो अच्छा होता।"

वली खिल खिलाकर हँस पड़ा। उसने कहा, "वे तुम्हारे और खनीजा के विवाह को पसन्द नहीं करेंगे। वे हिन्दू पुजारी हैं।"

"तो मैं उनके बिना ही विवाह करूँगा।"

"हाँ, मैं भी यही ठीक समझता हूँ। मैं उस रहीम करीम, रब्बुल आलमीन से इसकी बाबत हिदायत की इन्तज़ार में हूँ। आज रात उसके मिलने की उम्मीद है। इसके मुतल्लिक मैं कल बताऊँगा। सब्र और उम्मीद के साथ इस खुदाए फ़रमान की इन्तज़ार करो।'

अगले दिन वली साहब ने अपने नाम खुदा का पैग़ाम सुना दिया—"वहाँ से खबर आई है कि सदाशिव का खनीज़ा के साथ विवाह कर दिया जावे और इनके लिए बम्बई में एक आलीशान मकान और अच्छी

आमदनी का जरिया बना दिया जावे।"

सदाशिव यह सुन चकाचौंध रह गया। वह इन सब आनन्द और सुख की बातों को अभी समझ ही रहा था कि वली ने और कहा, "तुम लोगों की शादी परसों जुम्म की नमाज़ के बाद कर दी जावेगी और उसके बाद तुम लोगों के लिए एक महीना भर बम्बई से बाहर रहने का बन्दोबस्त कर दिया जावेगा। तब तक बम्बई में तुम्हारे काम का इन्तजाम भी हो जावेगा।"

इस शुभ घड़ी को अब इतनी नज़दीक पा दोनों आनन्द से पुलकित हो उठे और एक-दूसरे की ओर देखने में इतने लीन हो गये थे कि उन्हें वली के वहाँ से उठकर चले जाने की सुधि नहीं रही। कितनी ही देर तक वे वहीं बैठे रहे। फिर एकाएक दोनों चुम्बक और लोहे की भाँति आकर्षित हो एक दूसरे से चिपट गये। मन भरकर आलिंगन कर खनीजा ने सदाशिव की बाहों से अपने को छुड़ाते हुए कहा, 'मैं बहुत खुश हूँ।"

"तभी छूटकर एक तरफ हो गई हो।"

"परसों तक इन्तजार करिये।"

"इन्तजार की घड़ियाँ बहुत लम्बी होती जाती हैं।"

"मगर कितनी मीठी हैं ये।"

"आज रात मैं सो नहीं सकूँगा।"

"मतलब यह कि इन पुरलुत्फ़ लहमों का मजा लेते रहेंगे।"

"कितना अच्छा मालूम हो रहा है।"

"खुदा की महर है। मैं तो यह कहती हूँ कि शादी के पहले का यह वक्त ज्यादा पुर लुत्फ है या बाद का।"

सदाशिव ने उसे पुन अपनी ओर खींच गले लगाना चाहा, परन्तु खनीजा चतुराई से दो क़दम पीछे हटकर बोली, "अभी सब्र करिये।"

"बहुत मुश्किल हो रहा है।" इतना कह सदाशिव ने उसे पकड़ने को क़दम बढ़ाया मगर वह भाग कर कमरे से बाहर हो गई।

नियत दिन नकाह पढ़ा दिया गया। और नकाह के बाद वली

को सुनता। प्रति साय जो भी वहाँ आ जाता, उसके लिए खाने की मेज़ पर स्थान होता। उसकी अपनी प्रजा में से और बाहर से लोग निस्संकोच आते और जमींदार के साथ बैठ खाना खाते। कभी कभी तो खाना खानेवाले सौ से भी ऊपर हो जाते, परन्तु कभी किसी को न नहीं की गई थी। सदाशिव नित्य जमींदार की बग़ल में बैठकर भोजन करता था। खनीजा उस समय औरतों में बैठकर खाती थी।

जमींदार वली इब्राहीम का एक मौतक्दि मुरीद था। वह उसे औलिया समझता था। इससे उसकी आज्ञाओं को पा वह सदाशिव और खनीजा की सेवा-सुश्रूषा कर रहा था। इसके अतिरिक्त उसके घर में मेहमानों का बहुत आदर-सत्कार होता था।

सदाशिव को आस-पास के सब खूबसूरत स्थान दिखाए गये। जंगल में शिकार खेलने ले जाया गया। वहाँ के खेल-तमाशे और देहाती नाच-रंग तो हर रोज़ रात को होते थे।

एक रात जब सदाशिव खनीजा को छाती से लगाये हुए उसकी सुन्दर आँखों को देख आनन्द विभोर हो रहा था तो उसने पूछा, "तुम्हें मैं कैसा लगता हूँ प्रिये?"

"आप मेरे जिस्म की रूह हैं। मेरे पीर, मुरशिद, खुदा, क्या कहूँ, कुछ समझ नहीं आता, सब कुछ हैं।"

उसने खनीजा का मुख चूमकर कहा, "जानती हो, जब तुम यह सब-कुछ कहती हो तो मेरे दिल की क्या हालत होती है?"

"क्या होती है?"

"तुम जैसी खूबसूरत नाज़नीन को अपनी समझ, मेरा मन आनन्द से इतना भर जाता है कि मैं पागल हो जाता हूँ। मैं ऐसा अनुभव करने लगता हूँ कि मैं आसमान में उड़ रहा हूँ और मैं कोई बहिश्त में रहनेवाला फ़रिश्ता हूँ। जब मुझे होश आती है तो मैं सोचने लगता हूँ कि क्यों मुझे यह सब-कुछ नसीब हो रहा है। मैंने कौन-सा अच्छा काम किया है, जो यह सब कुछ अनायास ही मिल रहा है।"

रात भर राधा और खुशीराम सोचते रहे कि यह हुआ क्या ! उन्हें केवल एक बात ही समझ आ रही थी। वह यह कि सदाशिव ने इस मुसलमान लड़की से लक्ष्मी का अदला-बदला कर लिया है। इसे वे भारी घृणित काम समझते थे। अतएव दोनों का यह निश्चय हुआ कि अगले दिन वे सदाशिव से मिलने जायें।

१६

सदाशिव को अपने पिता के व्यवहार से बहुत दुःख हुआ। खनीज़ा अपने श्वसुर के विरोध को भली भाँति समझती थी। जब सदाशिव पिता को बाहर छोड़कर भीतर लौटा, तो खनीज़ा ने कहा, "मैंने कहा था न ?"

"मैं उनसे यह उम्मीद नहीं रखता था।"

"अब क्या होगा ?"

"कुछ नहीं। मेरा तुम्हारे से सम्बन्ध अटूट है। जहाँ तक हमारा आपस का ताल्लुक है, कायम रहेगा। मैं समझता हूँ कि पिता जी शीघ्र ही मान जायेंगे।"

अगले दिन जब खुशीराम और राधा उससे मिलने आए तो खनीज़ा की माँ भी वहाँ आई हुई थी। सदाशिव खुशीराम और राधा को अपने विरोधी-पक्ष में समझता था। इसस सतर्क हो उनके आने का कारण जानने के लिए उनका मुख देखने लगा। बात खुशीराम ने आरम्भ की। उसने कहा, "कल आपके पिताजी हमसे मिले थे। उनसे पता चला कि आपका विवाह हो गया है। सो हमने विचार किया कि बधाई दे आयें। बताइये, यह किस प्रकार हो गया ? आपने यह सब चोरी चोरी क्यों किया ?"

राधा बीच में ही बोल उठी, "और क्या बीबी को नहीं दिखाइयेगा ? क्या आपने उसे पर्दे में रखा हुआ है ?"

"नहीं। उसकी माँ आई हुई है। वह उनसे बातें कर रही है।"

"तो उनके भी दर्शन करा दीजिए।"

"परन्तु बुलाने से पूर्व आपको यह बता देना चाहता हूँ कि वे मुसलमानिन हैं। कल पिताजी आये तो उसका अपमान हो गया। यह ठीक नहीं हुआ। मैं इसका दुहराया जाना नहीं चाहता।"

"सदाशिव जी! वे पुराने विचारों के आदमी हैं। उनकी बात छोड़िए। हमसे आपको वैसी बात की आशा नहीं रखनी चाहिए। जब एक मुसलमानिन ने आपकी बीबी बनना स्वीकार किया है तो यह एक हर्ष की बात ही तो हो सकती है।"

राधा के मुख से यह बात सुन सदाशिव विस्मय में देखता रह गया। उसे इनके इतने उदार होने की आशा नहीं थी। इस पर भी वह निःशंक नहीं हुआ। उसने कहा, "इसके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ। फिर भी यदि आपको कोई बात पसन्द न हो तो सभ्य व्यवहार के नाते किसी दूसरे को दुःखी करना उचित नहीं।"

इस विनम्र निवेदन से खुशीराम बहुत लज्जित हुआ। उसने भी अपनी स्त्री की बात का समर्थन करते हुए कह दिया, "सदाशिव जी! आप ठीक कहते हैं। परन्तु हमसे आप ऐसी आशा नहीं रखें। देखिये, मैं आपको एक रहस्य की बात बताता हूँ। यह राधा देवी भी एक मुसलमान की लड़की हैं। इनका नाम रहीमन था, परन्तु अब ये राधा देवी हैं। अतः आपकी पत्नी मुसलमान की सन्तान है, इस कारण उसका अपमान हम नहीं कर सकते।"

सदाशिव के लिए यह एक अनोखी बात थी। वह जानता था कि राधा लक्ष्मी को मुसलमान होने में बाधा खड़ी कर रही थी। इससे उसने विस्मय में पूछा, "सत्य! यदि यह सत्य है तो बहुत विचित्र है।"

"मुझे तो इसमें कोई विचित्रता प्रतीत नहीं होती। हमारे में परस्पर कभी झगड़ा अथवा मनोमालिन्य नहीं हुआ। प्रेम और एक दूसरे पर भरोसा, संसार की सब समस्याओं को सुलझा देता है। यदि स्वीकृति दें तो मैं भीतर चली जाऊँ?"

"नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। मैं स्वयं उन दोनों को बाहर

से आता हूँ।"

इतना कह सदाशिव वहाँ से उठ भीतर चला गया। खुशीराम और राधा चुपचाप विचारों में लीन ड्राइङ्ग रूम में बैठे रहे। सदाशिव को बाहर आने में देर लगी। इससे खुशीराम ने समझ लिया कि सदाशिव की स्त्री ने सदाशिव के पिता के व्यवहार को बहुत अनुभव किया है और वह अब अपने पति के मित्रों के सम्मुख आना नहीं चाहती। उसने अपने मन में निश्चय कर लिया कि कोई अनियमित बात नहीं करेगा। सभ्यता के अपने गुणों को छोड़कर भी उनका लक्ष्मी को ढूँढने का काम परस्पर विश्वास से ही सम्पन्न हो सकता था।

कितनी ही देर के बाद सदाशिव, खनीज़ा और उसकी माँ, तीनों बाहर आए। खुशीराम और राधा ने उठकर उनका स्वागत किया। सदाशिव की सास ने इनको आदर से बैठाया। राधा और खनीज़ा समीप-समीप बैठ गई। खुशीराम के एक ओर खनीज़ा की माँ और दूसरी ओर सदाशिव बैठ गया। राधा ने बहुत प्रेम भाव से खनीज़ा को अपना इतिहास सुनाया और उसके मन पर यह अंकित करने का यत्न किया कि उसके पति ने कोई बुरी बात नहीं की।

"पर इनके पिताजी क्यों नाराज़ होकर चले गए हैं?"

"वे पुराने विचार के आदमी हैं और फिर बड़ी आयु के हैं। उनकी बातों पर नाराज़ होने की आवश्यकता नहीं।"

दूसरी ओर खुशीराम सदाशिव और खनीज़ा की माँ से बात चीत कर रहा था। वह कह रहा था, "सदाशिव! तुम बहुत भाग्यवान हो जो इतनी सुन्दर स्त्री मिली है। और फिर इनको क्या कहूँ! सुन्दर वस्तु के निर्माता की यदि प्रशंसा होनी चाहिए तो आपकी क्यों न की जाए?"

"शुक्रिया!" खनीज़ा की माँ ने कहा, "पर यह खुदा की कुदरत है। इसमें इन्सान की करनी से कुछ नहीं होता। उस परवरदिगार की रहमत से ही हमें सब-कुछ नसीब होता है। हमें उसी का ही शुकर-गुज़ार होना

चाहिये।"

"यह तो है हां। फिर भी खुदा तो सबके लिए रहीम और करीम है। इस पर भी सब न तो खूबसूरत होते हैं न ही सभ्य, सुशील और समझदार। आखिर यह भेद-भाव तो हमारी करनी से ही उत्पन्न हो सकते हैं।"

"भला एक आदमी का खूबसूरत होना और दूसरे का बदसूरत होना किस तरह हमारे अपने बस की बात है ? एक ही माँ बाप की दो सन्तान एक जैसी सूरत-शक्ल की नहीं होतीं।"

"आपकी यह दलील बड़ी ज़बरदस्त है। इस पर भी वैज्ञानिकों ने इसे समझाने का यत्न किया है। उनका कहना है कि जिस्मानी और दिमागी बनावट खानदान की कई पीढ़ियों के अमालों (कर्मों) का नतीजा होते हैं। इसीसे हम हिन्दू लोग वर्ण व्यवस्था और परम्परा को मानते हैं। खैर, छोड़िये इस बात को। यद्यपि सदाशिव और हमारे विचार नहीं मिलते इस पर भी हम इनके इस विवाह से बहुत खुशी हैं। यह एक विस्मयजनक घटना हुई है कि एक धनी परिवार की लड़की और वह भी इतनी खूबसूरत एक गरीब ब्राह्मण के लड़के से खुशी-खुशी विवाह दी गई है।"

इस पर खनीजा की माँ मुस्कराई और पूछने लगी, "इसमें आपको हैरानी क्यों हुई है ? मुहब्बत एक बहुत बड़ी ताकत है। इसको किसी भी ख्याल से पसपा (पराजित) नहीं किया जा सकता। जब यह सिर पर सवार होती है तो बड़ों-बड़ों के होश फाख्ता कर देती है।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि सदाशिव आपकी लड़की से मुहब्बत करने लगा था ? मुझे यह मालूम नहीं था कि पण्डितजी महाराज इतने मनचले हो सकते हैं कि एक इतनी खूबसूरत लड़की से प्रेम करने का साहस कर सकते हैं। बहुत काल से दोनों का परिचय प्रतीत होता है। क्या दोनों एक ही स्कूल या कॉलेज में पढ़ते थे ?"

"नहीं यह बात नहीं। मेरी लड़की तो किसी स्कूल या कॉलेज में नहीं पढ़ी। जो कुछ भी यह पढ़ी है सब घर पर ही पढ़ी है।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि आप लोगों ने उसे लड़की के सम्पर्क में लाकर प्रेम की भावना उत्पन्न कर यह सब कुछ कराया है।"

"तो आपको यह पसन्द नहीं है क्या?"

"आपका उद्देश्य कुछ भी हो परन्तु फल अच्छा ही हुआ है। हमें इससे प्रसन्नता हुई है।"

"हम आपके निहायत मशकूर हैं।"

"हम तो आपकी फ़राख दिली (उदारता) से बहुत प्रसन्न हैं। आपने जब लड़की के लिए वर ढूँढने का यत्न किया तो एक हिन्दू को पसन्द कर लिया। हमें इसमें अपने देश का उज्ज्वल भविष्य छुपा प्रतीत होता है।"

"काश कि यह बात आज से कुछ साल पहिले हो सकती।" नसीम की माँ ने एक लम्बी साँस खींचकर कहा।

"कई कारणों से ऐसा नहीं हो सका। इसमें मुसलमानों का अनाचार एक भारी कारण था। हमारे देश में किसी औरत पर इसलिए बलात्कार कभी नहीं किया गया था कि वह किसी भिन्न मतानुयायी की लड़की है। ऐसे उदाहरण तो मिलते हैं, जब किसी कामांध मनुष्य ने किसी सुन्दरी पर बलात्कार किया हो परन्तु भिन्न मत का होना बलात्कार में कारण नहीं हुआ। यह बात मुसलमानों ने यहाँ पर चलाई और इसका स्वाभाविक परिणाम यहाँ के लोगों में मुसलमानों के लिए घृणा उत्पन्न करने वाला हुआ।"

नसीम की माँ इतिहास की इन बातों को नहीं जानती थी। इससे वह चुप रही, परन्तु सदाशिव इसमें चुप नहीं रह सका। उसने कह ही दिया, "इस परस्पर की घृणा में हिन्दुओं का भी तो भारी दोष है।"

"हाँ, एक बात में उनको भी दोषी कहा जा सकता है। यदि उस समय के हिन्दू सगठित होकर मुसलमानों के आक्रमण का विरोध करते तो न यहाँ मुसलमानों का राज्य होता और न यह परस्पर घृणा का भाव उत्पन्न होता।"

"उस समय के ब्राह्मण भी तो संसार के सब लोगों को नीच समझते थे।"

"इस पर भी वे अपने से नीच लोगों की स्त्रियों पर बलात्कार, इस लिए कि वे नीच हैं, करते हों, नहीं सुना गया।"

इस समय राधा ने अपने पति की ओर देखकर कहा, "देखिए, खनीजा बहिन ने मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर लिया है। अगले रविवार दोपहर के बारह बजे वे आयेंगी। खाना हमारे यहाँ होगा।"

"बहुत धन्यवाद है इनका। सदाशिव जी! आप भी अवश्य आइयेगा।"

"हाँ, अगर ये मुझे ले चलेंगी तो।"

"तो आपके लिए मैं इनसे प्रार्थना कर दूँ?"

चाय का समय हो गया था। सदाशिव ने पूछा, "चाय मँगवाऊँ?"

"तो क्या इसके लिए हम किसी और स्थान पर जाना चाहिए?"

"नहीं, मैं अभी इन्तजाम किये देती हूँ।" खनीजा ने कहा और उठकर रसोई घर में चली गई।

राधा भी उठकर उसके साथ भीतर चली गई और चाय बनाने में उसकी सहायता करने लगी। राधा ने देखा कि खनीजा काम करने में बहुत चतुर है। इससे उसने पूछा, "मालूम होता है कि घर में आपको सब प्रकार का काम करने का ढंग सिखाया गया है।"

"मैं और माँ, अपना और अपने मेहमानों के खाने वगैरा का इन्तज़ाम खुद करती थीं।"

"आपके पिताजी क्या करते हैं?" यह प्रश्न राधा ने तीसरी बार पूछा था और हर बार खनीजा ने बात बदल, इसे टाल दिया था। इस बार वह विवश हो गई। उसने कहा, "वे नहीं रहे।"

"ओह! उनकी मृत्यु हो चुकी है?"

"जी हाँ।"

"आपकी माँ कहाँ रहती हैं?"

"दरगाह में।"

राधा ने प्याले और प्लेटों को कपड़े से साफ करते हुए बेध्यान में पूछ लिया, "कौन दरगाह?"

"पीर शाह मुराद की दरगाह में।"

राधा यह सुन विस्मय में लीन हो गई और बोल नहीं सकी। इस पर भी अपने मन को अपने काबू में रखकर अपने काम में लगी रही। खनीजा को यह समझ ही नहीं आया कि उसने कोई रहस्य की बात बता दी है और उस रहस्य को सुननेवाली मन ही-मन बहुत प्रसन्न हो रही है। राधा ने इस सूचना के पाने से हुए विस्मय को भीतर ही भीतर दबाकर, काबू में कर लिया और गरम पानी को चायदानी में डालते हुए कहने लगी, "वहाँ रहने के लिए, शायद, अच्छे मकान मिलते हैं?"

"सबको नहीं। माँ वहाँ के पीर की मोतकिद (भक्तिनी) हैं, इससे वे वहाँ रहती हैं और हज़रत पीर साहब ने उनके लिए एक बसीह मकान दे रखा है।"

चाय तैयार हो गई थी और खनीजा ने अलमारी से, साथ खाने के लिए बिस्कुट और केक निकाल लिये थे। सब सामान ट्रे में रख लिया गया और खनीजा उठाकर बाहर ले आई। राधा भी उसके साथ बाहर चली आई।

चाय पीने के पश्चात्, खुशीराम और राधा ने विदा माँगी और अगले रविवार की फिर याद दिलाकर वहाँ से विदा हो गये।

घर पहुँच राधा ने दरगाह वाली बात बताई। खुशीराम ने बात सुन कहा, "तुमने तो बहुत मार्के की बात मालूम कर ली है। अब हमें लक्ष्मी को ढूँढ़ने का एक और स्रोत मिल गया है।"

"यह काम जान-जोखम का है।" राधा ने गम्भीर हो कहा।

"खतरा तो सिर लेना ही होगा। इसके बिना काम नहीं चल सकता। मैं आज ही महावीर दल के लोगों से कहूँगा।"

प्रकाश की ओर

१

चेतनानन्द ने अपने पिता का घर छोड़ा तो सराजुद्दीन बैरिस्टर के घर डेरा डाल दिया। उसने बैरिस्टर साहब से यह नहीं बताया कि वह अपने पिता का घर सदैव के लिए छोड़ आया है। सराजुद्दीन उसका पार्वती से विवाह न हो सकने की घटना को जानता था और उससे पूरी सहानुभूति रखता था। इससे जब चेतनानन्द ने कहा, "दोस्त! अब तो घर में रहने को दिल नहीं करता।" तो सराजुद्दीन ने उसके गले में बाँह डालकर कहा, "इन औरतों के लिए अफ़सोस करना ठीक नहीं। आदमी ने तो संसार में बहुत काम करना होता है। उसके लिए मुहब्बत घर पर आकर दिल बहलाने का एक बहाना-मात्र होती है। अगर वह भी औरतों की भाँति इसके लिए काम-काज छोड़ बैठे तो तमाम दुनिया तबाह हो जाय। देखो मिस्टर आनन्द! हम, जो राजनीति के अन्दर दखल रखते हैं, इस किस्म की घरेलू बातों पर अपनी ज़िन्दगी बरबाद नहीं कर सकते।

"तुम कुछ दिन हमारे यहाँ रहो। तब तक असेम्बली की बैठक आरम्भ हो जायगी और करने को काम इतना हो जायगा कि इन फिज़ूल की बातों पर सोचने की फ़ुरसत ही नहीं रहेगी।"

चेतनानन्द उसी के घर रह गया। इस समय एक घटना घटी। ...मताब की बहिन नसीम, अपनी बहिन के पास कुछ दिन रहने के लिए ...गई। नसीम अभी कुमारी थी। उसने उसी वर्ष बी० ए० पास किया

था। वह लाहौर सैर करने आई थी और चेतनानन्द बेकार था। दोनों को परस्पर मिलने का बहुत अवसर मिलने लगा। नसीम ने शालिमार बाग़ देखने जाना होता तो चेतनानन्द ले जाने के लिए तैयार हो जाता। यदि उसने जहाँगीर का मकबरा देखना होता तो चेतनानन्द को साथ जाने की फुरसत होती। कभी अजायब-घर, कभी चिड़िया-घर, कभी लॉरेंस गार्डन और कभी घुड़-दौड़। अभिप्राय यह कि हर समय चेतनानन्द और नसीम इकट्ठे होते। प्राय ऐसे समय, चेतनानन्द साथ जाने के लिए खाली होता और बैरिस्टर साहब और मुमताज़ को कुछ न-कुछ काम हो जाता।

नसीम आठ-दस दिन तक लाहौर रही और इतने दिनों में उसका चेतनानन्द से परिचय बहुत घना हो गया। जाते समय नसीम ने चेतनानन्द से दिल्ली सैर के लिए आने का वचन ले लिया।

कुछ दिनों में दिल्ली में 'ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी' का अधिवेशन होने वाला था। चेतनानन्द ने उन दिनों दिल्ली जाने का निश्चय कर लिया। मुमताज़ और नसीम के मायके दिल्ली में थे। उनके पिता पुराने कांग्रेसी कार्यकर्त्ता थे। वे सन् १६२१ के आन्दोलन में जेल-यात्रा कर चुके थे। उनके लड़के नज़ीर अहमद विलायत से डॉक्टरी पास कर आए थे और दिल्ली सिविल लाइन्ज़ में चिकित्सा कार्य करते थे। इस समय पिता का देहान्त हो चुका था। बड़ी बहिन मुमताज़ का विवाह लाहौर में हो चुका था और छोटी बहिन नसीम लाहौर से, चेतनानन्द से अपना मन मेल कर आई थी।

नसीम दिल्ली में सार्वजनिक कामों में बहुत भाग लेनेवाली लड़की थी। कांग्रेसी क्षेत्र में उसकी जान-पहिचान बहुत अच्छी थी और उससे विवाह के इच्छुक कई, नवयुवक उसके आगे-पीछे चक्कर काटते रहते थे। इनमें सबसे मनचला एक कमीरुद्दीन नाम का, हकीम असगर हुसैन का लड़का, जिसने नसीम के साथ ही बी० ए० किया था, हर रोज उससे मिलने आता रहता था। जब नसीम लाहौर गई हुई थी, तब भी वह

उसकी टोह लेता रहता था। उसे नसीम के लाहौर से आने का पता चला तो वह स्टेशन पर उसके स्वागत के लिए जा पहुँचा। नसीम उसे प्लैटफ़ार्म पर खड़ा देख, प्रसन्न नहीं हुई। इस कारण कबीरुद्दीन को अपनी ओर आते देख गाड़ी से उतर उसने मुख मोड़ लिया। वह जब उसके पास पहुँचा तो नसीम ने ऐसे मुख माड़े हुए कुली को आवाज़ दी, जैसे उसने उसे देखा ही नहीं। कबीरुद्दीन ने कहा "हुज़ूर! बन्दा हाज़िर है और साथ नौकर भी लाया है।"

"ओह! आप हैं। मैं आपके आने की उम्मीद नहीं करती थी।"

"क्या?"

"आपको बताया किसने कि मैं आज आ रही हूँ?"

"आपकी खुशबू ने, जो पहिले ही आ गई थी।"

"ज़रा तहज़ीब से बात करिए। यह प्लैटफ़ॉर्म एक पब्लिक जगह है।"

"ओह! भूल हो गई सरकार!" उसने अपने नौकर की ओर देखकर कहा, "अल्ला दीन! यह मेमसाहब का सामान उठाकर बाहर ले चलो।"

नौकर जब सामान उठाने लगा तो नसीम ने कह दिया, "रहने दो, इसे कुली उठायेगा।"

कबीरुद्दीन चुप रहा। कुली ने सामान उठाया तो नसीम उसे लेकर स्टेशन से बाहर निकल आई। कबीरुद्दीन और उसका नौकर उसके पीछे पीछे बाहर चले आये। नसीम ने टैक्सी भाड़े पर की और सवार हो अपने माई के घर को चली गई। कबीरुद्दीन इतनी जल्दी हार मानने वाला नहीं था। वह अपनी मोटर में सवार हो उसके पीछे-पीछे जा पहुँचा। नसीम, बिना उसका ध्यान किए, उसे मकान के ड्राईंगरूम में छोड़ अपने कमरे में चली गई। गुसल वग़ैरह से छुट्टी पा और नाश्ता कर बाहर आई तो कबीरुद्दीन को अभी भी वहाँ बैठे देख, माथे पर त्योरी चढ़ा पूछने लगी, "कबीर साहब! क्या बात है? आपको भाई साहब से काम है कुछ?"

"नहीं, मुझे आपसे काम है।"

"तो फरमाइये। "नसीम ने उसके सामने सोफ़ा पर बैठते हुए कहा।

कबीरुद्दीन ने उसकी आँखों में देखते हुए कहा, "जब आप लाहौर तशरीफ़ ले जा रही थीं तो क्या आपकी आँखों ने मुझे धोखा दिया था?"

"आपने उनमें क्या देखा था, जब तक मुझे यह न मालूम हो, तब तक कैसे, मैं इस सवाल का जवाब दे सकती हूँ?"

"मैंने उनमें मुहब्बत की झलक देखी थी।"

"आपने ठीक देखा था, लेकिन वह मुहब्बत आपके लिए नहीं थी। यह आपको किसने बताया है कि वह झलक आपके लिए थी? देखो कबीर साहब। अब आपको यह समझ लेना चाहिए कि हम बच्चे नहीं रहे। मेरी सगाई हो गई है और मुझको अब अपना काम धंधा देखना चाहिए।"

"आपकी सगाई हो गई है? किससे?"

"आपसे नहीं। वे कौन हैं, यह आपके जानने की बात नहीं। अब आप जा सकते हैं।"

"इतनी जल्दी नहीं, बेगम साहिबा! आपने मेरे साथ क्या-क्या वायदे किए थे? उन सबका क्या हुआ? आखिर मैंने जो आप पर इतना कुछ खर्च किया है, उस सबका क्या होगा?"

"वह सब गया भाड़ में। तुम उसको किसलिए खर्च कर रहे थे? क्या वह मुझे शादी के लिए रिश्वत दी जा रही थी?"

कबीरुद्दीन यह सुन भौंचक रह गया। उसे नसीम में इतनी जल्दी परिवर्तन होता देख बहुत विस्मय हुआ। वह समझ नहीं सका कि क्या करे, इस कारण चुपचाप उस कोठी के बाहर निकल गया।

: २ :

चेतनानन्द जब दिल्ली आया तो नसीम के भाई के घर ठहरा।

लाहौर की भाँति यहाँ भी नसीम चेतनानन्द के साथ-साथ घूमती रहती थी। यद्यपि यह घोषित नहीं हुआ था, तो भी दोनों का विवाह हो जाना अब स्वाभाविक ही प्रतीत होने लगा था। नज़ीर अहमद को भी यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि इनका विवाह होगा।

कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक हुई और उसके अगले दिन ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक थी। कैबिनेट मिशन की बातों को मान लिया गया था। इनमें सबसे अधिक खटकनेवाली बात थी भारत को तीन स्वतन्त्र भागों में बाँटना। इस पर ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सदस्यों में गरमागरम वाद विवाद चल रहा था। कुछ सदस्यों का विचार था कि इस योजना से तो वास्तव में देश का विभाजन हो ही गया है। दूसरे लोगों का विचार था कि इस योजना से देश में पाकिस्तान, अर्थात् मुसलमानी हकूमत स्थापित होने से बच गई है। इस दूसरे विचार के लोग इस बात के लिए बहुत चिन्तित थे कि मुस्लिम लीग ने अभी तक कैबिनेट मिशन की योजना को क्यों स्वीकार नहीं किया?

चेतनानन्द नसीम के साथ दर्शनीय स्थानों को देखने जाने में इतना व्यस्त था कि उसका ध्यान देश की उन विषम समस्याओं की ओर जा ही नहीं रहा था। एक दिन वे दोनों 'हौज़ खास' पर पिकनिक कर टैक्सी में घर आये, तो नज़ीर अहमद, नसीम के भाई ने, जो उस समय कहीं से आ रहा था और उनको टैक्सी से उतरते देख वहाँ आ गया था, चेतनानन्द को मुबारिकबाद दी। चेतनानन्द ने विस्मय में उसका मुख देखते हुए पूछा, "क्या हुआ है दादा?"

"वर्किंग कमेटी ने कैबिनेट मिशन की योजना को स्वीकार कर लिया है।"

"सच! यह तो मुबारिकबादी की बात ही है।" चेतनानन्द ने प्रसन्न हो कहा।

"मगर", नसीम ने कहा, "मुस्लिम लीग तो इसको नहीं मान रही।"

"यही तो खुशी की बात है।" चेतनानन्द का कहना था। "अब

तो अँग्रेज़ों पर यह बात साबित हो जायेगी कि मुस्लिम लीग के लोग ही हैं, जो समझौता करने को तैयार नहीं हैं।"

"ऊँह!" टैक्सी-ड्राइवर के मुख से निकल गया। इस टैक्सी में नसीम और चेतनानन्द दिन भर घूमते रहे थे।

नज़ीर और चेतनानन्द ने घूमकर उस ड्राइवर की ओर देखा। वह सावधान होकर खड़ा हो गया। नज़ीर को ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे कोई फौजी सिपाही अपने अफसर के सामने 'अटेंशन' की हालत में खड़ा हो जाता है। ड्राइवर सिक्ख था। नज़ीर ने उसकी ओर देखकर पूछा, "तुम फौज में रहे हो?"

"जी! मैं आज़ाद हिन्द फौज का सिपाही हूँ।" ड्राइवर का उत्तर था।

"तभी इस किस्म की गुस्ताखी कर रहे हो?"

"बहुत भूल हुई है साहब! मुआफ़ी चाहता हूँ। मगर बात आपने ऐसी कही है, जिसका असर मेरे मन पर बहुत ज़बरदस्त हुआ था और यह असर भीतर रुक नहीं सका।"

"क्या असर हुआ है तुम्हारे मन पर?" नसीम ने पूछा।

"छोड़ो इसको। इसका भाड़ा दो और विदा करो।" नज़ीर ने नाक चढ़ाकर कहा।

"नहीं भैया! इस जमहूरियत के ज़माने में सबकी बात सुननी चाहिए। हाँ तो सरदार साहब! क्या असर हुआ है आपके मन पर?"

ड्राइवर उसी भाँति अटेंशन की हालत में खड़ा-खड़ा बोला, "सरकार! कांग्रेस वालों के मन में अँग्रेज़ों को प्रसन्न करने की बात मैंने पहली बार सुनी है और फिर देश के टुकड़े कुबूल करते हुए। हमने अँग्रेज़ों से लड़कर स्वराज्य लेने का जो खतरा अपने सर पर लिया था, उसके बाद महात्मा गांधी के शिष्यों को अँग्रेज़ों को खुश करने की बात कहते सुन दिल की पीड़ा छुपी नहीं रह सकी।"

बात सत्य थी और सब उसके मन के भावों से इतने प्रभावित हुए कि उसकी बात के उत्तर में कुछ भी कह नहीं सके। नसीम ने टैक्सी

का भाड़ा दिया। टैक्सीवाले ने रकम जेब में डाल सलाम की और गाड़ी पर सवार हो चला गया। ये लोग भी भीतर आ गए। ड्राइंग रूम में बैठ तो बात नसीम ने आरम्भ कर दी, "बात तो यह ठीक कहता था। हम लोगों को इस बात का ओर कभी ध्यान भी नहीं करना चाहिए कि अँग्रेजों के ऊपर किसी बात का क्या असर होता है। हमें तो हमेशा यह देखना चाहिये कि किस बात से मुल्क को फायदा होगा और किससे नुक्सान।"

"आज इसी बात में फ़ायदा है कि अँग्रेजों की नज़र में हम नेक और ईमानदार साबित हों।

नसीम को यह फ़िलोसोफी समझ नहीं आई। इस कारण वह सोच में पड़ गई। उसे परेशान देख चेतनानन्द ने बात को टालते हुए कहा, "छोड़ो जी इस बात को। देखो दादा! हम आज 'हौज़ खास' गए थे। वहाँ पिकनिक का बहुत लुत्फ़ आया। तुम यहाँ घर बैठ क्या मक्खियाँ मारते रहते हो। कल हम मथुरा जा रहे हैं। क्या ही अच्छा हो अगर तुम भी साथ चलो तो।"

"और कल ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक जो होने वाली है। क्या उसमें नहीं जा रहे?"

चेतनानन्द इस सूचना से ऐसा दुःख अनुभव करने लगा, जैसे कोई बच्चा किसी खिलौने के छिन जाने से बेबसी अनुभव करता है। वह परेशानी में नसीम का मुख देखने लगा। नसीम ने समझा कि वह उससे वचन-भंग होने से घबरा रहा है। वास्तव में चेतनानन्द नसीम की संगत के आनन्द से वंचित हो जाने से दुःख अनुभव कर रहा था। नसीम ने अपने विचारानुसार उसे वचन से मुक्त करने के लिए कह दिया, "आनन्द जी! हम मथुरा का प्रोग्राम फिर किसी दिन के लिए मुल्तवी कर सकते हैं। कांग्रेस कमेटी की बैठक में तो जाना ही होगा। मेरे पास विज़िटर्स टिकट है और मैं गैलरी में से आपको बैठक में भाग लेते देखना चाहती हूँ।"

विवश चेतनानन्द को अपने आनन्द का त्याग करना पड़ा।

३

अगले दिन नसीम को, विज़िटर्स गैलरी में बैठे हुए चेतनानन्द को कैबिनेट मिशन योजना के स्वीकार करने का विरोध करते देख, बहुत अचम्भा हुआ। विरोध करने वाले बहुत कम थ, इस कारण चेतनानन्द को बोलने का अवसर मिल गया। जब उसकी बारी आई और वह बोलने लगा तो इतना युक्तियुक्त बोला कि सब गम्भीर हो सोचने लगे। कांग्रेस के नेता लोग, जो वर्किंग कमेटी में कैबिनेट-योजना मान चुके थे, घबरा उठे। चेतनानन्द कह रहा था, "इस योजना का मानना तो देश विभाजन को मान लेना है। मैं पूछता हूँ कि जब हम उत्तरी भारत और पूर्वी भारत को, सब आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र कर रहे हैं और वहाँ मुसलमानों का बाहुल्य है, तो कैसे कह सकते हैं कि हमने दो पाकिस्तान नहीं बना दिए। हमने देश-विभाजन न स्वीकार करने का वचन दिया हुआ है। चुनावों के समय हमने अपने हल्कों के लोगों को यह आश्वासन दिया था कि हम पाकिस्तान बनने नहीं देंगे। सो अब यह हम क्या कर रहे हैं? यह ईमानदारी नहीं, यह राजनीति नहीं। यह देश हित भी नहीं। यह कायरता है। यह मूर्खता है। यह गद्दारी है।"

जब चेतनानन्द बैठा तो सबने तालियाँ बजाईं और वाह-वाह की। पंजाब और बंगाल के सदस्यों ने उसके पास आकर उसे बधाई दी और उसकी पीठ को ठोंका। नेता लोग इस प्रदर्शन से घबरा उठे और जब एक आन्ध्र देश का सदस्य योजना के पक्ष में लम्बी चौड़ी नीरस और युक्तिहीन बातें कहने लगा तो महात्मा गांधी को 'एस० ओ० एस०' भेजा गया। महात्मा जी मौनव्रत में थे। उन्हें अपना मौनव्रत दो घण्टा पूर्व ही तोड़ना पड़ा और वे भागे हुए सभा-मण्डप में आ पहुँचे। आन्ध्र देश के सदस्य का वक्तव्य समाप्त होते ही महात्मा जी ने अपने कोमल, मधुर और जादू भरे शब्दों में सदस्यों को समझाया। उन्होंने कहा, "मैं

कहता हूँ कि इंग्लैण्ड की वर्तमान मज़दूर सरकार ईमानदार लोगों की बनी है। हमें उनका एतबार करना चाहिए। भाई क्रिप्स और पैथिक लॉरेंस ने मुझे विश्वास दिलाया है कि इस योजना से देश को लाभ होगा। आप लोगों को अपने नेताओं पर विश्वास रखना चाहिये। मेरी आपको यह सम्मति है कि आप इस योजना को स्वीकार कर देश, अँग्रेज़ और संसार को यह सिद्ध कर दो कि हम ईमानदारी से देश के काम को करना चाहते हैं।'

जब गांधी जी का कहना समाप्त हुआ तो मण्डप में ऐसी शान्ति विराजमान थी, जैसी किसी ईसाई के मृत शव के साथ जाने वालों में होती है। अब प्रधान ने उठकर कहा, "मैं समझता हूँ कि महात्मा जी के हुक्म के पश्चात् अब और कुछ कहने-सुनने को रह नहीं गया। मैं अब राय लेता हूँ।' इस समय भी लोग विस्मय में डूबे हुए एक-दूसरे का मुख देख रहे थे।

प्रधान ने कहा, 'वे लोग हाथ उठायें, जो प्रस्ताव का विरोध करते हैं।'

ग्यारह हाथ उठे। इनमें चेतनानन्द का हाथ नहीं था। नसीम यह व्यवहार देख चकित रह गई। प्रस्ताव पास हो गया। कांग्रेस ने कैबिनेट योजना स्वीकार कर ली।

जब चेतनानन्द मण्डप के बाहर आया तो नसीम ने अपनी हैरानी मिटाने के लिए पूछा, 'यह आपने क्या किया है? लैक्चर तो दिया कैबिनेट योजना के खिलाफ़ और वोट दिया हक़ में?"

चेतनानन्द हँस पड़ा। उसने प्रेमभरी दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए कहा, "प्रिये! लैक्चर दिया था तुमको सुनाने के लिए और वोट दिया है नेताओं की बात पास कराने के लिए। मैं समझता हूँ कि नीति नेताओं की ही चलनी चाहिए। हमें तो अपनी राय उनको बताते रहना चाहिए।"

नसीम को इस युक्ति से सन्तोष नहीं हुआ। उसने यह स्पष्ट प्रश्न

श्रा, "क्या श्राप सत्य ही इस बात पर विश्वास रखते हैं कि यह योजना
श के हित में है ?"

"मैंने योजना पर कभी विचार ही नहीं किया। यह काम नेताओं
ना है।"

"तो श्राप नेता नहीं हैं क्या ?"

"नहीं ! हमारे नेता महात्मा गांधी हैं।"

"तो श्रापको कांग्रेस की ओर से कौंसिल का सदस्य क्यों बनाया
गया है ? सारे देश में एक महात्मा गांधी को ही सब कुछ बना दिय
होता। श्रॉल इण्डिया कांग्रेस कमेटी का सदस्य भी श्रापको बनाने के
श्रावश्यकता नहीं थी।"

"तो तुम नाराज हो गई हो, मेरी जान !"

"नाराज नहीं तो हैरान जरूर हुई हूँ।"

उसी रात, जब चेतनानन्द किसी मित्र के यहाँ गया हुश्रा था,
नसीम ने श्रपने भाई नज़ीर श्रहमद से, श्रॉल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में
चेतनानन्द के व्यवहार का वर्णन किया। नज़ीर श्रहमद उसकी बात
सुन हँस पड़ा। नसीम इस हँसी का अर्थ नहीं समझ सकी। नज़ीर
श्रहमद ने श्रपना श्रभिप्राय समझाने के लिए कहा, "देखो नसीम !
हमारे और कांग्रेस के नुक्ता निगाह में भारी फरक श्रा गया है। हम, जो
नेशनलिस्ट मुसलमान कहाते थे, झूठे और बेदलील बातें करने वाले
हो गए हैं। हम कहते थे कि हिन्दू और मुसलमान दोनों, एक ही मुल्क
में रहने से, एक ही कौम के बन्दे हैं। हम मुस्लिम लीग वालों को ग़लत
और गद्दार कहते थे। मगर अब तो कांग्रेस ने श्रसूलन यह बात मान
ली है कि मुसलमानों को मुल्क का एक श्रलहदा हिस्सा चाहिए। पिछले
एक-दो हफ्ते से मैं यह महसूस कर रहा हूँ कि हम श्रभी तक श्रपनी कौम
से गद्दारी कर रहे थे। कांग्रेस एक हिन्दू जमायत है और उसने ही हमें
कह दिया है कि मुसलमानों को श्रलहदा मानने में वे विवश हो गए हैं।
श्रगर पाकिस्तान बना तो हमारे लिए न तो हिन्दुस्तान में जगह रह

पायेगी और न ही पाकिस्तान में। एक हमें मुसलमान मानने से गं
समझेंगे और दूसरे हमें अपनी कौम का साथ न देने की वजह से गद्दा
कहेंगे।"

'यह तो एक निहायत ही शर्मनाक बात हो गई है। मगर आप
ही कल शाम को कैबिनेट मिशन की योजना मानने पर चेतनानन्द की
को मुबारकबाद दे रहे थे।'

"मैं उससे मज़ाक कर रहा था। मेरा ख्याल था कि एक पंजाबी
होने से उसे यह योजना पसन्द नहीं आयेगी और मेरे मुबारकबाद देने
पर उसे क्रोध चढ़ आयगा।"

"तो अब क्या करना चाहिए?'

"मैं तो यह सोचता हूँ कि हमें अपना डेरा यहाँ से कूच करना
चाहिए। कलकत्ता या लाहौर में आए रिहायश रखने का इरादा है।"

'मेरे लिए तो बहुत मुश्किल हो जायेगी।'

"मैं समझता हूँ। मेरी कोशिश तो यह है कि चेतनानन्द को होने
वाले पाकिस्तान में किसी काम पर लगवा दूँ। पर यह तो तुम्हारी शादी
के बाद ही हो सकेगा।"

"अगर हिन्दू और मुसलमानों ने अलग-अलग ही रहना है तो
फिर हमारी शादी का हश्र ही क्या होगा!"

"देखो नसीम! अगर तो तुम्हें उससे कोई खास उन्स हो गई है,
तब तो शादी कर लो और मैं कोशिश करूँगा कि आने वाली आँधी
में तुम लोगों को कहीं पनाह मिल सके। ऐसा मालूम होता है कि
कांग्रेस के इस योजना को मान लेने से मुस्लिम लीग नहीं मानेगी।
दोनों में झगड़ा बढ़ेगा और मुस्लिम लीग का 'डॉयरेक्ट-ऐक्शन'
चलेगा। यह 'सिविल-वार' का बिगुल होगा। अगर यह शुरू हो गई
तो एक वक्त ऐसा भी आ सकता है कि हिंदुस्तान की फ़ौजें दो हिस्सों
में तकसीम हो जायें। दोनों हिस्सों के नया अंग्रेज़ अफ़सर होंगे और
तमाम मुल्क में खून की नदियाँ बह जायेंगी।

"हमारी शादी, अब हुए बिना नहीं रह सकती। मेरे लिए तो मुश्किल नहीं मैं तो मुल्क के किसी भी हिस्से में रह सकती हूँ। मगर सवाल उनका है। वह हिन्दुस्तान में रहना पसन्द करेंगे।"

"यही तो मुश्किल है। जहाँ तक मेरा कयास है, दिल्ली तो महफूज जगह नहीं है। यहाँ हिन्दू मुसलमानों की आबादी बराबर है और जब एक बार झगड़ा शुरू हुआ तो कौन कह सकता है कि आखिर कहाँ होगी।"

४

चेतनानन्द और नसीम का विवाह दिल्ली में नहीं हो सका। विवाह के लिए नसीम को लाहौर जाना पड़ा। यह आयोजन बैरिस्टर सराजदीन साहब के बँगले पर हुआ। निमन्त्रण उन्हीं की तरफ से भेजे गए। लाला जीवनलाल ने निमन्त्रण-पत्र पढ़ा तो खिलखिलाकर हँस पड़ा। चेतनानन्द की माँ ने लाला जी को हँसते देख पूछा, "क्या बात हो गई है, जो इतने खुश प्रतीत होते हो!"

"तुम्हारे बेटे ने आखिर अपने लिए बीवी ढूँढ़ ही ली है, पर मैं समझता हूँ कि यह भी निभ नहीं सकेगी। आज ज़माना तो हिन्दू मुसलमानों में लड़ाई का आ रहा है, परस्पर विवाह शादियों का नहीं। भगवान् भला करे।"

"आपने अपने बच्चों की कभी भलाई भी सोची है! सदा बुरा ही सोचते रहते हो।" चेतनानन्द की माँ ने कहा। वह इस विवाह के विषय में पूर्ण जानकारी रखती थी। चेतनानन्द ने इसमें व्यय करने के लिए धन अपनी माँ से ही लिया था।

"अगर मैं अपने तजरुबे से किसी बात का अनुमान लगाऊँ तो कौन पाप करता हूँ!"

"कभी अच्छे अनुमान भी तो लगाने चाहिएँ।"

"काम अच्छे किये जायें तो अनुमान अपने आप ही अच्छे लग जाते हैं।"

"छोड़िए इस बात को। मैं जानना चाहती हूँ कि आप शादी पर जा रहे हैं या नहीं?"

"नहीं। मेरे उसके इस विवाह पर न आने का कारण भी वही है, जो उसके पार्वती के साथ विवाह करने के समय था। उसने हमारी परिवार प्रथा का उल्लंघन किया है। मुझे यह पसन्द नहीं।"

"पर आप एक बाहरी आदमी के रूप में तो आ सकते हैं?"

'बब बाप ही नहीं रहा तो बाहरी आदमी बनकर क्या करूँगा?'

बात यहीं समाप्त नहीं हुई। विवाह के एक दिन पूर्व बैरिस्टर सराज दीन जीवनलाल से मिलने आया। उसे देखते ही जीवनलाल पहिचान गया। उसने समाचार-पत्र में पढ़ लिया था कि चेतनानन्द की शादी बैरिस्टर सराजदीन की साली से हो रही है। इससे एक मुसलमान को बैठक में प्रवेश करते देख सब समझ गया। उसने उठकर स्वागत करते हुए कहा, "शायद आप चेतनानन्द के विवाह का निमन्त्रण देने आए हैं?"

"जी हाँ। साथ में एक और काम भी है।"

"मैं उसका भी अन्दाज़ लगा रहा हूँ। मेरा विचार है कि आप उसकी आर्थिक अवस्था जानने आए हैं। क्या मेरा अनुमान ठीक है?"

"आप बुज़ुर्ग हैं और फिर एक तजरबेकार व्यापारी भी। आपका अन्दाज ठीक ही है। मैं जानना चाहता हूँ कि आप अपनी जायदाद को किस बिना पर अपनी औलाद को देना चाहते हैं?"

"मैं समझता हूँ कि आपने व्यर्थ ही तकलीफ़ की। मैंने अपनी वसीयत लिख रखी है और चेतनानन्द उसके विषय में जानता है।"

"यह तो उसने बताया था। मगर मैं ख्याल करता हूँ कि दिन-बदिन हालात बदलते जाते हैं और शायद यह आपके फायदे की बात ही होगी कि आपकी जायदाद में उसका, जिसकी शादी एक मुसलमान लड़की से हो रही है, हिस्सा भी हो।"

"मैं आपकी बात का मतलब नहीं समझा। क्या आप यह बताना

चाहते हैं कि मुसलमानी-राज्य आने वाला है, इससे मुसलमान से रिश्ता रखने में लाभ होगा ? मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि हम लोग उन हिन्दुओं की सन्तान हैं, जिन्होंने सात सौ वर्ष के मुसलमानी राज्य की घोर यन्त्रणा सहने पर भी, उनसे सम्बन्ध बनाना उचित नहीं समझा था। यह जायदाद तो एक मिट्टी का ढेला है, मैं तो अपनी जान तक की भी परवाह नहीं करता।"

"अच्छी बात है। खैर कल तशरीफ़ तो लाइएगा ?"

"नहीं! मेरे जाने से उस किसी प्रकार का लाभ नहीं होगा। मुझे उसकी शादी देखकर किसी प्रकार की प्रसन्नता नहीं हो सकती।"

इतना कह जीवनलाल ने उठकर बैरिस्टर साहब को विदा करने के लिए हाथ जोड़कर नमस्कार कर दी। विवश सराजदीन उठा और सलाम कर चला गया।

सराजदीन ने घर जाकर अपनी बीवी मुमताज़ से जीवनलाल की बात बताकर कहा, "यदि मेरे वश की बात होता तो मैं यह विवाह रोक देता। मगर मजबूर हूँ। नसीम तो उस पर लट्टू हो रही है।"

"मेरा तो ख्याल है कि वे मियाँ-बीवी पहिले ही बन चुके हैं। अब तो सिर्फ लोगों की आँखों में धूल झोंकने की बात रह गई है।"

"मैंने जब नजीर भाई को लिखा था, तब मेरा ख्याल था कि चेतनानन्द साहबे-जायदाद है। अगर मुझे मालूम होता कि यह दिवालिया है तो मैं कभी भी नसीम की इससे मुलाकात न होने देता। दरअसल में मैं ही इस सब गड़बड़ का जिम्मेदार हूँ। मैंने इसका यह इलाज सोचा है। मैं चाहता हूँ कि शादी होने के बाद इनको कलकत्ता भेज दूँ। वहाँ के वज़ीरे आज़म मेरे दिली दोस्त हैं। वे उस किसी काम पर लगा देंगे।"

"मगर चेतनानन्द मानेगा ? वह कौंसिल का मेम्बर है। भला मेम्बरी छोड़कर क्या यह नौकरी करेगा ?"

"नहीं मानेगा तो गुज़र कैसे करेगा ? फिर नसीम को ऐसा वजीरा

बनाना चाहिए कि वह इस बात पर तैयार हो जाये।

विवाह सम्पन्न हुआ तो बैरिस्टर साहब ने उन्हें 'हनी-मून' के लिए कलकत्ता जाने को तैयार कर लिया। नसीम को सब बात समझा दी गई और अच्छी नौकरी मिलने पर कलकत्ता में ही रहने की राय दे दी गई।

विवाह के तीसरे दिन प्रातःकाल चेतनानन्द और नसीम सब प्रकार से प्रसन्न कलकत्ता जा पहुँचे। वहाँ एक होटल में ठहर, बंगाल के प्रीमियर से मुलाकात करने पहुँच गए। प्रीमियर के नाम चेतनानन्द के पास एक चिट्ठी थी। यह चिट्ठी प्रीमियर ने पढ़ी तो कहा, "कहाँ ठहरे हो? मैं आप लोगों का सुबह से इन्तज़ार कर रहा हूँ।"

"हम होटल में ठहरे हैं। मैंने समझा कि पहिले आपसे मिल लूँ फिर आप जैसा फरमायेंगे हम करेंगे।"

"बहुत ही शरारती मालूम होते हो। जब तुम लोगों का तार आ चुका था तो तुम सीधे यहाँ क्यों नहीं आए? तुम्हारे लिए रहने का यहीं इन्तज़ाम है। अच्छा अब यहीं ठहरो। मैं मोटर भेज तुम्हारा सामान मँगवा देता हूँ।"

चेतनानन्द और नसीम प्रीमियर साहब के मेहमान बन गए।

५

चेतनानन्द का विचार दो सप्ताह तक कलकत्ता में रहने का था, परन्तु अभी एक सप्ताह भी नहीं हुआ था कि चेतनानन्द को प्रान्तीय पब्लिसिटी ऑफिसर की नौकरी कर लेने के लिए कहा गया। चेतनानन्द इसकी चर्चा सुन चकित रह गया। उसने नसीम से कहा, "मैं हैरान हूँ कि प्रधान मन्त्री क्यों इतने दयालु हो रहे हैं? मैं कांग्रेस पार्टी का सदस्य हूँ, व मुस्लिम-लीग पार्टी के नेता हैं। भला हम दोनों का मेल क्या है? पब्लिसिटी ऑफिसर का स्थान एक निहायत ही जरूरी काम की जगह है। इस जगह को विरोधी पार्टी के एक सदस्य को देना विस्मय करने की बात ही तो है। मुझे तो यह नीति समझ में नहीं आई।"

नसीम ने खुशी से फूलते हुए पति के गले में बाँह डालकर कहा, "तो आपको चिट्ठी मिल गई है क्या? मैं बहुत खुश हूँ।"

"तो तुमने वज़ीर साहब से कहा था?"

"नहीं। उन्होंने मुझसे कहा था कि लाहौर से जीजा जी की चिट्ठी आई है और वे उस पर ग़ौर कर रहे हैं। मैं समझती थी कि कोई अच्छी नौकरी मिलनी मुश्किल है। इससे मैंने आपसे ज़िक्र नहीं किया। मालूम होता है कि वज़ीर साहब से जीजा जी का बहुत रसूख है।"

"पर मैं तो नौकरी करने का विचार नहीं रखता।"

"तो गुज़र कैसे होगी? आखिर अपनी माँ से रुपया कब तक मँगवाते रहिएगा? और फिर यह कोई नौकरी तो है नहीं। इसे तो 'प्राइज़-पोस्ट' कहते हैं।"

चेतनानन्द इस विचार को सुन सोच में पड़ गया। निर्वाह की बात तो उसके मन में कभी उठी ही नहीं थी। आज इस बात के उल्लेख किये जाने पर वह सोचने लगा था कि माँ से माँगने की सीमा है। यह विचार कर उसने कहा, "मैं ज़रा सोचकर उत्तर दूँगा।"

"कब तक चार्ज लेने की बात है?"

"अगले सप्ताह सोमवार तक।"

"तब तो बहुत सोचने को समय नहीं है। आज जुम्मा है। जवाब कल तक चला जाना चाहिए, ताकि आपको चार्ज देने का हुक्म जारी हो सके।"

"मैं कल प्रात ही प्रीमियर साहब को मिलकर इन्कार व रज़ामन्दी बता दूँगा।"

"इन्कार का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। इससे अच्छा मौक़ा और नहीं मिलेगा। देखिए न, दो हज़ार से ऊपर तनख्वाह है और फिर रसूख और वाक़फ़ीयत कितनी बढ़ जायेगी। मैं तो समझती हूँ कि यह खुदादाद मौक़ा है। इसे छोड़ना नहीं चाहिए। कौंसिल की मेम्बरी इसके सामने कुछ हक़ीक़त नहीं रखती।"

नईम की युक्तियों ने चेतनानन्द को परास्त कर दिया। अगले दिन वह मीमिन्र साहब के कमरे में जाकर इस विषय पर बातचीत करने लगा। उसने कहा, "आपने बहुत कृपा की है। मुझे भय है कि मैं इस काम को कर भी सकूँगा या नहीं।"

"काम करने से काम होता है। तुम घबराओ नहीं, सब ठीक होगा। ज़रा ध्यान देकर काम करने से काम भी निभ जायगा।"

'पर मेरा निवेदन है कि अगर कोई मुसलमान अच्छा मददगार आपको मिल जावे तो आप उसको रख सकते हैं।'

"नज़ीर अहमद के मदनो और सरावगीन के साम्य से अच्छा आदमी मुझे नहीं मिलेगा।"

इस युक्ति ने चेतनानन्द का मुँह बन्द कर दिया और सोमवार दस बजे सरकारी पब्लिसिटी आफिस में जाकर उसने डायरेक्टर की पदवी का चार्ज ले लिया। चार दिन पहले थे मिस्टर मुकुन्द कुमार दास। उससे पहिले इस स्थान पर एक अंग्रेज़ काम करता था। उसके रिटायर होने पर मिस्टर दास अस्थायी रूप में काम करने लगा था। यद्यपि वह सब प्रकार से योग्य था, परन्तु उसे इस स्थान पर पक्का नहीं किया जा रहा था। एकाएक मिस्टर चेतनानन्द की नियुक्ति होती देख वह घबरा उठा। यदि किसी मुसलमान को उस स्थान पर नियुक्त कर दिया जाता तब तो उसे कुछ कहने-सुनने का अवसर प्राप्त हो जाता। परन्तु एक हिन्दू के स्थान पर एक हिन्दू की नियुक्ति होने से वह लाञ्छन लगा नहीं सकता था।

मिस्टर दास ने चार्ज देने के पूर्व अपने अधीन काम करनेवालों को मिलन में चाय दी। उसके अधीन काम करनेवाले, हिन्दू और मुसलमान, दोनों सब प्रकार से प्रसन्न थे। इससे उसके जाने के समाचार से किसी को खुशी नहीं हुई। इस पार्टी में मिस्टर दास ने सब काम करने वालों से पृथक्-पृथक् मिलकर विदा माँगी और उनसे, जो भी उन लोगों को उसके काल में कष्ट हुआ था, उसके लिए क्षमा माँगी।

मिस्टर दास की एक पी० ए० थी। उसका नाम अनिमा बैनर्जी

था। लड़की कवाँरी थी और मिस्टर दास उससे बहुत स्नेह रखते थे। उससे मिले तो कहने लगे, "मैं नहीं जानता कि आनेवाले डॉयरेक्टर कैसे आदमी हैं। इतना मालूम हुआ है कि वे पंजाबी हैं। इससे मैं समझता हूँ कि तुम्हें बहुत कष्ट होगा। यदि तुम कहो तो मैं तुम्हारे लिए 'स्टेट्समैन डेली' में नौकरी का प्रबन्ध कर सकता हूँ। वहाँ के प्रधान सम्पादक से मेरा घना परिचय है। वह तुम्हें अवश्य रख लेगा।"

अनिमा बैनर्जी इस प्रस्ताव से बहुत हैरान हुई। यह यह तो समझती थी कि मिस्टर दास उसके हित से ही यह बात कर रहा है, परन्तु उसे यह जान लज्जा अनुभव हुई थी कि उसमें दुर्बलता का होना मान लिया गया था। इस विचार से उसका मुख लाल हो गया। उसने आँखें नीची किये हुए कहा, "आप चिन्ता न करें। मैं अपनी फिकर स्वयं कर सकती हूँ। अभी कुछ काल के लिए मैं यह नौकरी छोड़ नहीं सकती।"

मिस अनिमा मिस्टर दास के एक परिचित की लड़की थी। इस कारण उसके लिए चिन्ता करना स्वाभाविक ही थी। परन्तु जब उसने कहा कि यह अभी वहाँ से नौकरी छोड़ नहीं सकती तो उसने अपना कर्त्तव्य पालन कर दिया मान, उसका ध्यान छोड़ दिया।

सोमवार के दिन चेतनानन्द ने अपनी पदवी का चार्ज ले लिया।

६

पब्लिसिटी विभाग में काम इतना कठिन नहीं था, जितना कि चेतनानन्द समझता था। साथ ही अनुभवी कार्य कर्ता कार्यालय में थे जो सब काम कर देते थे। चेतनानन्द को केवल हस्ताक्षर करने होते थे। मिस बैनर्जी एक और भारी सहायक थीं। भिन्न भिन्न विभागों के समाचार होते थे। समाचार, पत्रों, रॉयटर, ऐसोसिएटेड प्रेस और अन्य समाचार एजेन्सियों से आते थे। सब विषय के समाचार एकत्रित किये जाते थे और अपनी अपनी फ़ाइलों में लगा दिये जाते थे।

फाइलों की संख्या और विषय मिस बैनर्जी के पास लिखे रहते थे और
जब उसे कभी भी कोई सूचना आवश्यक होती तो बता देती थी। इस
विभाग के अधीन सरकारी कामों का प्रचार भी होता रहता था। भिन्न
भिन्न सरकारी कामों के विषय में रिपोर्ट आती थी और उनको ढंग से
लिखकर जनता के सामने उपस्थित किया जाता था।

यह सब काम प्रायः मिस बैनर्जी कर देती थी या अन्य कर्मचारियों
से करवा देती थी। दो-चार दिन के भीतर ही चेतनानन्द समझ गया
कि उसे अपनी अज्ञानता का दूसरों को भास नहीं होने देना चाहिए।
साथ ही उसे अच्छा काम करनेवालों को सदैव प्रोत्साहन देते रहना
चाहिए। अतएव जहाँ उसने भिन्न भिन्न फाइलों को मँगवाकर उन्हें
स्वयं समझने का यत्न करना आरम्भ कर दिया, वहाँ अपने अधीन काम
करनेवालों की योग्यता परखनी भी शुरू कर दी। उसका सबसे प्रथम
वास्ता मिस बैनर्जी से पड़ जाना स्वाभाविक था।

मिस बैनर्जी एक साधारण रूप-रेखा की लड़की थी, परन्तु अपने
काम में बहुत चतुर थी। साथ ही कार्यालय के काम को भली भाँति समझ
चुकी थी। इसके अतिरिक्त उसमें एक विशेष स्फूर्ति और सतर्कता विद्यमान
थी। एक-दो दिन के अनुभव से ही चेतनानन्द समझ गया था कि वह
कोई विशेष योग्यता की लड़की है। पहिले ही दिन उसने उसके गुणों
का भास पा लिया। जब चाय का समय हुआ तो चेतनानन्द ने
चपरासी से कहा, "दो आदमियों के लिए चाय ले आओ।" जब
चपरासी कार्यालय के बाहर वाले होटल से चाय का प्रबन्ध कर लाया
तो चेतनानन्द ने मिस बैनर्जी से कहा, "मैं समझता हूँ कि आप मेरे
साथ चाय पीने में आपत्ति नहीं करेंगी। मैं आपसे बहुत-कुछ पूछना
चाहता हूँ।"

"आप पीजिए और मैं आपसे बात करने के लिए उपस्थित हूँ।"

"आइए, संकोच करने की कोई बात नहीं। कौन नियामत है जो
इनकार करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।"

इतना कह चेतनानन्द बगल के कमरे में, जहाँ चाय रखी थी, उठकर चला गया। बैनर्जी उसके पीछे-पीछे वहाँ पहुँच गई और सामने की कुर्सी पर जा बैठी। जब चेतनानन्द उसके लिए चाय बनाने लगा तो उसने फिर न की, परन्तु चेतनानन्द ने कहा, "फिर वही बात! देखिए, मिस बैनर्जी! जब हम दफ्तर की कुर्सी पर बैठे हों तो बड़े-छोटे हो सकते हैं, परन्तु उससे बाहर हम साधारण मनुष्य-मात्र ही तो हैं। यह लीजिए, पीजिए।"

इतना कह और उसके लिए चाय का प्याला बनाकर उसे दे, वह अपने लिए चाय बनाने लगा। बैनर्जी ने इसमें उसका हाथ बटाना आरम्भ कर दिया। पश्चात् दोनों चाय पीने लगे। चाय पीते हुए चेतनानन्द ने पूछा, "मिस्टर दास आपके रिश्ते में कुछ लगते हैं क्या?"

"नहीं, क्या बात है? आपसे किसी ने कुछ कहा है क्या?"

"उन्होंने मुझसे स्वयं कहा है। वे आपके विषय में बहुत चिन्तित प्रतीत होते थे।"

"यह उनकी बहुत कृपा है। वास्तव में बात यह है कि मेरे पिता उनके सहपाठी थे। दोनों में कॉलेज के दिनों में घनी मित्रता थी। भाग्य के चक्कर से वे बड़े ऑफिसर बन गए और मेरे पिता अपना निर्वाह कर सकने में भी अयोग्य हैं।"

"उनकी शिक्षा कहाँ तक हो सकी थी?"

"वे इण्टरमीडिएट में अव्वल रहे थे, परन्तु थर्ड ईयर में ही किस्मत ने ऐसा पछाड़ा कि अभी तक होश नहीं आई। अब तो वे मेरे ही आश्रय में हैं।"

"क्या बीमार हो गए थे?"

"यह बात नहीं। मगर आप सुनकर क्या करेंगे। कोई अच्छी बात तो है नहीं।"

"तो क्या कोई प्रेम फाँस गले पड़ गया था? यदि कोई ऐसी बात है तो मुझे बहुत अफसोस है।"

"आपने गलत समझा है। वे बहुत ही नेक विचारों के आदमी हैं। अब आपने पूछा है तो सुन लीजिए।"

इतना कह उसने एक दो घूँट में चाय समाप्त कर कहना आरम्भ कर दिया, "मेरे पिताजी का नाम शिशिर कुमार बैनर्जी है। जब ये थर्ड ईयर के विद्यार्थी थे तो गदर पार्टी के लोग, जो 'कामागाटा मारु' जहाज़ से कैनेडा से वापस आए थे, डमडम के स्टेशन पर फ़ौज से घेर लिये गए। जब ये फौज के घेरे से निकलने लगे तो सिपाहियों ने गोली चला दी। इस पर भी वह लोग फौज के घेरे से निकल भाग खड़े हुए। उनमें से एक जो भागा, तो भीड़ में छुपता छिपता कलकत्ता कॉलेज स्क्वेयर में जा पहुँचा। वहाँ एक पुलिस अफसर ने उसे पहिचान पकड़ना चाहा। वह फिर भागा और पिताजी के कॉलेज में जा अपने विचार से बिना पुलिस से देखे जाने के वह पिताजी के होस्टल में उनके कमरे में जा छिपा। पिताजी मेज़ पर सिर टेके कुछ सोच रहे थे कि एक पंजाबी जवान को घबराए हुए कमरे में प्रवेश करते देख सब समझ गए। कामागाटा मारु जहाज़ के यात्रियों से जो व्यवहार सरकार ने किया था, वह कलकत्ता में विख्यात हो चुका था। इस विषय में विद्यार्थियों में भारी रोष फैल रहा था। उस पंजाबी के कमरे में घुसने से पहले मेरे पिता और बाबू सुनन्द कुमार दास में गोली चलने के विषय पर गरमागरम बहस हो चुकी थी। मिस्टर दास उस गोली चलने को खराब बात नहीं समझता था और पिताजी इस घटना पर सरकार पर उबल रहे थे। दोनों मित्र अभी जुदा ही हुए थे कि वह पंजाबी कमरे में घुस आया। पिताजी अभी उसके लम्बे-चौड़े डीलडौल को देख ही रहे थे कि उसने कहा, 'बाबू! मुझे कहीं छुपा लो। पुलिस मेरे पीछे-पीछे आ रही है।'

पिताजी ने उस कमरे का दरवाज़ा बन्द कर लिया। फिर कमरे का लैम्प बुझा दिया। अँधेरे में उस पंजाबी से बोले, 'तुमने यहाँ आकर बहुत गलती की है। इस कॉलेज में प्रायः अमीरों के लड़के पढ़ते हैं और अमीर हिन्दुस्तान में देशद्रोही ही हैं।

इतना कह चेतनानन्द बगल के कमरे में, जहाँ चाय रखी थी, उठकर चला गया। बैनर्जी उसके पीछे-पीछे वहाँ पहुँच गई और सामने की कुर्सी पर जा बैठी। अब चेतनानन्द उसके लिए चाय बनाने लगा तो उसने फिर न की, परन्तु चेतनानन्द ने कहा, "फिर वही बात! देखिए, मिस बैनर्जी! जब हम दफ्तर की कुर्सी पर बैठे हों तो बड़े-छोटे हो सकते हैं, परन्तु उससे बाहर हम साधारण मनुष्य-मात्र ही तो हैं। यह लीजिए, पीजिए।"

इतना कह और उसके लिए चाय का प्याला बनाकर उसे दे, वह अपने लिए चाय बनाने लगा। बैनर्जी ने इसमें उसका हाथ बटाना आरम्भ कर दिया। पश्चात् दोनों चाय पीने लगे। चाय पीते हुए चेतनानन्द ने पूछा, "मिस्टर दास आपके रिश्ते में कुछ लगते हैं क्या?"

"नहीं, क्या बात है? आपसे पिता ने कुछ कहा है क्या?"

"उन्होंने मुझसे स्वयं कहा है। वे आपके विषय में बहुत चिन्तित प्रतीत होते थे।"

"यह उनकी बहुत कृपा है। वास्तव में बात यह है कि मेरे पिता उनके सहपाठी थे। दोनों में कॉलेज के दिनों में घनी मित्रता थी। भाग्य के चक्कर से ये बड़े ऑफिसर बन गए और मेरे पिता अपना निर्वाह कर सकने में भी अयोग्य हैं।"

"उनकी शिक्षा कहाँ तक जा सकी थी?"

"वे इण्टरमीडिएट में अव्वल रहे थे, परन्तु बड़े इयर में ही किस्मत ने ऐसा पछाड़ा कि अभी तक होश नहीं आई। अब तो वे मर ही आश्रय में हैं।"

"क्या बीमार हो गए थे?"

"यह बात नहीं। मगर आप सुनकर क्या करेंगे। कोई अच्छी बात तो है नहीं।"

"तो क्या कोई प्रेम पाँस गले पड़ गया था? यदि कोई ऐसी बात है तो मुझे बहुत अफसोस है।"

"आपने गलत समझा है। वे बहुत ही नेक विचारों के आदमी हैं। अब आपने पूछा है तो सुन लीजिए।"

इतना कह उसने एक-दो घूँट में चाय समाप्त कर कहना आरम्भ कर दिया, 'मेरे पिताजी का नाम शिशिर कुमार बैनर्जी है। जब वे यह [illegible] के विद्यार्थी थे तो ग़दर पार्टी के लोग, जो 'कामागाटा मारू' जहाज़ से कैनेडा से वापस आए थे, डमडम के स्टेशन पर फौज से घेर लिये गए। जब वे फ़ौज के घेरे से निकलने लगे तो सिपाहियों ने गोली चला दी। इस पर भी कई लोग फ़ौज के घेरे से निकल भाग खड़े हुए। उनमें से एक जो भागा, तो भीड़ में छुपता छिपता कलकत्ता कॉलेज स्क्वेयर में आ पहुँचा। वहाँ एक पुलिस अफ़सर ने उसे पहिचान पकड़ना चाहा। वह फिर भागा और पिताजी के कॉलेज में आ अपने विचार से बिना पुलिस से देखे जाने के वह पिताजी के होस्टल में उनके कमरे में आ छिपा। पिताजी मेज पर सिर टेके कुछ सोच रहे थे कि एक पंजाबी जवान को घबराए हुए कमरे में प्रवेश करते देख सब समझ गए। कामागाटा मारू जहाज़ के यात्रियों से जो व्यवहार सरकार ने किया था, यह कलकत्ता में विख्यात हो चुका था। इस विषय में विद्यार्थियों में भारी रोष फैल रहा था। उस पंजाबी के कमरे में घुसने से पहले मेरे पिता और बाबू सुनन्द कुमार दास में गोली चलने के विषय पर गरमागरम बहस हो चुकी थी। मिस्टर दास उस गोली चलने को खराब बात नहीं समझता था और पिताजी इस घटना पर सरकार पर उबल रहे थे। दोनों मित्र अभी जुदा ही हुए थे कि वह पंजाबी कमरे में घुस आया। पिताजी अभी उसके लम्बे-चौड़े डीलडौल को देख ही रहे थे कि उसने कहा, 'बाबू! मुझे कहीं छुपा लो। पुलिस मेरे पीछे-पीछे आ रही है।'

'पिताजी ने उठ कमरे का दरवाज़ा बन्द कर लिया। फिर कमरे का ...र बुझा दिया। अँधेरे में उस पंजाबी से बोले, 'तुमने यहाँ आकर ...त गलती की है। इस कॉलेज में प्रायः अमीरों के लड़के पढ़ते हैं और ... अमार हिन्दुस्तान में देशद्रोही ही हैं।'

'तो आप मुझे पुलिस के हवाले कर देंगे क्या ?'

'मैं उनमें नहीं हूँ। परन्तु तुम यहाँ पकड़े गए तो मेरा पकड़ा जाना भी तो निश्चित है।'

'मुझे अफसोस है। आप ऐसा करिए कि कमरे को बाहर से ताला लगा कहीं चले जाइए। एक-आध घण्टे के बाद आइयेगा। तब तक पुलिस ढूँढकर चली जायेगी। पश्चात् मैं अपने जान का प्रबन्ध कर लूँगा।' पिताजी को यह बात ठीक प्रतीत हुई। उन्होंने तुरन्त कमरे से बाहर निकल, ताला लगा, वहाँ से कहीं चले जाना ही उचित समझा। सत्य ही पुलिस होस्टल के अधिकारियों से होस्टल की तलाशी लेने की स्वीकृति माँग रही थी।

"जल्दी-जल्दी होस्टल की तलाशी ली गई, परन्तु किसी कमरे में भागे हुए को न पा, पुलिस यहाँ से विदा हो गई। पिताजी के कमरे को ताला लगा देख किसी को सन्देह नहीं हुआ। पिताजी रात भर नहीं लौट सके। वे अपने एक रिश्तेदार के घर जाकर सो रहे थे। प्रातःकाल वे लौटे तो उस फरारी को अपनी चारपाई पर लेटे पाया। उन्होंने उसे उठाया तो उसने एक नई समस्या उपस्थित कर दी। उसने कहा, 'मेरे पास तीन रिवॉल्वर हैं। मैं इन्हें आपको दे देना चाहता हूँ। आप उनको सुरक्षित रखियेगा। कभी अवसर मिला तो आकर ले जाऊँगा।' पिताजी ने उसकी बात मान ली। उसे अपना हजामत बनाने का सामान दिया। उसने दाढ़ी-मूँछ काट डाली। पिताजी के बंगाली ढंग के कपड़े पहन लिए और कमरे के बाहर निकल गया।

"इस समय एक दुर्घटना हो गई। मिस्टर दास ने उस आदमी को पिताजी के कमरे से निकलते देख लिया। यद्यपि वह बंगाली ढंग की पोशाक पहिने था, तो भी मिस्टर दास को सन्देह हो गया। उसने पिताजी से आकर पूछा, 'यह कौन था ?'

'कौन ? यहाँ कोई नहीं था।' पिताजी ने उत्तर दिया।

"इस पर मिस्टर दास, चुपचाप कमरे से निकल होस्टल सुपरिटेंडेंट

टाइपिस्ट का काम सीख लिया है। दुर्भाग्य ने अभी भी हमारा पीछा नहीं छोड़ा। दो वर्ष हुए माताजी का देहान्त हो गया और पिताजी हमें क रोगी हो गए। मिस्टर दास ने कृपा कर मुझे यह नौकरी दे दी और हमारा गुजर हो रहा है।"

चेतनानन्द एक क्रान्तिकारी की कहानी सुन चकित रह गया। चाय समाप्त हुए बहुत काल हो चुका था। दोनों चुप और गम्भीर विचार में डूबे हुए कमरे से बाहर निकल आए।

७

सप्ताह के अन्त में साप्ताहिक रिपोर्ट बनती थी। चेतनानन्द के आने के पूर्व यह रिपोर्ट मिस्टर दास स्वयं बनाया करता था। अब चेतनानन्द के समय यह भी मिस बैनर्जी ने बना डाली। चेतनानन्द ने कहा भी कि वह बना लेगा, परन्तु मिस बैनर्जी को काम करने का शौक था और उसने चार घण्टे भर फाइलों को देख रिपोर्ट टाइप कर डाली। चाय के समय चेतनानन्द ने रिपोर्ट पढ़ी तो उसे पता चल गया कि मिस बैनर्जी बहुत बढ़िया अँग्रेज़ी लिखती है।

"आपने संक्षेप में ही बहुत बढ़िया लिख दी है।"

"देखें, आपके अफसर लोग पसन्द करते हैं या नहीं।"

इस रिपोर्ट में एक विशेष बात को प्रधानता दी गई थी। वह थी प्रान्तीय सरकार की मुस्लिम-पोषक नीति। इस सप्ताह में प्रान्त भर के समाचार-पत्रों ने इस विषय पर बहुत कुछ लिखा था। साथ ही स्थान स्थान पर सभाएँ हुई थीं और सरकार की नीति के विरोध में जलूस निकाले गए थे। इन सबका उल्लेख इस रिपोर्ट में था। इससे चेतनानन्द ने कहा, "वैसे तो रिपोर्ट ठीक ही है, परन्तु आपने हिन्दुओं से चलाई हुई एजिटेशन को बहुत प्रधानता दे दी है।"

"इससे तो वर्तमान सरकार को मेरा धन्यवाद करना चाहिए। मैं उसके विरोध में होने वाली चर्चा का पता दे रही हूँ। इससे सरकार इस

…वचा को बन्द करने का उपाय कर सकती है।"

"मुझे सन्देह है कि सरकार इसको इस दृष्टिकोण से देखेगी।"

"ऐसी सरकार पर दया ही करनी चाहिए। यदि इसने अपनी ओर …सलमानों की प्रशंसा ही सुननी है तो आप समझ लीजिए और रिपोर्ट …ल दीजिए। वास्तव में यह आप ही का काम है।"

"तो आप नाराज़ हो गए हैं! मेरा यह अभिप्राय नहीं था। मैं तो … पसन्द करता हूँ।"

"श्रीमान! मेरी नाराज़गी और खुशी का प्रश्न नहीं है। आप जो कुछ लिखाना चाहते हैं, लिखा सकते हैं। आप लिखाइए और आधे घण्टे में रिपोर्ट तैयार हो जायगी।"

"मैं इसे ऐसे ही भेज रहा हूँ। आपका कहना ठीक ही है। सरकार को वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान होना ही चाहिए।"

"धन्यवाद।"

"मैं एक बात पूछ सकता हूँ क्या?"

"आपकी इच्छा है। उत्तर देना मेरी इच्छा पर निर्भर है।"

"यह तो है ही। आप मुस्लिम-लीग के कैबिनेट मिशन की योजना को अस्वीकार करने में मुसलमानों की भलाई समझती हैं क्या?"

"श्रीमान्! हम सरकारी नौकर हैं। हमें तो मशीन की भाँति काम करना चाहिए। हम घटनाओं का विवरण एकत्रित करने के लिए नियुक्त किये गए हैं। घटनाओं पर टीका टिप्पणी करने के लिए नहीं।"

"मैं यह बात मिस्टर आनन्द के पी० ए० से नहीं पूछ रहा। मैं एक क्रान्तिकारी की लड़की से प्रश्न कर रहा हूँ।"

"पिता जी तो महात्मा जी की नीति के मानने वाले नहीं। उनका विचार है कि मुसलमानों से पर्याप्त बातचीत हो चुकी है। उन्होंने कभी कोई बात नहीं मानी। सर सैयद के समय से लेकर आज तक जितने भी समझौते टूटे हैं, सब मुसलमानों की ओर से टूटे हैं। इससे उनके मानने अथवा न मानने का प्रश्न महात्मा जी के लिए ही महत्त्व रखता है।"

"परन्तु प्रश्न तो वैसे-का-वैसा ही रहा है। इसमें मुसलमानों की भलाई है क्या?"

"पिता जी का विचार है कि इसमें मुस्लिम लीग को लाभ है। मुस्लिम लीग को किसी को प्रसन्न नहीं करना। उन्हें तो हिन्दुओं को डराना है। हिन्दुओं को भयभीत करने के लिए इस योजना को मानने की आवश्यकता नहीं। भयभीत करने के लिए अन्य उपाय सोचे जा रहे हैं।"

"कौन उपाय हैं, जो ये सोच रहे हैं?"

"पहिले तो मुसलमानों का हिन्दुओं के स्वराज्य सम्बन्धी आन्दोलनों से पृथक् रहना मात्र हिन्दुओं को भयभीत कर देता था। हिन्दुओं के मस्तिष्क में यह बात अंग्रेज़ अफ़सरों और नीतिज्ञों ने बैठा दी थी कि बिना मुसलमानों से समझौता किए हिन्दुस्तान में स्वराज्य नहीं हो सकता। इस बात को महात्मा गांधी ने इतना हृदयगम कर लिया था कि वे मुसलमानों से मित्रता करने के लिए हिन्दुओं से अन्याय करने को भी तैयार हो जाते थे। अब मुस्लिम लीग वाले डायरेक्ट ऐक्शन की धमकी दे रहे हैं।"

"तो आप और आपके पिता भी तो डायरेक्ट ऐक्शन में विश्वास रखते हैं।"

"विश्वास का अर्थ मैं नहीं समझी। इसके किए जाने में मुझे विश्वास है। इसके सफल होने के विषय में मेरा और पिता जी का मत भेद है।"

"इसका मतलब यह है कि आप और आपके पिता जी परस्पर इस विषय पर बातचीत करते रहते हैं।"

"निस्सन्देह। उन्होंने अपने जीवन का सर्वोत्तम भाग राजनीति के मनन करने में ही गुज़ारा है। इससे, इस विषय में उनके अपने अनुभवों को जानना ठीक ही है।"

"डायरेक्ट ऐक्शन के सफल होने में आपके पिता जी के क्या

विचार हैं ?'

"उनका विचार है कि हिन्दू भयभीत हों चाहे न हों, अवश्य डर जायेंगे और वे मुसलमानों को पाकिस्तान दे देंगे। महात्मा गांधी ने उन्हें अपना नेता माना हुआ है। इससे उनका पाकिस्तान माना जाना हिन्दुओं से माना जाना समझ लिया जायेगा।"

"और आप क्या कहती हैं ?'

'मेरा विचार यह है कि ऐसा नहीं होगा। हिन्दू इस प्रकार डराने धमकाने से डरेंगे नहीं। इसके विपरीत यदि मुसलमानों ने खून-खराबा किया, तो हिन्दू एक होकर उस डेक्शन का विरोध करेंगे। इसमें यदि महात्मा जी ने हस्तक्षेप किया, तो कोई मनचला उनकी भी हत्या कर देगा।"

"देखो मिस बैनर्जी! मेरी एक बीवी है। वह मुसलमानिन है। उसका ख्याल है कि अंग्रेज अफ़सर हिन्दुस्तानी फ़ौजों को परस्पर भिड़ा देंगे। यहाँ सिविल-वार हो जायगी और खून की नदियाँ बह जायेंगी।'

"यह हो सकता है।" मिस बैनर्जी का कहना था। "इस पर भी मेरा अनुमान है कि ऐसा होने नहीं दिया जायेगा।"

"क्यों? ऐसा क्यों नहीं हो सकता? अंग्रेज अफ़सर हिन्दू-मुसलमानों को खूब लड़ायेंगे। जब दोनों लड़ते-लड़ते थक जायेंगे, तब हम दोनों को अयोग्य कहकर पुनः अपना राज्य सुदृढ़ कर लेंगे।'

"ऐसा हो नहीं सकता। यदि अंग्रेज अफ़सरों ने यहाँ सिविल-वार करवाई और उसका संचालन इस प्रकार करवाया तो इस देश में अंग्रेजों की सबसे ज्यादा हानि होगी। पूर्व इसके कि यह झगड़ा बहुत दूर तक चले, हिन्दू और मुसलमान फ़ौजी अपने अपने अंग्रेज अफ़सरों को मार कर स्वयं अफ़सर बन जायेंगे। तब मुसलमान परास्त हो जायेंगे क्योंकि हिन्दू फ़ौजियों की संख्या अधिक है। हिन्दुओं में लड़ाके और समझदार अफसर अधिक हैं हवाई जहाज का महकमा प्रायः हिन्दुओं के अधीन है हिन्दू रियासतें अधिक हैं हिन्दुओं की जनसंख्या अधिक है। यह ठीक है

कि पश्चिमी पंजाब, काश्मीर और पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश में प्राय हिन्दू मारे जायेंगे, परन्तु शेष पूर्ण देश में मुसलमानों और अंग्रेजों का नाम लेने वाला कोई नहीं रह जायेगा।"

यह भीषण चित्र खिंचता देख चेतनानन्द काँप उठा। जब वह इस प्रकार की बातें अपनी स्त्री नसीम से अथवा किसी और से सुनता था तो यह कह दिया करता था, "इसी से तो हम कहते हैं कि महात्मा जी की नीति ही सत्य है। उसी से सुख और शान्ति स्थापित हो सकती है।"

मिस बैनर्जी के मन पर इसका प्रभाव उलटा पड़ा था। उस सायं वह घर गई तो अपने पिता से बोली, "बाबा! चेतनानन्द की नियुक्ति का एक और रहस्य पता चला है। उसकी बीवी मुसलमान है। शायद प्रीमियर साहब की कोई रिश्तेदारिन हो।"

"बात कैसे हुई थी?"

"साप्ताहिक रिपोर्ट पर बात होते होते कैबिनेट योजना पर बात चल पड़ी। फिर उसके मुस्लिम लीग से न माने जाने पर बात आरम्भ हो गई। इस पर उसने बताया कि उसकी बीवी मुसलमानिन है और वह समझती है कि देश में 'सिविल-वार' हो जायेगी।"

"बहुत समझदार है उसकी बीवी।"

"और वह समझती है कि सिविल-वार का नतीजा अंग्रेजों के राज्य का सुदृढ़ होना होगा। पर बाबा! मैं समझती हूँ कि उसकी बीवी उसे डराती रहती है, जिससे वह हिन्दुओं की सहायता न कर सके।"

"एक बात तो इससे स्पष्ट हो गई है कि प्रीमियर साहब के घर में डायरेक्ट ऐक्शन के विषय में बातें होती रहती हैं।"

"क्या होगा इससे?"

"मैं समझता हूँ कि इसका प्रहार बंगाल से आरम्भ होनेवाला है। यदि हमारी योजना के अनुकूल हिन्दुओं का आचरण न बन सका, तो विनाश अवश्यम्भावी है। केवल यही नहीं कि हम नहीं रहेंगे, प्रत्युत बंगाल भी नहीं रहेगा।"

उस रात शिशिर कुमार बैनर्जी के साथी आए तो उसने अनिमा की बात बता दी। इस पर सब अपना अपना विचार बताने लगे। इस मण्डली में अनिमा भी आ बैठी। अब वे लोग उससे अनेकों अन्य बातें पूछने लगे। उनके पूछने पर अनिमा ने बताया कि चेतनानन्द लाहौर का रहनेवाला है। इस पर उसकी बीवी के विषय में पूछा गया। अनिमा ने बताया कि वह उसके विषय में कुछ नहीं जानती। इस पर एक युवक ने कहा, "अनिमा बहिन! तुम उसके घर तक पहुँचने का यत्न नहीं कर सकती क्या?"

"क्या लाभ होगा इससे?"

"यह कहना तो कठिन है। इस पर भी मैं कहता हूँ कि प्रत्येक प्रकार की जानकारी रखने में कोई हानि नहीं।

'अच्छा दादा! यत्न करूँगी।'

इसके पश्चात् वे लोग अपने अपने कार्य की रिपोर्ट देने लगे। अनिमा के पिता ने पूछना आरम्भ कर दिया, "रामानन्द! क्या हुआ तुम्हारे आफ़िस के बाबुओं का?"

यह उस युवक का नाम था, जो अनिमा से कह रहा था कि चेतनानन्द की स्त्री से भेंट करे। उसने, पूछे जाने पर कहा, 'बाबा! मुझे तो उन लोगों से कुछ भी आशा नहीं। दो सौ क्लर्कों में से केवल एक ने मेरे कहने पर गम्भीरता से विचार किया। शेष सब हँसने लगे। एक ने तो यहाँ तक कह दिया कि मेरा दिमाग़ ख़राब हो रहा है। उनमें कुछ कांग्रेस विचार के थे। वास्तव में उन्होंने यह कह सबको मेरे विरुद्ध कर दिया कि मैं हिन्दू सम्प्रदायवादी हूँ। इससे सब 'जय हिन्द' कहकर चले गए।"

एक और ने बताया, "मैंने अपने लॉज में यह बात सुनाई तो बोर्डर बोल उठे, 'भाई! हम तो कलकत्ता के बाहर के आदमी हैं। यदि ज़रा सा भी झगड़ा हुआ तो हम कलकत्ता छोड़कर चले जायेंगे।' मैंने जब कहा कि उनको बाहर जाने को मौका ही नहीं मिलेगा, तो इस पर वे

कहने लगे कि वे कर ही क्या सकते हैं। मैंने उन्हें बताया कि वे अपने लॉज की तो रक्षा कर सकते हैं, तो वे कहने लगे कि उनके पास हथियार कहाँ हैं। मैंने लाज की रक्षा के लिए एक पिस्तौल और एक-दो बम्ब देने का वचन दिया तो वे लोग मुझे 'क्रान्तिकारी पार्टी' का सदस्य मानने लगे।"

इसी प्रकार सब लोगों ने अपने अपने क्षेत्र की बात बताई। रिपोर्टें आशाजनक नहीं थीं।

शिशिर कुमार की योजना यह थी कि आफिसों के बाबुओं को, कारखानों के मज़दूरों को, मुहल्लों के लोगों को और विद्यार्थियों को समझा दिया जाये कि हिन्दू मुस्लिम झगड़ा होनेवाला है और उन्हें इसके लिए तैयार हो जाना चाहिये। यदि वे हथियार माँगें तो उनसे रुपया लेकर उनके लिए पिस्तौल, रिवॉल्वर, बम्ब इत्यादि का प्रबन्ध कर दिया जाये। पहिले तो लोग यह बात मानते ही नहीं थे कि झगड़े की सम्भावना है, फिर जब रिवॉल्वर अथवा बम्ब रखने की बात करते थे, तो लोग उनको खुफ़िया पुलिस का अथवा देश में हिन्दू-मुस्लिम फ़साद करनेवाला हिन्दू सभाइट कहकर दुत्कार देते थे। हिन्दू मुस्लिम झगड़े से आँखें मूँदने का स्वभाव कांग्रेस के प्रचार से बना था। श्री सुभाष चन्द्र बोस की आज़ाद हिन्द फ़ौज में हिन्दू-मुसलमान दोनों के होने से लोगों के मन में यह बात आती ही नहीं थी कि कलकत्ते में, जो सुभाष बाबू का निवास-स्थान है, कभी हिन्दू-मुसलमान फ़साद हो सकता है।

इन रिपोर्टों से सब निराश हुए थे। इस पर भी अनिमा का कहना था कि वह प्रति रविवार घर-घर और मोहल्ले-मोहल्ले में जायेगी और लोगों को तैयार होने के लिए कहेगी। अनिमा का उत्साह देखकर सब पुन उत्साह से भर गए।

८

चेतनानन्द को अनिमा बैनर्जी की बातें निरमयजनक, परन्तु युक्ति

युक्त प्रतीत हुई थीं। वह उसकी बातों से इतना प्रभावित हुआ था कि इच्छा न रहते हुए भी, उसके मुख से उसकी बात नहीम के सम्मुख निकल गई। नसीम ने पूछा, "एक क्रान्तिकारी की लड़की सरकारी आफ़िस में नौकर कैसे हो गई?"

"उसके पिता मिस्टर दास के सहपाठी थे।"

"मुझे तो यह सब जालसाज़ी मालूम होती है। बंगाल में बहुत ऐसे लोग हैं, जो झूठ मूठ में माथे पर लाल रंग लगाकर शहीद बनना चाहते हैं।"

"मैं समझता हूँ कि उससे परिचय बढ़ाकर और बात मालूम करनी चाहिए।"

"उसको एक दिन यहाँ ले आइए।"

एक-दो दिन पीछे की बात है। प्रीमियर साहब की एक 'कॉन्फ़िडेंशल' चिट्ठी आई। चेतनानन्द ने चिट्ठी पढ़ी तो मिस बैनर्जी को बुलाकर वह दिखा दी। मिस बैनर्जी, लिफ़ाफ़े पर 'कॉन्फ़िडेंशल' मोटे अक्षरों और लाल स्याही में छपा देख, काँप उठी थी। वह समझ रही थी कि पिछले रविवार लाशों को तैयार करने के लिए जाने के कारण ही उसके लिए कोई आर्डर आया है। जब चेतनानन्द ने वह चिट्ठी उसके ही हाथ में दे दी तो उसे लेते हुए उसका हाथ काँप उठा। उसने चिट्ठी पढ़ी। उसमें लिखा था—'प्रिय चेतनानन्द, तुम्हारी रिपोर्ट पढ़कर मुझे यह विश्वास हो गया है कि एक पंजाबी एक बंगाली से अधिक सही दिमाग़ रखता है। यह रिपोर्ट बहुत ही उत्तम ढंग से लिखी हुई है। जो बातें मैं जानना चाहता था, ठीक वे ही उसमें भली-भाँति लिखी गई थीं। मैं तुम्हारे काम से बहुत खुश हूँ ...।'

अनिमा जहाँ यह चिट्ठी पढ़कर निश्चिन्त हुई, वहाँ प्रसन्न भी। उसने मिस्टर चेतनानन्द की ओर मुस्कराकर देखते हुए कहा, 'मैं आपको बधाई देती हूँ।"

"बधाई की पात्र तो आप हैं न?"

"यह तो सदैव होता ही है। काम चाहे कोई करे, नाम अफसरों का होता है और मैं समझती हूँ कि होना भी चाहिए।"

"कुछ भी कहिए, समझनेवाले समझ जाते हैं। मैं इस बात को मानता हूँ कि आप अपने काम में सब प्रकार से योग्य हैं। जहाँ तक मेरा बस चलेगा, मैं आपकी उन्नति में यत्नशील रहूँगा।"

"आपके आश्वासन के लिए मैं आपका धन्यवाद करती हूँ।"

"छोड़ो इस बात को। मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ। यह आपके निजी जीवन के सम्बन्ध में है। यदि नाराज न हों तो पूछूँ?"

"एक अधीन व्यक्ति अपने अधिकारी से रुष्ट होगा भी तो क्या कर लेगा? इस पर भी मैं आपसे पहले ही कह चुकी हूँ कि पूछना आपकी इच्छा के अधीन है परन्तु उत्तर देना मेरे वश की बात है।"

"तो ठीक है, आपकी सगाई अभी हुई है या नहीं?"

अनिमा गम्भीर विचार में पड़ गई। वह सोचने लगी थी कि उसका इस बात को पूछने का क्या प्रयोजन है। उसने चेतनानन्द के मुख पर देखा, परन्तु कुछ समझ न सकी। इस पर भी उत्तर देने में किसी प्रकार की हानि न देख बोली, "यद्यपि मुझको आपके इस प्रश्न के पूछने में आपका प्रयोजन समझ नहीं आया, तो भी इसका उत्तर देने में कोई हानि न मान, बताती हूँ। मेरी सगाई हो चुकी है।"

"विवाह कब होगा?"

"शायद इस जन्म में नहीं हो सकेगा।

"क्यों? कोई आर्थिक बाधा है क्या?"

"जी। मेरी सास मेरे पिता से दस सहस्र रुपये की आशा रखती हैं।"

"और वह लड़का, जिससे आपकी सगाई हुई है, क्या चाहता है?"

"कुछ नहीं। वह तो कहता है कि मुझसे ही विवाह करेगा और वह भी बिना दहेज लिए।"

"तो करता क्यों नहीं? कितना काल हुआ है सगाई हुए?"

"सगाई हुए ग्यारह वर्ष हो चुके हैं। उनकी माँ से जवाब मिले तीन

... हो चुके हैं और हमें परस्पर वचनबद्ध हुए भी लगभग तीन वर्ष हो चुके हैं।"

"यह वचनबद्ध के क्या अर्थ हैं मिस बैनर्जी?"

"जब हम दोनों ने आजन्म अविवाहित रहने का वचन लिया था।"

"क्यों? क्या उनकी माँ ने आप लोगों से अधिक ज्ञान का पाठ सिखाया हुआ है?"

"यह बात नहीं श्रीमान्। मैं अभी बीस वर्ष की आयु की हूँ। मेरे भावी पति भी इकतीस वर्ष के होंगे और उनकी माताजी पचास से ऊपर हैं। परन्तु अपने बड़ों की मृत्यु का चित्त में विचार तक लाना हम पाप समझते हैं। कौन जाने किस समय किसकी मृत्यु हो जायगी! इस पर आशा बाँध बैठना महामूर्खता होगी। इस कारण हम सच्चे मन में यही सोचते, समझते और आशा करते हैं कि अगले जन्म में तो हमारा मिलन होगा ही।"

"बहुत विचित्र होती हैं आप की बातें, मिस बैनर्जी। यह सब-कुछ किसने आपको सिखाया है? और फिर कौन है वह, जो केवल एक विचार के लिए पूर्ण जीवन की आहुति करने पर तैयार हो गया है?"

"मेरे विचार मेरे माता-पिता की देन हैं। वे हिन्दू हैं और पुनर्जन्म पर अगाध विश्वास रखते हैं। एक बात शायद आपको पता नहीं कि मेरी माँ पंजाब की रहने वाली थीं और हिन्दू विचारधारा पर उनका दृढ़ विश्वास था।"

"हाँ, एक बात याद आई है। मेरी बीवी का विचार है कि न तो ये विचार क्रान्तिकारियों के से हैं और न ही आपके पिताजी के। अब जो इस प्रकार की हिन्दू फिलौसोफी की, जिनके पक्ष में न तो कोई तर्क है और न कोई प्रमाण बातें करते देख, उसका कहना ठीक ही होने लगा है।"

...निमा हँस पड़ी। चेतनानन्द विस्मय में उसका मुख देखता रहा। ... अपने विचारों को स्पष्ट कर कहना आरम्भ किया, "आपका ऐसा

कहना आपके ज्ञान के अनुसार ठीक ही है। परन्तु यदि आप इसको धृष्टता न मानें तो मैं कहती हूँ कि आपका ज्ञान बहुत सीमित है। भारतवर्ष में प्राय क्रान्तिकारी हिन्दू विचारधारा के मानने वाले हुए हैं। श्री सावरकर, ला० हरदयाल, ला० लाजपतराय, भाई परमानन्द, मदन लाल ढींगरा, खुदी राम बोस, प्रफुल्ल चन्द्र चक्रवर्ती, कन्हैया लाल दत्त, सत्येन्द्र बोस और बीसियों अन्य क्रान्तिकारी हिन्दू धर्म पर अगाध विश्वास रखने वाले हुए हैं। ये लोग गीता की शिक्षा पर विश्वास रखते हुए हँसते हँसते फाँसी के तख्ते पर चढ़ जाने वाले थे।"

चेतनानन्द इस लम्बी सूची को सुन चकित रह गया और विस्मय में अनिमा का मुख देखता रह गया।

अनिमा और अधिक कहना नहीं चाहती थी। इस कारण अपना टाइप राइटर निकाल दफ्तर के काम में लग गई। चेतनानन्द भी अपनी मेज़ पर रखी फाइलों का निरीक्षण करने लगा। उस दिन सायं चाय के समय चेतनानन्द ने अनिमा को अगले दिन अपने घर चाय का निमन्त्रण देते हुए कहा, "मैं चाहता हूँ कि आपको मैं अपनी बीबी बेगम नसीम से मिला दूँ। इससे शायद हमारा सीमित ज्ञान बढ़ सकेगा।'

६

चेतनानन्द अभी तक प्रीमियर साहब की कोठी में ही रहता था। उसके लिए भवानीपुर में एक कोठी का प्रबन्ध तो कर दिया गया था, परन्तु उस कोठी की कुछ मरम्मत होनी शेष थी। इसस चेतनानन्द ने अभी वहाँ जाना ठीक नहीं समझा था। अनिमा के मन में गुदगुदी सी हो रही थी। वह सोचती थी कि एक क्रान्तिकारी की लड़की और हिन्दुओं की ओर से मुसलमानों स झगड़े की तैयारी म लगी हुई, प्रान्त के प्रीमियर के घर चाय पर जा रही है। वह इसके परिणाम का मन में अनुमान लगाती थी। अनिमा के लिए यह एक नया अनुभव था।

दरवाज़े पर, उसके वहाँ पहुँचने की सूचना थी। ज्योंही उसने अपना

नाम बताया, दरबान उसे साथ लेकर चेतनानन्द के निवासस्थान पर आ पहुँचा। कमरे के बाहर पहुँच उसने 'मिस अनिमा बैनर्जी' के नाम की घोषणा कर दी। घोषणा होते ही चेतनानन्द कमरे से बाहर आया और अनिमा को हाथ जोड़ नमस्कार कर सत्कार से भीतर ले गया। वहाँ ले जाकर उसने अपनी बीबी का परिचय कराया "यह हैं मेरी धर्मपत्नी, भामनी नसीम।"

दोनों बहुत प्रेम से मिलीं और फिर एक ही सोफे पर बैठ गईं। बैरा ने उनके सामने चाय लगाना आरम्भ कर दी। नसीम, अनिमा की बहुत उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी। चेतनानन्द ने उसकी अपनी बीबी के सामने बहुत प्रशंसा कर रखी थी। अनिमा का पहिला प्रभाव तो नसीम पर पड़ा कुछ अच्छा नहीं था। वह आशा कर रही थी कि वह लड़की बहुत सुन्दर होगी और चेतनानन्द उसके सौन्दर्य से प्रभावित होकर, उसके अन्य गुणों का अकारण बखान कर रहा है। वह इस अद्भुत लड़की को स्वयं देखना चाहता था।

अनिमा को देख जहाँ नसीम को निराशा हुई, वहाँ उसके गुणों को जानने की उत्कण्ठा जाग उठी। उसने बात आरम्भ कर दी, "ये साहब आपकी बहुत तारीफ करते रहते थे। इससे मेरे मन में आप से मिलने की जबरदस्त ख्वाहिश पैदा हो गई। आपने आकर मुझे निहायत मशकूर किया है।"

"मैं समझती हूँ कि मुझे देखकर आप ज़रूर निराश हुई होंगी।"

"क्यों? आप ऐसा क्यों समझती हैं? मैंने तो ऐसा महसूस नहीं किया।"

"तब तो आप अवश्य एक विशेष औरत हैं। मेरी सूरत और रूप रेखा ऐसी है कि प्रायः फैशनेबल स्त्रियाँ इसे पसन्द नहीं करतीं। मुझे बनाव-शृङ्गार का ढङ्ग नहीं आता।"

"ऐसा नहीं। मैंने आपकी सूरत शक्ल देखने के लिए इस मुलाकात की ख्वाहिश नहीं की थी। मैंने सुना है कि आपकी माँ एक पञ्जाबिन

लड़की थीं। उन्होंने आपके पिताजी को पसन्द किया, यह सचमुच ही हैरानी की बात है। एक 'मारो-काटो' पंथ के आदमी को वरना एक औरत को शोभा नहीं देता। औरत तो शांति और रहम की मूर्ति होनी चाहिए।"

अनिमा हँस पड़ी। उसने कहा, "यह 'मारो-काटो' पन्थ तो महात्माजी के शब्द हैं। उन्होंने इनका प्रयोग, जब श्री सावरकर विलायत में भारत की आज़ादी का आंदोलन चला रहे थे, वहाँ किया था। इससे वह सावरकर और अन्य क्रान्तिकारियों के काम की निन्दा करना चाहते थे।"

"महात्मा जी हमारे गुरु हैं।"

"ऐसा प्रतीत होता है कि माता जी महात्मा जी के विचारों की अनुयायी नहीं थीं। इसीसे उन्होंने पिता जी को, जो 'मारो काटो' पन्थ के थे, अपना स्वामी मान लिया था।"

"शायद वे किसी भी पन्थ को मानने वाली नहीं थीं। उनका प्रेम ही पन्थ रहा प्रतीत होता है।"

"जब से मैंने होश सम्भाली थी, मैंने उन्हें दुर्गा की पूजा करते देखा था। वे कहा करती थीं कि छत्रपति शिवाजी और कलगीधारी गुरु गोविन्दसिंह जी की इष्ट देवी श्री दुर्गा भवानी ही थीं।"

"आप किस देवता की पुजारिन हैं?"

"मैं काली की उपासिका हूँ। देखिए नसीम बहिन! मैं आपको हिन्दू धर्म के एक भेद की बात बताती हूँ। जब हम किसी काम को नेक और मनुष्य के हित में समझते हैं, तो उसे भगवान् का नाम लेकर कर देते हैं। हमारे देवी देवता जहाँ दया के आगार हैं, वहाँ दुष्टों के दमन के लिए अति कठोर और क्रूर हृदयवाले भी बन जाते हैं। काली माई को खप्पर में दैत्यों का खून भरकर पीने में किंचित् भी शोक नहीं होता।"

"दैत्य किसको कहते हैं?"

"जो मनुष्य का-सा व्यवहार न करे।"

"इसको कौन जाँचेगा कि यह व्यवहार मनुष्य का-सा है और यह

व्यवहार मनुष्यता के खिलाफ है।"

"मनुष्य की अन्तरात्मा ही इसका निर्णय कर देती है। इस पर भी मनुष्य को कभी अपनी बुद्धि पर सन्देह हो जाता है तो वह भगवान् का नाम लेकर अपने कार्य को सम्पन्न कर देता है। इस प्रकार अन्तरात्मा की प्रेरणा पर और परमात्मा का नाम लेकर की गई महाहत्या से भी पाप नहीं लगता।"

बातों-ही-बातों में चाय समाप्त हो गई और इतनी देरी हो गई कि बतियां जलानी पड़ गईं। अनिमा ने लैम्प जलते देख कहा, "मैंने आपका बहुत समय ले लिया है।"

"नहीं, हमें कुछ काम नहीं है। आप अभी और बैठिए। ये तो प्रीमियर साहब के पास जा रहे हैं। हम अभी और बातें करेंगे। मैं आपको अपनी मोटर में छोड़ आऊँगी।"

जब चेतनानन्द चला गया तो नसीम और अनिमा उठकर साथ के कमरे में चली गई। वहाँ नसीम उसे अपने बचपन के काल की फोटो दिखाने लगी। नसीम का एक चित्र उसकी पाँच वर्ष आयु के काल का था। अनिमा उसे देख, नसीम के साथ मिलाने लगी। दोनों का मिलान कर कहने लगी "कितना अन्तर पड़ गया है तब की नसीम में और आज की नसीम में। इस तस्वीर में नसीम शरारत से भरी हुई दिखाई देती है और इस समय आपके मुख पर सन्तोष और शान्ति की छाप दिखाई देती है।"

नसीम यह व्याख्या सुनकर हँस पड़ी। उसने पूछा, "क्या देखा है आपने इस तस्वीर में?"

"तनिक तस्वीर में अपनी आँखें देखिए। ऐसा मालूम होता है कि किसी को चुटकी काटकर खड़ी हैं और उसको वेदना में रोते देख मज़ा ले रही हैं।"

यह सुन नसीम गम्भीर विचार में डूब गई। कुछ देर तक अपने मन में सोचकर बोली "बहुत ही गज़ब की कही है आपने। इस तस्वीर की

तमारीख़ मैं बताती हूँ। नज़ीर भैया विलायत जा रहे थे। मुमताज़ बहिन अब्बाजान के साथ उनको बम्बई जहाज़ पर चढ़ाने जा रही थीं। मेरे लिए घर पर अम्मी के पास रहने का फैसला हुआ था। मैंने सत्याग्रह कर दिया। तीन दिन तक खाना-पीना छोड़ दिया। आख़िर पिता जी मान गये और मुमताज़ की जगह मुझको ले जाने के लिए राज़ी हो गये। इससे मुमताज़ रूठ गई और मैं ख़ुश हो गई। भैया जाने से पहिले तस्वीर लेने लगे तो मुमताज़ ने तस्वीर उतरवाने से इन्कार कर दिया। मुझे उसके रोने को देखकर मज़ा आ रहा था। उस वक्त भैया ने तस्वीर ली और वह तस्वीर यह है।

"पर अनिमा देवी जी! आपने कमाल कर दिया है। कितना ठीक अन्दाज़ लगाया है आपने।"

"मैंने सामुद्रिक विद्या का अध्ययन किया हुआ है। इससे मैं दूसरों के मुख को देखकर उनके अन्तरात्मा की बातें जान सकती हूँ।"

"वे बता रहे थे कि आपकी सगाई तो हो चुकी है, मगर शादी होने की उम्मीद नहीं।"

अनिमा ने केवल सिर हिलाकर उसके कहने का समर्थन कर दिया। इस पर नसीम ने फिर पूछा, "मुझको यह जानकर बहुत हैरानी हुई थी कि आप दोनों ने शादी न करने का वचन ले लिया है।"

अनिमा ने अब भी केवल सिर हिलाकर बात को स्वीकार कर लिया। नसीम ने आगे पूछा, "मगर इतनी सख्त क़सम खाने की क्या ज़रूरत थी? अगर आपके माता पिता नहीं मानते तो क्या आप उनसे बिना पूछे विवाह नहीं कर सकते?"

"मेरे पिता जी ने न नहीं की। उनकी माता हैं, जिन्होंने मुझको पसन्द नहीं किया। मैंने तो उनको किसी दूसरी से विवाह कर लेने के लिए कहा है, परन्तु वह कहते हैं कि उनका मुझसे प्रेम ऐसा है कि वह किसी दूसरे से विवाह कर ही नहीं सकते।"

"तो दोनों के जीवन बरबाद हो जायेंगे।" नसीम ने सहानुभूति

प्रकट करते हुए कहा।

"मुझको तो इसमें किसी प्रकार की भी बरबादी प्रतीत नहीं होती। हमारा जीवन अति मधुर बना हुआ है। बात यह है कि हम पुनर्जन्म और पुनर्मिलन में विश्वास रखते हैं। हम समझते हैं कि हमारा प्रेम इतना दृढ़ है कि वह जीवन भर की प्रतीक्षा के बोझ को सहन कर सकता है।"

"बहुत विश्वास है आपको उन पर!"

"हाँ। हम मिलते रहते हैं और मैं समझती हूँ कि दिन प्रतिदिन हमारा प्रेम दृढ़ होता जाता है।"

"कहाँ मिल गये हैं आपको ऐसे आदमी?"

"यह एक लम्बा किस्सा है। आपका समय नष्ट हो जावेगा।"

"नहीं नहीं, सुनाइये।" नर्मदा ने अनिमा के गले में बाँह डालकर कहा, "मुझको ऐसे आदमी की कहानी सुनने का बहुत शौक है।"

अनिमा ने कुछ काल तक आँखें मूँदकर सोचा और फिर कहना आरम्भ कर दिया, 'मैं छठी श्रेणी में पढ़ती थी। हमारी श्रेणी का मॉनिटर एक शरारती लड़का था। सब पर उसका दबदबा था। केवल मैं ही थी जो उसका बिल्कुल नहीं मानती थी। वह श्रेणी के लड़के-लड़कियों से अपना काम कराया करता था, परन्तु मैंने उसका कभी कोई काम नहीं किया था। एक दिन मैं अपना डेस्क पर बैठी थी और वह बोर्ड के पास खड़ा एक लड़के से बात कर रहा था। एकाएक उसने मेरी ओर देख कहा, 'अनिमा! मेरी डेस्क में से अंग्रेज़ी की किताब दे जाओ।'

"मैंने उत्तर दिया, 'अपने यार पकड़ लो। मैं पढ़ रही हूँ।'

"इतना कह मैं कापी पर कुछ लिखती रही। वास्तव में मैं तिरछी आँख से उसको देख रही थी। मेरा उसको उत्तर कमरे में दूसरे लड़कों ने सुना और वह क्रोध में लाल-पीला हो मुझ पर रोब जमाने के लिए, धीरे-धीरे, नपे-नपाकर कदम रखते हुए मेरे पास आ खड़ा हुआ। मैंने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। उसने डाँटकर कहा, 'अनिमा!' मैं

थे। मेरे मॉनिटर बनने से न करने की बात मुख्याध्यापिका तक
ी। उन्होंने मुझे बुलाया और मैंने वही युक्ति उनके सम्मुख रख दी।
याध्यापिका स्त्री थीं, इससे वे मेरी युक्ति को जल्दी समझ सकीं। उन्होंने
ी पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा, 'बेटी! यह सब तुम्हें किसने बताया है?'
'इसमें सिखाने-पढ़ाने की कोई बात ही नहीं।' मैंने उत्तर दिया।
आप बताइये एक अपराध का दो बार दण्ड कैसे दिया जा सकता है?'

"मेरी बात मान ली गई। गिरीश कई दिन तक स्कूल नहीं आया और मेरे मन में उसके लिए चिन्ता और सहानुभूति उत्पन्न होने लगी। एक दिन मैं उसके घर का पता कर, उसकी खबर लेने जा पहुँची। तब तक श्रेणी में एक लड़की मेरी सहेली बन चुकी थी। वह भी मेरे साथ थी। जब हमने उसके घर का दरवाज़ा खटखटाया तो एक स्त्री बाहर आई। हमने अपने आने का उद्देश्य वर्णन किया तो वह औरत विस्मय से हमारा मुख देखने लगी। मैंने कहा, 'मैंने उसे पीटा था और मैं उससे क्षमा माँगने आई हूँ।'

"वह औरत इस पर भी हमारा मुख देखती रही और कुछ बोली नहीं। मैंने विनीत भाव से कहा, 'आप गिरीश जी की माँ हैं क्या? आप बोलती क्यों नहीं?

"इस पर उस स्त्री ने मुख खोला। वह बोली, 'मैं उसकी माँ नहीं हूँ। उसकी रिश्ते में मौसी हूँ। मैं यह सोच रही हूँ कि तुम लोगों को उससे मिलने दूँ या नहीं।'

'क्यों नहीं मिलने देना चाहतीं?' मेरा प्रश्न था।

'उसे उसी दिन से ज्वर आ रहा है और डॉक्टर कहते हैं कि उससे बहुत बातें करने से उसको सरसाम हो जायगा।'

'हम बहुत बातें नहीं करेंगे। मैं उससे केवल क्षमा माँगूँगी।'

'अच्छी बात है, आओ।' यह कह उसने हमारे भीतर जाने को रास्ता छोड़ दिया।

"जब हम गिरीश की चारपाई के पास पहुँचे, तब वह अर्धचेत

अवस्था में पड़ा था। उसकी मौसी ने हमारे लिए दो कुर्सियाँ लाकर रख दीं। हम दोनों बैठ गईं। कुछ काल तक हम उसकी ओर चुपचाप देखती रहीं। पश्चात् मैंने कहा, 'गिरीश!' इस पर उसने आँखें खोलीं। पहले तो उसकी आँखों में हमें पहिचानने के लक्षण प्रतीत नहीं हुए। वह हमारी ओर टिकर टिकर देखता रहा। पश्चात् उसके माथे पर त्योरी चढ़ने से मैं समझ गई कि वह मुझको पहिचान गया है। मैंने बहुत ही विनीत भाव में कहा, 'गिरीश! मुझको क्षमा कर दो। मेरा आशय यह नहीं था।'

"न जाने उसके मन में क्या आया। उसके माथे से त्योरी उतर गई। उसके मुख पर मुस्कराहट दौड़ गई। यह मुस्कराहट एक क्षण के लिए ही रही और पुनः वह अर्धचेतनावस्था में हो गया। अब उसकी मौसी ने हमें सत्वर उठ चले जाने को कह दिया।

"मैंने घर जा अपनी माँ से सब बात बताई तो उसने मुझसे प्यार कर कहा कि मैंने ठीक ही किया है, मुझको फिर भी जाना चाहिए। दो दिन पीछे मैं फिर गई। इस बार मैं अकेली थी। गिरीश की मौसी ने इस बार मुस्कराकर मेरा स्वागत किया और मेरे कुछ कहने से पूर्व ही मुझे उसके पास ले गई। इस समय उसका ज्वर उतर चुका था और वह मुझको देखते ही पहिचान गया। एक सप्ताह से ऊपर के ज्वर से वह बहुत दुर्बल हो चुका था। उसकी गालें पिचक गई थीं। मैंने पहले दिन की तरह फिर उसे कहा, 'गिरीश! मुझको क्षमा कर दो। मेरा यह आशय नहीं था।'

"इस बार भी वह बोल नहीं सका। इस पर भी उसके मुख पर सन्तोष की झलक स्पष्ट दिखाई देती थी। मैं कुछ काल तक बैठी रही और फिर उसकी मौसी की ओर देखकर बोली, 'मेरी माताजी ने जब यह घटना की बात सुनी तो उनको बहुत शोक हुआ था।'

"इस पर उसकी मौसी ने मेरे सिर पर हाथ फेरकर प्यार किया और कहा कि मैं बहुत अच्छी लड़की हूँ। इसके पश्चात् गिरीश के ठीक होने तक मैं कई बार वहाँ गई। गिरीश को स्कूल जाने योग्य होने के लिए

एक मास लग गया और तब तक उसके मन से मेरे प्रति द्वेष पूर्णतया मिट चुका था।

"जब वह स्कूल में उपस्थित हुआ तो विद्यार्थियों ने उसे मेरे मॉनिटर बनने से न कर देने की बात बताई और मेरी युक्ति भी बताई। इसका उसके मन पर भारी प्रभाव पड़ा। एक दिन स्कूल से लौटते हुए उसने मुझसे कहा, 'अनिमा! मेरी बीमारी में तुम मुझसे क्षमा माँगने आई थीं न? वास्तव में क्षमा मुझको माँगनी चाहिये थी। मेरी मौसी कहती थीं कि तुम बहुत अच्छी लड़की हो और वे तुमको कल मेरे जन्म दिन के उत्सव पर बुलाती हैं। बताओ, आओगी न!'

"इस प्रकार मैं उसके घर में आने-जाने लगी। प्रति दुर्गा-पूजा और सरस्वती पूजा के अवसरों पर मैं उसके घर और वह मेरे घर आने-जाने लगा। यह बात हमारे दसवीं श्रेणी तक पढ़ने तक चलती रही। इन दिनों उसकी माँ, जो उसके पिता के साथ इंग्लैण्ड गई थी, आ गई। उसे, जब मेरा और मेरे माता पिता का परिचय मिला तो उसको मुझसे मिलने से मना कर दिया गया।

"इन दिनों सरस्वती पूजा होने वाली थी। सदा की भाँति मैंने उसे निमन्त्रण दिया तो उसने अपनी माँ का कहना सुना दिया। मैंने पूछा, 'तुम्हारी माता जी मुझसे क्यों नाराज़ हैं?'

'अनिमा! यदि मैं सत्य कहूँ तो नाराज़ तो न हो जाओगी?'

"मेरे मन में एक बात सूझी। मैंने उसे कहा, 'मैं समझती हूँ कि मुझको मालूम हो गया है।'

'तुम सब बातें पहले जान जाती हो। परन्तु मैं कहता हूँ कि यह बात तुम कभी नहीं जान सकतीं।'

'अच्छा सुनो।' मैंने कहा। उसे विश्वास था कि उसकी बात मैं नहीं जानती। मेरे मन में एक बात बार-बार आ रही थी। मैंने वही कह दी, 'मेरे पिता क्रान्तिकारी हैं, इसलिए। तुम्हारी माँ एक सरकारी अफ़सर की स्त्री हैं न?'

'ऐसी बात सुनकर वह चकित रह गए। ठीक यही बात था। आ
मैंने एक बात और कही, 'मैं एक बात और बताना चाहती हूँ। तु
हमारे घर में आना चाहते हो।'

'मैं हार मानता हूँ।' उसने कहा, 'तुमने ठीक बात जान ली है।
मैं सरस्वती-पूजन के दिन अवश्य आऊँगा। पर यह बात तुम अपने माता
पिता से नहीं कहना। मुझे डर है कि वे मेरे माता-पिता और उनसे घृणा
करने लगेंगे।

"उस बात से लेकर मैंने उनके घर जाना छोड़ दिया, परन्तु गिरीशजी
हमारे घर आते हैं। दो वर्ष हुए मेरी माँ बहुत बीमार हो गईं। गिरीशजी
ने उनसे मेरे साथ विवाह करने की स्वीकृति माँगी। इस पर मेरी माँ ने
कहा कि वे पहले अपनी माँ से पूछ लें। गिरीशजी अपनी माँ से पूछने
गए, परन्तु निराश लौटे। मैंने उनका मुख देखते ही कह दिया, 'बस
रहने दीजिए, मैं सब समझ गई हूँ। बताऊँ!'

'भला बताओ! तुम सदैव ज्योतिषी बन जाती हो।'

'तो सुनो।' मैंने उनकी आँखों में देखते हुए कह दिया, 'आपकी
माँ ने कहा है कि आपको दहेज में दस सहस्र रुपया मिलना चाहिए।
बताइए ठीक है न? एक बात और। आपने अपनी माँ से कह दिया है
कि आप यदि विवाह करेंगे तो मुझसे ही करेंगे। इस पर आपकी माँ ने
कहा है कि यदि आपने ऐसा किया तो वे विष खाकर मर जाएँगी।'

"बात सम्पूर्ण ठीक थी और गिरीश जी मेरे इस मन की बात को
बताने पर बहुत चकित हुए। उन्होंने मुझसे पूछा कि मुझे यह सब कैसे
पता चल जाता है। मैंने कह दिया कि मेरे मन में प्रकाश है। इस
पर मेरी माँ ने बताया कि ऐसा कई बार उनके और मेरे पिता के मध्य
भी हो चुका है। उनका कहना था कि जब दो प्राणी बहुत प्रेम करते हैं,
तो दोनों के मन में एक प्रकार का सम्बन्ध बन जाता है और इससे एक
दूसरे के मन की बात का पता चल जाता है।

"इस पर गिरीश जी ने कहा, 'तो यह सिद्ध हो गया कि कमला का

बहुत प्रेम है।'

इस बात का कोई अनुमान नहीं लगा सकता।' मेरी माता जी ने 'अन्तरात्मा की बातें तो भगवान् ही जानता है। हाँ, कभी प्रेमी भी इसका मान कर सकते हैं। वे इसे न समझते हुए भी जानते देखो बेटा गिरीश! तुमने कभी देवता की सिद्धि की बात सुनी है। द्ध के केवल यह अर्थ हैं कि सिद्ध व्यक्ति अपने इष्टदेव से इतना करण कर लेता है कि दोनों में ज्ञान और शक्ति का अन्तर कम हो ता है। जितनी जितनी सिद्धि अधिक होती जाती है, उतना-उतना ही वता और भक्त में भेद भाव मिटता जाता है। देवता का ज्ञान और सकी शक्ति तो कम हो नहीं सकती। हाँ! भक्त के ज्ञान में वृद्धि हो जाती है। यही बात परस्पर प्रेमियों की है।'

'बहुत विचित्र बात है।' गिरीश जी का कहना था।

"इस बात के पश्चात् तो हम दोनों में प्रेम अधिक और अधिक ही होता जा रहा है। इस घटना के दो मास पश्चात् माता जी का देहान्त हो गया। हम दोनों प्रेमी हैं। वे कॉलेज में पढ़ाते हैं और मैं नौकरी करने लगी हूँ। हमने यह निश्चय कर लिया हुआ है कि हम अविवाहित रहेंगे और यदि विवाह करेंगे तो एक-दूसरे से ही करेंगे।

"एक बार मैंने उनसे कहा था कि वे विवाह करने में स्वतन्त्र हैं। प्रेम और विवाह दो भिन्न भिन्न बातें हैं। वे इस बात को मानते हुए भी अभी तक विवाह के लिए राजी नहीं हुए। जब भी मुझे उनसे अथवा उनको मुझसे मिलने की आवश्यकता होती है तो हम एक दूसरे का चिन्तन करते हैं और हमारी भेंट हो जाती है।"

नसीम अनिमा की आत्म कथा चुपचाप सुन रही थी। उसे यह एक साधारण प्रेम कथा ही प्रतीत हुई थी। उसे दोनों का अविवाहित जीवन व्यतीत करना कोई विचित्र बात नहीं लगी। अभी उनकी आयु बहुत छोटी थी और कोई नहीं कह सकता था कि दोनों अपने वचन निभा सकेंगे अथवा नहीं। परन्तु जब उसने यह टैलिपैथी की बात दुहराई तो

उसे ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे वह उसे मूर्ख बना रही है अथवा वह स्वयं एक महान् भ्रम में विचर रही है। इसलिए उसने कहा, "अनिमा देवी! या तो आप खुद भूल रही हैं या आप मुझको बेवकूफ बना रही हैं। हम इन बातों में यकीन नहीं रखते। कुछ बातें होती हैं, जो अन्दाज से बताई जा सकती हैं। आप बहुत समझदार मालूम होती हैं, इससे शायद आपके अन्दाज ज्यादा ठीक होते हैं। मगर आपके सन्देश इस प्रकार एक-दूसरे तक पहुँच जाते हैं, मैं मान नहीं सकती।"

अनिमा हँस पड़ी। उसने कहा, "मैंने आपको यह बात किसी उद्देश्य से नहीं बताई। आप इस सबको उपन्यास का एक पृष्ठ भी समझ सकती हैं।"

"मगर मेरी इस बातचीत का मतलब तो आपके बारे में सच्चाई जानने का है। असलीयत जानने के लिए ही तो यह कह रही हूँ।"

"मैं इसका प्रमाण दे सकती हूँ, परन्तु मैं सोचती हूँ कि इससे लाभ क्या होगा। आप तो इस प्रकार की शक्ति न हासिल करना चाहेंगी और शायद न हासिल कर सकेंगी।"

"अगर टेलिपैथी जैसी कोई चीज सचमुच है तो उसको पाना कौन नापसन्द करेगा! पहिले इसके होने का यकीन तो हो!"

"यही तो कठिन प्रतीत होता है। आप बात को प्रत्यक्ष देखकर भी नहीं मानिएगा। ये दिल के मसले ऐसे ही हैं। देखिए! मैं आपको एक प्रमाण अभी दे सकती हूँ। जब मैं आपको अपनी कथा बता रही थी तो मेरी इच्छा गिरीशजी से मिलने की कर रही थी। बातों से व्यक्तियों का स्मरण हो आना स्वाभाविक ही है। मेरा विचार है कि वे मुझसे मिलने ो चल पड़े हैं। इस समय पिता जी से मिलकर मेरे यहाँ होने का समा ार पा चुके हैं। मेरी इच्छा है कि वे मेरी वहीं प्रतीक्षा करें, परन्तु यदि ाप चाहें तो मैं उनको यहाँ बुला सकती हूँ।"

"हाँ जरूर बुलाइए। इससे दो बातें होंगी। एक तो आपकी इस ि का हमें विश्वास हो जायेगा और दूसरे आपके गिरीश साहब के

मुझ से बहुत प्रेम है।'

'इस बात का कोई अनुमान नहीं लगा सकता।' मेरी माता जी ने कहा, 'अन्तरात्मा की बातें तो भगवान ही जानता है। हाँ, कभी प्रेमी परस्पर भी इसका मान कर सकते हैं। वे इसे न समझते हुए भी जानते हैं। देखो बेटा गिरीश! तुमने कभी देवता की सिद्धि की बात सुनी है। सिद्धि के केवल यह अर्थ हैं कि सिद्ध व्यक्ति अपने इष्टदेव से इतना एकीकरण कर लेता है कि दोनों में ज्ञान और शक्ति का अन्तर कम हो जाता है। जितनी जितनी सिद्धि अधिक होती जाती है, उतना-उतना ही देवता और भक्त में भेद-भाव मिटता जाता है। देवता का ज्ञान और उसकी शक्ति तो कम हो नहीं सकती। हाँ! भक्त के ज्ञान में वृद्धि हो जाती है। यही बात परस्पर प्रेमियों की है।'

'बहुत विचित्र बात है।' गिरीश जी का कहना था।

"इस बात के पश्चात् तो हम दोनों में प्रेम अधिक और अधिक ही होता जा रहा है। इस घटना के दो मास पश्चात् माता जी का देहान्त हो गया। हम दोनों प्रेमी हैं। वे कॉलेज में पढ़ाते हैं और मैं नौकरी करने लगी हूँ। हमने यह निश्चय कर लिया हुआ है कि हम अविवाहित रहेंगे और यदि विवाह करेंगे तो एक-दूसरे से ही करेंगे।

"एक बार मैंने उनसे कहा था कि वे विवाह करने में स्वतन्त्र हैं। प्रेम और विवाह दो भिन्न भिन्न बातें हैं। वे इस बात को मानते हुए भी अभी तक विवाह के लिए राज़ी नहीं हुए। अब भी मुझे उनसे अथवा उनको मुझसे मिलने की आवश्यकता होती है तो हम एक दूसरे का चिन्तन करते हैं और हमारी भेंट हो जाती है।"

नसीम अनिमा की आत्म कथा चुपचाप सुन रही थी। उसे यह एक साधारण प्रेम-कथा ही प्रतीत हुई थी। उसे दोनों का अविवाहित जीवन व्यतीत करना कोई विचित्र बात नहीं लगी। अभी उनकी आयु बहुत छोटी थी और कोई नहीं कह सकता था कि दोनों अपने वचन निभा सकेंगे अथवा नहीं। परन्तु अब उसने यह टेलिपेथी की बात दुहराई तो

ीत हुआ, जैसे वह उसे मूर्ख बना रही है अथवा वह स्वय
भ्रम में विचर रही है। इसलिए उसने कहा, "अनिमा
तो आप खुद भूल रही हैं या आप मुझको बेवकूफ़ बना रही
बातों में यक़ीन नहीं रखते। कुछ बातें होती हैं, जो अन्दाज़
सकती हैं। आप बहुत समझदार मालूम होती हैं, इससे
के अन्दाज़ ज्यादा ठीक होते हैं। मगर आपके सन्देश इस
दूसरे तक पहुँच जाते हैं, मैं मान नहीं सकती।"
ा हँस पड़ी। उसने कहा, "मैंने आपको यह बात किसी उद्देश्य
ाई। आप इस सबको उपन्यास का एक पृष्ठ भी समझ
"

मेरी इस बातचीत का मतलब तो आपके बारे में सच्चाई
है। असलीयत जानने के लिए ही तो यह कह रहा हूँ।"
सका प्रमाण दे सकती हूँ, परन्तु मैं सोचती हूँ कि इससे लाभ
। आप तो इस प्रकार की शक्ति न हासिल करना चाहेंगी
न हासिल कर सकेंगी।"
र टलिपैथी जैसी कोई चीज़ सचमुच है तो उसको पाना कौन
रेगा ! पहिले इसके होने का यक़ीन तो हो !"
तो कठिन प्रतीत होता है। आप बात को प्रत्यक्ष देखकर भी
एगा। ये दिल के मसले ऐसे ही हैं। इसलिए ! मैं आपको एक
ती दे सकती हूँ। जब मैं आपको अपनी कथा बता रही थी तो
गिरीशजी से मिलने की कर रही थी। बातों से व्यक्तियों का
आना स्वाभाविक ही है। मेरा विचार है कि वे मुझसे मिलने
हे हैं। इस समय पिता जी से मिलकर मेरे यहाँ होने का समा
के हैं। मेरी इच्छा है कि वे मेरी वहीं प्रतीक्षा करें, परन्तु यदि
तो मैं उनको यहाँ बुला सकती हूँ।"
ज़रूर बुलाइए। इससे दो बातें होंगी। एक तो आपकी इस
इमें विश्वास हो जायेगा और दूसरे आपके गिरीश साहब के

दर्शन भी हो जायेंगे।"

"इसके लिए एक शर्त है। आपके सामने यदि आवें तो मेरे उनसे प्रेम होने की किसी प्रकार की भी बात नहीं होनी चाहिए।"

"मञ्जूर है। पर क्या जाने आप पहिले घर से ही यह स्कीम बनाकर चली हों?"

अनिमा हँस पड़ी। पश्चात् उसने कहा, "यदि आप चाहें तो मैं उनको यहाँ आने का कष्ट न दूँ?"

"अब आ ही जाने दीजिए। देखें वे क्या कहते हैं।"

"तो एक बात कर दीजिए। बाहर दरवाजे पर कहला भेजिए कि एक गिरीश बाबू आ रहे हैं। वे आवें तो उन्हें भीतर ले आया जावे।"

यह सूचना फाटक पर कर दी गई। नसीम ने चपरासी को भेज चेतनानन्द को भी बुला भेजा। चेतनानन्द ने आकर पूछा तो नसीम ने बताया, "एक गिरीश बाबू आ रहे हैं। मैंने समझा कि आपसे भी मुलाकात हो जाय तो ठीक रहेगा।"

"वे कौन हैं?"

"मुझसे जिनका प्रेम है।" अनिमा ने कहा, "परन्तु नसीम बहिन से यह बात निश्चय हो चुकी है कि उनसे इस विषय में कोई बात नहीं होगी।"

"अगर उन्होंने आना था तो मुझे पहिले ही कह दिया होता। मैं उन्हें भी चाय पर निमन्त्रण दे देता।"

"आप जरा बैठ जाइए। सब बात पीछे बताऊँगी।" नसीम ने मुस्कराते हुए कहा।

चेतनानन्द विस्मय में डूबा हुआ बैठ गया। तीनों अपने-अपने विचारों में लीन थे। इससे कोई बातचीत नहीं हो रही थी। इस चुप्पी को नसीम ने तोड़ा। उसने कहा, "अनिमा बहिन! अब तो खाने का समय हो गया है। क्या मैं खाना तैयार करने को कह दूँ?"

"मैं यदि उनको खाने के विषय में कहूँ तो वे मान जाएँगे, परन्तु

परिस्थिति उत्पन्न कर दी है। उस परिस्थिति को रोकने की शक्ति सरकार में है। उससे उतरकर कांग्रेस में है और यदि ये दोनों असफल रहें तो अपने को बचाने की शक्ति हिन्दू लोगों में है। सरकार पर मेरा विश्वास नहीं। सरकार पर अविश्वास करना मैंने पूज्य गांधीजी जैसे नेताओं से ही सीखा है। वे ही तो कहते रहे हैं कि विदेशी सरकार, ईमानदार होती हुई भी, हमारी रक्षा नहीं कर सकती। इस समय तो ऐसा समझ आ रहा है कि भारत में अँग्रेज़ी सरकार यहाँ 'सिविल-वार' करा देने में अपना भला समझती है।

"रही कांग्रेस वालों की बात। वह अपने सत्याग्रह और अहिंसात्मक उपायों से हिंदू-मुस्लिम झगड़े में कुछ कर सकेंगे, समझ नहीं आता। यह मेरे भाई का काम है कि वे समझावें कि हिन्दू मुस्लिम फसाद हो जाने पर वे किस प्रकार उसको रोक सकेंगे। मैं तो समझती हूँ कि कांग्रेस झगड़े को रोकने के लिए जो भी यत्न करेगी, वह जनता के सहयोग के बिना नहीं कर सकती। चाहे तो उसका उपाय अहिंसात्मक हो, चाहे हिंसात्मक, यह सर्वसाधारण के सहयोग के बिना कैसे हो सकेगा? १९४२ का आन्दोलन तो यह शान्तिमय रख नहीं सकी और यदि इस विपत्ति का मुकाबिला करना है तो उस समय भी मुकाबिला अहिंसात्मक नहीं रह सकेगा।

"मुझे तो कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा है कि कांग्रेस इस विषय में कुछ नहीं करेगा। जो कुछ भी करना है, वह कांग्रेस से बाहर के लोगों को करना है।"

इस समय सेठ साहब ने अनिमा को बैठ जाने को कह दिया, "अब आप बैठ जायें। आपका समय हो चुका है।"

अनिमा बैठ गई। इस पर वही कांग्रेसी पुनः कुछ कहना चाहता था, परन्तु सेठ साहब ने उसके स्थान एक और को कहने के लिए खड़ा कर दिया। वह बँगला साहित्य-सभा का प्रधान था। इसने अपना दृष्टिकोण इस प्रकार वर्णन किया, "मैं समझता हूँ कि सारा झगड़ा

पाकिस्तान न बनने देने का कारण है। कांग्रेस की यह भारी भूल है कि इसके बनने में स्वयं का अन्याय लग रहा है। बंगाल की आत्मा तो बंगाल के एक पृथक् देश बन जाने से प्रसन्न ही होगी। यदि बंगाल के प्रीमियर ने बंगाल को भारत से पृथक् करने के लिए कहा है तो कोई अनुचित बात नहीं कहा। बंगाली एक जाति की नहीं है और बंगला साहित्य स्वतन्त्र है। एक बंगाली मुसलमान एक बंगाली हिंदू के अधिक समान है। एक बंगाली हिंदू का भारत के अन्य लोगों से बहुत मामूली साम्य है।"

इसके पश्चात् एक और नगरवासी उठ कहने लगा, "मुझे यह देख अति विस्मय हुआ कि सरकार का वास्तविक कार्य व्यापार जिससे देश में धन-दौलत की वृद्धि होती है, की ओर से हमारा ध्यान हटाकर राजनीति के कीचड़ में ले जाकर फँसा दिया जाता है। राजा चाहे कोई हो, मतलब की बात व्यापार और दस्तकारी हैं। ये जिस कौम के हाथ में होंगी, वही असली राजा होगा। इससे मैं कहता हूँ कि हमें राजनीति के चक्करों में न पड़ व्यापार की ओर ध्यान देना चाहिए।"

इस प्रकार सभा में विवाद का विषय बदल गया। व्यापार और बचत के नियमों पर वार्तालाप होने लगा। विवाह-शादियों में कम खर्चा करने से लेकर स्त्रियों के वस्त्र में कमी तक की बातों पर विवाद हुआ।

अन्त में प्रोफेसर गिरीश सबका धन्यवाद करने के लिए खड़ा हुआ। उसने कहा, "यद्यपि आज के समारोह को बुलाते समय मुझे वार्तालाप के इस स्तर पर चले जाने की सम्भावना नहीं थी, इस पर भी मैं समझता हूँ कि आज का आयोजन असफल नहीं हुआ। कई बातें हमने सुनी हैं। अपने खर्चे के कम होने के उपायों और साधनों पर विचार से लेकर बंगाल के एक पृथक् देश बनने के विषय तक विचार हुआ है। मैं तो इस विषय में अपना और कुछ नहीं कहना चाहता। इस पर भी अनिमा देवी ने जो परिस्थिति हमारे सम्मुख रखी है, वह प्रत्येक विचारशील व्यक्ति के लिए समझने की बात है। इसको इस कारण [illegible]

नहीं कहा जा सकता कि उससे मुसलमान नाराज हो जायेंगे अथवा किसी के सिद्धान्त, जिन पर अभी परीक्षा की जा रही है, अमान्य हो जायेंगे। उसने विचार के लिए एक बात रखी है। यदि तो आप उसमें कुछ भी सच्चाई समझते हैं तो उसके परिणामों से बचने के लिए यत्न करना चाहिए।

"अन्त में मैं सेठजी का और आप सबका धन्यवाद करता हूँ, जो आपने इतना समय देकर हमें लाभ पहुँचाया है और इस सेवक के गृह में भोजन पाकर इसे पवित्र किया है।"

समारोह समाप्त हुआ, परन्तु नगर के नेताओं की इस मनोवृत्ति को देखकर दोनों को निराशा हुई। इस पर भी गिरीश न यह कहा, "अनिमा! हमको तो कार्य करना है, फल की चिन्ता नहीं करनी।"

११

इस दावत के दो दिन पीछे की बात है। चेतनानन्द क पास एक पत्र, जिस पर लाल मोटे अक्षरों में 'कॉन्फिडेंशल' लिखा था, पहुँचा। अनिमा ने, प्रथा क अनुसार, यह पत्र बिना खोले चेतनानन्द को दे दिया। चेतनानन्द ने पत्र खोल पढ़ा और फिर उसे अपनी जेब में रख लिया। अनिमा ने समझा कि शायद पत्र उसके अपने विषय में है। उसने यह भी अनुभव किया कि उस पत्र क पढ़ने के पश्चात् चेतनानन्द का मुख गम्भीर हो गया है। दिन भर यह चेतनानन्द की अवस्था, उसके मुख के चढ़ाव-उतार से जानने का यत्न करती रही। सायं चाय के समय उसने असल बात जानने का यत्न किया। उसन पूछा, "आज आप कुछ चिन्तित प्रतीत हो रहे हैं। क्या मैं कारण जान सकती हूँ?"

चेतनानन्द इस प्रश्न से और भी घबराया। वह अपने चाय के प्याले में देखता हुआ सोचने लगा। अनिमा न समझा कि शायद उसकी सर्विस के विषय में कोई बात हो गई है। इससे उसने अपनी उत्सुकता के लिए क्षमा माँगते हुए कहा, "क्षमा कीजिए। मेरे मन में आपकी चिन्ता

के विषय में जानने की उत्सुकता किसी बुरे भाव से नहीं थी। यदि कोई ऐसी बात है, जिसको आप बताना नहीं चाहते, तो इसके पूछने के लिए मैं क्षमा चाहती हूँ।"

चेतनानन्द ने अनिमा की आँखों में देखते हुए, कुछ आगे झुककर धीरे से कहा, "अनिमा देवी! यदि मैं कोई भेद की बात कहूँ तो उसे किसी से कहियेगा तो नहीं?"

"आँनिस के विषय में हमने शपथ ली हुई है और मैंने आज तक उसका उल्लंघन नहीं किया। इसी प्रकार मैं वचन देती हूँ कि यदि कोई बात आप के विषय में भी होगी तो किसी से नहीं कहूँगी।"

"मुझे आज कुछ ऐसा करने को कहा गया है, जिसके करने को मेरी आत्मा नहीं मानती। मेरे लिए दो मार्ग खुले हैं। एक तो इस पद को त्याग दूँ और दूसरा अपनी आत्मा का हनन कर सरकार के कहने के अनुसार कार्य करूँ।"

अनिमा इस परिस्थिति को सुनकर चुप रह गई। वह न तो बात बताने के लिए चेतनानन्द को उत्साहित करना चाहती थी और न ही अपना बात जानने की उत्सुकता को रोक सकती थी। इन दो प्रकार की इच्छाओं के कारण, उसने चुप रहना ही ठीक समझा। बात चेतनानन्द ने बताई, "देखिये अनिमा देवी! मुझे कहा गया है कि अब समय आ गया है कि हिन्दुओं की साज़िशों का भण्डा फोड़ दिया जाये। इसलिए पंजाब से जो हथियार कलकत्ता के स्टेशन पर पकड़े गए हैं, वे हिन्दुओं से भेजे और हिन्दुओं के लिए आए घोषित किए जावें। मैं यह बात भली-भाँति जानता हूँ कि वे हथियार गुजराँवाला, पंजाब की एक मुसलमान फर्म से भेजे गए थे और यहाँ के एक मुसलमान के पास आए थे। मैं सुबह से ही यह सोच रहा हूँ कि ऐसा घोषित करवाऊँ अथवा न?"

अनिमा इस बात को सुन दुःख और विस्मय में डूब गई। दोनों ने चाय समाप्त की और उठ पड़े। उठते समय चेतनानन्द ने पूछा, "अनिमा देवी! आपने बताया नहीं कि मुझको क्या करना चाहिए।"

"मेरे बताने से क्या होगा? मुझको यह आशा ही नहीं करनी चाहिए कि मेरी सम्मति मानी जायेगी।"

"क्यों नहीं मानी जायेगी? जब मैं पूछता हूँ तो कम से-कम उस पर विचार तो करूँगा ही।"

"शायद वह बात विचार करने योग्य भी नहीं होगी। मेरी आयु, मेरा अनुभव, मेरे विचार और मेरे वातावरण ऐसे हैं, जिनके कारण मेरी बात को न तो आप कोई महत्त्व दे सकते हैं और न ही वह आपकी रुचि के अनुकूल होगी।"

"यह आपने कैसे जान लिया है?"

"आपसे नित्य के सम्पर्क और वार्तालाप से।"

"आप मेरे विषय में बहुत ख़राब राय रखती हैं।"

"मैं आपको अपने से बहुत ऊँची पदवी पर समझती हूँ।"

"क्या ऊँची पदवी पर होने से ठीक विचार रखने वाला सिद्ध हो जाता है?"

"नीची और ऊँची पदवी पर होने से प्रायः विचार भेद हो जाता है।"

चेतनानन्द का अनुभव था कि युक्ति में अनिमा से जीतना प्रायः असम्भव होता है। इससे उसने युक्ति करना बन्द कर अपने मन की भावना बता दी, "इस बहस को छोड़िए, अनिमा देवी! मैं आपसे इस विषय में राय चाहता हूँ।"

"आपने दो में से एक बात करने को पूछा है। आप समझते हैं कि या तो आपको नौकरी छोड़ देनी चाहिए या आपको झूठ बोलना पड़ेगा। मैं समझती हूँ कि दोनों बातें ग़लत हैं। आपको अपने स्थान पर डटे रहना चाहिए और झूठी रिपोर्ट भी नहीं भेजनी चाहिए। जब आपसे कोई पूछे तो कह दीजिए कि मेरे पास जैसे समाचार आते हैं, मैं तो वही लिख देता हूँ। परिणाम यह होगा कि आपको या तो डिसमिस कर दिया जायेगा, या आपको यहाँ से बदलकर किसी और स्थान पर रख दिया जायेगा।"

"पद-त्याग करने से डिसमिस होना ठीक रहेगा क्या ?"

"निश्चित। पद-त्याग में विवशता की झलक प्रतीत होती है और डिसमिस होने में अपने पर अन्याय किये जाने की झलक प्रतीत होती है। सत्य को प्रकाश करते हुए डिसमिस होने में बहादुरी और आन रखने की भावना का पता चलता है।"

उस दिन तो बात वहीं समाप्त हो गई, परन्तु उसके दो दिन पश्चात् अनिमा को नौकरी से जवाब मिल गया। आज्ञा चेतनानन्द के द्वारा ही मिली। चेतनानन्द इस आज्ञा को पढ़ चकित रह गया। उसने वह चिट्ठी, जिस पर आज्ञा लिखी आई थी, अनिमा को दिखा दी। अनिमा ने चिट्ठी पढ़ी। लिखा था, "मिस अनिमा बैनर्जी को एक मास के नोटिस के स्थान, उस काल का वेतन देकर तुरन्त छुट्टी कर दी जाये और उसके स्थान मिस असग़री रिज़वी, बी० ए० को नियुक्त कर दिया जाये।"

"चलो छुट्टी हुई।" अनिमा ने मुस्कराते हुए कहा।

"यह क्यों हुआ है, मैं नहीं जानता।"

"मैं जानती हूँ। मगर उसके बताने की आवश्यकता नहीं। आप कृपया मेरे वेतन के लिए आज्ञा कर दें।"

"मुझे बहुत अफ़सोस है, अनिमा देवी! अब आपको गुज़र करने में दिक्कत होगी।"

"देखिए, कोई-न-कोई साधन मिल ही जायेगा।"

चेतनानन्द ने 'पे बिल' बना, वेतन दिला दिया और सायंकाल चाय के समय उसे चाय का निमन्त्रण देते हुए कहा, "अनिमा देवी! आज मैं चाय आफ़िस के बाहर पीना चाहता हूँ और मैं निवेदन करता हूँ कि आप मेरे साथ चाय पीने की कृपा करें।"

"मुझको कोई आपत्ति नहीं। आप अपने विषय में विचार कर लें। आज मैं सरकार की दृष्टि में निन्दनीय हो गई हूँ। मुझसे सम्पर्क रखने वाले भी निन्दनीय हो सकते हैं। मेरे लिए तो अब आफ़िस में उस काल के लिए भी, जिसके लिए मुझको वेतन मिल चुका है, ठहरना उचित

"मेरे बताने से क्या होगा ? मुझको यह आशा ही नहीं करनी चाहिए कि मेरी सम्मति मानी जायेगी।"

"क्यों नहीं मानी जायेगी ? जब मैं पूछता हूँ तो कम से-कम उस पर विचार तो करूँगा ही।"

"शायद यह बात विचार करने योग्य भी नहीं होगी। मेरी आयु, मेरा अनुभव, मेरे विचार और मेरे वातावरण ऐसे हैं, जिनके कारण मेरी बात को न तो आप कोई महत्त्व दे सकते हैं और न ही वह आपकी रुचि के अनुकूल होगी।"

"यह आपने कैसे जान लिया है ?"

"आपसे नित्य के सम्पर्क और वार्तालाप से।"

"आप मेरे विषय में बहुत खराब राय रखती हैं।"

"मैं आपको अपने से बहुत ऊँची पदवी पर समझती हूँ।"

"क्या ऊँची पदवी पर होने से ठीक विचार रखने वाला सिद्ध हो जाता है ?"

"नीची और ऊँची पदवी पर होने से प्राय विचार भद हो जाता है।"

चेतनानन्द का अनुभव था कि युक्ति में अनिमा से जीतना प्राय असम्भव होता है। इससे उसने युक्ति करना बन्द कर अपने मन की भावना बता दी, "इस बहस को छोड़िए, अनिमा देवी! मैं आपसे इस विषय में राय चाहता हूँ।"

"आपने दो में से एक बात करने को पूछा है। आप समझते हैं कि या तो आपको नौकरी छोड़ देनी चाहिए या आपको झूठ बोलना पड़ेगा। मैं समझती हूँ कि दोनों बातें ग़लत हैं। आपको अपने स्थान पर डटे रहना चाहिए और झूठी रिपोर्ट भी नहीं भेजनी चाहिएँ। जब आपसे कोई पूछे तो कह दीजिए कि मेरे पास ऐसे समाचार आते हैं, मैं तो वही लिख देता हूँ। परिणाम यह होगा कि आपको या तो डिसमिस कर दिया जायेगा, या आपको यहाँ से बदलकर किसी और स्थान पर रख दिया जायेगा।"

"पद-त्याग करने से डिसमिस होना ठीक रहेगा क्या ?"

"निश्चित। पद-त्याग में विवशता की झलक प्रतीत होती है और डिसमिस होने में अपने पर अन्याय किये जाने की झलक प्रतीत होती है। सत्य को प्रकाश करते हुए डिसमिस होने में बहादुरी और आन रखने की भावना का पता चलता है।"

उस दिन तो बात वहीं समाप्त हो गई, परन्तु उसके दो दिन पश्चात् अनिमा को नौकरी से जवाब मिल गया। आज्ञा चेतनानन्द के द्वारा ही मिली। चेतनानन्द इस आज्ञा को पढ़ चकित रह गया। उसने वह चिट्ठी, जिस पर आज्ञा लिखी आई थी, अनिमा को दिखा दी। अनिमा ने चिट्ठी पढ़ी। लिखा था, "मिस अनिमा बैनर्जी को एक मास के नोटिस के स्थान, उस काल का वेतन देकर तुरन्त छुट्टी कर दी जाय और उसके स्थान मिस असगरी रिज़वी, बी० ए० को नियुक्त कर दिया जाये।"

"चलो छुट्टी हुई।" अनिमा ने मुस्कराते हुए कहा।

"यह क्या हुआ है, मैं नहीं जानता।"

"मैं जानती हूँ। मगर उसके बताने की आवश्यकता नहीं। आप कृपया मेरे वेतन के लिए आज्ञा कर दें।"

"मुझे बहुत अफसोस है, अनिमा देवी! अब आपको गुज़र करने में दिक्कत होगी।"

"देखिए, कोई-न-कोई साधन मिल ही जायेगा।"

चेतनानन्द ने 'पे बिल' बना, वेतन दिला दिया और सायंकाल चाय के समय उसे चाय का निमन्त्रण देते हुए कहा, "अनिमा देवी! आज मैं चाय आफ़िस के बाहर पीना चाहता हूँ और मैं निवेदन करता हूँ कि आप मेरे साथ चाय पीने की कृपा करें।"

"मुझको कोई आपत्ति नहीं। आप अपने विषय में विचार कर लें। आज मैं सरकार की दृष्टि में निन्दनीय हो गई हूँ। मुझसे सम्पर्क रखने वाले भी निन्दनीय हो सकते हैं। मेरे लिए तो अब आफ़िस में उस काल के लिए भी, जिसके लिए मुझको वेतन मिल चुका है, ठहरना उचित

नहीं माना गया।"

"मुझको इसकी चिन्ता नहीं। मैंने तो आपकी राय पर कार्य करना आरम्भ कर दिया है। मैं जो ठीक समझता हूँ, करता जाऊँगा। सरकार को यदि मुझे रखना मंजूर नहीं, तो निकाल देगी।"

१२

अनिमा चेतनानन्द के साथ चायपीने चल पड़ी। मार्ग में ही चेतनानन्द ने अपने मन की बात आरम्भ कर दी। उसने पूछा, "अब आपसे पुनः मिलने का अवसर मिला करेगा या नहीं?"

"मैं विचार करती हूँ कि मेरा आपसे मिलना आपके लिए ठीक नहीं रहेगा। मैं आपको एक रहस्य की बात बताती हूँ। कुछ दिन हुए गिरीश जी ने नगर के मुख्य-मुख्य लोगों को एक भोज दिया था। भोज के पश्चात् नगर की वर्तमान परिस्थिति पर विचार विनिमय हुआ तो मैंने भी उस समय अपने विचार प्रकट कर दिये। वे विचार किसी ने कलकत्ता के 'इण्टेलिजेन्स' विभाग के पास पहुँचा दिये प्रतीत होते हैं और मेरा डिसमिस उसका ही परिणाम हो सकता है। शायद अब शीघ्र ही मैं गिरफ्तार कर ली जाऊँगी। आपका मेरे साथ दिखाई देना आपके लिए शुभ नहीं हो सकता।"

"इस पर भी मेरी इच्छा आपसे मिलते रहने की होती है। आओ, हम एक निश्चय कर लें। प्रतिदिन सायं पाँच बजे मैं आपकी न्यू रॉयल काफे में प्रतीक्षा किया करूँगा।"

"आपका व्यवहार इस काल में मेरे साथ बहुत सहानुभूतिपूर्ण रहा है और मैं आपका कहना टाल नहीं सकती परन्तु आपको इसमें क्या लाभ होगा, मैं समझ नहीं सकी। इसका परिणाम अच्छा प्रतीत नहीं होता। साथ ही यह भी बात है कि मैं अब बेकार हूँ। मुझको काम ढूँढना है और इस भाग-दौड़ में समय मिलेगा या नहीं, कह नहीं सकती। यदि कहीं मेरे पीछे पुलिस लग गई तो आपके विरुद्ध भी एक 'फाईल' बन

जायेगी।"

"मुझे इस बात की चिन्ता नहीं रही। आपने कहा था न कि नौकरी छोड़ने से डिसमिस हो जाना ज्यादा अच्छा है और अपने आत्मा का हनन करना ठीक नहीं। इसी प्रकार मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि जब मेरी अन्तरात्मा आपसे मिलकर आपसे बातचीत करने को चाहती है तो मुझे पुलिस से डरने की आवश्यकता नहीं।"

अनिमा, चेतनानन्द के इस कथन से जहाँ विस्मित हुई, वहाँ चिन्तित भी। वह सोचती थी कि उससे मिलना और उससे बातचीत करना कैसे इतना आनन्दमय हो गया कि इसके लिए दो सहस्र रुपये मासिक वेतन की नौकरी भी तुच्छ हो गई। उसने चेतनानन्द की स्त्री, नसीम को देखा था और उसे अपने से कहीं अधिक सुन्दर पाया था। फिर वह बातें भी बहुत मीठी करती थी। इससे चेतनानन्द को अपने प्रेम में फँसा समझ लेना सुगम नहीं था। वह उसके, अपने साथ इस अनुराग के उत्पन्न होने के रहस्य को जानने के लिए, स्वयं उत्सुक हो उठी। अतएव उसने मुस्करा कर कहा, "मैं तो आपको यही सम्मति देती हूँ कि आप, स्वयं की बात के लिए अपनी, बहन नसीम की और अपनी होनेवाली सन्तान की भलाई की हत्या न कर दें। मैं एक क्रान्तिकारी की लड़की और हिन्दुत्व में विश्वास रखनेवाली हूँ। आप एक सरकारी अफ़सर, एक मुसलमान स्त्री के पति और महात्मा गांधी के भक्त हैं। भला आपका और मेरा क्या सम्बन्ध हो सकता है! इस पर भी यदि आप कभी चाहेंगे तो मुझे आपसे मिलने में आपत्ति नहीं होगी।"

इस समय वे 'काफ़' में आ पहुँचे। वहाँ एक कोने में बैठ चाय का आर्डर देकर, चेतनानन्द ने अनिमा से कहा, "मैं स्वयं इस बात का कारण नहीं समझ सका। मैं आपकी बातें सुनने के लिए सदैव उत्सुक रहता हूँ। कभी रात के समय नींद खुल जाती है तो आपकी बातों पर विचार करने लगता हूँ। इससे मन में एक विशेष प्रकार की उत्सुकता और कौतूहल उत्पन्न होने लगता है। मेरे मन में आपसे मिलकर मन में-

उठ रहे भिन्न भिन्न प्रश्नों को पूछने की इच्छा जाग पड़ती है। यह क्यों, मैं नहीं कह सकता। मेरी स्त्री ने एक दिन कहा था कि मैं आपसे प्रेम करने लगा हूँ। इस कारण यह आपसे मिली। मिलने के पश्चात् उसे विश्वास हो गया कि उसके सम्मुख मैं आपसे प्रेम नहीं कर सकता। वह आपसे बहुत सुन्दर है।"

अनिमा मुस्कराते हुए चेतनानन्द की बातें सुन रही थी। चेतनानन्द ने गम्भीरतापूर्वक अपना कहना जारी रखा। उसने कहा, "मैं स्वयं भी इस बात को अनुभव करता हूँ कि मेरा आपसे प्रेम नहीं है। प्रेम उन अर्थों में, जिनमें लोग इसे मानते हैं। मैं जब नसीम से अपने विवाह के पूर्व मिला करता था तो अपने मन की उतावली को अनुभव किया करता था। मुझे भली भाँति याद है कि किस प्रकार की बेताबी वह हुआ करती थी। अब आपके चिन्तन से मेरे मन में बेताबी नहीं होती। न ही मन व्याकुल होता है। आपके विषय में विचार करने से एक अति शान्त, सुखप्रद तथा मधुर सन्तोष होता है।"

"बहुत विचित्र है।"

"हाँ, मैं ऐसा ही अनुभव करता हूँ। कारण न जानते हुए भी कार्य करने पर विवश रहता हूँ।"

"अच्छी बात है। हम इस कारण को ढूँढने का यत्न करेंगे। यह तो आप जानते हैं कि गिरीश जी से मेरा क्या सम्बन्ध है। शेष एक ही बात रह गई है। मेरा कोई भाई नहीं। शायद भगवान् ने उस रिक्त स्थान को भरने के लिए आपको प्रेरणा दी है। इस समस्या का सुझाव तो भविष्य के गर्भ में ही है। मुझे तो यह भय लग रहा है कि हमारा मेल-जोल अधिक काल तक नहीं चल सकेगा। मुझे शीघ्र ही भूम्यान्तर्गत हो जाना पड़ेगा।"

"क्यों? मैं तो इसमें कोई कारण नहीं समझता।"

"मेरे जैसे लोगों के भाग्य में ऐसा ही लिखा है। हम लोग अन्याय और अत्याचार का सहन नहीं कर सकते। जब हम उसका विरोध करते

हैं तो यह बात अन्याय करनेवालों को पसन्द नहीं होती। परिणाम यह होता है कि हम लोगों का अन्याय करनेवालों से संघर्ष हो जाता है। अन्यायी प्रायः प्रबल होता है और हमारे लिए उसका मुकाबिला अधिक से अधिक काल तक करने के लिए भूम्यान्तगत हो जाना आवश्यक हो जाता है।"

"परन्तु अब तो ब्रिटिश-राज्य नहीं रहा। वह गया और उसके साथ अन्याय और अत्याचार भी गए समझने चाहिएँ।"

"मैं ऐसा नहीं समझती। न तो अभी अंग्रेज गया है और न ही अन्याय और अत्याचार की समाप्ति हुई है। इसके लिए प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं। जो आँखोंवाले हैं, वे सब-कुछ समझ और देख रहे हैं।"

"यह अभी परिवर्तन-काल है। धीरे धीरे सब बातें अपने आप सुलझ जायेंगी।"

इस समय बैरा चाय लेकर आ गया। उसने चाय और खाने का सामान मेज पर लगा दिया। उसके सामने दोनों चुप रहे। जब बैरा चला गया तो चेतनानन्द ने फिर बात आरम्भ कर दी। उसने कहा, "कुछ भी हो अनिमा देवी! जो भी सम्बन्ध मेरा आपसे है, उसे मैं स्थायी रखना चाहता हूँ और उसमें कोई भी परिस्थिति बाधा न डाल सके, ऐसा चाहता हूँ।"

"इस सम्बन्ध में आपकी ओर से ही घाटे का सौदा होगा। खैर छोड़िये इस बात को। मैं एक बात आपसे पूछना चाहती थी, जो एक अधीनस्थ कर्मचारी होने से मैं अपने ऑफिसर से नहीं पूछ सकी। अब मैं स्वतन्त्र हूँ और हम अब बराबरी के स्तर पर हैं। यदि आप बुरा न मानें तो मैं पूछूँ?"

"हाँ, पूछ सकती हैं। मैं नहीं जानता कि मेरे मन में कोई ऐसी बात है, जिसके बताने में आपत्ति मानता होऊँ।"

"आप कांग्रेसी विचार के आदमी थे। पंजाब की धारा-सभा में

ओर से सदस्य निर्वाचित हुए थे। इस पर भी आपने कांग्रेस विरोधी मुस्लिम लीग के मन्त्री-मण्डल के अधीन नौकरी स्वीकार कर ली। या तो आप कांग्रेस में किसी आदर्श से प्रेरित होकर सम्मिलित नहीं हुए, या आप पर कोई कठिनाई आ पड़ी थी कि आप सिद्धान्त पर दृढ़ नहीं रह सके। आपके अन्य गुणों को देखते हुए, मैं इस विषमता को समझ नहीं सकी।"

इस प्रश्न ने चेतनानन्द को अपने पर विचार करने पर बाध्य कर दिया। वह गम्भीर विचार में खो गया और चुपचाप सब्की लगा लगाकर चाय पीने लगा। अनिमा अपने लिए चाय बना रही थी और अपने प्याले में ढल रही चाय को देख रही थी। जब प्याले में चाय, दूध और चीनी डाल चम्मच से घोलने लगी तो उसे ज्ञान हुआ कि चेतनानन्द ने उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। उसने आँखें उठाकर देखा तो चेतनानन्द के मुख पर चिन्ता और अनिश्चितपन की झलक पाई। उसने उसे उत्तर देने की कठिनाई से छुड़ाने के लिए कह दिया, "यदि कोई ऐसी बात है, जो आप नहीं बताना चाहते तो न सही। यह कोई ऐसी बात नहीं, जिसका जानना मेरे लिए अनिवार्य हो।"

"नहीं। यह बात नहीं।" चेतनानन्द ने सचेत हो कहा, "मैं बताने से झिझक नहीं रहा। मैं तो अपने मन की बात को जानने का यत्न कर रहा हूँ। अपने व्यवहार का जो कारण मैंने मान रखा था, वह वर्तमान अवस्था में मिथ्या और सारहीन प्रतीत हो रहा है। कुछ दिनों से मेरे मस्तिष्क में भाँति भाँति के विचार और फिर उनमें संघर्ष चल रहा है। मैंने झूठे समाचार देने से इन्कार कर दिया और अपनी नौकरी के चले जाने की भी परवाह नहीं की। मैंने आपके साथ सम्बन्ध बनाने की इच्छा प्रकट की और आपके साथ बन्दी हो जाने का भय भी नहीं कर रहा। इस परिस्थिति में, जब यह सोचता हूँ कि एक बड़े वेतन के लिए धारा सभा की सदस्यता छोड़ी, कांग्रेस छोड़ी और फिर एक विरोधी पार्टी की नीति चलाने में साधन बना, तो अपने किये पर पुनरावलोकन करने के

लिए विवश हो गया हूँ। आपके प्रश्न ने इसमें प्रोत्साहन दिया है।"

अनिमा ने मुस्कराते हुए कहा, "मुझको बहुत शोक है कि मैंने व्यर्थ में आपको परेशान किया है।"

"परेशानी कोई नहीं। केवल अपने मन की अवस्था के विश्लेषण में कठिनाई अनुभव कर रहा हूँ। देखो, अनिमा देवी! मैं आपको अपना संक्षिप्त इतिहास बताता हूँ। मैं एक लड़की से प्यार करता था और उससे विवाह निश्चय कर जब उसके और अपने माता पिता से कहने गया तो दोनों के माता पिता ने हमारे कार्य को पसन्द नहीं किया। लड़की के माता पिता के नापसन्द करने का प्रभाव यह हुआ कि वह निश्चित तिथि को समय पर उपस्थित नहीं हुई। विवाह का प्रबन्ध और दावत पर किया खर्चा सब व्यर्थ गया। इसके अतिरिक्त सैंकड़ों मित्रों के सामने लज्जित होना पड़ा। मेरे इस प्रकार के व्यवहार से मेरे पिता ने मुझको अपने उत्तराधिकार से वञ्चित कर दिया।

"ऐसी अवस्था में मेरा मन अति क्षुब्ध हो उठा। इस समय मुझको नसीम मिली। वह मुझसे प्रेम करने लगी। आपने उसे देखा है और यह तो समझ ही गई होंगी कि वह बहुत सुन्दर है। मैं उसके प्रेम को ठुकरा नहीं सका। विवाह के पश्चात् निर्वाह का प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। पञ्जाब की धारा-सभा से क्या आय हो सकती थी, इस कारण मैंने नसीम के जीजा मिस्टर पराञ्चा का प्रस्ताव, कि यहाँ नौकरी कर लूँ, स्वीकार कर लिया। नौकरी करते अभी दो मास से कुछ ही ऊपर हुआ है कि इसकी कठिनाइयों का अनुभव होने लगा है। अब मैं अपनी आत्मा की पुकार को पुनः सुनने लगा हूँ और मेरे मन में नौकरी की महिमा कम होने लगी है। इस सबका परिणाम क्या होगा, कह नहीं सकता।"

अनिमा यह कथा सुन चुप रह गई। चेतनानन्द चाय पीने लगा। जब चाय समाप्त हुई, तब भी दोनों चुपचाप अपने अपने विचारों में डूबे हुए थे। अनिमा को पहिले चेतना हुई और उसने हँसते हुए कहा,

"अब देर हो गई है। मैं समझती हूँ कि हमें चलना चाहिए।"

"मैं कल आपकी यहीं प्रतीक्षा करूँगा।" चेतनानन्द ने अपने मन में उठ रहे निराशा के विचारों को छोड़कर कहा।

१२

चेतनानन्द 'काफे' से बाहर निकला तो उसका चित घर जाने को नहीं हुआ। वह ट्राम में बैठ 'लेक' की ओर घूमने चला गया। 'लेक' के किनारे रखी एक बेंच पर बैठ अपने मन में उठ रहे विचारों का विश्लेषण करने लगा। वह सोच रहा था कि अनिमा गिरीश से प्रेम करती है। उनके शीघ्र ही विवाह होने की किंचित् भी आशा नहीं। इस पर भी वह निराश नहीं और धैर्य से समय के अनुकूल होने की प्रतीक्षा कर रही है। इसके विपरीत उसका अपना व्यवहार है। पार्वती के विवाह के अवसर पर उपस्थित न होने पर वह उससे ऐसा रूठा कि उसने उससे मिलकर उसके विचारों को जानने का भी यत्न नहीं किया। यह कैसा प्रेम रहा! नलीन बहुत सुन्दर थी, परन्तु पार्वती जैसी सभ्यता, गम्भीरता और दूरदर्शिता उसमें नहीं थी। वह तो चञ्चल, चपल, चुहल और भावुकतापूर्ण थी। इसके विचार करने और फिर कार्य करने में अन्तर नहीं होता था। कई बार जब कुछ कह लेती थी तो पीछे अपनी गलती को अनुभव कर क्षमा माँगने लगती थी। इस छोटे से विवाहित काल में भी कई बार झगड़ा हो चुका था। एक समय तो वह यह समझने लगी थी कि वह अनिमा से प्रेम करने लगा है, परन्तु अनिमा को देख उसे अपने विचारों की भूल पर पश्चात्ताप होने लगा। कभी चेतनानन्द को घर आने में देरी हो जाती तो वह यह सन्देह कर कि किसी स्त्री की संगत में रहा होगा, उससे लड़ पड़ती, परन्तु पीछे ठीक कारण का विश्वास हो जाने पर क्षमा माँग लेती। चेतनानन्द इस प्रकार के विचारों में लीन बैठा बैठा अपना आपको भूल गया। अँधेरा काफी हो गया था और लैम्प जले तो उसे ज्ञान हुआ कि घर चलना चाहिए।

घर पहुँचा तो नसीम प्रामिदर साहब के घर गई हुई थी। इन दिनों उन्होंने अपना निवास-स्थान भवानीपुर में बना लिया था। नसीम को वहाँ न देख, वह ड्राइंग-रूम में चला गया और आरामकुर्सी पर बैठ, अपने विचारों में पुनः लीन हो गया। उसे नौकर से पूछने पर पता चला था कि नसीम दोपहर को दो बजे गई थी परन्तु उसे इस बात की चिन्ता नहीं लगी। वह आज एक नई दुनिया में विचर रहा था।

वह पार्वती की तुलना अनिमा से कर रहा था। दोनों में कई बातों में समानता थी। दोनों न तो बहुत बोलती थीं और न ही बनाव-शृङ्गार करती थीं। पार्वती अनिमा से अधिक सुन्दर थी और अनिमा पार्वती से अधिक समझदार। बंगाली लड़कियों की चपलता अनिमा ने अपने पिता से पाई थी और अपनी माँ से पंजाबियों की कार्यशीलता की मालिक बन गई थी। दोनों बातें करतीं-करतीं अतीत में खो जाती थीं। एक राजनीति से सर्वथा अछूत थी, दूसरी राजनीति में ही रमती थी और उसके श्वास श्वास में से देश, जाति तथा राष्ट्र की गंध आती थी।

नसीम दोनों से अधिक सुन्दर थी, परन्तु वह भावनाओं की पुञ्ज थी। पल में गुलाब के फूल की भाँति खिल उठती थी और पल में ही चण्डी की भाँति धमने और चेतनानन्द के बाल नाचने पर तैयार हो जाती थी। एक रात सोने से पूर्व चेतनानन्द उसे अनिमा की बात बताने लगा, "अनिमा अपने प्रेमी से प्रायः मिलती है और परस्पर प्रेम प्रकाश न कर देश, जाति, आत्मा-परमात्मा और योग-मुक्ति की बातें करते हैं। इस प्रकार अपने प्रण पर, कि माँ की अनुमति के बिना विवाह नहीं करेंगे, आरूढ़ रह सकते हैं और इधर तुम और मैं — "

इतना कहना था कि नसीम पर क्रोध सवार हो गया। वह क्रोध में कहने लगी, "तो जाओ न, उसी से विवाह कर लो। अब वह इतनी अच्छी है तो उसी के पास जा रहो — ।"

चेतनानन्द को पता लग गया कि सिर पर चण्डी सवार हो गई है। वह बिना किसी प्रकार का उत्तर दिए वहाँ से उठा और कपड़े बदल,

अपने पलंग पर जा सो रहा।

आधी रात गुज़र जाने पर, जब वह गहरी नींद सो रहा था, नसीम चुपचाप उसके बिस्तर में आ, घुस, लेट गई और चेतनानन्द को यह जान बहुत अचम्भा हुआ कि उस रात वह बहुत ही प्रेममयी थी।

टेलीफोन की घण्टी बजी तो चेतनानन्द को समय का ज्ञान हुआ। भोजन करने का समय हो गया था। चेतनानन्द ने टेलीफोन उठा सुना तो उसमें नसीम बोल रही थी। उसने प्रीमियर के घर से टेलीफोन किया था, "मैं आज देरी से आऊँगी। आप भोजन कर लीजिए।"

"क्या बात है आज वहाँ?" चेतनानन्द ने पूछा।

"आज बेगम सुहरावर्दी कलकत्ता की चीदा चीदा मुस्लिम खातून को दावत दिये हुए हैं।"

चेतनानन्द ने टेलीफोन बन्द कर बैरा को खाना लगाने को कह दिया।

खाना खाने के पश्चात् वह सिनेमा देखने चला गया। जब वह घर आया तो बारह बज चुके थे और नसीम अपने बिस्तर पर लेटी खुर्राटें भर रही थी। चेतनानन्द कपड़े बदल एक पुस्तक ले बिस्तर पर लेट पढ़ने लगा। कुछ ही देर में उसे उबासियाँ आने लगीं। उसने पुस्तक तकिये के नीचे रख चादर ओढ़ सोने की तैयारी कर दी।

वह अभी 'बेड स्विच' दबा, बिजली बुझाने ही लगा था कि नसीम की नींद खुल गई और वह अपने पलंग पर लेटी-लेटी पूछने लगी, "कहाँ चले गए थे आप?"

"आज चित्त कुछ उदास था और घर में अकेले बैठे बैठे और भी उदास होने लगा तो पिक्चर देखने चला गया था।"

"उदासी क्यों होने लगी थी?"

"आज अनिमा डिसमिस कर दी गई है। उसकी आर्थिक अवस्था का ध्यान कर चित्त में कुछ अफसोस हुआ था।"

"हाँ! प्रीमियर साहब बताते थे कि वे उसको निकालने के लिए

बिल्कुल तैयार नहीं थे। परन्तु बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान ने उनसे आग्रह किया कि कलकत्ता में शान्ति रखने के लिए इसको बन्दी बना जेल में डाल देना बहुत जरूरी है। वह घर घर घूमकर लोगों को कहती फिरती है कि कलकत्ता में फसाद होने वाला है। मजबूरन उसके वारण्ट निकालने का हुक्म देना पड़ा और उससे पहले उसको सरकारी नौकरी से डिसमिस करना जरूरी हो गया। मुझको भी यह सुन बहुत अफसोस हुआ था, परन्तु सारे नगर की रक्षा एक लड़की की नौकरी से ज्यादा जरूर है।"

चेतनानन्द इससे और भी अधिक चिन्ता में पड़ गया। उसके मुख पर गम्भीरता का गहरा देख, नसीम ने कहा, "आपको चिन्ता करने की जरूरत नहीं। आपने तो कुछ किया नहीं, जिससे उसको हानि पहुँची है। जब उसके काम ही ऐसे हैं तो हम उसे कैसे बचा सकते हैं?"

"पर यह कैसे पता चल गया कि वह अशान्ति फैला रही है। उसकी प्रकृति इतनी सौम्य और सभ्य है कि उससे यह आशा करनी कि वह झगड़ा करने की कोशिश कर रही है, ठीक प्रतीत नहीं होता।"

"यह जानना मेरा और आपका काम नहीं। यह पुलिस का काम है।"

"पर तुम तो कह रही थीं कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान के कहने से उसे पकड़ने की आज्ञा दी गई है। तो कांग्रेस का प्रधान पुलिस अफसर हो गया है क्या?"

"पुलिस से क्या उसका अधिक विश्वास नहीं करना चाहिए?"

"वह एक राजनीतिक दल का आदमी है। उसकी बात पक्षपात से रहित होनी कठिन है।"

"यह बात मेरी समझ में नहीं आई।"

"इसमें समझने की कोई बात है भी नहीं। पुलिस के अफसर किसी राजनीतिक दल से सम्बन्ध न रखने से अधिक निष्पक्ष होते हैं। कांग्रेस के प्रधान का अपने विरोधी दल के आदमी को देश में अशान्ति फैलाने

खाला मान लेना स्वाभाविक ही है।"

"परन्तु कांग्रेस तो एक राष्ट्रीय दल है न! इसका लक्ष्य देश को स्वतन्त्र करना है। अतएव इसका विरोधी होना देश द्रोह नहीं है क्या?"

"मैं भी आज से एक मास पूर्व यही समझता था। परन्तु यह जान कि हिन्दू महासभा के सदस्य, देश को स्वतन्त्र करने का आदर्श रखते हुए भी, कांग्रेस में नहीं लिये जावें, मेरे विचार बदल गये हैं। हिन्दू महासभा और कांग्रेस में अन्तर उद्देश्य में नहीं, प्रत्युत उपायों में है। जबसे कांग्रेस ने अपने आधारभूत सिद्धान्तों (क्रीड) में उपाय को सम्मिलित किया है, तबसे यह एक राजनीतिक दल-मात्र रह गई है। एक और बात में अन्तर है। यह है कौम, अर्थात् देश की जाति, के लक्षण करने में कांग्रेस हिंदुस्तानी उसको समझती है, जो भी इस देश में रहता हो और हिन्दू महासभा हिंदुस्तानी उसको समझती है जो इस देश में रहने के साथ साथ इस देश के आचार-व्यवहार, रीति रिवाज, पुण्य स्थान और पुण्य पर्वों को आदर से देखता हो। इससे भी देश को स्वतन्त्र करने की बात धूँधली हो रही है। इस पर भी हिन्दू सभाइयों के लिए कांग्रेस में स्थान न होने से कांग्रेस एक दल-मात्र रह गई है।"

"यह सब आपको अनिमा ने बताया मालूम होता है। उसके दिमाग़ में हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा समाया हुआ है। इसी से तो उसे नौकरी के काबिल नहीं समझा गया।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि इस विषय में कांग्रेस और मुसलमान एक मत हैं।"

"यह मैं नहीं जानती। हाँ! यह बात मैं समझती हूँ कि मुस्लिम लीग देश के एक हिस्से में मुसलमानों का राज्य चाहती है और कांग्रेस ने उसे सिद्धान्त रूप में, मान लिया हुआ है।"

"यही कारण है कि कांग्रेस मुस्लिम लीगी सरकार की सहायता कर रही है और इस सहायता करने में हिन्दू सभाईयों को पकड़वा रही है।"

"मुझे कभी-कभी ऐसा मालूम होने लगता है आप अनिमा से

मुहब्बत करने लगे हैं, तभी आप उसकी बेदलील बातों को मानने लग जाते हैं।"

"तो मुहब्बत करने से महबूबा की बेदलील बातों को माना जाता है?"

"यही मालूम होता है।"

इससे चेतनानन्द गम्भीर विचार में डूब गया। उसने करवट बदलते हुए कहा, "अब सो जाओ। मुझको नींद आ रही है।"

इतना कह उसने स्विच दबा बिजली बुझा दी। वास्तव में उसे अपने सरकारी नौकरी स्वीकार करने का रहस्य प्रतीत हो गया था। वह इस पर विचार करता था। वह सोचता था कि उसने सरकारी नौकरी नसीम के कहने पर स्वीकार की थी तो क्या वह उसके प्रेम में आकर एक बेदलील बात कर ली थी? परन्तु वह अनिमा से वैसा प्रेम नहीं करता था, जैसा नसीम से करता था। तो यदि नसीम की अयुक्तिसंगत बात मान रहा है तो अनिमा की क्यों मान रहा है? वह सोचता था कि क्या नसीम से उसका प्रेम नहीं अथवा अनिमा से नहीं? अनिमा से तो उससे वैसा प्रेम है नहीं, तो यह सिद्ध हुआ कि अनिमा की बात अयुक्ति संगत नहीं है या नसीम से जैसा उसका सम्बन्ध है, वह प्रेम का न होकर केवल वासना का है और वासना की मादकता ही अयुक्तिसगत बात करवाती है। इसी प्रकार की बातें बहुत काल तक वह सोचता रहा। फिर एकाएक उसे विचार आया कि अनिमा के वारण्ट निकल चुके हैं और शायद वह अब तक पकड़ ली गई होगी। वह स्वयं भी इसकी आशा करती थी। उसे विश्वास हो गया कि वह पकड़ ली गई है। इससे उसे अनिमा के पिता के विषय में विचार आने लगे।

दो का घण्टा बज जाने के बाद उसे नींद आई और परिणाम यह हुआ कि अगले दिन वह आठ बजे उठ सका। कठिनाई से स्नान इत्यादि से छुट्टी पा, दफ्तर के समय पर तैयार हो सका।

दफ्तर में नई सेक्रेटरी मिस रिज़वी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह

अभी कॉलेज से पास कर निकली थी। उसकी टाइप करने की गति भी अनिमा से कम थी और काम तो वह बिल्कुल नहीं जानती थी। हाँ, एक बात में वह बहुत चतुर थी। वह फस्ट क्लास 'फ्लर्ट' थी। बात बात पर नखरे करती और हाव भाव बनाती थी। मुख पर पाउडर, होठों पर लिपस्टिक, गालों पर रूज़ और अपनी साड़ी पर एक विचित्र प्रकार की खुशबू लगाये हुए थी। चेतनानन्द को उसे बहुत कुछ सम माना पड़ा और फिर वे बातें, जो वह स्वयं नहीं समझता था, किसी से समझवानी पड़ीं। इस पर भी वह गलतियों-पर गलतियाँ करती जाती थी। इसी उधेड़-बुन में दिन व्यतीत हो गया।

'आफ्टरनून टी' के समय मिस रिज़वी उठी और चेतनानन्द से बोली, "क्षमा करें, क्या मैं आपको चाय का निमन्त्रण दे सकती हूँ?'

चेतनानन्द इस निमन्त्रण को सुन भौंचक्का हो उसका मुख देखता रह गया। उसने कहा, "धन्यवाद, मिस रिज़वी! मैं एक आवश्यक काम में लगा हूँ। फिर किसी दिन आपके निमन्त्रण से लाभ उठाऊँगा।"

मिस रिज़वी निराश हो चली गई और चेतनानन्द अचम्भे में उसको जाते देखता रहा। दफ्तर का समय हो जाने के पश्चात् उसे अनिमा का विचार आया। उसने दफ्तर के रजिस्टर से उसके घर का पता मालूम कर लिया और रॉयल काफे में जा उसकी प्रतीक्षा करते हुए चाय मँगवा पीने लगा। अनिमा अभी तक नहीं आई थी। चाय समाप्त हो गई। वह अभी भी नहीं आई। उसे विश्वास होता जाता था कि वह पकड़ ली गई है। अब वह बैरा को दाम दे रहा था, एक स्त्री पंजाबी ढंग के कपड़े पहिने उसके सम्मुख आ बैठ गई। चेतनानन्द ने दाम देते देते हाथ खींच लिया और बैरा को और चाय लाने को कह दिया। अब बैरा चला गया तो उसने उसकी पोशाक की ओर संकेत कर पूछा, "यह क्या?"

अनिमा ने पंजाबी में उत्तर दिया, "मैं बैंगी साँ ना, मेरे वरंट निकल गये ने। मेरा नों हुन बलवन्त कौर ए। तुहानूं हुन अपना ध्यान

करना चाहिदै। किदरे ए न हो जावे कि मेरे नाल तुहानूँ वी कष्ट पता होवे।"

"मैनूँ एस गल दा पता सवेरे इ लग गया सी, पर मैं समझदा सॉं कि तुसी अजे दफ्तर नहीं गए होवोगे।"

"अजे असी साडे घर नहीं पहुँचे पर मैं ओहदाँ नूँ मैनूँ दफ्तर मेन दा अवसर ही नहीं देना चाहन्दी। मैं हुन गई हाँ।"

"तुहाडी शकैत खुफिया पुलिस ने नहीं कीती। मैनूँ पक्का पाँ टो पता लगेगा इ कि तुहाडी रिपोर्ट बंगाल सूबा कांग्रेस कमेटी दे परधान ने मुख्य मन्त्री दे पास खुद कीती ए।"

"मैनूँ एही आशा सी। मैं इक प्राइवेट जलसे दे विच किहा सी कि कलकत्ता दे विच मुस्लिम लीग दा सिद्धा ऐक्शन होनवाला ऐ। ए गल कांग्रेस दे परधान नूँ पसन्द नहीं आई ते ओहने मेरी शिकायत कर दित्ती ए। पर मैं ताँ परवाह नहीं करदी। हुन मैं तुहानूँ इक गल होर दसना चाँ। सोलहाँ अगस्त नूँ मुस्लिम लीग ने अपना सिद्धा ऐक्शन आरम्भ करना है। एस वास्ते कलकत्ता दे विच भारी तैयारी हो रही ऐ। नतीजा बहुत बुरा होवेगा।"

"पर साडे दफ्तर विच ऐस गल दी कोई खबर नहीं।"

"तुहानूँ ता सोलाँ अगस्त नूँ पता चलेगा। साडे पास इक आदमी है, जेहड़ा हर रोज मस्जिद विच नमाज पढ़न जान्दा ए। ओ है ताँ हिन्दू पर बन के मुसलमान फिरदा ए। ओ मस्जिद विच होनवालियाँ सारियाँ गल्लाँ दस देंदा ऐ। ओहदा कहना है कि कलकत्ते दे विच दो हजार मुसलमान लड़न-मरन वासते तियार है ने।"

"ए ताँ बड़ी खतरनाक गल्ल ए। ते तुसी की कर रए हो?"

"साडा सुनदा कौन ए। असी लोगाँ नूँ समझाने हाँ ते कांग्रेसी कह देंदे ने कि साडा दिमाग खराब हो गया ए। लोग ओन्हाँदी गल्ल मन लैंदेने। ओन्हाँदी गल्ल मन्नणी आसान है न। साडी गल्ल मनन वासते ताँ जान हथेली ते रख मैदान दे विच औना पैन्दा ए।"

"ए तों कबूतर वाकन ग्रस्रों मीटन अई गलत होई न !"

"एस विच सन्देह ही नहीं। देखो फी होन्दा ए।"

चाय समाप्त होने पर दोनों उठ खड़े हुए। चेतनानन्द ने पूछा, "कल कहाँ मिलोगे ?"

"पिरयो में।"

१४

अनिमा को नौकरी से छुट्टी हो जाने पर नगर में घूम घूमकर काम करने का अवसर अधिक मिलने लगा। उसने अपने पिता के घर रहना और आना जाना बन्द कर दिया। खुफिया पुलिस ने भी उसके पिता के घर के आस-पास चक्कर लगाने आरम्भ कर दिए। अब रात को उसके मित्र भी वहाँ नहीं आते थे। अनिमा के पिता को कष्ट तो होता था, परन्तु वह इससे अधिक कष्ट सहन करने का स्वभाव रखता था। जो अण्डमन तक की जेल में रह आया हो, उसके लिए कलकत्ता जैसे नगर में अकेले रहना कुछ भी कठिन नहीं था।

अनिमा अपनी पार्टी के एक कार्यकर्ता, श्री सुधीर कुमार के घर रहती थी। सुधीर कुमार एक बीमा कम्पनी के एजेन्ट के रूप में काम करता था। वहाँ अनिमा को एक पृथक् कमरा मिला हुआ था। सुधीर कुमार अपनी स्त्री के साथ दूसरे कमरे में रहता था। एक तीसरा कमरा आफ़िस के लिए था। सुधीर कुमार ने भी अपना काम धन्धा छोड़ अनिमा के साथ काम करना आरम्भ कर दिया था।

ये लोग मुहल्ले-मुहल्ले में जाते थे और लोगों को कहते थे, "मुसलमान शरारत करने पर तुले हुए हैं और गवर्नर इनकी कानून के विरुद्ध बातों को रोक नहीं सका। ऐसी अवस्था में हिन्दुओं को इस मुसीबत का मुकाबिला करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं हो सका, तो उनकी जान, उनका माल, उनकी बहू-बेटियाँ और उनका सर्वस्व विनाश को प्राप्त हो जायेगा।"

प्रायः लोग कहते थे कि महात्मा गांधी और देश के अन्य नेताओं ने
ओं की नीति सफल होने की गारण्टी दी है। ऐसी अवस्था में एक
ग्रेज अफसर गवर्नर और वह भी लेबर पार्टी का सदस्य होकर, हिन्दुओं
रक्षा क्यों नहीं करेगा ? यदि हिन्दू अपनी ओर से शान्ति भंग नहीं
करेंगे तो भारतवर्ष की पुलिस और फौज, जो अंग्रेज अफसरों और गवर्नर
के अधीन है, उनकी रक्षा करेगी।

परन्तु सब लोग ऐसे नहीं थे। कभी कोई अनिमा देवी और सुधीर
कुमार का विश्वास करते तो वे उन्हें अपने मुहल्ले की रक्षा के उपाय बता
देते। वे बताते, "मुहल्ले के युवक एक स्थान पर एकत्रित होकर लाठी,
बरछा, छुरा चलाना और दूसरे के आक्रमण से बचना सीखो। मुहल्ले
में आग बुझाने के साधन एकत्रित करो और लोगों को सचेत करने के
लिए एक घड़ियाल का प्रबन्ध किया जावे।"

ये सब बातें कही जातीं तो फिर लोग इनमें मीन मेख निकालते।
इस पर भी अनिमा और सुधीर कुमार यह समझते थे कि वे अपना
कर्त्तव्य पालन कर रहे हैं। कुछ दिनों में इसका प्रभाव भी होने लगा।
कई नये, कुश्ती करने और लाठी इत्यादि चलाना सीखने के लिए
अखाड़े खुल गए थे। इससे तो कांग्रेस के लोग घबराने लगे। कांग्रेस
ने अनिमा और उसके साथियों का विरोध करने के लिए शान्ति-सभाएँ
खोलनी आरम्भ कर दीं। अब जहाँ कहीं अनिमा और सुधीर जाते तो
शान्ति-सभा के लोग भी वहाँ जा पहुँचते और परस्पर वाद-विवाद आरम्भ
हो जाता। अनिमा कहती, "अपने मुहल्ले की नाकाबन्दी की योजना
बना रखिए।' तो कांग्रेस के लोग कहते, "अपने मुहल्ले के मुसलमानों से
मन-मिलाप रखोगे तो भय करने की आवश्यकता नहीं।" इस पर
अनिमा का उत्तर होता, "भय मुहल्ले के मुसलमानों से नहीं है, प्रत्युत
बाहर से आक्रमण करने वालों से है।' शान्ति-सभा वाले कहते, 'यह
काम पुलिस करेगी।"

प्रायः लोग कांग्रेस वालों की बात ठीक समझते थे। उनकी बात

मानने से कुछ करना नहीं पड़ता था। अनिमा का कहना था कि वे कुछ करें और इसमें धन और समय लगता था।

मुस्लिम लीग ने डायरेक्ट ऐक्शन आरम्भ करने की तिथि घोषित कर दी। यह १६ अगस्त निश्चय हुई थी और इसको पूर्ण हिन्दुस्तान में मनाया जाना था। इस पर भी अनिमा और उसके साथियों का विचार था कि देश के अन्य स्थानों से कलकत्ता में भय अधिक था। उनके पास तो इस बात की सूचना थी कि कलकत्ता में झगड़ा करने का पूरा यत्न किया जाने वाला है।

अनिमा के न पकड़े जाने से पुलिस को बहुत डाँट डपट हो रही थी। उसके घूम घूमकर लोगों को संगठित करने के प्रयत्नों की नित्य नई खबरें आ रही थीं। इससे पुलिस और भी हैरान हो रही थी। एक दिन सायं काल जब वह काम करती हुई थक चुकी थी और सुधीर के साथ घर जा रही थी, तो एक पुलिस सार्जण्ट और दो कॉन्स्टेबल उसके सामने आ खड़े हुए। उसके साथ एक खद्दर पहिने नवयुवक भी था। वे उस मुहल्ले में से आ रहे थे, जहाँ से अनिमा अभी बातचीत कर आ रही थी। खद्दरधारी नवयुवक वही था, जो अनिमा के साथ सबसे अधिक वाद विवाद करता था।

स्वाभाविक रूप में अनिमा ने समझा कि उस खद्दरधारी ने विश्वास घात किया है। एक कान्स्टेबल सार्जण्ट को बताने लगा, "मैं समझता हूँ कि यही है।"

सार्जण्ट ने अनिमा से पूछा, "आपका नाम क्या है?"

"बलवन्त कौर।"

सार्जण्ट पंजाबी था। उसने अनिमा को सिर से पैर तक देखा और फिर पंजाबी भाषा में पूछा, "किथे रहन्दे ओ, भैन जी?"

"अम्बर सी, बलीगंज विच, भा जी!"

सार्जण्ट ठेठ पंजाबी सुन चुप रह गया। कुछ काल तक अनिमा की ओर देखकर विश्वास कर साथी खद्दरपोश की ओर देख पूछने लगा,

जाकर चेतनानन्द से पूछा, "क्षमा करें, आप अनिमा देवी को जानते हैं?"

"जी हाँ।" चेतनानन्द ने सचेत होकर कहा।

"वे कहाँ रहती हैं?" पुलिस अफसर का अगला प्रश्न था।

"यह तो मैं नहीं जानता। बात यह है कि यह इनकी सहेली और सहपाठिन थी। इन दोनों के नामों में मुझे प्रायः भ्रम हो जाता है। इनको अनिमा और उसको बलवन्त कौर समझ लिया करता हूँ।"

"परन्तु अनिमा तो एक बंगाली लड़की का नाम है?"

"जी हाँ, मैं जानता हूँ। इस पर भी मुझे भ्रम हो जाता है।"

पुलिस अफसर चुप तो कर गया परन्तु उसका सन्देह बना ही रहा। यह इन दोनों की ओर घूर घूरकर देखता रहा। टालीगंज की ट्राम आई तो दोनों उसमें सवार हो गए। अनिमा ने धीमे स्वर में कहा, "आपने तो मुझे फँसा ही दिया था।"

"क्षमा करना। आज बहुत दिन पश्चात् अकस्मात् आपको देखकर भूल ही गया था। खैर, छोड़िए इस बात को। उस दिन आपने 'फिरपो' में आने को कहा था। पूरा एक घण्टा भर प्रतीक्षा करने के पश्चात् निराश हो चला गया। आज तक कभी तो 'रॉयल काफे' में और कभी 'फिरपो' में चाय के लिए जाता हूँ। हर बार यह आशा करता हूँ कि आपसे भेंट होगी, परन्तु प्रत्येक बार निराश लौटता हूँ। इससे आज आपके दर्शन कर अपने आपको भूल गया था।"

"आप अब किधर जा रहे हैं?"

"मैं जा तो घर रहा था, परन्तु अब आप जिधर कहें।"

"तो चलिए, लेक के किनारे चलकर बैठेंगे। मुझे दो घण्टे का अवकाश है। समय अच्छा कट जायगा।"

"कहीं काम मिल गया है क्या?"

"हाँ। चलिए, वहीं चलकर बातें होंगी।"

इसके उपरान्त दोनों ट्राम में नहीं बोले। टालीगंज से उतर, वहाँ से पैदल ही लेक के किनारे पर जा पहुँचे। वहाँ एकान्त ढूँढकर बैठ

गए। अनिमा ने अपना वचन पूरा न करने का कारण बताने के लिए बात आरम्भ कर दी। उसने कहा, "नौकरी अभी तक नहीं मिली, परन्तु काम इतना मिल गया है कि अवकाश बिल्कुल नहीं मिलता।"

"क्या काम मिल गया है?"

"आपको तो पहिले ही बता चुकी हूँ कि हमारी एक मण्डली है, जिसमें कुछ तो मेरे मित्र हैं और कुछ पिताजी के साथी हैं। हम कलकत्ता के हिन्दुओं में ऐसी जागृति उत्पन्न करने का यत्न कर रहे हैं, जिससे आनेवाली मुसीबत से वे बच सकें।"

"कैसी मुसीबत?"

"हमारे मन में यह बात बैठ गई है कि मुस्लिम लीग कलकत्ता में झगड़ा करायेगी और उस झगड़े को असफल करने का एक ही उपाय समझ में आ रहा है। वह यह कि उस झगड़े में डटकर मुसलमानों का मुकाबिला किया जाये।"

"इससे यह ठीक नहीं क्या कि गवनर से कहकर फौज का प्रबन्ध करा लिया जाये?"

"यह ठीक तो है परन्तु सम्भव नहीं।"

"क्यों सम्भव नहीं?"

"इसलिए कि अंग्रेज़ों की स्वार्थसिद्धि इस झगड़े में मुसलमानों के सफल होने में है।"

"यह कैसे? मैं समझ नहीं सका।"

"बात स्पष्ट है। अंग्रेज भारतवर्ष छोड़ने पर विवश हो गए हैं। इस पर भी वे हिन्दुओं का यहाँ अकण्टक राज्य स्थापित नहीं होने देना चाहते। उनको हिन्दुओं पर विश्वास नहीं है। उनकी यह इच्छा है कि एक प्रबल मुस्लिम राज्य यहाँ स्थापित हो जाये, जो हिन्दुओं के स्वतन्त्र राज्य को तंग करता रहे। हिन्दू इस बात को नहीं चाहते। यह डायरेक्ट ऐक्शन की धमकी कांग्रेस को इस बात के लिये तैयार कर चुकी है कि देश के तीन विभाग हों, परन्तु यह पर्याप्त नहीं। अंग्रेज़ों को तो हिन्दुओं

पर एक मुसलमानी स्वतन्त्र राज्य का अंकुश निर्माण करना है। इसके लिए देश के एक-दो नगरों में खून की नदियाँ बहानी आवश्यक समझी जा रही हैं, इससे कांग्रेसी नेता भयभीत हो, मुसलमानों की पूर्ण माँग स्वीकार कर लेंगे। हिन्दू नेताओं की घबराहट का इलाज यह है कि मुसलमानों को अपने डायरेक्ट ऐक्शन में सफल न होने दिया जाये।"

"अनिमा देवी! आप ऐसे बात करती हैं, जैसे आप महात्मा गांधी से भी अधिक जानती हैं। वे नित्य ब्रिटिश अफसरों से मिलते रहते हैं और उनके मन के भावों को भली भाँति जानते हैं। उन्होंने कहा है कि उनको अंग्रेज़ी अफ़सरों की नीयत पर सन्देह नहीं है।"

"यदि उनकी नीयत अच्छी है तो फिर राज्य पलटने की आवश्यकता ही क्या है? उनको धीरे धीरे राज्य में परिवर्तन करने दिया जाय।" अनिमा ने मुस्कराते हुए पूछा।

चेतनानन्द इस बात का उत्तर नहीं दे सका। वह सोचने लगा कि यदि अनिमा की बात सत्य हो गई तो कलकत्ता में बलवा हो जाना और रक्तपात हो जाना कोई कठिन बात नहीं है। चेतनानन्द को चुप देख अनिमा ने अपना कहना जारी रखा। उसने कहा, "आप छोड़िए इस बात को। बताइए, नसीम बहिन कैसी हैं?"

"आजकल कुछ स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। वैसे सब ठीक है।"

"मैं उनसे मिलने आती, पर मैं तो फरार हूँ न?"

"नहीं वहाँ मत आना। नसीम आपकी कारगुजारी से सहमत नहीं।"

"मैं तो समझती थी कि वे कांग्रेसी विचार की हैं।"

"तो इससे क्या होता है?"

"जिस कानून से मुझको पकड़ने के वारंट हैं, वह एक नाजायज़ कानून है। मुझे बिना मुकद्दमा किए पकड़कर कैद करने की आज्ञा है।"

"वह कहती थी कि जब कांग्रेस के प्रधान ने आपके विरुद्ध रिपोर्ट की है तो मुकद्दमे की ज़रूरत नहीं है।"

"आप भी यही समझते हैं क्या?"

‘वैसे तो मैं यह कानून नापसन्द समझता हूँ परन्तु मैं देखता हूँ कि उन सूबों की सरकारों ने भी, जहाँ कांग्रेस का बहुमत है, ये कानून पास किए हैं और उनके अनुसार ही तो बिना मुकद्दमे के पकड़ा जा रहा है। इससे मुझे अपनी सूझ-बूझ पर सन्देह हो रहा है।

“यह तो स्वराज्य मिलने के पूर्व ही अन्याय का शासन चल रहा है। कांग्रेस इस समय लोगों की मनोनीत संस्था है। इसके विरुद्ध कोई षड्यन्त्र करेगा, समझ में नहीं आता। इस पर भी यदि कांग्रेस को किसी पर सन्देह है तो पहिले ही ‘क्रिमिनल प्रोसिजर कोड’ की धारा १०७ और १०८ है, जिनसे सन्दिग्ध लोगों को पकड़कर एक वर्ष तक कैद में रखने का अधिकार मैजिस्ट्रेट को है। इन धाराओं के अनुकूल अभियुक्त को अपनी सफाई देने का अधिकार है। पब्लिक सिक्यूरिटि ऐक्ट बनाने का केवल-मात्र एक ही प्रयोजन हो सकता है कि अभियुक्त को अपनी सफाई तक देने के अधिकार से वंचित रखा जाये। यह तो घोर अन्याय है। इसी के विरुद्ध ही तो इतने वर्ष तक कांग्रेस आन्दोलन करती रही है।

“आपका कहना तो सत्य प्रतीत होता है, परन्तु यह बातें तो उनको बतानी चाहिएँ, जो इस समय बताने की परिस्थिति में हैं।

“वे क्या बतायेंगे! मैं बताती हूँ। कांग्रेस देश का शासन करने जा रही है। यह, जबसे महात्मा गांधी के नेतृत्व में आई है, देश के हितों को मुसलमानों पर न्यौछावर करती रही है। हाँ। तब प्रत्येक बात का उत्तरदायित्व ब्रिटिश अफसरों पर होता था। इस कारण महात्मा जी की भूल का परिणाम भी उनके सिर लाद दिया जाता था। अब जो कुछ ये करेंगे, उसका उत्तरदायित्व कांग्रेस पर होगा। ये करने जा रहे हैं देश-द्रोह और उन लोगों का, जो इनके इस काम का विरोध करेंगे, मुख बन्द करने के लिए ये यह कानून बना दिये हैं।”

चेतनानन्द इस बात पर हँसते हुए बोला, ‘मैं समझता हूँ कि हम अभी इतने महान् पुरुषों पर आक्षेप करने के योग्य एवं अनुभवी नहीं हुए। आइये, राजनीति छोड़ किसी अन्य विषय पर बात करें।”

डायरेक्ट ऐक्शन

१

डायरेक्ट ऐक्शन को आरम्भ करने का दिन १६ अगस्त १९४६ नियत किया गया और पूर्व भारत में से केवल कलकत्ता के अन्दर इस दिन सरकारी रूप में छुट्टी दी गई। सब सरकारी दफ्तर, कार्पोरेशन के दफ्तर और कारखाने बन्द करवा दिये गये। हिन्दू इससे चिंतित हुए अवश्य, परन्तु वे इतना कुछ होने की आशा नहीं करते थे, जो हुआ। प्राय हिन्दू अपने अपने काम पर ऐसे गये, जैसे साधारण दिनों में जाते थे। मुसलमानों ने इस दिन हड़ताल घोषित कर रखी थी। हैरिसन रोड पर जब हिन्दुओं की दुकानें खुलने लगीं तो मुसलमान युवकों को यह बात पसन्द नहीं आई। उन्होंने दुकानें बन्द करने को कहा और कुछ हिन्दुओं ने व्यर्थ का झगड़ा मोल न लेने के लिए दुकानें बन्द कर दीं। कुछ एक को आत्म-सम्मान अधिक प्रिय प्रतीत हुआ। उन्होंने अपनी दुकानें बन्द करने से इन्कार कर दिया। इस पर मुसलमानों की एक भीड़ ने इन दुकानदारों पर ईंटें चलानी आरम्भ कर दीं। दुकानें खुली छोड़, दुकानदार जान बचाकर भाग खड़े हुए और दुकानें लूट ली गईं।

इस प्रकार की घटनायें प्रत्येक मुहल्ले और बाजार में होती रहीं। दस बजे एकाएक मुहल्लों पर आक्रमण आरम्भ कर दिये गये। हिन्दुओं के मकानों में घुस-घुसकर लूटमार और स्त्रियों को अपमानित किया जाने लगा। अनिमा और सुधीर कुमार ने ग्राम प्रचार-कार्य पर जाना उचित

समझा था। सुधीर कुमार की स्त्री ने उन्हें इस दिन आने नहीं
था। इन लोगों के साथ तो घूम घूमकर समाचार एकत्रित कर रहे
और उस दिन के एकत्रित होने के लिए केन्द्र स्थान सुधीर कुमार का
र ही बना रखा था। इस प्रकार पल-पल पर लोग बाहर जा रहे थे
और नगर के समाचार ला रहे थे। लगभग दस बजे यह समाचार आया
कि हैरिसन रोड पर हुल्लड़ मच रहा है। फिर समाचार आया कि
अलीगञ्ज में हिन्दू मुहल्लों को आग लगा दी गई है। कुछ काल पश्चात्
एक ने बताया कि धर्मतल्ला में मुसलमानों का एक झुण्ड खड़ा है और
राहगीर हिन्दुओं को मार-काट रहा है। लगभग तीन बजे समाचार मिला
कि सरकस रोड पर हिन्दुओं का कत्ले आम हो रहा है।

इस प्रकार के समाचार आ रहे थे। घर के सब लोग दाँत पीस-पीस
कर रह जाते थे। तीन बजे के लगभग सुधीर कुमार का छोटा भाई, जो
कॉलेज होस्टल में रहता था, आया। सुधीर की स्त्री उसे देख विस्मित
हो पूछने लगी, "निवारण! क्या बात है? यहाँ किस लिए आये हो?"

"भाभी! किसी ने यह विज्ञापन कर दिया था कि ग्रे स्ट्रीट में आग
लग रही है। मुझे आपकी चिन्ता लग गई, इससे आया हूँ।"

"इतनी दूर तुम कैसे आ सके हो? हमने तो सुना है कि चितरञ्जन
एवेन्यू के बाहर कत्ले आम हो रहा है।"

"हाँ, परन्तु भाभी! यह देखो।" इतना कह उसने अपनी जेब में से
लम्बी टोपी निकाल सिर पर टर्की पहिन और कोट के नीचे से बिस्तर की
चौखानी छपी चादर निकाल अपनी धोती के ऊपर तहमत की भाँति
पहन एक हट्टे-कट्टे मुसलमान की सूरत बना कर दिखा दी। "जब मेरे
सामने एक हिन्दू परिवार को गुण्डे धकेलकर मकान से बाहर लाये और
उनकी हत्या करने लगे तो मैंने अल्लाहु अकबर का नारा लगा दिया।
इससे सब गुण्डे उस परिवार पर कुत्तों और चीलों की भाँति झपट पड़े।
इस प्रकार रास्ता साफ देख मैं वहाँ से खिसक आया। सड़कें मृत शवों
से पटी पड़ी हैं और मैंने यहाँ तक आते आते बीसियों मकानों को जलते

देखा है।

अनिमा ने इन समाचारों को सुन बेचैन हो कहा, "मैं समझती हूँ कि कुछ करना चाहिए, इस प्रकार अपमानित होने से तो लड़ते-लड़ते मर जाना अच्छा है।"

इस समय सुधीर के मकान के ऊपर की मंजिल पर रहनेवाले किराएदार का लड़का श्यामाचरण हाँफता हुआ बाहर से आया और बोला, "गली के बाहर लगभग दो सौ मुसलमानों की भीड़ खड़ी है। सब लाठियों-बरछों और तलवारों से सुसज्जित हैं। राह चलते लोगों को नंगा कर देखते हैं कि मुसलमान है या कोई और। हिन्दू होने पर तुरन्त मार डालते हैं।"

अनिमा की आँखें क्रोध से लाल हो रही थीं। रक्त का प्रवाह उसके सिर को चढ़ गया था। उसने तमतमाते माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "कितने घर हैं इस मुहल्ले में?"

"पाँच सौ से ऊपर हैं।"

"तो क्या पाँच सौ आदमी यहाँ एकत्रित नहीं हो सकते? देखो श्यामजी और निवारणचन्द्र! मैं लोगों को इकट्ठा करने जा रही हूँ। बताओ, तुम मुहल्ले की रक्षा के लिए अपने को पेश करते हो या नहीं?"

श्यामाचरण के माता पिता ऊपर की मंजिल से नीचे उतर आये थे और अनिमा का प्रस्ताव सुन रहे थे। श्यामाचरण की माँ ने कहा, "यह क्या लड़की? धोती की चाल निकालती तो आती नहीं इसे।"

श्यामाचरण ने एक क्षण तक अनिमा का मुख देखा और फिर अपनी माँ की ओर देखकर कहा, "पर माँ! चूहों की भाँति बिल के अन्दर घुसकर मरना भी तो मैं नहीं जानता।"

इतना कह उसने निवारण की बाँह-में-बाँह डाली और उसे घसीटता हुआ मकान के बाहर ले गया। श्याम के पिता ने अपने लड़के को पीछे से आवाज़ दी, "श्याम! श्याम!! ओ श्याम!!!" परन्तु वे दोनों घर से बाहर निकल चुके थे। श्याम की माँ की आँखों में आँसू दिखाई देने

गये थे। उसने चीख मार और माथे को पीटते हुए पुकारा, "कहाँ गया मेरा श्याम ?"

अनिमा ने क्रुद्ध डाँटकर कहा, "चुप रहो बहिन! बच्चों को हतोत्साह मत करो। सुधीर बाबू! अपना रिवॉल्वर भर लो।" इतना कह अनिमा ने अपने सोने के कमरे में जाकर अपने बिस्तर पर सिरहाने के नीचे से एक छुरा निकालकर अपने आँचल के नीचे छुपा लिया। इस प्रकार अपनी रक्षा के लिए तैयार हो सुधीर से बोली, "आइए मेरे साथ।"

वे दोनों भी घर से बाहर निकल गए। सुधीर बाबू की स्त्री अवाक् मुख खड़ा इनको देखती रह गई। श्याम की माँ तो वहीं भूमि पर बैठ गई और सिर को घुटनों में दे रोने लगी। श्याम का पिता अपने लड़के के पीछे-पीछे मकान के बाहर चला गया।

अनिमा मकान के नीचे उतरी तो श्याम और नियारण के प्रयत्नों का फल निकलने लगा था। लोग लाठियाँ और छुरियें ले-लेकर अपने अपने घरों से बाहर आ रहे थे। पचास के लगभग युवक एकत्रित हो चुके थे। अनिमा ने उनको देख हाथ के संकेत से अपनी ओर बुलाकर कहा, "वीरो! देख रहे हो न कि क्या हो रहा है ? क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारे मकानों को आग लगा दी जावे, तुम्हारे घर लूट लिये जावें और तुम्हारी माँ-बहिनों का अपमान किया जावे ?"

उनमें से एक ने अपने हाथ की लाठी को ऊँचा उठाकर ज़ोर से कहा, "जयकारा एक बार बजरंगी।" सबके मन जोश से उबल रहे थे। बजरंगी का ललकार सुन सब बोल उठे, "हर हर महादेव।"

इस पर अनिमा ने अपने आँचल से छुरा निकाल ली और छुरी वाला हाथ उठाकर बोली, "जिनको मरने से भय नहीं लगता, मेरे पीछे आ जायें।"

इतना कह उसने बजरंगबली का नारा लगाया और गली के बाहर की ओर चल पड़ी। युवक 'हर-हर महादेव' का नारा लगाते हुए भागकर अनिमा के चारों ओर हो गए और सब गली के बाहर को बढ़े। एक

स्त्री का इस प्रकार मौत के मुख में भागकर जाते देख युवकों के जोश का वारापार नहीं रहा। वे गली के बाहर मार-काट करते हुए मुसलमानों पर बिजली की भाँति टूट पड़े। मुसलमानों ने समझा था कि हिन्दू कायरों की भाँति अपने अपने मकानों में छुपे रहेंगे और वे राहगीरों को समाप्त कर, एक-एक मकान से इनको निकालकर मौत के घाट उतार देंगे। उनको स्वप्न में भी यह आशा नहीं थी कि एक औरत युवकों को साथ ले उन पर टूट पड़ेगी।

एक क्षण तक तो वे समझ ही नहीं सके कि यह क्या आफ़त है। इतने में अनिमा के साथियों ने तीन चार मुसलमानों को लाठियों से घायल कर धराशायी कर दिया था। कुछ मुसलमान एक हिन्दू को तंग कर रहे थे और वह हिन्दू नीम के पत्ते की भाँति काँप रहा था। मुसलमान अपने साथियों को मरता देख लड़ने को बढ़े, परन्तु अनिमा की पुकार, "शाबाश बहादुरो" ने उनके हृदय कम्पायमान कर दिए और वे भाग खड़े हुए। मुसलमानों की संख्या दो सौ के लगभग थी और अनिमा के साथियों की पचास से कुछ ऊपर। ये लोग अनिमा को निर्भयतापूर्वक लड़ाई में कूदते देख विपुल उत्साह से भर यमदूतों की भाँति मुसलमानों पर पिल पड़े थे। मुसलमान अभी तक बिना विरोध के हिन्दुओं की मार काट कर रहे थे। अब मुकाबिले के लिए उत्साह और निश्चय से भरे हुए हिन्दू युवकों को देख घबरा गए और भाग खड़े हुए।

मुसलमानों को भागते देख अनिमा ने अपने साथियों का उनके पीछे जाने से रोकते हुए कहा, "हमारा काम उनको मारना नहीं प्रत्युत अपने मोहल्ले की रक्षा करना है।" इस समय घायलों की देखभाल की गई। अनिमा के साथियों में से केवल तीन को साधारण घाव लगे थे। दूसरी ओर मुसलमानों में से तीन को तो भारी चोटें आई थीं। वे भागनेवालों के साथ नहीं जा सके थे और अचेत वहीं पड़े थे। उस स्थान पर राह जाते बारह के लगभग हिन्दू मारे जा चुके थे और दो को वे अधमरा छोड़ गये थे। एक के आधे कपड़े उतारे जा चुके थे। अनिमा

ने अपने साथियों को कहा कि घायलों को भीतर ले चलें और मृत शवों को वहीं छोड़ दें। श्यामाचरण के पिता जोगेश बाबू भी मोहल्ले के कुछ प्रौढ़ों को ले कर आ गये। वे लोग भी मोहल्ले के युवकों को लड़ते देख जोश में आ गये थे।

घायलों के भीतर आ जाने पर अनिमा ने गली के बाहर पैहरा बैठा दिया। उसने उनके हाथ में एक घड़ियाल देकर कहा कि यदि पुलिस आये तो घड़ियाल को तीन बार बजावें और यदि मुसलमान आयें तो घड़ियाल को कई बार बजावें। पुलिसवालों के आने की सूचना पर सब लोग अपने अपने घरों में छुप जायें और मुसलमानों के आने की सूचना पर सब लोग गली के फाटक पर एकत्रित हो मुसलमान आक्रमणकारियों को भीतर न घुसने दें।

पुलिसवाले तो दिन में एक बार भी नहीं आये, परन्तु मुसलमान दिन में तीन बार आये और मार-मारकर भगा दिये गये।

२

रात को कलकत्ता की स्थिति अति विकट हो गई। अनिमा और उसके साथियों ने घर की छत पर चढ़कर देखा कि सैकड़ों स्थानों पर आग धू धू करती हुई जल रही है। "अल्ला-हू अकबर" के कानों को फाड़ देनेवाले नारों का गर्जन चारों ओर से सुनाई दे रहा था।

ये लोग चारों ओर जलती हुई अग्नि के प्रकाश में एक दूसरे का मुख देख रहे थे। निवारण कॉलेज होस्टल को वापस नहीं जा सका था। समीप से ही "अल्ला-हू अकबर" की घोर गर्जना हुई। अनिमा इन नारों को सुन-सुन व्याकुल हो रही थी। अब उससे चुप नहीं रहा गया। वह कह उठी, "कौन इस भीड़ के समय अनाथ हिन्दुओं की रक्षा करेगा?"

सुधीर कुमार का कहना था, "अनिमा बहिन! कुछ करना चाहिए। यदि आज कुछ न किया गया तो वृटिश साम्राज्य का दूसरे नम्बर

मगर एक दो दिन में कोयलों का ढेर बन जायेगा। मज़ेदार बात तो यह है कि काग्रेसी, जो मुसलमानों पर अगाध श्रद्धा और विश्वास रखते थे और जिनको अंग्रेज़ों से रक्षा की पूर्ण आशा थी, अब अपने घरों में छुपे बैठे हैं।"

अनिमा अनेकों अग्नि काण्डों से हुए रक्त वर्ण आकाश की ओर देखकर, एक लम्बी साँस ले बोली, "हमें अपना कर्तव्य करना है। वे क्या कहते थे और क्या कर रहे हैं, इससे हमें कोई प्रयोजन नहीं। मैं समझती हूँ कि अपनी ही परछाईं से डरे हुए सिंह को एक बार सचेत करने की आवश्यकता है। यदि हम सफल हो गये तो कलकत्ता कल तक बच जायगा। भैया निवारण! कॉलेज होस्टल में जाकर विद्यार्थियों को एकत्रित कर, कुछ तो करना चाहिए।"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ। भेष बदलकर ही जा सकूँगा।"

"पर कैसे होगा?" श्यामाचरण ने पूछा।

"हम मोहल्ले मोहल्ले में जायेंगे और लोगों को ऐसे ही तैयार करेंगे, जैसे इस गली में किया है।" अनिमा का उत्तर था।

"पर बहिन अनिमा! तुम्हारे जाने की क्या आवश्यकता है? हम लड़के जाकर भी तो यह काम कर सकते हैं।"

"नहीं, भैया निवारण! मुझसे यह ताण्डव और अधिक नहीं देखा जा सकता। मैं तो भेष बदलने में भी बहुत विश्वास नहीं रखती। चलो, सुधीर भैया! मेरा मन कहता है कि कल का कलकत्ता आज से भिन्न होगा।"

सुधीर ने अपने पिस्तौल को खोलकर गोलियों को देखा। सब ठीक थीं। फिर इसे बन्द कर जेब में रख लिया। कुछ और कारतूस जेब में रख अनिमा के साथ जाने को तैयार हो गया। अनिमा ने भी अपनी कटार अपने आँचल के नीचे छुपा ली और सुधीर के साथ घर से बाहर निकल गई। घर से निकलते ही अनिमा ने विचार कर लिया था कि उसने अपना काम कहाँ से आरम्भ करना है।

निवारण और श्यामाचरण कॉलेज होस्टल की ओर चले गये। वे दोनों मुसलमानी भेष में आ रहे थे। मार्ग-भर में वह बल रहे मकानों को देखते जाते थे। कहीं कहीं लूट-मार मच रहा था। एक स्थान पर तो उन्होंने औरतों को उठाकर ले जाते हुए लोगों को देखा। यह देख उनके लिए अति कठिन हो गया कि वे अपने हिन्दू होने को छुपा सकें परन्तु दाँत पीसते हुए एक ओर अँधेरे में खड़े हो, वे अपने मन के भावों को कठिनाई से प्रकट होने से रोक सके।

जब वे कॉलेज होस्टल में पहुँचे तो निवारण की आँखें आँसुओं से सरबतर हो रही थीं। पहिले तो होस्टल का दरवाज़ा ही बहुत कठिनाई से खुला। फिर जब भीतर पहुँचे तो जो कुछ देख चुके थे, वह बताने में अपने को अशक्त पाने लगे। होस्टल के विद्यार्थियों में बहुत जोश फैला हुआ था, परन्तु कोई नहीं जानता था कि उस समय क्या किया जाये। श्यामाचरण ने अपनी गली के बाहर की घटनाओं का वर्णन किया और बताया कि किस भाँति आधे से कम हिन्दुओं ने अपने से दुगने मुसलमानों को भगा दिया। उसने मुसलमानों की कायरता का वर्णन करते हुए कहा, "थोड़े-से साहस से पासा पलटा जा सकता है।"

उस होस्टल में डेढ़-सौ के लगभग लड़के थे। सब-के-सब तैयार हो गए। पचास पचास के तीन दल बनाये गए और यह निश्चय किया गया कि होस्टल की इमारत के आस-पास तीन हल्कों में चक्कर काटकर एक घण्टे में पुनः वहीं लौट आया जाये। अपने अपने दल के लड़कों की गिनती कर पुन दूसरे हल्कों में दौरा किया जाये। इस योजना को सबने पसन्द किया और तीनों दल तीन ओर को चल पड़े।

नियत समय में दो दल तो लौट आये परन्तु तीसरा दल नहीं लौटा। इससे यह अनुमान लगाया गया कि उसका किसी से झगड़ा हो गया है। अतएव वे दोनों दल भी उसकी ओर ही चल पड़े। सत्य ही उस दल की एक मुसलमान दल से मुठभेड़ हो गई थी। मुसलमान भागे तो उन्होंने उनका पीछा किया और अपने निश्चित हल्के से दूर निकल

गये। मार्ग में तीन बार मुसलमानों से मुठभेड़ हुई और तीनों बार मुसलमान मार मारकर भगाये गये। इससे उस दल के लोग इतने उत्साहित हुए कि वापिस आना ही भूल गये। जब तीनों दल मिले तो वहीं बाज़ार में ही गणना कर देखा गया कि कोई भी लड़का अनुपस्थित नहीं था। लड़ाई करनेवाले दल में पाँच-छः लड़कों को हल्की चोटें आई थीं। तब वहाँ से नये हल्के बनाकर आगे चल पड़े। इस प्रकार हल्के के बाद हल्के मुसलमानों से खाली होने लगे।

दूसरी ओर अनिमा भवानीपुर में जा पहुँची। वहाँ सिक्खों की एक छोटी सी बस्ती थी। अनिमा कई बार उन लोगों में जाकर उनको अपनी और अन्य हिन्दुओं की रक्षा करने के लिए कह चुकी थी। उसे वे लोग सबसे अधिक उत्साही मालूम हुए थे। इससे उसने उनसे ही काम आरम्भ करने का निश्चय किया। वहाँ पहुँच उसने एक मकान का दरवाज़ा खटखटाया। एक वृद्ध ने खिड़की में से झाँककर देखा और पूछा, "कौन है?"

अनिमा का उत्तर था, "एक हिन्दू स्त्री।"

"क्या चाहती हो?"

"थोड़े से बहादुर वीरों की सहायता।"

वह वृद्ध खिड़की में से पीछे हट गया। ऐसा प्रतीत होता था कि वह मकान में के दूसरे लोगों से राय कर रहा है। लगभग पाँच मिनट के पश्चात् दरवाज़ा खुला। दरवाज़ा खोलने वाला वही वृद्ध था। उसने सुधीर की ओर देखकर पूछा, "यह कौन है?"

"मेरा भाई है।"

"और भी कोई साथ है?"

"नहीं। हम यहाँ ठहरने के लिए नहीं आए। मैं तो यह कहने आई हूँ कि इस प्रकार मकानों के भीतर बैठे जल मरने से, बाहर निकल, इकट्ठे हो, मोहल्ले और नगर की रक्षा करते हुए मरना ठीक नहीं है क्या? वीर पुरुषों का डर के मारे घरों में बैठे रहना अब शोभा नहीं देता।"

"हम नहीं जानते कि क्या करें।"

"कितने सबल पुरुष हैं यहाँ?"

"एक सौ के लगभग। मगर हमारे मुहल्ले में तो कोई आक्रमण करता ही नहीं।"

"तो क्या दूसरे मुहल्लों में, जो माँ बहिनों की इज़्ज़त बिगाड़ी जा रही है, वह आपकी नहीं है?"

"इसी से तो पूछता हूँ कि क्या करें?"

इस समय कुछ और लोग ऊपर से नीचे उतर आए थे। एक ने सन्देह-भरी आवाज में पूछा, "पर तुम कौन हो?"

"मेरा नाम अनिमा है। मैं कई बार पहले भी आपको चेतावनी देने आई थी।" कुछ लोगों ने पहिचान लिया और अचम्भे में बोल उठे, "ओह! अनिमा बहिन, और ये सुधीर बाबू हैं?"

एक और बोल उठा, "बहिन! भीतर आ जाओ।"

"नहीं। इसके लिए न समय है और न आवश्यकता।"

इस पर उस वृद्ध ने कहा, "आपके कहने के अनुसार हमने मुहल्ले की रक्षा का प्रबन्ध तो किया है। अब हम सोच रहे हैं कि मुहल्ले के बाहर भी हम अपना प्रबन्ध करें अथवा न?"

इस समय पड़ोस के मकानों के भी कुछ लोग आकर खड़े हो गए। उनमें से एक युवक बोल उठा, "रक्षा का सब से बढ़िया उपाय विरोधियों पर आक्रमण नहीं है क्या?"

"बिल्कुल ठीक।" सुधीर का उत्तर था।

"परन्तु" अनिमा का कहना था, "आक्रमण करने में स्त्रियों और बच्चों पर हाथ उठाना तो हमारा धर्म नहीं है न।"

"वाह गुरू इससे बचाए।" वृद्ध का कहना था।

"परन्तु वे जो ऐसा करते हैं।" उसी युवक ने पूछा।

अनिमा ने यह कहने वाले की ओर घूमकर कहा, "वीर! हम उनसे अच्छे आदमी हैं।"

इसने सबका मुख बन्द कर दिया। अनिमा ने कुछ सोचकर कहा, "जीवन में कभी ऐसी घड़ियाँ आती हैं, जब जीना बहुत ही तुच्छ बात रह जाती है। सिद्धान्तों के प्रबल संघर्ष में व्यक्तियों के जीवन घास फूस से अधिक दाम नहीं रखते। मैं एक अति निर्बल स्त्री हूँ। मैं अपना जीवन तो बलिदान कर सकती हूँ, पर किसी दूसरे की किसी प्रकार से सहायता नहीं कर सकती। इस पर भी मैं पूछती हूँ कि क्या इस जीवन का मूल्य इतना अधिक है कि सब प्रिय वस्तुओं को, धन, कर्म और सम्भ भी, इस पर न्योछावर किए जा सकते हैं? आप मकान की छत पर चढ़कर देखें और सुनें, कितने ही बच्चों, स्त्रियों और निस्सहाय लोगों की चीत्कार सुनाई देगी। यह सब कहीं घोर पशुपन होने का सूचक है। यदि जाति में सबल, बहादुर और समझदार लोग जीवन के लोभ में य सब उपद्रव होते देखते रहें तो संसार जीने के योग्य रह ही नहीं जाएगा।

"अबलाएँ चीख चीखकर सबलों से अपनी रक्षा की पुकार कर रही हैं। अच्छा, तो लो, अब मैं चली। जो आपको अपना कर्तव्य समझ आये करो।"

अनिमा इतना कह चल पड़ी। इस समय एक वृद्ध ने आगे आकर कहा, 'बेटी अनिमा! सब कलकत्ता ऐसे ही घूमना चाहती हो? यह नगर बहुत लम्बा-चौड़ा है। ठहरो, मैं अपनी टैक्सी ले आता हूँ।"

इससे अनिमा का काम सुगम हो गया। उसे सबसे अधिक सफलता कॉलेजों के होस्टलों में मिली। केवल इतना कहने पर कि हिंदू स्त्रियों और बच्चों पर बलात्कार और अत्याचार हो रहा है, विद्यार्थी लाठियाँ छुरियाँ और हाकियाँ लेकर निकल आए।

अनिमा दोपहर के समय घर पहुँची। जब से उनकी गली के बाहर मुसलमानों का आक्रमण हुआ था, वह आराम से नहीं बैठी थी। चौबीस घण्टे से ऊपर हो चुके थे और वह भाग-दौड़ कर रही थी और अब थककर चूर हो गई थी। घर पहुँची तो उसके पिता घायल हो वहाँ पहुँच चुके थे। उनकी मरहम-पट्टी हो चुकी थी। अनिमा को बताया गया कि

मुसलमानों के एक दल ने उनके पड़ोस में आक्रमण कर दिया तो उसके पिता अकेले ही बन्दूक ले अपने मकान की छत पर चढ़ गए और आक्रमणकारियों को एक घण्टा तक रोके रहे। जब सब कारतूस समाप्त हो गए तो मकान की छतों पर से कूदते-फाँदते वहाँ से निकल भागने के ध्यान में एक मकान को लूट रहे मुसलमानों में जा फँसे। वहाँ पर बन्दूक के कुन्दे से लड़ते हुए निकलने में यह चोट खा गए। इसी समय निवारण कुमार अपने साथियों सहित वहाँ जा पहुँचा और इनको छुड़ा लाया है।

अनिमा इतनी थकी हुई थी कि बातें करते करते ही सो गई। सायंकाल उठी और स्नानादि कर भोजन करने जा बैठी। इस समय इयाम दिन-भर का मेहनत से थका हुआ घर पहुँच गया। उसने यह समाचार अनिमा को सुनाया कि कलकत्ता की अवस्था में परिवर्तन हो गया है। वहाँ कल केवल अल्ला-हू अकबर के नारे सुनाई देते थे, वहाँ आज हर हर महादेव, कालीमाई की जै और सत् श्री अकाल की गर्जना सुनाई देती है। धधकती हुई इवनियाँ शान्त हो रही हैं। अनेकों स्थानों पर हिन्दू-मुसलमानों का डटकर मुकाबिला हुआ था। दो-दो सौ के दल एकत्रित होकर लड़े थे और बिना अपवाद के सब स्थानों पर मुसलमानों ने भागकर जान बचाई थी।

हावड़ा के पुल पर से सैकड़ों के शव गंगा के अर्पण किए गए थे। सहस्रों शव सड़कों और नालियों में लुढ़क रहे थे। बाज़ार वीरान थे। जहाँ मुसलमानों के झुण्ड हाथों में कुल्हाड़ियाँ, बरछे, लाठियाँ और छुरियाँ लिए घूम घूमकर ऊधम मचा रहे थे, वहाँ अब अनिमा और उसके साथियों के प्रयत्नों से दुम दबाकर भागते दिखाई देने लगे थे।

यहाँ तक सुधार के मुहल्ले का सम्बन्ध था, रात में कोई झगड़ा नहीं हुआ था। मुहल्ले के सब लोग अनिमा की प्रोत्साहन शक्ति और साहस से चकित थे और मुक्त कण्ठ से उसकी प्रशंसा कर रहे थे।

अगले दिन कलकत्ता से मुसलमान पैदल, बैल-गाड़ियों, छकड़ों,

मोटरों और बाइसिकलों पर भागने आरम्भ हो गए। दोपहर तक तो भागने वालों की संख्या इतनी अधिक हो गई थी कि कलकत्ता से लोगों की नदियाँ सी बाहर को बहती दिखाई देने लगीं।

३

सोलह अगस्त को प्रातःकाल नसीम और चेतनानन्द ब्रेकफास्ट पर बैठे हुए समाचारपत्र पढ़ रहे थे। चेतनानन्द ने कहा, "सरकार को आज पब्लिक छुट्टी नहीं करनी चाहिए थी।"

"क्यों?"

"इसलिए कि यह आन्दोलन एक गैर सरकारी अन्जुमन की ओर से सरकार के खिलाफ है।"

"नहीं, आप इस 'मूवमेंट' का मतलब नहीं समझे। यह मूवमेंट नहीं है, पैक्ट है। यह सरकार के खिलाफ नहीं है। यह हिन्दुओं के खिलाफ है। फिर बंगाल की सरकार मुसलमानों की है।"

"सरकार तो किसी एक खास फ़िरक़े की नहीं हो सकती।"

"हाँ! पर मुसलमान कोई फ़िरक़ा नहीं है।"

चेतनानन्द विस्मय में नसीम का मुख देखने लगा। नसीम स्टेट्समैन पढ़ती हुई बातें कर रही थी, इससे चेतनानन्द ने समझा कि उसने बे ध्यान में यह बात कह दी है। उसने बात के स्पष्टीकरण के लिए पूछा, "क्या तुम भी यही मानती हो कि मुसलमान एक फ़िरक़ा नहीं है?"

"हाँ, मुसलमान एक क़ौम है।"

"भला यह कैसे और कब से?"

"जब से कांग्रेस ने 'मुस्लिम' फ़िरक़ा माना है। एक फ़िरक़े के लिए पृथक् राज्य नहीं चाहिए।"

"तो कांग्रेस ने भूल की है। यही बात तो अनिमा देवी कहती थीं।"

"देखिए जी! मैं आपको अपने मन की बात बताती हूँ। मैं और हमारा परिवार नेशनलिस्ट मुस्लिम थे। हम मुस्लिम लीग का विरोध

करते थे, परन्तु कांग्रेस ने ही मुल्क की तक़सीम मज़हबी बिना पर मान हमारी पोज़ीशन को खराब कर दिया है। इसी से मैं कहती हूँ कि मुसलमानों के एक क़ौम होने की बात को तो मान लें, मगर इसके नतायज को न मानें, यह तो कांग्रेस के नेता ही कर सकते हैं।'

'तो इसका मतलब यह हुआ कि हिन्दू महासभा और मुस्लिम लीग दोनों एक ही विचार के माननेवाले हैं। तो फिर यह जहाद हिन्दुओं के खिलाफ क्यों है ?"

"इसलिए कि अट्ठानवें प्रतिशत हिन्दुओं ने अपने मत कांग्रेस को दिए हैं, जो मुसलमानों को एक पृथक कौम मानती तो है और उसे एक पृथक् मुल्क देने को भी तैयार है, मगर फिर भी अपने आपको दोनों क़ौमों की मुत्तहिद नुमाइन्दा मानना चाहती है।"

चेतनानन्द इस उत्तर से गम्भीर विचार में पड़ गया। वह अपने सामने रखे 'पोरिज' को धीरे धीरे खाने लगा। नसीम अपना खाना समाप्त कर चुकी थी, इससे पुनः समाचार-पत्र पढ़ने लगी।

चेतनानन्द ने खाना समाप्त किया और उठकर, हाथ धो, कुल्ला कर मकान की खिड़की में जा खड़ा हुआ और बाहर की ओर झाँकने लगा। इस समय भी वह उसी विडम्बना में फँसा हुआ था। वह सोचता था कि उसके पिता ने भी यही बात कही थी, अनिमा भी यही कहती थी और अब नसीम भी कह रही है कि कांग्रेस हिन्दू-मुसलमान दोनों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। तो कांग्रेस ऐसा क्या कहती है ? क्या महात्मा गांधी असत्य कहते हैं अथवा क्या वे बात समझ नहीं सके।

इन्हीं विचारों में वह देख नहीं रहा था कि मकान के नीचे सड़क पर क्या हो रहा है। लोग जोक दर जोक पैदल एक ओर जा रहे थे। छुट्टी के कारण टैक्सी, ट्रामें सब बन्द थीं। चेतनानन्द का ध्यान इनकी ओर नहीं था। एकाएक मुस्लिम नैशनल गार्ड्स का एक जत्था, जिसमें लगभग दो सौ युवक, फ़ौजी वर्दी पहिने कवायद करते आ रहे थे, उस मकान के नीचे से जाते-जाते अल्ला-हू अकबर का नारा लगाने लगा। इससे

चेतनानन्द का ध्यान टूटा। वह देखने लगा कि मकान के बाहर क्या हो रहा है। उसे अनिमा का कहना स्मरण हो आया कि इस दिन मुसलमान झगड़ा करने की तैयारी कर रहे हैं। अभी तक तो उसे इस बात के कुछ भी लक्षण नहीं दिखाई दिए थे।

वह नसीम के इस कहने को कि उस दिन का प्रदर्शन हिन्दुओं के विरुद्ध है, इस बात का सूचक समझ रहा था कि हिन्दुओं पर प्रभाव जमाने का प्रयत्न प्रत्येक प्रकार से किया जायेगा और प्रत्येक प्रकार में लड़ाई झगड़ा भी सम्मिलित है। इससे वह इच्छा कर रहा था कि लड़ाई झगड़ा न हो तो अनिमा का अनुमान ग़लत सिद्ध हो जावे।

अब जलसे में जानेवाले साधारण लोग भी नारे लगाने लगे। इन नारों को सुन उसका मन विक्षुब्ध हो उठा। वह खिड़की से पीछे हट पुनः नसीम के पास आ बैठा। नसीम समाचार-पत्र समाप्त कर चुकी थी और कुछ चिन्ता में बैठी चेतनानन्द की ओर देख रही थी। चेतनानन्द के बैठने पर उसने पूछा "क्या विचार कर रहे थे आप?"

"मैं यही सोच रहा हूँ कि आज के प्रदर्शन का क्या परिणाम होगा। अनिमा कहती थी कि कलकत्ता में मुसलमान झगड़ा करने की तैयारी कर रहे हैं। तैयारी है अथवा नहीं, यदि कहीं झगड़ा हो गया, तो तैयारी की गई ही मानी जायेगी।"

"तो फिर क्या होगा? किसी मकसद (उद्देश्य) से तैयारी गुनाह नहीं हो सकती।"

"यह तो ठीक है। मगर देखो न, कांग्रेस हिन्दुओं को तैयारी से रोकती रही है। यहाँ तक कि केवल इतना कहनेवाले को कि अपने बचाव का प्रबन्ध कर लो, कांग्रेस के प्रधान ने बंद करवाने का यत्न किया। अब यदि फसाद हो गया और हिन्दुओं की हानि हुई तो हिन्दू इसके विषय में क्या सोचेंगे?"

"सोचेंगे क्या? कांग्रेस नेताओं को कौम के गद्दार कहेंगे। जिन्होंने उनको अपना प्रतिनिधि चुना है, वे उनकी रक्षा में ही बाधा डाल रहे

हैं। मैं आपको एक और नुक्ता-निगाह (दृष्टिकोण) से देखने के लिए कहती हूँ। पठानों के खान भाइयों ने कांग्रेस का साथ यह समझ कर दिया था कि हिन्दू और मुसलमान एक क़ौम हैं। जब मज़हबी बिना पर मुल्क की तक़सीम मंज़ूर कर ली है तो क्या खान भाइयों के और आम-तौर पर पठानों के साथ दग़ा नहीं हुआ ? मैं तो कहती हूँ कि आम हिंदुओं ने कांग्रेस को वोट दिया है और अब भी कांग्रेस की हिमायत कर रहे हैं तो कांग्रेस के लीडरों की, बेवकूफ़ी कहिए या ग़द्दारी कहिए, का नतीजा उनको नहीं भोगना चाहिए क्या ?'

इसका चेतनानन्द के पास कोई उत्तर नहीं था। वह अपने मन में सोच रहा था कि कुछ-न-कुछ ख़राबी कहीं है। यह तो वह सोच ही नहीं सकता था कि महात्मा गांधी भूल कर रहे हैं।

चेतनानन्द को चुप देख नसीम ने कहना जारी रखा, "महात्मा गांधीजी ने हमेशा उन मुसलमानों की मिन्नत व समाजत की है, जिन्होंने हिंदुस्तान में हिन्दू और मुसलमानों का दो क़ौम होने का दावा किया है। यह ठीक है कि हम नेशनलिस्ट मुसलमान कांग्रेस का साथ देते रहे हैं, मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि कांग्रेस ग़ैर-नेशनलिस्ट मुसलमानों के नुक्ता निगाह को समझने की कोशिश करती रही है और आख़िर में उन्हीं की बात को मानकर तो हिंदुस्तान के तीन हिस्से मंज़ूर कर लिये हैं।'

चेतनानन्द का मस्तिष्क घबरा उठा। वह सोचने लगा कि व्यर्थ में ही अपने पिता के साथ झगड़ा किया। उसने नसीम की बातों का कुछ उत्तर नहीं दिया। इतने में कुछ लोग भागते और शोर मचाते हुए मकान के पास से गुज़रने लगे। चेतनानन्द पुनः खिड़की में जाकर देखने लगा। लोग भागते हुए जा रहे थे। कोई कोई तो यह कह रहा था, "हिन्दू मुस्लिम फ़साद हो गया है।"

कुछ ही मिनटों में सड़कें ख़ाली हो गईं और लोग केवल बड़े-बड़े लाठियों, छुरियों और बरछों से सुसज्जित, आने जाने लगे।

उस समय नसीम भी खिड़की में बाहर का तमाशा देखने आ खड़ी हुई थी। भवानीपुर में हिंदू आबादी बहुत ज्यादा थी और फिर उस स्थान पर, जहाँ चेतनानन्द का मकान था, प्रायः अफसर रहते थे। इससे मुसलमानों के जत्थे वहाँ से गुजर जाते रहे, परन्तु वहाँ के किसी आदमी अथवा किसी परिवार पर हाथ नहीं उठाया गया।

नसीम और चेतनानन्द जब देखते-देखते थक गए तो खिड़की से पीछे हट, बैठने के कमरे में आ गए। दोनों अपने अपने विचारों में लीन थे और एक-दूसरे से बातें नहीं कर रहे थे। चेतनानन्द ने आज आफिस नहीं जाना था और नसीम के लिए भी कहीं बाहर जाना सुरक्षित नहीं था। इससे दोनों बैठे तो थे, परन्तु अनुभव कर रहे थे कि उस दिन की घटनाओं के विषय में आपस में मत नहीं मिल रहा। दोनों डर रहे थे कि इस विषय पर बात होने से कहीं झगड़ा न हो जाए।

इन्हीं विचारों में बैठे बैठे दोपहर के खाने का समय हो गया। नौकर ने 'लंच' के समय की सूचना दी। दोनों उठकर खाने की मेज़ पर जा बैठे। खाना आया और वे खाने लगे। खाना अभी समाप्त नहीं हुआ था कि मकान के नीचे भारी हल्ला होने लगा। चेतनानन्द ने नौकर को आवाज़ दी, "नासिर! ज़रा देखना क्या हो रहा है!"

नासिर खाने के कमरे में आकर बोला, "हुज़ूर! वो सामने के मकान पर लोगों ने धावा बोल दिया है।"

"सामने, किसके?"

"जी बख्शी बाबू, जिनकी बहुत सी लड़कियाँ हैं और – "

"और क्या?" चेतनानन्द ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा।

नासिर चुप कर गया। वह समझ नहीं सका कि साहब इस सूचना से खुश हो रहे हैं अथवा नाराज़। चेतनानन्द खाना छोड़ उठ खड़ा हुआ और अपने सोने के कमरे में जा अपना पिस्तौल भरने लगा। नसीम समझ गई कि वह सोने के कमरे में क्या करने गया है। अतएव वह भी उठ पड़ी और उसके पीछे-पीछे वहाँ जा पहुँची। उसे

पिस्तौल भर बाहर निकलते देख मार्ग रोक खड़ी हो गई। चेतनानन्द उसका आशय समझ पूछने लगा, "क्यों?"

"आप हिन्दू हैं और उनकी संख्या बहुत अधिक है।"

"मुझे डर नहीं लग रहा। तुम चिन्ता न करो, मैं अभी आता हूँ।"

यह कह, चेतनानन्द नसीम को एक ओर हटाकर, कमरे के बाहर निकल गया। नसीम मुख देखती रह गई। वह मकान के नीचे उतर आया और भीड़, जिसमें प्रायः आस-पास के बँगलों के नौकर और खानसामा थे, की ओर जाने लगा। उसने देखा कि लोग मकान के अन्दर घुस चुके हैं। मकान का दरवाज़ा तोड़ दिया गया है और मकान के अन्दर कोहराम मचा हुआ है। कुछ लोग भीतर से सामान निकाल निकालकर बाहर ढेर लगा रहे थे। एक-दो दियासलाई जला उसे आग लगाने का यत्न कर रहे थे। इससे चेतनानन्द को कुछ अचम्भा हुआ। वह समझ नहीं सका कि सामान लूटकर ले जाया क्यों नहीं जा रहा और यदि आग ही लगानी है तो मकान ही को क्यों नहीं लगाई जा रही।

चेतनानन्द अभी भीड़ से कुछ अन्तर पर ही था कि उसे दो आदमी एक औरत को धकेलकर बाहर लाते हुए दिखाई दिए। यह फणी बाबू की सबसे बड़ी लड़की थी। इसके बाहर निकलते ही एक और आदमी एक और लड़की को कन्धे पर डाले हुए बाहर निकला। इसके पीछे एक और था। चेतनानन्द अधिक सहन नहीं कर सका। वह वहीं खड़ा हो गया और ललकारकर बोला, "ठहरो। कहाँ लिए जा रहे हो इन्हें?"

भीड़ ने घूमकर चेतनानन्द की ओर देखा और उसे, अकेले को, इस प्रकार ललकारते हुए देख, सब खिलखिलाकर हँस पड़े। वे आदमी जो लड़कियाँ उठा लाए थे, बिना चेतनानन्द की ओर ध्यान दिए, भीड़ से बाहर निकल एक ओर को चल पड़े। चेतनानन्द ने भीड़ की हँसी की ओर ध्यान किए बिना उस आदमी की ओर पिस्तौल का निशाना साधा, जो मझली लड़की को कन्धे पर डाले ले जा रहा था। चेतनानन्द उस लड़की को तड़पते और रोते देख रहा था। उसे अपनी

ा ध्यान नहीं था। उसने गोली चला दी। गोली लड़की से जाने
की कमर में लगी और वह वहीं बैठ गया। लड़की उसके कंधे से
कर भूमि पर गिर गई। चेतनानन्द ने तीसरी लड़की को उठाकर
जानेवाले पर भी फायर किया। यह गोली भी निशाने पर बैठी। अब
भीड़ को पता चल गया था कि क्या हो रहा है। इसमें चेतनानन्द
भीड़ को सम्बोधन कर कहा, "भाग जाओ। नहीं तो मार डालूँगा।"
ता मह उसने एक गोली उस पर चला दी, जो सामान के ढेर को
आग लगाने का यत्न कर रहा था। गोली उसके हाथ में लगी और
वह भाग खड़ा हुआ। उसने एक गोली और चलाई। यह एक की
खोपड़ी में लगी। वह तो वहीं चित्त हो गया। इससे भीड़ में भगदड़
मच गई। पन्नी बाबू की सबसे बड़ी लड़की भूमि पर बैठ गई थी और
उसको ले जानेवाला, उसे वहीं छोड़ भाग गया। दो आदमी एक और
लड़की को पकड़े हुए मकान से बाहर निकले। लड़की हाथ-पाँव मारती
हुई छटपटा रही थी। चेतनानन्द ने अब भीड़ को भागते छोड़ लड़की
उठानेवालों पर पिस्तौल ताना और उनको ललकारा। उन्होंने मकान
के बाहर निकल सबको भागते देख लिया था। इसमें बिना बहुत कुछ
विचार किये, लड़की को वहीं छोड़ भाग गये।

मकान के भीतर अभी भी चीत्कार मच रही थी। चेतनानन्द ने
भीड़ को भगाकर मकान की ओर ध्यान किया। वह मकान के भीतर
जाने लगा तो नसीम, जो उसके पीछे आकर खड़ी हो गई थी,
उसका हाथ पकड़कर बोली, "भीतर मत जाइए।" परन्तु चेतनानन्द
नहीं माना। वह अपने को छुड़ाकर मकान में घुस गया। नीचे की
मंज़िल पर कुछ नहीं था। चेतनानन्द भागकर सीढ़ियाँ चढ़ने लगा।
नीचे से नसीम आवाज़ दे रही थी, 'ठहरिये, मैं भी आ रही हूँ।' पर
चेतनानन्द नहीं ठहरा। वह सीढ़ियाँ चढ़ता ही गया।

ऊपर की मंज़िल पर पैशाचिक कृत्य हो रहा था। पन्नी बाबू का
शव एक ओर पड़ा था। छुरे से उसका पेट फाड़ डाला गया था। उसके

कुछ अन्तर पर पणी बाबू की स्त्री भूमि पर चित्त पड़ी हुई थी और एक आदमी उससे बलात्कार कर रहा था। दो आदमियो ने उसके हाथ और टाँगें पकड़ी हुई थीं। इसी प्रकार एक लड़की से भी व्यभिचार किया जा रहा था और वह अचेत पड़ी हुई थी। दो छोटी-छोटी लड़कियाँ कमरे के एक कोन में सहमी खड़ी थीं।

चेतनानन्द ने कमरे में दाखिल होते ही उस पर गोली चलाई, जो बेहोश लड़की से व्यभिचार कर रहा था। उसको समाप्त कर चेतनानन्द ने अपना पिस्तौल उस पर ताना, जो पणी बाबू की स्त्री से व्यभिचार करनेवाला था, परन्तु पिस्तौल खाली हो चुका था। वे, जो स्त्री के हाथ और पाँव पकड़े हुए थे, अपने साथी को मरता देख, हाथ-पाँव छोड़ उठ, चेतनानन्द पर लपके। चेतनानन्द ने पणी बाबू के पेट में भोंकी हुई छुरी निकाल ली परन्तु पूर्व इसके कि वह छुरी निकाल सीधा हो पाता, एक आदमी ने उसके सिर पर लाठी से वार किया। इसी समय फट्-फट्-फट् तीन गोलिया चलीं और तीनों बलात्कार करनेवाले घायल हो बेकार हो गये।

चेतनानन्द लाठी के प्रहार से अचेत हो भूमि पर गिर गया था। नसीम, जिसने अन्त मे गोलियाँ चलाइ थीं, कमरे का दृश्य देख काँप उठी। उसकी आँखों के सामने सब कुछ घूमने लगा। वह वहीं बैठ गइ और अपने मन को काबू मे करने का यत्न करने लगी। कितने ही काल के पश्चात् उसे चेतना हुई। मन को कड़ा कर उसने मकान की खिड़की में से अपने नौकर नजीर को आवाज़ दी। नजीर अपने मकान के नीचे खड़ा अपने साहब का कारनामा देख रहा था। जब बहुत देर तक उसके मालिक मकान से नीचे नहीं उतरे, तो उसने समझ लिया था कि वे मारे गए होंगे। अब मालकिन को आवाज़ देते देख वह घबराया। फिर सचेत हो पणी बाबू के मकान पर चढ गया।

नसीम ने कहा, "कासिम को बुलाकर साहब को उठाकर ले चलो।" वह स्वय पणी बाबू की लड़की को सचेत करने में लग गइ। इस समय

तक दूसरी लड़कियाँ भी वहाँ आ गई थीं। उनकी सहायता से बेहोश लड़की सचेत की गई। इन सबको और फणी बाबू की स्त्री को वह अपने साथ अपने घर ले आई। नसीम ने चेतनानन्द की मरहम-पट्टी के लिए डॉक्टर को बुलाने का यत्न किया, परन्तु कोई भी डॉक्टर घर से बाहर निकलने का साहस नहीं करता था। विवश पट्टी उसको स्वयं ही करनी पड़ी।

४

झगड़े के दूसरे दिन सायंकाल तक कलकत्ते की अवस्था में भारी परिवर्तन आ चुका था। रात के समय मकान की छत पर चढ़कर देखने पर अनिमा इत्यादि ने देखा कि यद्यपि आग की घटनाएँ कम हो रही थीं, इस पर भी नगर में चारों ओर चीत्कार मचा हुआ था। अन्तर यह आ गया था कि पिछली रात तो केवल 'अल्ला-हू अकबर' के नारे सुनाई देते थे और इस रात इन नारों के साथ, 'हर हर महादेव' के नारे भी पर्याप्त संख्या में सुनाई देने लगे थे।

निवारण और श्यामाचरण बहुत रात बीते लौटे। अनिमा के पूछने पर उन्होंने बताया कि अब बाजारों में हिन्दुओं के लिए चलना फिरना सुगम हो गया है। मुसलमान लूट का माल ले लेकर भागने आरम्भ हो गए थे। इस पर अनिमा ने कहा, "कुछ ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए कि मुसलमान चुराई हुई लड़कियों को न ले जा सकें।" इस विचार के उठते ही निवारण पुनः होस्टल जाने को तैयार हो गया। अनिमा छः घण्टे सो चुकने के कारण अपने को सर्वथा सबल और सचेत पाती थी। वह भी साथ जाने को तैयार हो गई।

जब दोनों एक कॉलेज के होस्टल में पहुँचे तो वहाँ कुछ गर्ल्ज कॉलेज की लड़कियाँ इसी प्रयोजन के लिए पहले ही पहुँची हुई थीं। अनिमा के कहने पर पचास पचास लड़कों के झुण्ड दो-दो तीन तीन लड़कियों को साथ लेकर कलकत्ता से बाहर जाने वाली सड़कों पर जाकर खड़े हो गए। मुसलमान भारी संख्या में भागकर जा रहे थे। इन

विद्यार्थियों ने उन्हें रोक-रोककर, देख भालकर जाने दिया।

अनिमा अभी घर आकर बैठी ही थी कि किसी ने आकर बताया कि भवानीपुर में सिक्खों ने मुसलमान अफ़सरों के मकानों पर धावा बोल दिया है।

"क्या वहाँ कोई मुसलमान अफ़सर रहता भी है?"

"कई हैं। सुना है कि एक ने तो अपने पड़ोसी हिन्दू अफ़सर की सात लड़कियों को घर में डाल लिया है।"

"कौन है वह?"

"नाम नहीं जानता। सुना है कि कोई पब्लिसिटी ऑफिसर है।"

"अरे! वह तो हिन्दू है।"

"आप भूल तो नहीं रहीं?"

"नहीं, उसका नाम चेतनानन्द है।"

"तब तो ग़ज़ब होने वाला है। बहुत से सिक्ख लोग कह रहे थे कि आज रात को उसके घर हल्ला बोला जायेगा।"

अनिमा यह समाचार पा बैठी नहीं रह सकी। वह तुरन्त उठकर चलने को तैयार हो गई। सुधीर भी साथ चल पड़ा। उसी गली में एक आदमी की अपनी मोटर-गाड़ी थी। अब नगर में मुसलमानों का डर कम हो गया था, इस कारण वह अपनी मोटर में अनिमा को ले जाने को तैयार हो गया। दोनों उसकी गाड़ी में सवार होकर भवानीपुर जा पहुँचे।

सच ही सिक्खों के एक जत्थे ने चेतनानन्द के मकान को घेरा हुआ था और घर के भीतर से बाहर भीड़ पर गोलियां चलाई जा रही थीं। सिक्ख लोगों में से गोली चलने से दो तो मौत के घाट उतर चुके थे और तीन से अधिक बुरी तरह घायल हो गए थे। अनिमा के आने से पूर्व सिक्खों में निराशा फैल रही थी। उसे आया देख उनमें पुन उत्साह भर आया और वे 'सत् श्री अकाल' के तथा 'अनिमा देवी की जय' के नारे लगाने लगे। अनिमा के पूछने पर उन्होंने बताया, "हमें बताया गया है कि उस सामने वाले मकान के बाबू की सात लड़कियाँ इस

पंजाबी मुसलमान ने अपने मकान में छुपा रखी हैं।"

"पर यह तो मुसलमान नहीं है।"

"नहीं बहिन जी! आप नहीं जानतीं। यह मुसलमान है और हमें मालूम हुआ है कि यहाँ के प्रीमियर साहब का सम्बन्धी है।"

"भाई जी! मैं उसे जानती हूँ। यह हिन्दू है।"

"पर उसने मेरे भाई को मार डाला है। मैं उसकी जान लिए बिना नहीं छोड़ूँगा।"

"नहीं, यह नहीं होगा।"

इस समय मकान के भीतर से एक गोली और चली और अनिमा के पास खड़े उस सिक्ख को लगी जो कह रहा था कि अपने भाई का बदला लिए बिना नहीं मानेगा। हा! कर वह वहीं लोट गया।

अनिमा ने देखा कि मकान के भीतर से गोली चलनी बन्द करवानी चाहिए, अन्यथा फसाद बढ़ जायगा। सिक्खों ने समझा कि गोली अनिमा देवी पर चलाई गई है। इससे क्रोध और जोश में भरकर सिक्ख मकान की ओर लपके। अनिमा उनको रोकने के लिए ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी, "ठहरो! ठहरो! वीर भाइयो! ठहरो।"

इस पर भी जब वे नहीं ठहरे तो अनिमा भागकर उन सब के आगे जा खड़ी हुई। मकान में से गोलियाँ चल रही थीं और सिक्ख धड़ाधड़ घायल हो गिर रहे थे। इस पर भी अनिमा ने साहस नहीं छोड़ा और भागकर सीढ़ियों पर आ पहुँची। एक सिक्ख उसके आगे था और हाथ में नंगी कृपाण लिए सीढ़ियों पर चढ़ रहा था। अनिमा ने नीचे से उसकी टाँग पकड़ ली। वह सिक्ख नीचे लुढ़क गया। इससे अनिमा सब से आगे हो गई। उसने भुजाओं को फैलाकर सीढ़ियों का मार्ग रोककर अपने पूरे ज़ोर से चिल्लाकर कहा, "वीरो, ठहरो! क्यों व्यर्थ में अपनी जान गँवा रहे हो? यह हिन्दू का घर है। क्यों आपस में लड़कर एक-दूसरे की हत्या कर रहे हो? लौट जाओ। मैं गोली चलनी बन्द करवाती हूँ।"

सिक्ख अनिमा के कहने पर रुक गए। इस पर भी एक ने कहा, "पर वे तो गोली चला रहे हैं।"

"तुम सब मकान से दूर हट जाओ। मैं उनको मना करती हूँ। जल्दी करो, पीछे हट जाओ।"

अनिमा की आँखों से विशेष चमक निकल रही थी। सिक्ख इसे देख सहम गए और सीढ़ियों से नीचे उतर मकान से दूर हट गए। परन्तु ज्यों ही अनिमा ने सीढ़ियों पर चढ़ने के लिए मुख मोड़ा कि सीढ़िया के ऊपर से किसी ने गोली चला दी और यह अनिमा के कंधे पर लगी। अनिमा ने ऊपर को देखा। नसीम ऊपर खड़ी हाथ में पिस्तौल लिए सीढ़ियों की रक्षा कर रही थी। गोली लगने से अनिमा की आँखों के सामने तारे घूमने लगे। इस पर भी उसने दीवार का आश्रय लेकर कहा, "नसीम बहिन! यह क्या कर रही हो? देखो, मैं मौन हूँ। जल्दी मुझे ऊपर आने दो। नहीं तो सब बिगड़ जायेगा।"

नसीम ने अनिमा को देखा और पहिचान लिया। उसके मुख से एकाएक निकल गया, "तुम!" फिर एक क्षण में यह समझ कि यही आक्रमण करने वालों की नेता है, बोली, "देखो! मैं कहती हूँ लौट जाओ, नहीं तो गोली चला दूँगी।"

अनिमा समझ रही थी कि उसका विश्वास नहीं किया जा रहा। इस पर भी उसने कहा, "नसीम बहिन! मैं तुम्हारी शत्रु नहीं हूँ। देखो, वे लोग फिर आ जायेंगे। मुझे मकान की खिड़की में से उन्हें समझाने दो।"

पर नसीम समझ नहीं रही थी। अनिमा ने पुनः कहा, "बहिन नसीम! मैं तुम लोगों को बचाने आई हूँ। पीछे हट जाओ। देखो मैं पहले ही घायल हो गई हूँ। कहीं ऐसा न हो कि उनको हटाए बिना ही बेहोश हो जाऊँ।"

नसीम को इस पर भी विश्वास नहीं आया। उसने पिस्तौल तान लिया और कहा, "हट जाओ, नहीं तो मार डालूँगी।"

पूर्व इसके कि वह अनिमा पर दूसरी गोली चलाये, पीछे से किसी ने

हाथ पकड़ लिया। यह चेतनानन्द था। उसके सिर पर पट्टी बँधी थी। चेतनानन्द ने नसीम को कहा, "नसीम डीयर! घबराओ नहीं! इसे आने दो। अकेली ही तो है।"

नसीम एक ओर हट गई। अनिमा ऊपर की मंजिल पर पहुँची तो चेतनानन्द ने उसके कन्धे से रक्त बहते देख पूछा, "ओह! घायल हो गई हो अनिमा देवी! इधर आओ, रक्त बन्द होना चाहिए।"

"ठहरो। मैं नीचे खड़े लोगों को शान्त कर लूँ। मुझे न देख वे उपद्रव करने लगेंगे।"

अनिमा खिड़की में चली गई। उसने देखा कि नीचे के लोग जोश में उतावले हो रहे हैं। उसने हाथ में रूमाल पकड़कर, लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए हिलाया और अपने पूरे बल से ऊँची आवाज में कहा, "वीरो! मैं आपको कहती हूँ कि यह एक हिन्दू का घर है। वे लड़कियाँ यहाँ सुरक्षित हैं।"

अनिमा ने चेतनानन्द से लड़कियों के विषय में पूछा। चेतनानन्द ने लड़कियों को वहीं बुला दिया। अनिमा ने उन लड़कियों को अपने साथ खिड़की में खड़ा कर नीचे खड़े लोगों से कहा, "यही वे लड़कियाँ हैं। इनको बाबू चेतनानन्द ने मुसलमानों से छुड़ाया है। इनके पिता को कल कुछ गुण्डे मुसलमानों ने मार डाला था। तब से ये लड़कियाँ इस घर में रखी जा रही हैं।"

नीचे खड़े लोगों ने अनिमा देवी की जय के नारे लगाए और फिर अपने घायलों और मारे गए लोगों को उठाकर चल दिए। इस समय सुधीर भी ऊपर आ गया और अनिमा के कन्धे से रक्त बहता देख चिन्तित हो बोला, "अनिमा! यह देखो खून है।"

चेतनानन्द ने सामान लाकर अनिमा के पट्टी कर दी और वहीं ठहर जाने को कहा। अनिमा वापस घर जाना चाहती थी। इससे वह बोली, "नहीं, अब मुझे जाने दीजिए। दो दिन से गिरीश बाबू का कोई समाचार नहीं मिला। मैं उनका पता पाने जा रही हूँ।"

"उनको यहीं बुला लो न !" नसीम ने मुस्कराते हुए कहा।
"यह है तो ठीक, परन्तु मार्ग में उनकी रक्षा कौन करेगा ?"

५

कलकत्ता में फ़साद के समाचारों को सुन सिन्ध के एक मुस्लिम लीगी नेता ने प्रसन्नता से फूलते हुए कहा, "अब हिन्दुओं को पता चला है कि मुस्लिम लीग की राय न मानने का क्या परिणाम हो सकता है। हमें उम्मीद है कि इससे हिन्दुओं के होश ठिकाने आ जायेंगे।"

फ़साद के पहले दो दिन के समाचारों पर तो मुसलमान बगलें झाँकते रहे, परन्तु दूसरे दिन की रात और तीसरे दिन के समाचारों से उनके मुख विवर्ण हो गए। अब उन्होंने हिन्दुओं को गाली देनी आरम्भ कर दी। वे कहने लगे कि फ़साद हिन्दुओं ने आरम्भ किया था, उनकी बहुत तैयारी थी, इत्यादि।

तीसरे दिन बंगाल के प्रीमियर और कांग्रेसी नेताओं को हिन्दू-मुसलमानों में सुलह करवाने की चिन्ता होने लगी। बंगाल के गवर्नर महोदय ने भी अपना वक्तव्य दे डाला। प्रीमियर साहब और कुछ कांग्रेसी नेता मोटर में घूम घूमकर एकता रखने के पाठ देने लगे।

बंगाल के नेता तो इस डायरेक्ट ऐक्शन से घबरा उठे और वे इस घटना की जाँच की माँग करने लगे। इसके कुछ ही दिन पीछे दिल्ली में कांग्रेसी नेताओं ने वाइसराय के कौंसिल की मेम्बरी स्वीकार कर ली। अतएव यह प्रश्न देश में बल पकड़ने लगा कि भारत सरकार की ओर से इस घटना की जाँच होनी चाहिए। भारत-सरकार और बंगाल सरकार में इस विषय पर क्या-क्या बातचीत हुई, कहना कठिन है। इतना स्पष्ट है कि कलकत्ता के फ़साद की जाँच करने के लिए बंगाल की सरकार ने ही एक कमेटी नियत कर दी। देश भर के हिन्दुओं को इस पर असन्तोष था। वे चाहते थे कि जाँच भारत सरकार की ओर से हो। इस फ़साद के मामले में वे बंगाल सरकार को भी दोषी मानते थे। इससे उनका कहना था कि एक अपराधी

भला अपनी क्या जाँच करेगा।

बंगाल से बाहर के मुसलमानों को पहिले तो यह समझ आया कि कलकत्ता के हिन्दुओं की भारी दुर्गति हुई है। इस पर उन्होंने भारी खुशियाँ मनाईं। एक मुसलमान नेता ने तो यहाँ तक कह दिया कि हिन्दुओं को अपनी दुष्टता का फल मिला है। परन्तु ज्यों-ज्यों उनको पूर्ण समाचार मिले तो वे गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे। वे जो कुछ देखते थे, वह उनके विचार में अनहोनी घटना थी। उनके लिए मुसलमानों का पीटा जाना एक असम्भव बात थी। छोटे दर्जे के मुसलमान तो भयभीत थे और ऊँचे दर्जे के मुसलमान नेता डायरेक्ट ऐक्शन की असफलता का बदला लेना चाहते थे।

इस विषय पर तार भेजे गए, गुप्त गोष्ठियाँ हुईं और कलकत्ता से अधिक अनुकूल क्षेत्र ढूँढा गया। बंगाल के पूर्वी भाग में नोआखाली के थाना बेगमगंज, रामगंज और लक्ष्मीगंज इस नवीन हत्याकाण्ड के लिए चुने गए। बंगाल के मुसलमानों को इस काम के लिए अयोग्य समझ, पंजाब और सूबा सरहद से गुण्डों को लाया गया।

जब महात्मा गांधी अपनी अहिंसात्मक नीति का पाठ हिन्दुओं को पढ़ा रहे थे और भारत-सरकार की अन्तरिम वाइसराय की कौंसिल के कांग्रेसी नेता राजधानी में पार्टियाँ उड़ा रहे थे, डायरेक्ट ऐक्शन की दूसरी कड़ी सम्पन्न की गई। नोआखाली में हिन्दू स्त्रियों और लड़कियों के साथ भारी संख्या में बलात्कार किया गया और उनका अपहरण किया गया। गाँव-के-गाँव जला दिये गए। इस हत्याकाण्ड में भी बंगाल के सरकारी अफसरों ने भारी सहायता की। वाइसराय की अन्तरिम सरकार मुख देखती रह गई। बंगाल का मजदूर गवर्नर दार्जिलिंग की ठण्डी हवाएँ लेता रहा। बंगाल का प्रीमियर दंगा रोकने में विवशता प्रकट कर दार्जिलिंग में गवर्नर से मिलने चला गया।

कांग्रेस के प्रधान श्री कृपलानी जी हवाई जहाज में उन इलाकों के ऊपर घूमने गए, जहाँ बलवा हो रहा था और उन्होंने मुसलमानों के जोरों

ज़ुल्म (हिंसा और अत्याचार) का विवरण समाचार-पत्रों में प्रकाशित किया। परन्तु सरकार ने न तो वास्तविक अपराधियों को पकड़ने का यत्न किया और न ही भविष्य में होनेवाले दंगों को रोकने का कोई उपाय। देश-भर के हिन्दू, सरकार की और कांग्रेसी नेताओं की अकर्मण्यता देख तिलमिला उठे।

इस समय कई लड़कियाँ नोआखाली से भगाकर बिहार के ज़िला आज़मगढ़ में लाई गईं। हिन्दुओं को सन्देह हो गया और झगड़ा हो गया। परिणाम यह हुआ कि बिहार के कई ज़िलों में फ़साद हुआ। बिहार में हिन्दुओं की संख्या अधिक थी। इस कारण मुसलमान बुरी भाँति पिटे। इस समय बिहार की प्रान्तीय-सरकार और केन्द्र की सरकार ने दंगे को रोकने का पूरा प्रयत्न किया। अन्तरिम-सरकार के उप प्रधान पण्डित जवाहरलाल नेहरू, हवाई जहाज़ में पटना पहुँचे और उनके आदेश से झगड़ेवाले क्षेत्रों में सेना भेजी गई। तीन दिन में झगड़ा शान्त हो गया। केन्द्र की सरकार ने प्रान्तीय सरकार पर दबाव डालकर लाखों रुपये पीड़ित मुसलमानों की सहायता के लिए स्वीकार करवा दिए।

बंगाल-सरकार की ओर से कलकत्ते में झगड़े की जाँच आरम्भ तो हुई, परन्तु यह जाँच पूरी नहीं हो सकी। चेतनानन्द इन सब घटनाओं को देख रहा था। नसीम की अवस्था विचित्र थी। वह यूँ तो कांग्रेस की नीति को ठीक नहीं समझती थी, तो भी उसे कलकत्ता और नोआखाली में मुसलमानों द्वारा किए गए हत्याकाण्ड अरुचिकर लगे थे। चेतनानन्द इन दिनों गम्भीर विचार में मग्न रहता था। कार्यालय में सब काम मशीन की भाँति करता था, परन्तु काम में अब उसकी रुचि नहीं रही थी। घर पर वह खाना खाता और सोता था। उसे सब-कुछ ऐसा लग रहा था, मानो स्वप्न है। नसीम अपने पति के मन की अवस्था को समझ रही थी और एक दिन झगड़ा होने की आशंका कर रही थी। वह तो चाहती थी कि उनका पति-पत्नी का सम्बन्ध राजनीतिक कीचड़ से ऊपर रहे परन्तु उसके मन में भय था कि ऐसा रह नहीं सकेगा। इससे

वह भी चिन्तित रहने लगी थी। एक समस्या और उत्पन्न हो गई थी। उसके पेट में तीन महीने का बच्चा था।

चेतनानन्द दंगे के दूसरे दिन अनिमा से मिला था और उसके पश्चात् वह उसे देख नहीं सका था। उसके मन में उससे मिलकर उसके विषय में अधिक जानने की लालसा दिन प्रतिदिन बढ़ रही थी। वह अपने कार्यालय से उसके घर का पता मालूम कर उसका पता करने गया, परन्तु वह मकान जलकर भस्म हो चुका था। आस पास के लोगों से पूछने पर यह पता नहीं चला कि अनिमा और उसके पिता कहाँ गए हैं।

एक दिन उसे सुधीर के दर्शन हुए। वह रॉयल कापे में चाय पी रहा था। सुधीर को कापे में आकर एक खाली मेज़ पर बैठते देख चेतनानन्द स्वयं उठकर उसके पास जा पहुँचा।

नमस्कार कह चेतनानन्द उसके सामने की कुर्सी पर जा बैठा। सुधीर उसे पहिचान नहीं सका। इससे नमस्कार का उत्तर देकर प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा।

"आपने मुझे पहिचाना नहीं?" चेतनानन्द का प्रश्न था।

"क्षमा करें। मुझे स्मरण नहीं आ रहा कि आपको कहाँ देखा है।

"आपने मुझे कभी नहीं देखा?"

"नहीं, देखा नहीं। देखा तो है परन्तु याद नहीं आ रहा कि कहाँ?"

"देखिए। मैं आपको याद दिलाता हूँ। सत्रह अगस्त की रात को आप एक लड़की के साथ मेरे मकान में, मुझको सिक्खों के एक खूंखार जत्थे से बचाने आए थे। मैं उन दो दिन की घातों को भूल नहीं सकता। उन दिनों की घटनाएँ और सब देव लोग मुझको भलीभाँति याद हैं।"

"ओह! आप बाबू चेतनानन्द हैं। क्षमा करें। उन दिनों में मैंने जो-कुछ देखा था, वह इतना अधिक था कि सब कुछ याद रखना न तो मैं उचित ही समझता हूँ और न ही सम्भव।"

"विचित्र है। खैर छोड़िए इस बात को। आप अनिमा देवी का पता बता सकते हैं क्या?"

"अनिमा देवी ?" सुधीर ने विस्मय में पूछा। "तो आप उस लड़की को जानते थे, जो आपकी रक्षा करते-करते आपकी बीवी के हाथों ही घायल हुई थी ?"

"पब्लिसिटि डिपा मेण्ट में वह मेरी स्टीनो थी।"

"वह आजकल दिल्ली में है। उसके पिता का देहान्त हो गया था और उससे प्रेम करने वाले गिरीश बाबू दंगे के दिनों में आग की झपट में आ, इस प्रकार झुलस गए थे कि अपनी आँखें खो बैठे। उनके पिता अब उनको चिकित्सा के लिए विपाना ले गए हैं। अनिमा देवी उनके साथ जाना चाहती थीं, परन्तु उनकी माँ नहीं मानी।"

"आपका उससे कोई चिट्ठी आती है ?"

"नहीं। मेरा उससे सम्बन्ध उसके पिता के कारण था। वे बंगाल के पुराने क्रान्तिकारी थे। मैं उनका मान करता था पर वह लड़की ठीक अपने पिता के समान ही काम में निष्ठा रखती थी।"

"मैं उसका पता जानना चाहता था।"

"मुझको बहुत शोक है। मैं स्वयं नहीं जानता।"

उस रात चेतनानन्द ने अपना, नौकरी छोड़ने का निश्चय नसीम से कह दिया। नसीम इस घोषणा को अपने उससे सम्बन्ध के टूटने का प्रथम चरण समझती थी। उसने विस्मय में पूछा, 'क्यों ?"

"इस नौकरी में मैं अपनी आत्मा की हत्या कर रहा हूँ।"

"नौकरी तो नौकरी ही है। अपने को कुछ तो दूसरों के अधीन करना ही होता है।"

"कुछ की बात नहीं। यहाँ तो अपना सर्वस्व ही देना पड़ रहा है। देखो प्रिये! इन हिन्दू-मुसलमान दंगों को देखकर तो मेरी यह धारणा बन गई है कि अभी हिन्दू मुसलमान एक कौम नहीं बन सकती। इसके लिए अभी कुछ सदियाँ और व्यतीत होनी चाहिएँ।"

"यह तो ठीक है, परन्तु इसका नौकरी से क्या ताल्लुक है। लोग दुश्मन की नौकरी भी तो करते हैं। लोग देश विदेश में नौकरी करने जाते

हैं। आप ऐसा ही समझ लीजिए।"

"यह ठीक है, परन्तु एक ऐसी क़ौम की, जिससे जंग छिड़ जाये, नौकरी नहीं हो सकती। उसके देश में या तो कैदी होकर, या जासूस बन कर रहा जा सकता है। मैं कैदी बनकर रहना नहीं चाहता और मैं जासूस का काम करने के सर्वथा अयोग्य हूँ।"

"पर हिंदू मुसलमानों में जंग कबसे छिड़ी है?"

"जब से मुस्लिम लीग ने डायरेक्ट ऐक्शन को आरम्भ किया है।"

"पर देखिए! महात्मा गांधी भी तो इन दंगों की निन्दा कर रहे हैं। और कांग्रेस के नेता लोग बिहार में हिन्दू-मुस्लिम सुलह कराने की कोशिश कर रहे हैं।"

"नहीं! उनके करने से ऐक्य नहीं होगा। न ही यह ऐक्य का ढंग है। इससे तो मुझे एक बात ही समझ आ रही है। भारत में दो पक्ष हैं। एक मुसलमान और दूसरे हिन्दू। अँग्रेज़ी राज्य तो समाप्त हो चुका है। इसलिए अँग्रेज़ हिन्दू-मुसलमान की शक्ति हथियाने के लिए जंग में एक पक्ष लेकर देश में फूट डलवाने का यत्न कर रहे हैं। वे मुसलमानों का पक्ष ले रहे हैं। कांग्रेस भी अपनी नासमझी के कारण मुसलमानों का पक्ष ले रही है। इस समय हिन्दू अपने नेताओं से दगा दिए जाने पर अकेले रह गए हैं और स्थान-स्थान पर पिट रहे हैं।

"इस जंग में मैं वही अभिनय नहीं करना चाहता जो कांग्रेस कर रही है। यह अपने लोगों से, हिंदुस्तान के बहुमत से, दग़ा है।"

"तो फिर आप क्या करेंगे? खाना-पीना कहाँ से चलेगा? और यह," उसने अपने पेट में के बच्चे की ओर संकेत कर कहा, "भी तो कुछ माँग कर रहा है।"

"मज़दूर, भंगी और चमारों के भी तो बच्चे होते हैं। उनका भी तो पालन पोषण होता है। जो उनकी देख भाल करता है, वह इसकी और हमारी भी देख भाल कर सकता है।"

"मुझसे तो ग़रीबी का जीवन व्यतीत नहीं हो सकता।"

"तुम्हारे लिए मैं अपने पिताजी से क्षमा माँग सकता हूँ। मुझे पूर्ण आशा है कि वे तुम्हारे लिए और इस होने वाले बच्चे के लिए रहन सहन का प्रबन्ध कर देंगे।"

"तो ऐसा करिए। कुछ दिन की छुट्टी लेकर लाहौर चलिए और वहाँ अपने पिताजी से सुलह कर लीजिए। जब सब बात स्पष्ट हो जाए तो नौकरी छोड़ दीजिएगा।"

"मेरी पिताजी से सुलह के साथ नौकरी का कोई सम्बन्ध नहीं है। नौकरी से तो मैं कल त्याग-पत्र दे दूँगा। पिताजी मुझको क्षमा करते हैं या नहीं, इसका नौकरी से सम्बन्ध कैसे हो सकता है?"

"यदि उन्होंने क्षमा न किया तो?"

"तो मैं कोई काम कर लूँगा। दिल्ली में वकालत करने का यत्न करूँगा।"

"और यदि न चली तो?"

"जैसी भी चलेगी, वैसा ही निबाह करेंगे।"

तबलीग

१

सदाशिव और खनीज़ा खुशीराम के घर खाने पर आए और दोनों परिवारों में परिचय बढ़ने लगा। खुशीराम ने लक्ष्मी की खोज दरगाह पीर शाह मुराद में करवाने का प्रयत्न तो किया ही था, साथ ही खनीज़ा से, जो कुछ भी मालूम हो सके, जानने का यत्न जारी रखा। इस अर्थ उसने खनीज़ा और सदाशिव से घनिष्ठता बनाए रखी। राधा और खनीज़ा की परस्पर मेल-मुलाकात दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। इसके साथ खनीज़ा की माँ से भी भेंट होने लगी।

एक दिन राधा खनीज़ा के यहाँ आई हुई थी कि खनीज़ा की माँ भी वहाँ आ पहुँची। दोनों में बहुत स्नेह का व्यवहार उत्पन्न हो चुका था। इस कारण खनीज़ा की माँ राधा से हर्ष से मिली और दोनों खनीज़ा को अपने बीच में बैठाकर बातें करने लगीं।

"आप से कई दिन से मिलने को मन कर रहा था, सो बहुत अच्छा हुआ कि आप मिल गई हैं।"

"मैं आपकी बहुत आभारी हूँ कि आप भी मुझे याद करती हैं। खनीज़ा तो कहती है कि उसका मुझसे स्नेह हो गया है, अब आपके स्नेह की भी मैं पात्र बन रही हूँ, यह सुन बहुत खुशी हो रही है।"

"राधा देवी जी! आपसे कौन मुहब्बत नहीं करेगा। मगर मैं तो एक खास बात आपसे पूछना चाहती हूँ। आप यह तो जानती ही हैं कि वली इब्राहीम साहब ने खनीज़ा को अपनी लड़की बनाया हुआ है और

वे ही इसका बचपन से इस्तेमाल करते रहे हैं। इस वक्त भी जो कुछ
अगर रखती हूँ, यह सब उन्हीं की बदौलत है। इससे वे देखते रहते हैं
कि किस-किस से इसकी मुलाकात होती रहती है। वे आपकी बाबत भी
कई बातें पूछते रहते हैं। मुझे आपकी कई बातों का पता नहीं और
उनके जानने की ख्वाहिश दिल में बन बनी कुदरती है।"

"मेरी तो कोई बात छुपी नहीं और सनोबर सब कुछ जानता है।"

"इस पर भी बहुत-कुछ जानने योग्य रह जाता है। मसलन आपने
इस्लाम क्यों छोड़ा?"

"रस्मी तौर पर तो मैंने इस्लाम नहीं छोड़ा। हाँ, इस्लाम की कुछ
बुरी बातें ज़रूर छोड़ बैठी हूँ। साथ ही जात-पात को मैं नहीं मानती।
मैं एक परमात्मा को मानती हूँ। मैं बुत-परस्त नहीं हूँ। इस तरह इस्लाम
की बहुत-सी अच्छी बातें तो मैं अब भी मानती हूँ।"

"पर आपने अपना नाम क्यों बदल लिया है?"

"राधा कहना ज़्यादा आसान और मीठा है इसलिए।"

"आप मुहम्मद साहब पर ईमान रखती हैं क्या?"

"मैं उनकी सब बातों को नहीं मानती। मसलन ज़िम्मियों को दोज़ख
की आग में जलना पड़ेगा, यह मैं ठीक नहीं समझता।"

"यह तो मुश्किल है। हज़रत पर ईमान का भी इन्कार कर दिया है
यान।"

"इसलिए लोग मुझे मुसलमान नहीं कहते। मगर मैं अपने को न
ी काफ़िर समझती हूँ न ही इस्लाम से बाहर। हम इन्सान हैं, इन्सा
यत हमारा मज़हब है। अगर वह इस्लाम है तो मैं मुसलमान हूँ और
र वह हिन्दू धर्म है तो मैं हिन्दू हूँ। इन्सान का सबसे बड़ा ख़ासा
ल से काम लेना है। यह ख़ुदा ने ही दी है और अक़्ल यही कहती
के हर बात को सोच-समझकर मानना चाहिए।"

"मगर हिन्दुओं की बहुत-सी बातें बेवकूफ़ी की सी हैं।"

"मैं ऐसी बातों को नहीं मानती। देखिए, हिन्दुओं में छुआछूत है।

मैं इसमें यकीन नहीं रखती। हिन्दुओं में ऊँच-नीच का मसला है, मेरा उसमें एतकाद नहीं है।"

"तो हिन्दू आपको अपने से बाहर नहीं कर देते क्या?"

"हिन्दू क्या कोई अहाता है या कोई घेरा है, जिससे बाहर कोई किया जा सकता है? यह तो एक निहायत ही वसीह मैदान, या यूँ कहो कि एक फ़िज़ा है, जिसकी हद-बन्दी नहीं हो सकती और जिसकी हदबन्दी नहीं, उसके भीतर और बाहर का सवाल ही पैदा नहीं होता।"

"मगर हिन्दू लोग अपने ख्याल से नापाक लोगों को अपने से बाहर कर देते हैं। मेरी अपनी ही कहानी है। मैं एक ब्राह्मण की लड़की हूँ। आप सुनकर हैरान होंगी कि मैं अपने बचपन में लघु कौमुदी पढ़ती रही हूँ। मुझे संगीत का बहुत शौक था। पिताजी के पास इतना धन नहीं था कि मेरी संगीत सीखने की लालसा पूरी कर सकते। हमारे पड़ोस की एक शादी में एक पेशेवर गाने नाचनेवाली आई। लोगों ने सैकड़ों रुपये नज़राना उसको दिये। दो दिन वह हमारे गाँव में रही और दो दिन तक मैं उसका गाना और नाचना सुनती, देखती रही। दूसरे दिन सायंकाल की बात है कि वह शादीवाले मकान के दरवाज़े पर खड़ी थी और मैं मकान के दरवाज़े से निकल अपने घर को जा रही थी कि हमारी आँखें मिलीं। मेरे मुख पर मुस्कराहट दौड़ गई। उसने पूछा, 'क्या है बीबी?' मैंने कहा, 'तुम बहुत अच्छा गाती हो। तुम्हारा 'बहार' मुझे बहुत पसन्द आया है।'

"मेरी उमर उस समय बारह साल की थी और मेरे मुख से राग के पहिचानने की बात सुन वह हैरानी से मुझको सिर से पाँवों तक देखने लगी। मैंने समझा कि शायद राग पहिचानने में मुझसे ग़लती हो गई है। पीछे मैंने सोचकर कहा, 'आपने बहार ही तो गाया था न?' मैंने वही बोल जो उसने गाया था, 'पनिया भरन कैसे जाऊँ' गाकर सुना दिया और साथ ही उसकी सरगम गा दी, 'सनीपमगमरेस म। पधनीस। धनीप मग मग। म'

"उसने मेरी पीठ पर हाथ रखकर कहा, 'शाबाश! गाना कहीं सीखना हो?' मैंने उत्तर दिया, 'अब कहीं भी नहीं।' तो बोली, 'मेरे साथ चलो मैं सिखाऊँगी।' मैंने कहा, 'चाचा नहीं जाने देंगे।' इस पर उसने कहा, 'तो उनको मत बताना। हम कल सवेरे की गाड़ी से जा रहे हैं। स्टेशन पर आ जाना'।

"रात-भर मुझे नींद नहीं आई। गाड़ी सवेरे चार बजे खुलती थी और रात के तीन ही बजे से मुझे कटने लगी। मैं समझती थी कि मुझे नहीं जाना चाहिए। मैं यह भी सोचती थी कि शायद उस गाने वाली ने मुझसे मज़ाक किया हो, पर कोई छुपी हुई ताकत मुझको धकेलती हुई गाड़ी के वक्त से पहिले ही स्टेशन पर ले गई। घर के सब लोग सो रहे थे और मैं उठकर चल दी। स्टेशन पर वह गानेवाली मुझे देखकर हैरान हो गई। मैंने तरल आँखों से उसकी ओर देखते हुए कहा, 'मुझे ले चलोगी न?'

"उसने एक टक तक मेरी आँखों में देखते हुए कहा 'मेरा कहना मानोगी?' मैंने बिना सोचे-समझे कह दिया 'हाँ। मानूँगी।'

'तो चलो।' उसने कहा।

'मेरे पास दाम नहीं हैं!'

"इस पर उसने अपने पास से अपने साथ आये सारंगी बजानेवाले को पैसे देकर मेरे लिए रेल का टिकट खरीद लिया। मेरे भाग आने की खबर गाँववालों को मिली तो मेरे पिता मुझे ढूँढते हुए बम्बई पहुँचे और मुझे पकड़कर वापस ले गये। परन्तु गाँववालों ने उनका हुक्का-पानी बन्द कर दिया। मेरे साथ मेरे माता-पिता और मेरे बहिन भाई भी खान-पीन के लिए लाचार हो गये। मेरे पिता ने घर पर पंचायत बुलाई। उसने मुझसे पूछा था कि मैंने माँस खाया है या नहीं। मैंने सच बात बता दी, 'हाँ खाया है।' इस पर पंच बोल उठे, 'अब तक यह लड़की घर पर रही, इसका हुक्का पानी नहीं खुल सकता। यह गोमांस खा चुकी है। यह धर्म भ्रष्ट हो गई है।'

"गाँव में एक ही कुआँ था और उस पर पचायत ने पहरा बैठा दिया था। गाँव के बाहर एक तालाब था। उसमें गाँव की गाय भैंस और दूसरे जानवर पानी पीते थे। वहीं से बाबा पानी भरकर लाते थे और वह हम छानकर पीते थे। मैं समझ रही थी कि मेरे कारण ही घरवालों को कष्ट हो रहा है। एक रात मेरी माँ पिताजी से कह रही थीं कि वे मुझे वहीं समुद्र में क्यों नहीं डुबो आये? पिताजी चुप थे। अगले दिन सवेरे उठ मैं उसी गाड़ी में सवार हो बम्बई पहुँच गई। मेरा ख्याल है कि जब मैं घर से आने लगी थी तो मेरा बड़ा भाई जागता था, परन्तु उसने मुझे रोका नहीं। इसके बाद भी मेरी टोह लेने कोई नहीं आया। सात साल की कड़ी मेहनत से मैं बम्बई की मशहूर गाने और नाचनेवाली बन गई।

"रक्कासा का काम प्रलोभनों से भरा हुआ होता है। अच्छा खाना, अच्छा पहिनना और सज धजकर रहना, यह सब वासना की ओर ले जानेवाली बातें हैं। इसी वजह से रक्कासा और रण्डी एक ही मायने वाली दो बातें हैं। इन्हीं दिनों मुझे मेरे गुरु मिले। श्री केवलेश्वर राजवाड़े का संगीत सुन मैं उन पर मुग्ध हो गई। यह खनीजा उन्हीं की लड़की है। मेरे बहुत आग्रह पर उन्होंने यह औलाद देनी मंजूर की। जब मुझे गर्भ ठहर गया तो उन्होंने मुझसे वचन लिया कि यदि लड़की होगी तो उसका विवाह किसी हिन्दू से करूँगी और यदि लड़का हुआ तो उसको किसी हिन्दू को पालन-पोषण के लिए दे दूँगी।

"खनीजा के जन्म होने के बाद मेरी इच्छा और सन्तान पाने की नहीं हुई। परन्तु उस जीवन में बचकर रहना बहुत मुश्किल था। इस कारण जब वली इब्राहीम साहब ने मुझे अपने पास रखने की ख्वाहिश जाहिर की तो मैंने फ़ौरन मान ली। दस साल से ऊपर हो गये हैं कि मैं उनकी खिदमत में हूँ। उन्होंने मुझको अपनी औरत मानकर रखा हुआ है और इस लड़की के साथ वे अपनी लड़की का सा व्यवहार करते हैं। मेरे इसरार पर उन्होंने इसका एक हिन्दू की सन्तान से विवाह कर दिया है। इस पर भी वे फ़िक्रमन्द हैं कि कहीं यह हिन्दुओं की नफ़रत

का शिकार न बन जाये। आप और आपके घरवाले के व्यवहार से दुःख तो है पर इसकी वजह नहीं जान सके।'

यह वृत्तान्त सुन राधा ने अपनी सफाई देने के लिए कहा, "जो कुछ आपके माता-पिता के साथ बीती है, वह किसी प्रकार भी सराहनीय नहीं है। इस पर भी यदि आपके माता पिता के मन में चोर न होता तो वे गाँववालों के दबाव से दबते नहीं। मैं अपनी बात बताती हूँ। जब लाहौर में मुसलमानों को मालूम हो गया कि मैं हिन्दू हो गई हूँ, तो एक के बाद दूसरा मेरे पास आने लगा और मुझे मजबूर करने लगा कि मैं या तो उनको तलाक़ दे दूँ या उनको नमाज पढ़ने मस्जिद में जाने को कहूँ। जिनके घर में मैं पली थी, वे मेरे पास आकर कहने लगे कि मैं जब तक उनको गोमांस नहीं खिलाती, तब तक वे हिन्दू ही रहेंगे। मुझे समझ नहीं आता था कि मैं क्या करूँ? हमारे एक मधुर चाचा थे। वे बहुत किताबें लिखा करते थे। एक दिन मैंने उनसे ही पूछा। उन्होंने सारी बात सुनकर कहा, 'देखो बेटी! इंसान का सबसे बड़ा पथ प्रदर्शक उसका मन है। मन की चाहना तालीम (शिक्षा) और तरबियत (संस्कारों) पर बनती है। संस्कार एक दिन में नहीं बनते। इससे मैं कहता हूँ कि तुम वही करो जो तुम्हारा मन चाहता है।' मैंने उनसे कहा, 'पर मैं तो उनको किसी बात के लिए मजबूर करना नहीं चाहती।' इस पर उन्होंने पूछा कि वे क्या चाहते हैं। मैंने कहा, 'मैं उनसे पूछना उनका अपमान करना समझती हूँ।' इस पर उन्होंने कहा, 'तो बेटी! अपने दिल को मज़बूत करो। जो ठीक समझती हो, वही करो। याद रखो, पुरुष वही है जो मन को भावे।'

"इससे मैं कहती हूँ कि यदि मेरी तरह आपके माता पिता होते और वे समझते कि तुम्हें घर रखना ठीक है तो गाँववालों का विरोध करते। ऐसा करने से वे भी मेरी तरह कामयाब होते।"

"आपकी बातों से तो मैं कुछ भी नहीं समझी। क्या आप हिन्दू रहना ठीक समझती हैं या क्या आप सदाशिव को मुसलमान हो गया

समझती हूँ।"

"मैं तो हिन्दू मुसलमान के झगड़े में नहीं पड़ना चाहती। मैं एक नेक औरत हूँ और नेक लोगों की जमायत में रहना चाहती हूँ।"

"तो फिर आप मुसलमानों को हिंदू बनाने में मदद क्यों देती हैं?"

"मैं नेक बनने में मदद देती हूँ। हिंदू होने से नेक बनने में मदद मिलती है। इसीसे मैं लोगों को हिन्दू बनने के लिए कहती हूँ। इस पर भी हिंदुओं में जो कुछ भी खराबी है, वह स्वीकार करने के लिए मैं किसी को नहीं कहती। हिंदू बनने से कोई मुसलमानों की, ईसाइयों, यहूदियों, पारसियों और बौद्धों की बातें मान सकता है। यहाँ तक कि अपने को मुसलमान और ईसाई वगैरा तक कह सकता है, मगर एक मुसलमान और ईसाई मत में रहता हुआ हिंदुओं की बातें नहीं मान सकता। एक आदमी गोमांस खाता हुआ हिंदू रह सकता है, मगर सूअर खाकर मुसलमान रहना मुश्किल है। राम और कृष्ण को गालियाँ देकर भी कोई हिंदू रह सकता है मगर मुहम्मद को रसूलिल्लाह न माननेवाला मुसलमान नहीं हो सकता। इससे मैं कहती हूँ कि जब मैं किसी को हिंदू बनाने में मदद देती हूँ तो मैं उसके दिमाग के ताले को खोल देती हूँ। मैं उसे आजाद कर देती हूँ। बताओ इसमें कौन बुरी बात करती हूँ।"

खनीज़ा की माँ इन तत्त्व की बातों को सुनकर चकित रह गई। वह जानती थी कि दरगाह में हर जुम्मे के दिन हिंदुओं को मुसलमान बनाया जाता है और कलमा पढ़ाने से पहिले उनको गोमांस खिलाया जाता है। औरतों को मुसलमान बनाने से पहिले उनसे ज़िनाह करा कर उनको अपनी नज़रों में गिरा दिया जाता है। उसे अपनी बात अभी याद थी कि जब वह पहिली बार बम्बई में आई थी तो उसे भी एक दिन बहुत अच्छा खाना खिलाकर कहा गया था कि इसमें गोमांस था। उस समय वह नाबालिग और अनजान थी, इससे वह इस हरकत का अर्थ नहीं समझी थी। अब वह विचार करती थी कि यदि उसे वह न खिलाया

राधा के कहने ने उसके मन में भारी हलचल मचा दी थी। जब उसने माँ को गम्भीर विचार में डूबा देखा तो उसने साहस कर पूछा, "राधाजी! विवाह में क्या एक मज़हब का होना ज़रूरी है?"

"मज़हब तो अपना अपना होता है, लेकिन मज़हब और अदब (संस्कृति) दो भिन्न भिन्न बातें हैं। अदब दोनों का एक जैसा होना चाहिये।"

"क्या अदब-मज़हब के मातहत नहीं है?"

"नहीं, कम से कम हिन्दू ऐसा नहीं मानते। हिन्दुओं में कई मज़हब हैं। मोटे तौर पर सिक्ख हैं, आर्य समाजी हैं, वैष्णव हैं, शाक्त हैं, वेदान्ती हैं और अन्य कई मत हैं। आपस में विवाह होते हैं और इसके लिए झगड़ा नहीं होता। कभी-कभी तो बहुत मज़ेदार बात होती है। पति मांस खाता है और पत्नी नहीं खाती। पति आर्य समाज मन्दिर में जाता है, जहाँ निराकार की पूजा होती है और पत्नी सत्यनारायण का व्रत रखती है, पूजा करवाती है और पूजा का प्रसाद लाकर पति और उसके बच्चों को खिलाती है। यह है मज़हब के विषय की बात। इसमें कोई दूसरे की बात में दखल नहीं देता। मगर एक बात रहन सहन का ढंग है, जो पति-पत्नी एक समान रखना चाहते हैं। प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में उठना, दातुन कुल्ला कर स्नान करना, फिर अपने अपने इष्टदेव का चिंतन करना, हाथ धो स्वच्छ आसन पर बैठ भोजन करना, सत्य बोलना, धृति, क्षमा, दम इत्यादि गुणों का पालन करना, ये बातें हैं, जिनको पति-पत्नी अपने में एक समान देखना चाहते हैं। कितनी सरल बात है। ऐसे व्यवहार के कारण ही हमारा आपस में कभी झगड़ा नहीं होता। उन्होंने मुझे कभी नहीं कहा कि मैं नमाज़ न पढ़ूँ। विवाहित जीवन के आरम्भ में मैं नमाज़ पढ़ती थी और अब मैं सन्ध्या करती हूँ। इस परिवर्तन से उनके मेरे साथ व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया।"

इस दिन राधा ने सदाशिव के घर में क्रांति की नींव डाल दी। सलीमा की माँ तो इस्लाम और हिन्दुत्व में एक आन चकाचौंध रह

गई। उसे अपने पूर्व जीवन पर सोचने का एक नया मार्ग दिखाई देने लगा था।

इस वार्तालाप के कई दिन पीछे की बात है कि खनौआ की माँ, रसूलन, खुशीराम के घर आई और अपनी परेशानी बताने लगी, "राधा देवी! आपकी उस दिन की बातों ने तो मुझे दोज़ख की आग में झोंक दिया है। मैं अब अपने आस-पास होने वाली बातों को एक नई रोशनी में देखने लगी हूँ। जो बात मुझे पहले अच्छी और सवाब मालूम होती थी, वही अब नफ़रत पैदा करने वाली मालूम होने लगी है।

"कल जुम्मेरात थी। हमारी दरगाह की मस्जिद में हर जुम्मे को हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिए लाया जाता है। अक्सर मुसलमान बनने वाली औरतों और मर्दों को जुम्मेरात के दिन वहाँ की सराय में रखा जाता है। कल दो औरतें मुसलमान होने के लिए आई। उनमें से एक पूना के एक ब्राह्मण परिवार की विधवा थी। रात दो गुण्डे उनसे बदफेली करने के लिए भेजे गए। उस विधवा ने बहुत चीख़ो पुकार की। यहाँ तक कि उसकी चीखों की आवाज़ हमारी आरामगाह तक आने लगी। मैं चौंककर उठी और जब मुझे मालूम हुआ कि आवाज़ सराय में से आ रही है तो मैंने हज़रत वली साहब को जगाया और उनसे उस बेचारी को बचाने के लिए कहा। वे बोले, 'सो जाओ मेरी जान! सब खुदा का फ़ज़ल है।' पर मैंने कहा, 'नहीं हज़रत! कोई रो और चीख रहा है।' वे बोले, 'आओ मेरे पास सो जाओ। अभी खुदा की रहमत नाज़िल हो जावेगी।'

"मैंने उनके गले में बाँह डालकर इसरार किया कि उस औरत को छुड़ाया जावे। वे मेरी बात मान गए और हम दोनों कपड़े पहन सराय में जा पहुँचे। मुझे कहते हुए शर्म आती है कि हम देरी से पहुँचे। हमारे पहुँचने से पहले ही वह प्राण छोड़ चुकी थी। उससे बदफेली करने वाले आदमी से मैंने पूछा कि क्या हुआ है तो उसने बताया कि वह पहले उसे हाथ लगाने से मना करती रही, पीछे उसकी हरकतों की मुख़ालफ़त

यह कहती थीं कि वे लोगों को हिन्दू बनने को कह उनको नेक बनने के लिए कहती हैं। हज़रत ने मुझको कई बार यह कहा था कि मज़हब की बातों में अक्ल को दखल नहीं। वे कहा करते थे कि खुदा की बातों को इन्सान समझ नहीं सकता। राधा जी का कहना था कि अक्ल भी खुदा की दी हुई चीज़ है और इसका इस्तेमाल करना खुदा को खुश करना है। हिन्दू होने से अक्ल के इस्तेमाल करने की आज़ादी मिलती है और मुसलमान बनने से अक्ल के इस्तेमाल में बंदिश। मैं आज़ादी पसन्द करती हूँ।

"अब एक और बात दिमाग़ में साफ़ हो गई है। तुमने कहा है कि रात की वारदात को हज़रत इस्लाम की तबलीग के लिए, समझते हैं। मैं सोचती हूँ कि अगर इस्लाम नेकी है तो इस किस्म की बुरी बातें कैसे इस्लाम की तबलीग कर सकती हैं। दो में से एक बात ही सिर्फ़ ठीक हो सकती है। या तो यह कि इस्लाम नेकी नहीं है या इस किस्म की बातें इस्लाम की तरक्की नहीं कर सकतीं। दरगाह की बातों से तो मैं यही जानती हूँ कि फ़ाहशा औरतों की खिदमत इस्लाम की तबलीग के लिए कामयाब हथियार साबित हो रही है। इससे मैं इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि राधा जी का कहना ठीक है कि इस्लाम से हिन्दूपन नेकी के ज़्यादा नज़दीक है।'

"मैं तो लड़की की बातें सुनकर दंग रह गई हूँ। मेरे पाँवतले से मट्टी खिसक गई है। जो कुछ मैं अभी सोच ही रही थी, ख़तीज़ा उसे सोच नतीजे पर भी पहुँच गई है। उसकी बातें सुन मुझे तो उसके गुज़र की फ़िकर होने लगी है। मैंने उससे पूछा, 'यह अभी किसी से कहा तो नहीं? कहीं हज़रत साहब को पता चल गया तो सब ऐशो आराम ख़तम हो जायगा।' इस पर उसने कह दिया, 'अम्मी! अभी तो नहीं कहा, मगर आप की बात सुन तो मैंने फ़ैसला कर लिया है कि उनसे सब बात बता दूँगी। मैं अपने को हिन्दू समझती हूँ और हिन्दू बनकर रहूँगी।'

"मैंने उसको कहा कि अगर उसकी यह बात आली हजरत को पता चल गई तो सदाशिव की नौकरी छूट जायगी। खनीज़ा इसकी परवाह नहीं करती थी। इस पर मैंने कहा कि सदाशिव तो इस बात की परवाह नहीं करेगा। वह गरीबी में पला है इसलिए उसको इससे तकलीफ़ नहीं होगी परन्तु वह चाँदी और सोने के बरतनों में खाती-पीती रही है। गरीबी उसके लिए दूभर हो जायगी।

"आज मैं आपके पास आई हूँ। मुझको तो सब ओर विनाश ही दिखाई देता है। पीर साहब के पास जाने को तबीयत नहीं करती। सदाशिव की नौकरी छूटती मालूम होती है। खनीज़ा जवानी के जोश में जो कहती है कर लेगी, मगर उसके नतायज को सह सकेगी या नहीं, कहना कठिन है। राधा देवी! यह आग आपने ही लगाई है। अब आप ही इसके बुझाने का यत्न करिये।"

राधा अपनी छोटी-सी बात का इतना बड़ा परिणाम देख चकित रह गई। वह इस परिस्थिति को वश में करने का उपाय नहीं जानती थी। सदाशिव को एक हज़ार रुपया मासिक वेतन, एक प्रतिशत लाभ में भाग और साथ में रहने को मकान, ये इतने बड़े प्रलोभन थे जो अन्य किसी तरह पूरे होने कठिन थे। सदाशिव क्या चाहेगा और खनीज़ा इसमें क्या करना चाहेगी, यही तो मुख्य बातें थीं।

राधा केवल यह कह सकी, "इश्क जब सिर पर सवार होता है तो फिर इस किस्म की गिनती मिनती नहीं रहती। आदमी महसागर में कूद पड़ता है और अपनी किश्ती को परमात्मा के भरोसे पर छोड़ देता है।'

४

खनीज़ा नहीं मानी। उसने अपने मन के भावों को सदाशिव को बता दिया। परिणाम यह हुआ कि रसूलन ने पीर साहब का मकान छोड़ दिया और अपनी लड़की के पास आकर रहने लगी। बहाना यह बनाया कि लड़की के दिन चढ़ गये हैं और उसका उसके पास रहना निहायत

ज़रूरी है। उसने अपना सगीत का अभ्यास आरम्भ कर दिया। उसको ऐसा समझ आने लगा था कि शायद उसको फिर अपनी जीविका के लिए नाचने-गाने का काम करना पड़ेगा।

सदाशिव अपने असेम्बली के काम में लीन था और राधा तथा खुशीराम ने ऐसे समय में उनसे अपनी घनिष्ठता बनाय रखनी ही ठीक समझी। जो सम्बन्ध लक्ष्मी को ढूँढने के लिए बनाया गया था, वह अब अपने लिए दृढ़ होने लगा था। राधा को माँ और बेटी में विशेष गुण प्रतीत होने लग थ।

राधा एक दिन सदाशिव के घर जा पहुँची। वहाँ उसे एक और ही समस्या का सामना करना पड़ा। पीर इब्राहीम साहब एक दिन पूर्व सदाशिव से मिलने आये थ। बातों ही-बातों में कहने लगे कि सदाशिव का नाम कम्पनी के कागजों में बदलकर करीम इलाही कर दिया गया है। इस पर सदाशिव ने बताया कि ज्यों ही लोगों को पता चला कि वह मुसलमान हो गया है तो उसकी असेम्बली म मेम्बरी समाप्त हो जायगी। हजरत इब्राहीम का यह कहना था कि मोतबिर जरिए से मालूम हुआ है कि पाकिस्तान बन बिना नहीं रहेगा और बम्बई हिन्दुस्तान में रहेगा। पीर साहब अपनी कुछ जायदाद कराची भेज देना चाहते थ। वहाँ वह जायदाद अपने नाम जमा न कर सदाशिव क नाम करना चाहते थ। उनका ख्याल है कि पाकिस्तान में किसी हिन्दू का रहना मुमकिन नहीं, इसलिए सदाशिव अभी मुसलमान हो जाय तो जायदाद पर उसका कब्जा रह सकता है और वह जायदाद का भोग कर सकता है।

पीर साहब की जायदाद एक करोड़ रुपये स ऊपर थी। इसमें से पचास लाख स ऊपर तो वे अभी कराची में भजने का प्रबन्ध कर रहे थे। यह इतना बड़ा प्रलोभन था कि सदाशिव इसका कुछ उत्तर नहीं दे सका था। पीर साहब तो यह कहकर चले गय थ परन्तु घर में तीनों प्राणी इस प्रलोभन से संघर्ष कर रहे थे। राधा को आया देख रुक्मन ने

शान्ति अनुभव की। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि मन स बोझा उतर गया है। उसने प्रसन्नता प्रकट करते हुए राधा से सब बात यह पूछा, "राधा बहिन! अब तुम ही बताओ कि हम क्या करें?"

राधा की राय तो त्याग की थी, परन्तु वह नहीं जानती थी कि सदाशिव और खनीज़ा का मन कितना दृढ़ है। उसने उनके मन की बात जानने के लिए पूछा, 'सदाशिव जी क्या चाहते हैं?"

'वे दोनों एक मत नहीं हो सके। सदाशिव ने पीर साहब के कहने पर विचार किया है। उसका कहना है कि जायदाद खनीज़ा के नाम कर दी जाय। परन्तु लड़की कहती है कि वह जायदाद अपने नाम नहीं कराना चाहती, सदाशिव जी को जरूरत है तो अपने नाम करवा लें। इतने धन के मुकाबिले में कौंसिल की मेम्बरी की कुछ हकीकत नहीं।"

राधा हँस पड़ी और पूछने लगी, "कहाँ है खनीज़ा?"

"भीतर कमरे में सो रही है और, मैं समझती हूँ, कि अभी भी सोच रही है।"

"या यह कहो कि अपने मन के लालच से कुश्ती कर रही है।"

रसूलन हँस पड़ी। "जरा भीतर जाकर उसकी मदद कर दो न।"

"सदाशिव जी घर पर नहीं हैं क्या?"

"नहीं। वे तो कौंसिल के इजलास के लिए गये हुए हैं।"

राधा भीतर चली गई। खनीज़ा फर्श पर चटाई बिछाकर घुटनों के बल बैठी हुई नमाज़ पढ़ रही थी। नमाज़ समाप्त की तो उसे सामने राधा बैठी दिखाई दी। इधर उधर की बातों के बाद राधा ने बात पूछ ही ली। "खनीज़ा बहिन! यह अम्मी क्या कह रही हैं?"

"तो उन्होंने बताया है आपको?"

"हाँ। क्या फैसला किया है तुमने?"

"वे कहते हैं कि अपना हिन्दू नाम नहीं बदलेंगे और यदि पाकिस्तान बना तो वे वहाँ नहीं जायेंगे। रही नौकरी, उन्होंने यह फैसला कर लिया है कि इस महीने के आखीर में स्तीफ़ा दे देंगे।

"आप अनुमान लगा सकते हैं कि इससे मुझको कितनी खुशी हुई है। खुशीरामजी! मैं इससे अत्यंत ही प्रसन्न हूँ।"

"मैं आज इस कारण आया हूँ कि आपने मकान बदला है। इससे कोई सेवा मेरे योग्य हो तो बताइये।"

"आपका धन्यवाद है। इससे भी अधिक मैं राधा देवी का कृतज्ञ हूँ। मैं समझता हूँ कि मेरी स्त्री में यह परिवर्तन उनके ही कारण हुआ है।"

"मगर सदाशिवजी! एक बात जो मैं नहीं समझ सका, वह आपका पाकिस्तान न जाने का फैसला है। आप तो हिन्दू-मुसलमान को एक ही कौम मानते हैं न! आपके लिए तो 'जहाँ जा लगे वही किनारा हो गया' वाली बात है न!"

"आपका कहना सत्य था, मगर तब, अब नहीं। कलकत्ता और नोआखाली झगड़े के पश्चात् मैं दूसरे ढंग से सोचने लगा हूँ। मैं अब यह समझ रहा हूँ कि हिन्दू और मुसलमान हैं तो दोनों इन्सान, परन्तु इस वक्त मुसलमानों के मन में शैतानीयत सवार है और उनके राज्य में जाना अपने को शैतान के हाथ में सौंप देना है। मैं इसके लिए तैयार नहीं।"

"आपने क्या यह भी कभी सोचा है कि एक ही मुल्क में रहते हुए, एक ही भूमि का अन्न अनाज खाते हुए, एक ही पानी पीते हुए और एक ही तरह की हवा में साँस लेते हुए, यह कैसे हो गया कि एक फिरके में वो शैतान घुस गया है और दूसरे में नहीं घुस सका। कौम-की-कौम एक किस्म के विचारों की हो गई है। आखिर यह क्यों है?"

सदाशिव चुप था और सोच रहा था। खुशीराम ने अपना कहना जारी रखा, "यह एक विचित्र घटना है कि नोआखाली में औरतों पर बलात्कार किया गया और सारी-की सारी कौम में एक भी तो माई का लाल ऐसा नहीं निकला, जो इस पशुपन की निन्दा कर सकता।"

"देखिए खुशीराम जी! मैं आपको एक और बात बताता हूँ।

दिल्ली से एक आदमी की चिट्ठी बम्बई के प्रीमियर के नाम और उसकी नकल असेम्बली के सब सदस्यों के नाम आई है। उसमें लिखा है कि मुस्लिम लीग की वर्किङ्ग कमेटी ने यह निश्चय किया है कि पहली नवम्बर को बम्बई में डायरेक्ट ऐक्शन शुरू किया जाये। इस सूचना को पहले तो प्रीमियर ने सत्य मानने से इन्कार कर दिया। पश्चात् जब उसी चिट्ठी की नकल अन्य सदस्यों को भी मिल गई तो सदस्यों ने उनसे पूछना आरम्भ कर दिया। विवश होकर उनको कुछ कार्यवाही करनी पड़ी। परन्तु जानते हैं कि उनकी कार्यवाही का क्या परिणाम हुआ है। कल बम्बई में तीन सौ हिन्दू 'प्रिवेन्टिव डिटेन्शन' के कानून के अनुसार कैद कर लिये गए हैं। लगभग पाँच सौ लोगों की, पब्लिक सिक्यूरिटी ऐक्ट के अधीन ज़मानतें ले ली गई हैं और उनमें चार सौ से ऊपर हिन्दू हैं। मैंने आज प्रीमियर साहब से इस विषय में पूछा तो अचम्भे में मुझसे पूछने लगे कि मैं तो सोशिअलिस्ट विचार का आदमी हूँ फिर हिन्दू-मुसलमान में भेद भाव क्यों कर रहा हूँ। मैंने कहा भी कि जिनसे शान्ति भग होने की आशंका है, उनको पकड़ने से ही तो शान्ति रह सकेगी। गरीब बेकसूर लोगों को पकड़ने से क्या होगा। इस पर कहने लगे कि ताली एक हाथ से नहीं बजती। किसी भी एक तरफ़ के गुण्डों को पकड़ लेने से शान्ति भग नहीं होगी।

"मैं तो लाचार हो गया हूँ। अब बताइए इसमें क्या युक्ति है। इसने योग्य माने जाते हैं, परन्तु उनके सब साथी इतनी थोथी युक्ति करते हैं कि नहीं जानता कि महात्मा जी की योग्यता पर अविश्वास करूँ अथवा उनकी नेकनीयत पर। कुछ समझ नहीं आता।"

"परन्तु पहली नवम्बर तो कल है न। क्या हम कल यहाँ फ़साद की आशंका करें?"

"यह मैं कैसे बता सकता हूँ? हमारे पास तो किसी गुमनाम आदमी ने सूचना भेजी है। उस सूचना की सचाई की कौन गारन्टी कर सकता है। मैं तो सरकारी कार्यवाही की बात बता रहा था।"

खुशीराम ने कलाई पर बँधी घड़ी में समय देख कहा, "अब हमने एक काम पर जाना है। किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो बताइए।"

"सब आपकी कृपा है।"

२

पहली नवम्बर को जुम्मे का दिन था और जब नमाज़ पढ़कर मुसलमान मस्जिदों से बाहर निकले तो एकाएक हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा आरम्भ हो गया। कोई नहीं जानता कि झगड़ा कहाँ से और कैसे आरम्भ हुआ। कोई कहता है कि कुछ गुण्डे एक औरत को तंग कर रहे थे। दुर्भाग्य से वे गुण्डे मुसलमान थे। इससे हिन्दू-मुसलमान फसाद आरम्भ हो गया। इसके विपरीत एक और भी कहानी कही जाती है। एक बनिए ने एक लड़के से दाम तो ले लिया परन्तु उसे माल देने के वक्त कह दिया कि उसने दाम नहीं दिया। दुर्भाग्य से लड़का था मुसलमान और बनिया था हिन्दू। इस कारण हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा हो गया। इस पर भी यह कहना कठिन था कि अमुक बात ही झगड़े का कारण हुई।

पहिले तो कुछ दुकानें लुट गईं और कुछ चलते फिरते लोगों के पेटों में छुरे घोंपे गए। साथ ही मुसलमान लोग घबराए हुए इधर से उधर भागने लगे। इस प्रकार फ़साद आरम्भ होते ही बम्बई नगर बन्द हो गया। कारखानों में खबर पहुँची तो उनमें काम छोड़कर मजदूर बाहर निकल आए। सायंकाल तक यह समाचार भी मिल गया कि अहमदाबाद में भी फसाद हो गया है। रात को बम्बई सरकार ने तीन दिन का कर्फ्यू लगा दिया।

ये तीन दिन कारखाने बन्द रहे और मजदूर घरों में बेकार बैठे रहे, बम्बई और अहमदाबाद, दोनों स्थानों पर छुरे घोंपने की घटनाएँ होती रहीं। तीन दिन के उपरान्त जब बम्बई में कर्फ्यू उठा तो मुसलमानों ने एक-दो ट्राम गाड़ियों को घेरकर हिन्दू कत्ल कर दिए और ट्राम गाड़ियाँ

लगा दी। परिणाम यह हुआ कि बम्बई में बाजार फिर बन्द हो गए और कारखाने खुले रहने पर भी मजदूर उनमें काम करने नहीं पहुँचे।

अब कर्फ्यू सायंकाल पाँच बजे से लेकर प्रातःकाल आठ बजे तक कर दिया गया। इस पर भी कारखाने नहीं खुल सके। कुछ कारखाने कुछ घण्टों के लिए काम करने लगे परन्तु कुछ घण्टों से कारखाने चलाने में घाटा होने से तुरन्त बन्द करने पड़े। इस सब समय में छुरा घोंपने की वारदातें होती रहीं। बम्बई में एक विशेष बात यह हुई कि वहाँ पर कुछ हिन्दुओं ने भी मुसलमानों की नकल कर मुसलमानों को चलते फिरते मारना आरम्भ कर दिया। इससे मुसलमान बहुत घबराए।

फ़साद आरम्भ होने के बाद पहिला जुम्मा आया तो मुसलमान नमाज़ पढ़ने के लिए मस्जिदों में एकत्रित हुए। इसके बाद झुण्ड-के झुण्ड मुसलमान बाजारों में घूमने लगे और हिन्दू सार्वजनिक इमारतों पर आक्रमण होने लगे। एक झुण्ड आर्यकन्या पाठशाला के बोर्डिंग हाउस पर चढ़ आया। खुशीराम इस बात की आशंका कर रहा था, इससे उसने बहुत-सी लड़कियों को बम्बई से बाहर अपने अपने घरों को भिजवा दिया हुआ था। इस पर भी बीस के लगभग लड़कियाँ, जिनको कहीं नहीं भेजा जा सकता था, वहीं थीं। पुलिस से रक्षा के लिए सहायता माँगी गई था और एक कॉन्स्टेबल बन्दूक के साथ वहाँ पर भेजा भी गया था, परन्तु उसने इतने बड़े मजमे का रोका जा सकना असम्भव था। वहाँ टेलीफ़ोन था। इससे मुसलमानों के उधर आते ही पुलिस को और खुशीराम को सूचना भेज दी गई। उस दिन बम्बई में बीस ऐसे स्थानों पर आक्रमण किया गया था और सब स्थानों पर से पुलिस से सहायता माँगी गई थी। इस कारण पुलिस की सहायता तुरन्त नहीं पहुँच सकी।

जब खुशीराम अपनी मोटर में वहाँ पहुँचा तो कॉन्स्टेबल और स्कूल के दोनों चपरासी मोर्चा बाँधे भीड़ को रोकने का यत्न कर रहे थे। खिड़कियों के शीशे टूट चुके थे और चपरासियों के सिर फूट चुके थे। कॉन्स्टेबल भी घायल हो चुका था। कॉन्स्टेबल ने गोली चला दी थी,

जिससे भीड़ और भी क्रोध से भर गई थी। खुशीराम इमारत के पिछवाड़े से इमारत में जा पहुँचा। लड़कियां और अध्यापिकाएँ भयभीत पिछवाड़े से भाग जाने का विचार कर रही थीं। खुशीराम का कहना था कि उस समय नगर में बलवा जोरों से हो रहा है और उनका मकान से बाहर जाना अपने को और भी खतरे में डालना होगा। उनको इसी मकान में रहकर आक्रमण करने वालों का मुकाबिला करना चाहिए। लड़कियां लड़न मरने पर तैयार हो गई। वे मकान पर चढ़ गई और मकान की मुँडेरे तोड़ नीचे खड़े मुसलमानों की भीड़ पर ईंटों की बौछार करने लगीं।

खुशीराम स्वयं कॉन्स्टेबल के पास पहुँचा और अपना रिवाल्वर निकाल आक्रमणकारियों पर गोली चलाने लगा। इससे कॉन्स्टेबल का उत्साह बहुत बढ गया और छत पर से ईंटों की बौछार ने भी अपना काम किया। इस समय विद्यालय के एक चपरासी ने खुशीराम से कहा कि भीड़ में जो सबसे आगे खड़ा हुआ आदमी है, यह लक्ष्मी के अपहरण के समय आया था और राधा बी जी की चिट्ठी लाया था। खुशीराम ने उसकी ओर देखा और उसे पहचान लिया। यह मन्नू था। खुशीराम ने निशाना ताककर उसके घुटने पर गोली चलाई। निशाना ठीक बैठा और वह वहीं बैठ गया। इस समय तक छत पर से ईंटों की बौछार के कारण आक्रमण करने वाले भागने आरम्भ हो गये थे।

खुशीराम ने अपने समीप खड़े कॉन्स्टेबल को लेते हुए मन्नू को दिखा कर कहा, "देखो उस घायल को हमने जाने नहीं देना। यह बहुत मार्के का मुजरिम है।" भागती भीड़ में से कुछ लोग उसको उठाने आए, परन्तु गोलियों की बौछार से उसके समीप आ नहीं सके। परिणाम यह हुआ कि जब भीड़ तितर बितर हो गई तो खुशीराम ने मन्नू जमादार को उठवा कर अपने अधिकार में कर लिया।

खुशीराम ने देखा कि उसके घुटने की चप्पनी टूट गई है और बिना दस-बीस दिन हस्पताल में रहे यह ठीक नहीं हो सकेगा। इससे उसने मन्नू को कहा, "देखो मन्नू! यदि तुम लक्ष्मी का पता बता दो तो मैं

तुम्हें पुलिस के हवाले नहीं करूँगा और तुम्हारे इलाज के लिए डॉक्टर का प्रबन्ध घर पर कर दूँगा। नहीं तो एक नाबालिग लड़की को भगा ले जाने के जुर्म में छः वर्ष की कैद करवा दूँगा।"

मन्नू को भारी वेदना हो रही थी और उसकी टाँग से रक्त बह रहा था। साथ ही खुशीराम की हिरासत में होने से वह घबरा गया और थक गया। उसने कहा, "पता मैं बता सकता हूँ मगर वह मेरी बीवी बन चुकी है और उसको मुझसे छीनने की कोशिश करना अन्याय होगा।"

"यह ठीक है।" खुशीराम ने कहा, "अगर वह अपनी खुशी से तुम्हारी बीवी बनी है और खुशी से तुम्हारी बीवी रहना चाहती है तो मैं उसको तुमसे जुदा नहीं करूँगा। साथ ही तुम्हारा इलाज अपने घर में करवाऊँगा और उसको तुम्हारी सेवा के लिए तुम्हारे पास रहने दूँगा।"

मन्नू ने सन्देह भरी-दृष्टि से खुशीराम की ओर देखा। खुशीराम ने अपनी बात दुहराई और उसे कहा, "यदि वह अपनी इच्छा से तुम्हारे पास रहना चाहेगी तो मैं वचन देता हूँ कि तुम्हारे अपराध को भूल जाऊँगा। जल्दी बताओ पुलिस आने ही वाली है। एक बार तुम उनके हाथ में गए तो मैं बचा न सकूँगा।"

मन्नू नरम हो गया और बोला, "वह मुझसे मुहब्बत करती है और मुझको यकीन है कि मुझसे जुदा होना पसन्द नहीं करेगी।"

"अगर तुम्हें यकीन है तो बताओ मैं उसको यहाँ बुला लूँगा और फिर तुम्हारी भी हिफ़ाज़त हो जायगी।"

मन्नू ने बताया कि दरगाह शाह मुराद के पिछवाड़े में दरगाह के कुछ अपने मकान हैं। उन मकानों में नम्बर ग्यारह के मकान में नम्बर चार का कमरा उसके पास है और वह इस वक्त वहीं पर है।

खुशीराम, मन्नू को उठवाकर अपनी मोटर में अपने घर ले गया। राधा खुशीराम को सही सलामत और फिर मन्नू के साथ देखकर बहुत प्रसन्न हुई। खुशीराम का लड़का अपने पिता की तलाश में जाने के लिए बेताब हो रहा था। इस प्रकार उसके आने से मन्नू के विरोधी भाव

क्षमा और सहानुभूति में बदल गए। डॉक्टर को बुलाया गया, उसकी मरहम-पट्टी करवाई गई। पश्चात् खुशीराम, उसका लड़का और दो और आदमी मोटर में लक्ष्मी को ढूँढने चले गए।

७

लक्ष्मी खुशीराम को देख हैरान रह गई। वह इस बात की किंचित् मात्र भी आशा नहीं करती थी। इस कारण जब उसने दरवाजा खोला और खुशीराम को कुछ अन्य लोगों के साथ खड़ा देखा तो डर गई। खुशीराम ने कहा, "लक्ष्मी! नहीं पहिचाना मुझको?" लक्ष्मी के मुख से आवाज़ नहीं निकली। इस पर खुशीराम ने फिर कहा, "मैं खुशीराम हूँ। मैं तुमको छुड़ाने आया हूँ।"

बड़ी कठिनाई से लक्ष्मी के मुख से निकल सका, "अब यहाँ क्या रखा है। मैं अब करीमाँ हूँ। लक्ष्मी मर गई है।"

"मैं जानता हूँ।" खुशीराम ने बात बदलकर कहा, "मन्नू घायल हमारे घर में पड़ा है। उसने तुमको बुलाया है।"

"घायल! कहाँ घायल हुआ है? वह तो दरगाह में वली साहब की खिदमत के लिए गया हुआ है। मुझे वली साहब के पास ले चलो।" इतना कह वह बुर्का पहन जाने को तैयार हो गई।

खुशीराम ने नीति से काम लेने का विचार कर कहा, "चलो मैं वली साहब से पुछवा देता हूँ।"

"नहीं, मैं खुद चली जाऊँगी।" लक्ष्मी ने कहा।

"अरे बाबा! कहाँ चली जाओगी? वली साहब भी तो हमारे घर में पहुँचे हुए हैं। तुम नहीं जानतीं कि बाहर क्या हो गया है आज? पुलिस ने दरगाह पर अधिकार कर लिया है। मन्नू और वली साहब भागकर बच निकले हैं। हमारे मकान के सामने कुछ गुण्डों ने उनको घेर लिया था। वे तो उनको मार ही डालते अगर मैं पिस्तौल लेकर उनको छुड़ाने न पहुँच जाता। इस पर भी दोनों घायल हो गए हैं और मेरे मकान में पड़े हैं।"

लक्ष्मी हैरानी में खुशीराम का मुख देखने लगी। खुशीराम ने बिना उसकी हैरानी की ओर ध्यान दिए अपना कहना जारी रखा, "मन्नू ने स्वयं कहा है कि तुमको बुला दूँ।"

लक्ष्मी ने फिर कहा, "झूठ तो नहीं बोलते?"

"तुम कुछ पागल हो रही हो लक्ष्मी! अपनी जान को जोखम में डालकर तुमको लेने आया हूँ और यह सब किस लिए?"

लक्ष्मी अभी भी अनिश्चित मन खड़ी थी। खुशीराम समझ रहा था कि उसकी तरकीब काम कर रही है। इससे उसने अपनी बात जारी रखी—"उसने कहा है कि तुम उससे मुहब्बत करती हो। इस पर मैंने उसे वचन दिया है कि अगर यह ठीक है तो मैं उसके ठीक हो जाने पर उसको बम्बई से बाहर सुरक्षित स्थान पर पहुँचवा दूँगा।"

इस पर लक्ष्मी साथ चलने को तैयार हो गई। खुशीराम ने कहा कि बुर्का उतार दे, नहीं तो रास्ता चलते मुसलमान लोग समझेंगे कि यह किसी मुसलमान औरत को भगाकर लिए जा रहा है और फिर उसे लेकर यहाँ पहुँच सकना कठिन हो जायेगा।

लक्ष्मी मान गई। वे उसको मोटर में बैठा कर घर ले आये। लक्ष्मी ने मन्नू को पट्टियों में लपेटा हुआ देख सन्तोष अनुभव किया। मन्नू ने उसको बताया कि खुशीराम ने वचन दिया है कि यदि वह अपनी खुशी से उसके पास रहना पसन्द करेगी तो वह उसकी मदद करेगा और उसका इलाज करवायेगा या जहाँ वह कहेगा, वहाँ पहुँचा देगा।

लक्ष्मी राधा से मिली तो उसने कहा कि जब तक मन्नू ठीक नहीं हो जाता, वे दोनों उनके घर रह सकते हैं। इस पर लक्ष्मी ने पूछा, "आप मुझसे घृणा तो नहीं करेंगी?"

"क्यों, घृणा क्यों करूँगी? तुमको क्या हो गया है?"

"मैं — मैं — मुसलमान हो गई हूँ।"

"तो फिर क्या हुआ? हो तो तुम वही लक्ष्मी न, जो इस घर में आकर यहाँ से जाना पसन्द नहीं करती थीं? तुम्हारे लिए ही तो मैंने

मन्नू को घर में रखना पसन्द किया है।"

"मगर वली साहब कहाँ हैं?" लक्ष्मी ने खुशीराम को सामने देख पूछा।

खुशीराम इस प्रश्न के लिए तैयार था। उसने कहा, "लक्ष्मी! तुम मन्नू से प्रेम करती हो या वली साहब से?"

लक्ष्मी की हँसी निकल गई। उसने पूछा, "आपने वली साहब को देखा है कभी?"

"नहीं मैं उनको नहीं जानता। हाँ उनकी बाबत सुना बहुत कुछ है। वे पचहत्तर वर्ष के बूढ़े हैं और पैंतीस वर्ष की एक रमुलन नाम की औरत से प्रेम करते हैं। वे हिन्दू औरतों को भ्रष्ट करने के लिए अपने पास गुण्डे रखे रहते हैं। भ्रष्ट करने के बाद जब उनके लिए और कोई चारा नहीं रह जाता तो उनको मुसलमान बनाकर उनका मुसलमान आदमियों से विवाह कर देते हैं। उनकी और भी बहुत सी बातें मैंने सुनी हैं।"

लक्ष्मी चुप थी और गम्भीर विचार में पड़ी हुई थी। वह मन ही मन सोच रही थी कि ये सब बातें इनको कैसे पता लग गई हैं। खुशीराम ने लक्ष्मी को चुप देख कहा, "लक्ष्मी! अभी आराम करो। मन्नू अभी कई दिन तक ठीक नहीं हो सकेगा। तब तक वह यहाँ ही रहेगा। तुमको भी यहाँ ही रहना चाहिए। जब वह जाने लायक होगा, तब तुम चाहोगी तो उसके साथ जा सकोगी।"

लक्ष्मी अभी भी चुप थी। वास्तव में वह घटनाओं के हेर-फेर को समझ नहीं सकी थी। खुशीराम उसको राधा के पास छोड़ बाहर मन्नू के पास चला गया। मन्नू को भय लग रहा था कि खुशीराम अपना वचन पूरा करेगा या नहीं। खुशीराम इस बात को समझता था। इस कारण मन्नू के चित्त को शान्त करने के लिए वह कहने लगा, "मन्नू भाई! मैंने जो वचन तुमसे दिया था, वह पक्का है। डाक्टर कहता है कि तुम्हारी पट्टी बीस दिन से पहिले नहीं खुल सकती, तब तक तुम हमारे

यहाँ रहोगे। तुम्हारी बीवी भी तुम्हारी सेवा शुश्रूषा के लिए यहाँ रहेगी। जब तुम यहाँ से जाने लगोगे, तब वह, यदि चाहेगी तो तुम्हारे साथ जा सकेगी।"

"अगर मैं एक-दो दिन में यहाँ से जाना चाहूँ तो?"

"तो सीधे हवालात में जाओगे।"

"क्या मतलब?"

"हम लक्ष्मी को समझाना चाहते हैं और इसलिए कुछ दिन उसका यहाँ रहना जरूरी है। तुमने इतने महीने उसे अपने पास रखकर बहका रखा है। उसे अपना मानसिक सन्तुलन ठीक करने के लिए कुछ दिन सोचने समझने को चाहियें।"

"वह मुझसे मिल सकेगी या नहीं?"

"मिल सकेगी, मगर मैं तुम दोना पर पहरा बैठा रहा हूँ। बीस दिन से पहले तुम यहाँ से नहीं जा सकोगे और यदि इतने दिन में भी लक्ष्मी तुम्हारे साथ जाने के विचार पर डटी रही तो निश्चय जानो कि मैं उसको रोकूँगा नहीं।"

मन्नू बहुत परेशान था। उसे डर था कि लक्ष्मी को ये लोग बहका लेंगे। इससे वह लक्ष्मी को वहाँ से भगा देने की तजवीज सोचने लगा।

लक्ष्मी उसके लिए खाना लेकर आई। कमरे के बाहर महावीर दल के दो स्वयसेवक पहरा दे रहे थे। यद्यपि वे मन्नू की बातें सुन सकने में असमर्थ थे, तो भी मन्नू लक्ष्मी से षड्यन्त्र कर सकने में कठिनाई पा रहा था। इस पर भी उसने लक्ष्मी को अपने समीप बुलाकर कहा, "करीमाँ! यहाँ से भाग जाओ।"

"क्यों?"

"भाग कर दरगाह में चली जाओ और हजरत से मेरे यहाँ कैद होने की बात कह दो। वे मुझको यहाँ से छुड़ा लेंगे।"

"आपको कुछ तकलीफ है यहाँ?"

"तकलीफ की बात नहीं करीमाँ।

जुदा करने की कोशिश करेंगे।"

"पर आप तो कहते थे न कि अब मुझसे कोई हिन्दू शादी नहीं करेगा?"

"तुमको रखैल तो रख लेगा, चाहे तुम से कोई विवाह न करे।"

"तो फिर आप डरते क्यों हैं?"

"पर मैं पूछता हूँ कि तुम हज़रत वली साहब के पास जाने से डरती क्यों हो?"

"तो आप नहीं जानते कि मैं क्यों डरती हूँ। क्या कोई औरत उनके पास जाकर बिना ख़राज़ दिए वापस आ सकती है। मुझको यह बात पसन्द नहीं।"

"तुमने उनको ग़लत समझा है करीमाँ! अब तुम मुसलमान हो चुकी हो। अब वे तुमको तंग नहीं करेंगे।"

"अभी उस दिन जब मुझे एक हिन्दू औरत से बातचीत करने के लिए बुलाया था तो जानते हो वे क्या कहते थे? मेरी बाँह पकड़ कर कहने लगे, 'करीमाँ जान! रसूलन आजकल नाराज़ रहने लगी है। वह अपनी लड़की के साथ रहने चली गई है। अगर तुम उसकी जगह मेरे पास रहना पसन्द करो तो मैं तुमको कराची ले चलूँगा और मर ने के बाद पचास लाख की जायदाद की मालकिन बनोगी।' मैं अभी सोच ही रही थी कि क्या कहूँ कि उन्होंने मेरी बाँह पकड़ ली और अपनी तरफ़ घसीट कर मेरा मुख चूम लिया। मैंने झटका दे अपने को उनसे छुड़ाया और सीधी अपने घर भाग आई। मैं अकेली अब उनके सामने नहीं जा सकती।"

"मगर ये लोग भी तो तुमको मुझसे जुदा कर देंगे।"

"ज़बरदस्ती नहीं करेंगे। मुझे राधा दीदी पर एतबार है।"

"पर मैं पूछता हूँ कि यहाँ कैद होकर रहना क्या अच्छा है?"

"मैं समझती हूँ कि हम कैद नहीं हैं। आपकी मरहम-पट्टी हो रही है और मैं यहाँ मज़े में हूँ।"

मन्नू को कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि उसकी बीबी में वह बेबसी और नम्रता नहीं रही, जो उसमें उसके घर पर थी। इससे वह घबराया। अगर अपने घर पर होता और चल फिर सकता तो मार-पीटकर उसे ठीक कर लेता। परन्तु इस समय बेबस था। इससे चुप कर रहा।

८

रात राधा और लक्ष्मी एक ही कमरे में सोई। राधा ने बातों ही बातों में उसका अपहरण होने के काल से लेकर उस दिन तक का इतिहास जान लिया। लक्ष्मी मन्नू की स्त्री बनने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी परन्तु दरगाह की सराय में जब उससे नित्य बलात्कार किया जाने लगा तो विवश हो उसने मन्नू की बीबी बनना स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात् उसको ऐसी कहानियाँ सुनाई गई, जिससे उसके मन में हिन्दू होकर जीवन व्यतीत करना असम्भव प्रतीत होने लगा। फिर मन्नू ने दरगाह में नौकरी कर ली और वहाँ से उसे बढ़िया से बढ़िया खाने को मिलने लगा। धीरे धीरे उसके मन में यह अंकित कर दिया गया कि अब इस जन्म में उसके लिए मुसलमान बनकर रहना ही ठीक है। साथ ही भोग विलास के आनन्द को प्रेम का रूप देकर मन्नू ने उसे अपनी बना लिया।

अपनी पूरी कथा सुनाकर लक्ष्मी ने कहा, "दादी! अब इस जन्म में क्या रह गया है! मैं अपवित्र हो गई हूँ और किसी भी हिन्दू के घर में रहने के योग्य नहीं रही। अब तो मैं भगवान से यही प्रार्थना करती रहती हूँ कि मुझे अगले जन्म में पुनः हिन्दू की कोख से उत्पन्न करें और मुझ में शक्ति दें कि मैं हिन्दू के कर्तव्य का पालन कर सकूँ।'

"लक्ष्मी! बहुत ज्ञान की बातें करने लग गई हो, अब तो!" राधा ने कहा।

"मुहीउद्दीन ने सब-कुछ सिखा दिया है। जिन दिनों मैं दरगाह की सराय में थी और जो दुर्गति मेरी नित्य रात को होती थी, वह मैं मरण

पयत नहीं भूल सकती। नित्य नया आदमी मेरे पास भेज दिया जाता था। उन दिनों की बात अब भी याद करती हूँ तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उन दिनों भगवान् के सिवाय और आश्रय ही क्या था! एक रात मुझको स्वप्न में भगवान् की-सी सूरत में एक आदमी ने कहा, "एक की बीवी बनकर रहो। जने जन से बदफैला कराने से तो यही अच्छा है। अगले दिन मैंने मन्नू से मिलने की इच्छा प्रकट की और उससे मुलाकात होने पर उससे विवाह का इकरार कर लिया।"

"मैं एक बात कहूँ लक्ष्मी! अभी तुम्हारी उमर सोलह वर्ष की भी नहीं हुई। अगर और सब बातें ठीक रहें तो तुम सत्तर अस्सी वर्ष की उमर तक जी सकती हो। अभी तो साठ-पैंसठ वर्ष जीवन और हो सकता है। इससे मैं कहती हूँ कि जो बात तुम आज से साठ वर्ष बाद अर्थात् अगले जन्म में करना चाहती हो, वह आज से ही क्यों आरम्भ नहीं कर देतीं?"

"यह कैसे हो सकता है! इस अपवित्र शरीर को कौन ग्रहण करेगा?"

"देखो लक्ष्मी! मैं तुम्हें अपनी आप बीती सुनाती हूँ। मैं जन्म से मुसलमान हूँ और बचपन से ही एक मुसलमान अमीर आदमी के घर नौकरी करती थी। इन्हीं नौकरी के दिनों में मेरे विवाह का प्रबन्ध मालिक के भाई के रसोइये से होने लगा तो मुझको यह पसन्द नहीं आया। वह एक आँख से काना था और अपनी पहिली बीवी को बहुत पीटा करता था। इस समय, यह देवकी नन्दन के पिता से मेरी भेंट हो गई। विवाह तो हमारा हो नहीं सकता था। वे हिन्दू थे और मैं एक नवाब मुसलमान की नौकरानी। मैं इनके साथ भाग गई। हम दिल्ली जा पहुँचे। वहाँ किसी बदमाश से धोखा देकर अपहरण कर ली गई। उन लोगों ने मेरे साथ बहुत बुरा सुलूक किया। वे मुझसे पेशा कराने लगे थे। पश्चात् इन्हीं के पास उन बदमाशों ने बेचने का यत्न किया, परन्तु मेरे भाग्य अच्छे थे कि इस छापेखाना के मालिक की चतुराई से मैं

बच गई और वे बदमाश पकड़ लिये गए। जिनके घर में मैं नौकरानी थी, वे मेरा विवाह एक मुसलमान से करना चाहते थे। इस पर उन्होंने मुसलमान बनना स्वीकार कर लिया और विवाह इनसे हो गया। अब तुम देख ही रही हो कि मेरा जन्म सुधर गया है। मैं समझती हूँ कि तुम्हारे साथ भी ऐसा ही हो सकता है। सौभाग्य की बात है कि तुम उस नरक से बाहर आ गई हो।"

उस रात तो इतनी ही बात हुई। राधा उसको सोचने का अवसर देना चाहती थी। लक्ष्मी रात भर अपनी अवस्था पर विचार करती रही। क्या वह विवाह के बिना रह सकेगी? यदि नहीं तो क्या उससे भी खुशीराम जैसा कोई विवाह करने को राज़ी हो सकेगा? एक बात वह समझती थी कि मन्नू उसको कई बार मार-पीट चुका था और जब भी वह उसे कुछ कहती थी, वह उसे फिर सराय में छोड़ आने की धमकी देता था। कम-से-कम यहाँ रहते तो उसको इन बातों का भय नहीं था। इसी कारण उसने मन्नू की बात, कि वह भाग कर पीर साहब को खबर दे दे, नहीं मानी थी। इस पर भी वह अभी किसी बात का निर्णय नहीं कर सकी थी।

दो दिन तक उसके मन में संघर्ष चलता रहा और इस समय में राधा अथवा खुशीराम ने उससे कोई बात नहीं की। मन्नू भी सोच रहा था कि लक्ष्मी को मजबूर न किया जाये। कहीं वह बिगड़ ही न जाये, परन्तु लक्ष्मी का मन चुप नहीं था और भीतर ही भीतर संघर्ष में लीन था। दो दिन पश्चात् भी उसके मन में भविष्य का चित्र स्पष्ट नहीं हुआ। इसलिए वह राधा के पास अपने मन के संशयों के निवारण के लिए जा पहुँची। "राधा दीदी! एक बात पूछूँ? आप सत्य बताएँगी न? अगर मैं अपने खाविन्द को न छोड़ूँ तो आप क्या करेंगी? क्या उनको पुलिस के हवाले कर देंगी?'

"नहीं! देवकी नन्दन के पिताजी ने उसको वचन दिया है कि यदि

पुलिस के हवाले नहीं करेंगे।'

"इससे आपको क्या लाभ होगा?"

"हम समझते हैं कि हिन्दू रहना तुम्हारे लिए अच्छा है और तुमको समझाकर हम पुनः हिन्दू बना लेना चाहते हैं। इसीलिए तुम पर और उस पर इतना खर्च कर रहे हैं।"

"इस पर भी यदि मैं न मानूँ तो आप क्या करेंगे?"

"उसकी टाँग ठीक हो जाने पर तुम दोनों को, जहाँ तुम लोगों की इच्छा होगी, जाने देंगे।"

"इससे तो आपको बहुत हानि होगी।"

"ठीक है, परन्तु हमारा यत्न तो पवित्र है। हम अपने विचार से तुमको हानि से बचने में मदद दे रहे हैं।"

बात यहीं समाप्त हो गई। लक्ष्मी के मन में अभी भी बात स्पष्ट नहीं हुई थी। यह यह तो समझ गई थी कि उसको हिन्दू बनाने का यत्न किया जा रहा है। मगर क्यों? यह वह नहीं समझ सकी थी। इससे अगले दिन जब मनू सो रहा था और खुशीराम काम पर गया था, लक्ष्मी ने बात अपने विषय में कर दी। "आपने कल कहा था कि आप मुझको समझायेंगी। परन्तु आप तो इस विषय में अपने आप बात ही नहीं करतीं।"

"बातें करने से भी भला कोई समझ सकता है? हमने तुमको दूषित वातावरण से निकाल स्वच्छ और स्वतन्त्र वायुमण्डल में रख छोड़ा है। इससे भी यदि तुम नहीं समझ सकतीं तो फिर हम क्या कर सकते हैं? यदि तुमको कोई बात समझ नहीं आती, तो तुमको स्वयं पूछना चाहिए।"

"पर दादी! कई बातें हैं, मैं क्या क्या पूछूँ? समझ नहीं आता। अच्छा यह बताइए कि आपको मेरे हिन्दू हो जाने से क्या लाभ होगा?"

"जब हम किसी भिखारी को दान देते हैं तो हमें क्या लाभ होता है, भी तुमने सोचा है?'

"कहते हैं कि पुण्य होता है। इससे हमारा अगला जन्म सुधरेगा।"

"बस फिर यही समझ लो। हिन्दू होने से तुम सुखी होगी। हमारा भी भला होगा। परन्तु मैं तुमको एक बात और कहती हूँ। भला अगले जन्म होगा या नहीं कहना कठिन है, परन्तु इस जन्म में अवश्य होगा।"

"यही तो मैं जानना चाहती हूँ कि क्या होगा?"

"तुम जानती हो कि इस समय मुसलमान देश में क्या कर रहे हैं? वे हमारे देश के एक भाग को पाकिस्तान बनाना चाहते हैं। पाकिस्तान के अर्थ ऐसी जगह है, जहाँ कोई हिन्दू न रह सके। यह व्यवहार सब मुसलमानों का है और सब मुसलमानी देशों में और सब कालों में रहा है। यदि हिन्दुस्तान में मुसलमानों की तादाद बढ़ती गई तो वे एक दिन यहाँ भी पाकिस्तान बनाने के लिए कहेंगे। परिणाम यह होगा कि हम यहाँ भी हिन्दू होते हुए नहीं रह सकेंगे। इससे हम अपने देश में मुसलमानों की संख्या बढ़ने नहीं देना चाहते। यदि तुम एक मुसलमान की बीबी बनी रही तो तुम्हारा सन्तान मुसलमान होगी और इस प्रकार देश में मुसलमानों की संख्या बढ़ जावेगी। यह न तो हमारे, न ही देश के लाभ की बात है।"

लक्ष्मी को यह बात समझ आ गई। वह जानती थी कि मन्नू के संगी-साथी हिन्दुओं को मारकर मिटा देने की बातें करते रहते हैं। आज उसे पता चला कि हिन्दू-मुसलमान के झगड़े की नींव में देश की बात है। इस दृष्टिकोण से सोचने पर उसे अपने एक मुसलमान से शादी कर लेने के दूसरे ही अर्थ निकलने लगे।

लक्ष्मी गम्भीर विचार में बैठी रह गई। उसी दिन साथ खाना खाने के समय उसने मन्नू से कह दिया, "मैं सोच रही हूँ कि क्यों मैंने एक मुसलमान से विवाह किया है।"

"तो तुमको मालूम नहीं?"

"मालूम तो है। मेरे से नित्य बलात्कार किया जाता था। उससे बचने के लिए मैंने तुमसे विवाह कर लिया था।

लत थी।"

"पर तुम तो कहती थीं कि तुम मुझसे प्रेम करती हो।"

"यह कहना भी मजबूरी थी।"

मन्नू यह सुन क्रोध से उतावला हो उठा, परन्तु विवश था। वह अभी हिल नहीं सकता था। इस कारण चुपचाप पड़ा दाँत पीसता रहा।

"मैं सोच रही हूँ, कि यदि मैंने विवाह मजबूरी से किया था तो वह मजबूरी अब नहीं रही। तुमने मुझको कई बार पीटा भी है, परन्तु मैं अपने को निर्दोष समझते हुए भी तुम्हारे पास रहने के लिए मजबूर थी। अब मैं अपने को तुम्हारे वश में नहीं पाती। इससे समझती हूँ कि मैं तुम्हारी बीवी नहीं हूँ।"

"पर तुम्हारा मुझसे नकाह जो पढ़ा जा चुका है।"

"नकाह पढ़ने से क्या होता है? मैं तुम्हारे पास नहीं रहना चाहती।"

जब राधा को पता चला कि लक्ष्मी ने मन्नू को जवाब दे दिया है तो उसने उसे, उसके समीप रखना उचित नहीं समझा। इस कारण उसने लक्ष्मी से पूछा, "तुमने उसके साथ रहने से इन्कार कर दिया है क्या?"

"हाँ, उन लोगों ने मुझको मजबूर कर दिया था कि मैं मन्नू से विवाह करूँ। अब आपकी कृपा से यह मजबूरी नहीं रही। एक बात है। मेरा उससे नकाह पढ़ा गया था। उसका क्या होगा?"

"वह नकाह अनियमित है। उसका अस्तित्व नहीं है। वह जुल्म था।"

"तब फिर ठीक है। यदि हो सका तो मैं उसके साथ नहीं जाऊँगी।'

अगले दिन पृथ्वीराम लक्ष्मी को साथ लेकर मन्नू के पास गया और बोला, "मन्नू भाई! मैं जैसा समझता था, वैसा ही हुआ है। यह कहती है कि अब तुम्हारे साथ नहीं जायगी।"

"क्यों?" मन्नू का प्रश्न था।

उत्तर लक्ष्मी ने दिया, "इसलिए कि तुम लोगों ने मेरे साथ म

अन्याय किया है। तुम्हारा मेरा साथ तुम्हारा एक भारी जुल्म था। मैं अपनी इच्छा से न कभी तुम्हारी बीबी बनी थी और न अब बनूँगी।"

"खुदा की नज़रों में जब एक दफा खाविन्द-बीवी बन गये तो हमेशा के लिए बन गए। अब हमको जुदा करनेवाला कौन है?'

"यह बात नहीं मन्नू! तुम्हारा इसका विवाह खुदा की रज़ामन्दी से नहीं हुआ। वह तो शैतान की करामात ही कहा जा सकता है।"

"मैं समझती हूँ कि यहाँ मैं आज़ाद हूँ और निकाह हुआ है अथवा नहीं, मैं अब तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगी।

"तो तुमने सुन लिया है न! अब मैं तुम्हें दरगाह से भेज रहा हूँ। अगर तो तुम चुपचाप चले जाओगे तो ठीक है और अगर किसी प्रकार का हल्ला भी किया तो पुलिस के हवाले कर दिए जाओगे और एक नाबालिग लड़की के भगाने (अपहरण) का मुकद्दमा चलाया जायेगा। साथ ही दरगाह में जो कुछ होता है, उसका भाँडा फोड़ कर (भेद खोल) दिया जायगा।'

मन्नू चुप था। वह सोच रहा था कि किस प्रकार अपनी बीबी को फिर पा सके।

६

बाज़ार में बलवा जारी रहा। नित्य छुरे पेट में घोंपे जाने की घटनाएँ होती रहीं। सरकार का बाज़ार लगाने का बन्दूक लगा रहा। पाकिस्तान रक्षक फ़ौजदार में बाधा गयी रही। कभी-कभी मुसलमान इकट्ठे मिल कर भी मन्दिरों पर अथवा अन्य हिन्दू सार्वजनिक संस्थाओं पर आक्रमण करते रहे। आर्य कन्या पाठशाला पर तो मुस्लिम फ़ौजियों का पहरा बैठा दिया गया था। इस समय तक हिन्दू लोग भी जवाबी आक्रमण करने लगे थे। एक दिन बीस हिन्दुओं को पेट में छुरे घोंपकर मार डाला गया। दूसरे दिन उतने ही मुसलमानों को मार डाला गया। एक दिन एक हिन्दू मन्दिर पर आक्रमण किया गया तो दूसरे दिन एक मस्जिद

हल्ला बोल दिया गया। इससे कस्बे म छुरा घोंपने की घटनाएँ
म हो गई। एक दिन मुसलमानों की भीड़ ने बलेश्वर जी के मंदिर
र आक्रमण करने की कोशिश की। अगले दिन हिन्दू लोगों ने दरगाह
पली शाह मुराद पर आक्रमण कर दिया। हिंदू लोग जानते थे कि
वहाँ भारी मुकाबिला किया जायेगा। इस कारण इस आक्रमण की भारी
तैयारी की गई थी। लगभग दो सौ हिंदू युवक भि‍न्न भिन्न दिशाओं
से एक निश्चित समय पर वहाँ पहुँच गये। फाटक पर के दो चपरासियों
को मारकर लोग भीतर घुस गये। यह इतना जल्दी जल्दी हुआ कि
फाटक पर के चपरासियों को दरगाह के भीतर सूचना भेजने का अवसर
ही न मिला। फाटक खोल जब भीड़ दरगाह में प्रवेश करने लगी तो
खतरे का घण्टा बजा दिया गया। इस घण्टे का शब्द सुनकर सराय की
ओर से बहुत से लोग हाथों में लाठियाँ लिये आते हुए दिखाई दिये।
आक्रमण करनेवाले भी इस बात के लिए तैयार थे। प्राय सब के पास
लाठियाँ थीं। उनमें से कई बन्दूकें लिये हुए भी थ। परिणाम यह
हुआ कि डटकर लड़ाई हो गई। दरगाह क रक्षकों के पास भी बन्दूकें
थीं। यदि आक्रमण करनेवालों की संख्या दरगाह की रक्षा करनेवालों स
बहुत अधिक न होती तो आक्रमण करनेवाले खदेड़ दिये जाते। आक्र
मण करनेवालों ने भागकर रक्षा करनेवालों को घेर लिया। पाँच मिनट
से अधिक नहीं लगे और दरगाह के रक्षक भाग खड़े हुए। आक्रमण
करनेवालों ने पीर साहब की आरामगाह में सब रक्षा करनेवालों को
धकेल दिया। इसमें पीर साहब ने स्वयं और दूसरे बन्दूकचियों ने मोर्चा
बाँध लिया। आक्रमण करनेवालों ने भी पर्दों के पीछे बैठकर आराम
गाह पर गोलियाँ चलानी आरम्भ कर दीं। शेष लोगों ने सराय पर
धावा बोल दिया।

सराय की रक्षा करनेवाले पुरुष तो पहले ही भाग गये थ और स्त्रियों
ने आक्रमण करनेवालों के आगे घुटने टेक अपनी जान की भिक्षा माँगनी
आरम्भ कर दी। आक्रमण करनेवालों को सराय में कैद पन्द्रह स्त्रियाँ

मिलीं। उन्होंने बताया कि वे हिन्दू हैं और उनको भाँति-भाँति के प्रलोभन देकर यहाँ लाया गया और पश्चात् उनको पतित कर उन्हें मुसलमान बनाया गया है और अब उनकी मुसलमानों से शादी करने का प्रबन्ध किया जा रहा था।

जब सराय की स्त्रियाँ छुड़ा ली गई तो बन्दूकों से आरामगाह पर गोलियाँ चलाने वाले और दूसरे आक्रमण करने वाले पीछे हटते हुए दरगाह के फाटक से बाहर निकल गए और फाटक का दरवाजा बन्द कर स्त्रियों को साथ ले वहाँ से चले गए।

इस डाके के समाचार ने बम्बई नगर में भारी हलचल उत्पन्न की। मुसलमानों ने यह विख्यात किया कि दरगाह में से मुसलमान यतीम औरतों और बच्चों को हिन्दू उड़ा कर ले गए हैं। हिन्दुओं ने यह बात नगर भर में फैला दी कि दरगाह पीर शाह मुराद में सैकड़ों हिन्दू स्त्रियाँ मुसलमान बनाने के लिए कैद कर रखी थीं। वे सब छुड़ा ली गई हैं।

इस घटना का प्रभाव इसके पश्चात् दो दिन तक बम्बई में सैकड़ों छुरे घोंपने की वारदातों के रूप में हुआ। मन्नू दरगाह में वापस आ चुका था और उसके बताने पर मुसलमानों ने कई बार खुशीराम के घर पर आक्रमण किया। एक दिन तो खुशीराम अपने मकान की खिड़की में बैठा हुआ और अपने साथ बीस महावीर दल के स्वयंसेवकों की सहायता से आक्रमणकारियों का मुकाबिला करता रहा। अगले दिन वह मकान को ताला लगाकर और अपने परिवार तथा लक्ष्मी सहित बम्बई से बाहर चला गया। मुसलमान आक्रमणकारियों को विदित था कि मकान का मालिक मुसलमान है, इससे मकान को ताला लगा देख आक्रमण बन्द हो गए। दरगाह वाली घटना के पश्चात् बम्बई सरकार को शान्ति स्थापित करने में कई दिन लग गए। कांग्रेसी क्षेत्रों में यह कहा जा रहा था कि हिन्दुओं ने यह आक्रमण कर सैकड़ों लोगों की हत्या करवाई है। जहाँ कहीं ये लोग एकत्रित होते थे, वहाँ दरगाह वाली वारदात का उल्लेख अवश्य होता था और हिन्दुओं को मूर्ख और शरारती अवश्य

कहा जाता था।

सदाशिव बम्बई असेम्बली की मीटिंग में गया तो अपने साथियों से उक्त बातें सुनकर तिलमिला उठा। एक आनन्दप्रिय देसाई ने तो यहाँ तक कह दिया, "जब तक ये मराठे बम्बई से निकाल नहीं दिये जाते, तब तक यहाँ शान्ति नहीं हो सकती।"

इस पर एक श्री गोडबोले कहने लगे, "महाराष्ट्रियों की बात नहीं, यह तो चितपावन ब्राह्मणों की बदमाशी है।"

इस पर एक और कहने लगे, "अजी पंजाबियों ने बम्बई में आकर यह झगड़ा खड़ा कर दिया है। मैं तो एक प्रस्ताव असेम्बली में रखने वाला हूँ कि सब गैर बम्बई वालों को पुलिस ऐमरजेन्सी पावर्स ऐक्ट के अधीन बम्बई से बाहर चले जाने की आज्ञा दे दी जावे।"

इन बातों को सुनकर सदाशिव का मस्तिष्क चक्कर खाने लगा। उसने कहा, "मुझे बहुत शोक है कि मैं आप जैसे अनभिज्ञ लोगों की पार्टी में हूँ। आपको क्या यह भूल गया है कि दिल्ली से एक खुली चिट्ठी मिली थी, जिसमें यह कहा गया था कि मुस्लिम लीग बम्बई में डायरेक्ट ऐक्शन करने वाली है? उस चिट्ठी में तो इसके आरम्भ होने की तारीख तक दे दी गई थी। इस समय पर की चेतावनी से लाभ न उठाकर हमने मुसलमानों पर प्रतिबन्ध नहीं लगाये। अब जब मुसलमानों की करतूत का हिन्दू विरोध करने लगे हैं तो तुम लोग उनको गाली देने लगे हो?"

गोडबोले ने मुस्कराकर कहा, "ओह! मैं भूल गया था कि आप भी चितपावन हैं। परन्तु भाई सदाशिव! तुम तो सोशियलिस्ट थे। यह आज क्या हो गया है?"

"और मेरा विचार था कि आपकी स्त्री मुसलमान है।" एक और ने कहा।

सदाशिव ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "सोशियलिस्ट होने से क्या न्याय अन्याय जानने की बुद्धि लोप हो जाती है अथवा मुसलमान बीबी रखने से मनुष्य अन्धा हो जाता है? भाई! मुझको आपकी बुद्धि

समझ नहीं आ रहा। इसलिए यहाँ मुसलमानों ने आरम्भ किया और जब सब कारोबार बन्द होने लगा, कारखाने बन्द होने से मज़दूर भूखे मरने लगे और सरकार शान्ति स्थापित करने में सफल नहीं हुई, तो क्या यह लोगों का कर्तव्य नहीं था कि अपनी भी रक्षा कर सकें। दरगाह के विषय में मैं जानता हूँ कि सच ही वहाँ हिन्दू औरतें कैद कर रखी जाती हैं और उनको मुसलमान बन जाने पर विवश किया जाता है। अगर वहाँ से उन औरतों को छुड़ा लिया गया है तो कौन पाप हो गया है?"

सदाशिव की बात अभी समाप्त भी नहीं हुई थी कि सुनने वाले बिना उसके कथन की ओर ध्यान दिये वहाँ से चल दिये। तभी साथ के कुछ और सदस्य दरगाह पर हिन्दू लोगों के आक्रमण की निन्दा कर रहे थे। एक कह रहा था, "इन लोगों ने दरगाह पर आक्रमण कर अपने को झगड़ा करने वाला सिद्ध कर दिया है। यह सावरकर पार्टी ही थी, जिसका यह काम है। ये लोग सदैव से देशद्रोह करते रहे हैं। देखो न पंजाब में तो मुसलमानों ने शान्तिमय सत्याग्रह करने का फैसला कर लिया है और ये हिन्दू अभी तक मूर्खता पर तुले हुए हैं।"

इस पर सदाशिव को फिर क्रोध आ गया। उसने घूमकर उनसे पूछा, "वहाँ शान्तिमय सत्याग्रह हो रहा था शायद?"

वहाँ पर मौन खड़े हुए सदाशिव का मुख इस प्रकार देखने लगे, जैसे उसने कोई पुराना अथवा अनोखी भाषा बोली है। उनको इस प्रकार अपनी ओर देखते हुए पा सदाशिव ने कहा, 'मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि मुसलमानों ने पंजाब में तो सत्याग्रह लड़ाई-झगड़े किए हैं। इससे यहाँ पर उनका मुकाबिला यदि कोई सत्याग्रह करता है तो क्या बुरा करता है? फिर दरगाह में जो बदमाशी हो रही थी, उसका भेद खोलने के लिए जो-कुछ किया गया है, वह प्रशंसनीय नहीं है क्या? इस बदमाशी को बन्द कर तो सरकार की सहायता ही हुई है।"

"पर यह तो कानून को अपने हाथ में लेने के बराबर है।"

"कानून कहाँ है भी। यदि कानून होता तो इतने दिन से चल रहा

ा बन्द न हो जाता।"

सदाशिव के ऐसे व्यवहार पर सब अचम्भे में उसका मुख देखने लगते थे। कई लोग तो यह समझने लगते थे कि झगड़े की किसी घटना को देखकर उसका मन डोल गया है। यह समझ वे उसको वहीं खड़ा छोड़ दूसरी ओर चले जाते थे। सदाशिव उन लोगों का यह व्यवहार देखकर चकित रह जाता था। एक बात उसके मन में अंकित होती जाती थी कि देश की वर्तमान परिस्थिति में ये लोग राज्य करने के योग्य नहीं। मुसलमानों को इस प्रकार खुली छुट्टी देनी और उन लोगों की निन्दा करनी, जो देश में अशान्ति उत्पन्न करने वालों का विरोध कर रहे हैं, देश-द्रोह से कम अपराध नहीं। ऐसा समझ वह अपनी पार्टी के लोगों को खरी खरी सुनाने का विचार करने लगा। यह अवसर उसे पार्टी की मीटिंग में मिला।

पार्टी-मीटिंग में बम्बई और अहमदाबाद में शान्ति स्थापित करने में सरकार की असफलता पर विचार करने के लिए एक प्रस्ताव रखा गया। इस प्रस्ताव पर सदाशिव ने बोलने का यत्न किया और बहुत कठिनाई से पार्टी के प्रधान ने उसको पाँच मिनट दिये। सदाशिव ने कहा, "मेरी बीवी दरगाह शाह मुराद में पली है। पीर वली इब्राहीम ने उसे अपनी लड़की मानकर पाला था। इस कारण जो बातें उस दरगाह के विषय में मैं जानता हूँ, वह असत्य नहीं हो सकतीं। मैं जानता हूँ कि हिन्दू लड़कियों को चुराकर और धोखा देकर वहाँ लाया जाता है, उनसे बदफेली करने के लिए गुण्डे उस दरगाह में खिला पिलाकर तैयार रखे जाते हैं। उन औरतों पर बलात्कार तब तक जारी रखा जाता है, जब तक कि वे मुसलमान से विवाह करने पर राज़ी नहीं हो जातीं। ऐसी अवस्था में उस दरगाह पर तो आज से कितने ही काल पहिले सरकारी कब्ज़ा हो जाना चाहिए था। हम, जो इस समय प्रान्त की सरकार बनाये हुए हैं, प्रान्त में इस दरगाह जैसी संस्थाओं को सहन नहीं कर सकते। मैं चाहता हूँ कि हमारी पार्टी सरकार से यह माँग करे कि इस दरगाह पर

सरकार अधिकार कर ले और इसके वली को पकड़कर उस पर वरदा फरोशी करने का मुकद्दमा चलाया जाय।"

एक कांग्रेसी सोशियलिस्ट सदस्य ने कहा "यह झूठ है। इस किस्म के मजहबी नेता को इस प्रकार झूठे इल्जाम लगाकर कैद करने से भारतवर्ष की तमाम मुसलमान जनता को अपने खिलाफ कर लेने के बराबर है। ऐसा बेवकूफी कांग्रेस पार्टी नहीं कर सकती।'

सोशियलिस्ट सदस्य के इस वक्तव्य पर पार्टी के सब सदस्यों ने तालियाँ पीटीं। इस बात का उत्तर देने के लिए सदाशिव ने खड़े होकर समय माँगा तो प्रधान ने उसे मना कर दिया।

१८

सदाशिव के पार्टी में इस प्रकार खुलकर मुसलमानों के और दरगाह शाह मुराद के विरुद्ध कहने पर इसकी चर्चा नगर-भर में फैल गई। कांग्रेसी सदस्य ही उसकी निन्दा करने लगे थे। दूसरी ओर हिन्दू एसेम्बली के लोग यह जान गये कि दरगाह के भीतर की बातें सत्य ही बहुत भयानक हैं वे सदाशिव की प्रशंसा करने लगे। उसके कही बातों का समाचार मुसलमानों और पीर इब्राहीम तक भी पहुँचा। वह उसके यह कहने पर कि उसकी लड़की से उसकी शादी हुई है, जल भुन गया। उसने उसका पता निकाला तो उसके अचम्भे का ठिकाना न रहा। उस यह मालूम नहीं था कि सदाशिव नौकरी छोड़कर मकान भी बदल चुका है। उसने उसकी खोज प्रारम्भ कर दी।

धीरे धीरे झगड़ा शान्त हो चला। कुछ लोग तो लड़ते-लड़ते थक गये थे। कुछ मुसलमान यह अनुभव करने लगे थे कि हिन्दू भी दूसरे को चोट कर सकते हैं और उनकी चोट अधिक गहरी भी हो सकती है। इसके साथ यह भी बात थी कि मुस्लिम लीग समझने लगी थी कि उसने बम्बई और अहमदाबाद के मिल-मालिकों को काफी नुकसान पहुँचा दिया है। मुस्लिम लीग के नेताओं का यह विश्वास हो गया

मिलों के मालिक कांग्रेसी नेताओं पर ज़ोर डाल रहे हैं कि मुसलमानों
समझौता कर लें।

इस पर भी एक दिन लगभग बीस मुसलमान गुण्डों ने सदाशिव के
मकान को रात के दो बजे, जब नगर में कर्फ्यू ऑर्डर लगा हुआ था,
घेर लिया। मकान का दरवाज़ा तोड़ वे भीतर घुस गये और सदाशिव के
हाथ-पाँव बाँध उसे कमरे के एक कोने में डाल, उसकी बीवी और साथ
को पकड़कर ले गये। अगले दिन पुलिस ने मकान के दरवाज़े टूटे हुए
देख मकान की तलाशी ली, तो सदाशिव के बन्धन खोले। सदाशिव ने
थाने में जाकर रिपोर्ट लिखवाई कि उसे यक़ीन है कि उसके घर में डाका
डालनेवाले दरगाह के गुण्डे थे। पुलिस दरगाह के विरुद्ध रिपोर्ट लिखने
में झिझकती थी। सदाशिव ने जब बताया कि वह असेम्बली का मेम्बर
है तो उन्होंने रिपोर्ट तो लिख ली, परन्तु उस पर कार्यवाई करने के लि
तब तक तैयार नहीं हुए, जब तक कि सदाशिव प्रीमियर से लिखवा
नहीं लाया। इसमें दो दिन लग गये और जब पुलिस वहाँ पहुँची
खनीजा और उसकी माँ दोनों बम्बई से बाहर ले जाई जा चुकी थीं।

सदाशिव बहुत परेशान था। एक ओर तो उसे पुलिस के सम्मुख
और दूसरे प्रीमियर के सामने लज्जित होना पड़ा, दूसरी ओर स्त्री भी
नहीं मिली। वह इतने दिनों से खुशीराम से नहीं मिला था। अब उसने
अनुभव किया कि किसी गैर सरकारी संस्था से सहायता लेनी चाहिए।
खुशीराम अब बम्बई में लौट आया था। उसने जब सदाशिव की
कहानी सुनी तो कहा कि दोनों औरतें जरूर हैदराबाद में हैं। उसका
अनुमान था कि पीर साहब के हैदराबाद में बहुत-से मुरीद हैं और
औरतों को मुरदिल रखने के लिए उस रियासत से अधिक उपयुक्त स्था
और नहीं हो सकता।

खुशीराम का कहना था कि इस प्रकार की बातों का पता करना
सहज नहीं। सरकार, जिसके पास अनन्त साधन हैं, यह भी खोज करे
तो सफलता निश्चित नहीं।

"पर खुशीराम जी !" सदाशिव ने कहा, "मैं यत्न करना चाहता हूँ।"

"मुझे आपकी मनोवृत्ति में यह परिवर्तन देख बहुत प्रसन्नता हुई है। बताइये मैं आपकी कैसे सहायता कर सकता हूँ।"

"आप ही बताइये न कि मैं क्या करूँ। आप ऐसी बातों में बहुत अनुभव रखते हैं। यदि कुछ धन की आवश्यकता हो तो मेरी सास का कुछ रुपया मेरे पास रखा है। वह खर्च किया जा सकता है। मैंने दुनियाँ के विषय में भूल की थी और उसका मुझे अभी तक शोक है। यद्यपि उसके न मिल सकने से ही मुझको स्वर्णीजा मिली थी, इस पर भी मैं उसके साथ न्याय नहीं कर सका। वह मेरे ही कारण अपहरण की गई थी।"

"देखिये सदाशिव जी! एक बात मैं आपको बताना चाहता था। वह आपसे मिल न सकने के कारण अभी तक बता नहीं सका। पिछले झगड़े के दिनों में हम लक्ष्मी को छुड़ाने में सफल हुए हैं। वह मन्नू के पास थी। उसे उससे मुक्त कराकर मैंने लाहौर भेज दिया है।"

"अच्छा! यह तो बहुत खुशी की बात है। कहाँ से मिली वह?"

"दरगाह शाह मुराद के पिछवाड़े में, एक मकान में रहती थी।"

'भाई खुशीराम जी! इन औरतों को छुड़ाने का भी कोई उपाय बताइये। मुझको विश्वास है कि ये दोनों मेरे साथ रहना पसन्द करेंगी। इस समय जो अत्याचार उन पर हो सकता है, उसका ध्यान कर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।"

खुशीराम गहरी सोच में पड़ गया। कुछ काल तक सोचने के पश्चात् उसने कहा, "अच्छी बात है, एक दो दिन में मैं आपसे मिलूँगा। यदि कोई तरकीब निकल सकी, जिससे वे छुड़ाई जा सकीं, तो हम यत्न करेंगे।"

तरकीब निकल आई और सदाशिव से बता दी गई। उसने एक सहस्र रुपया खुशीराम को देते हुए कहा, "मेरे पास कुछ और भी है, मैं वह सब दे सकता हूँ। आप इसमें पूरा यत्न करें।"

११

इसके दो-तीन दिन पश्चात् की बात है कि एक युवक लहू-लुहान

हुआ दरगाह के फाटक के बाहर अर्धचेतनावस्था में पड़ा देखा गया। इन दिनों दरगाह का फाटक प्रायः बन्द रहने लग गया था। आने-जाने वालों के लिए खिड़की खुल जाती थी।

भीतर से कोई बाहर आने लगा तो खिड़की खुली और वह आदमी बाहर निकला। खिड़की उसके निकलने के पश्चात् अभी बन्द नहीं हुई थी कि निकलने वाले की दृष्टि उस घायल पर पड़ी। उसने खिड़की को बन्द नहीं होने दिया और घायल व्यक्ति से, पूछने लगा कि वह कौन है। जब कुछ जवाब नहीं मिला तो उसने उसके हृदय पर हाथ रखकर देखा कि उसका दिल धड़क रहा है। उसने उसकी तहमत उठाकर देखा और विश्वास कर लिया कि घायल कोई मुसलमान है। पश्चात् उसने खिड़की बन्द करने के लिए खड़े चौकीदार को कुछ कहा। चौकीदार ने आवाज दी, जिससे भीतर से दो और आदमी आ गए और उस घायल को उठाकर भीतर सराय में ले गए।

सराय में ले जाकर देखा गया कि उसके कन्धे पर छुरे का घाव है। वहाँ उसकी मरहम पट्टी की गई। जब उसे शोरबा इत्यादि पिलाया गया और उसे होश आई तो उसने बताया, "मैं बाहर सड़क पर आ रहा था कि एक काफ़िर ने पीछे से आकर छुरा दे मारा। मैं उसे पकड़ने लगा तो वह भाग गया। खून बहुत निकल जाने के कारण मेरे में कमज़ोरी बहुत मालूम होने लगी थी। मैंने देखा कि एक बड़ा सा फाटक है। अन्दर किसी अमीर आदमी की कोठी होगी, इससे मदद की उम्मीद से बैठ गया। खून बहुत निकल जाने की वजह से मुझमें बेहोशी आने लगी तो मैं लेट गया। मुझको होश आई है तो अपने को यहाँ पाता हूँ।'

"तुम कहाँ के रहने वाले हो ?"

"मैं यू० पी० में लखनऊ का रहनेवाला हूँ। दसवीं जमायत पास की है। तीन दिन से बम्बई में काम की तलाश में आया हुआ हूँ।"

"क्या नाम है ?"

"नज़ीरुद्दीन।"

"यहाँ किस जगह ठहरे हो ?"

"दादर, पंजाबी सराय में।"

"कुछ सामान भी है ?"

"एक छोटा सा बिस्तर है। वहीं सराय में रखा है।"

"अच्छी बात है, तुम यहाँ ही रह सकते हो। जब ठीक हो जाओगे तो बिस्तर ले आना।"

"पर साहब! मैं बेकार हूँ और जेब में रुपये भी सिर्फ़ चार रह गए हैं। इसलिए यहाँ शहर से इतनी दूर रह कर क्या करूँगा ?"

"देखो यहाँ के मालिक आयेंगे तो कहना। वे तुम्हारी बहुत कुछ मदद कर सकते हैं।"

"वे कब आयेंगे ?"

"शाम की नमाज़ के बाद यहाँ आते हैं। तुम उनसे कहना।"

नज़ीरुद्दीन खामोश हो गया। मरहम-पट्टी करनेवाला चला गया। बाद दोपहर उसको चाय और खाने को भुने चने दिए गए। रात होते होते पाँच आदमियों के साथ पीर इब्राहीम साहब आये। सराय के सब आदमी उठकर उनकी दुआ लेने के लिए घुटनों के बल होकर, उनके चोगे के किनारे को आँखों से लगाने लगे। वे एक हाथ मे तसबीह लिए हुए मुँह में कुछ मुसकुराते हुए चले आ रहे थे। जब वे नज़ीरुद्दीन के सामने पहुँचे तो उसने भी दूसरों की भाँति उनके चोगे को आँखों से लगाया। पीर साहब उसके सामने ठहर गए। उसे उठने का संकेत कर कहने लगे, 'इन काफ़िरों को छुरा चलाना भी नहीं आता।'

"हुज़ूर!" नज़ीरुद्दीन ने झिझकते हुए कहा, "मैं ज़ख्मी हो जाने के बाद भी उसको मार डालने की ताकत रखता था, मगर वह भाग ही गया।"

"ख़ैर छोड़ो इस बात को। तुम क्या करना जानते हो ?"

"दसवीं जमाअत तक पढ़ा हूँ। जिसम तो आप देख ही रहे हैं कि वर्ज़िश से कैसा गठ गया है। कहने से मुराद यह है कि कुली के काम से

लेकर एक बाबू के काम तक, सब-कुछ कर सकता हूँ।"

"बहुत अच्छी बात है। उम्मीद है कि दो दिन तक तुम्हारा जख़्म ठीक हो जायेगा। तब तक तुम यहीं ठहरो।"

पीर साहब चले गए। नसीरुद्दीन ने अपने पास बैठे आदमी से पूछा, "ये कौन थे?"

"यहाँ के मालिक थे।"

"इस कोठी के मालिक! ये तो कोई खुदा दोस्त मालूम होते थे।"

दूसरे ने मुस्कराकर कहा, "भाई! यह कोई कोठी नहीं है। यह तो एक दरगाह है। आप हज़रत वली हैं। इस दरगाह के पीर हैं। आपका नाम हज़रत वली इब्राहीम साहब है।"

"दरगाह! मैंने समझा था किसी धनी आदमी की कोठी है। खुदा का शुक्र है कि किसी काफ़िर से वास्ता नहीं पड़ा।"

धनी की कोठी की बात सुनकर समीप बैठे सब हँसने लगे। नसीरुद्दीन भी हँसने लगा। इस समय एक और ने पूछा, "इस सड़क की तरफ कैसे चले आए थे?"

"मैं समझता था कि इस तरफ बड़े-बड़े लोगों की कोठियाँ हैं। किसी के यहाँ नौकरी मिलने की उम्मीद में घूम रहा था। मुझको लोग कहते हैं कि औरतें मेरी सूरत शक्ल को पसन्द करती हैं।"

उसकी इस बात को सुन सब हँसने लगे, मगर वह सिर्फ़ मुस्कराकर रह गया। इस पर एक ने उससे हँसी करने के लिए कह दिया, "दोस्त! बात तो किसी ने ठीक ही बताई मालूम होती है। खुदा ने जिस्म अच्छा गठा हुआ दिया है और देखने में भी नक्श खराब नहीं हैं, मगर औरतों को वश में करनेवाली चीज़ धन तुम्हारे पास नहीं है। इससे मेरी राय मानो और औरत का तब तक नाम न लेना, जब तक जेब में काफ़ी पैसा न हो जाये।"

दो दिन में नसीरुद्दीन की मेल-मुलाकात सराय में दूसरे रहनेवालों से खूब हो गई थी। वह हँसोड़ मुख और दूसरों से मज़ाक में उड़ाया

जाना पसन्द करता था। दो दिन में ही यह वहाँ रहनेवाले सब लोगों से दिल मिल गया और उनके साथ अपनी और उनकी अन्तरंग बातें करने लगा। उसको आए हुए तीसरा दिन हुआ था कि उससे किसी ने पूछ ही लिया, "भाई नज़ीर! तुमसे किसी औरत ने आज तक मुहब्बत की है या नहीं?"

"चुप रहो दोस्त। ये बातें कहने सुनने की नहीं होतीं।"

"तब तो ज़रूर सुननी चाहिए। मैं तो तुमको अभी बच्चा ही समझता था।"

"तो ठीक ही समझते थे। औरतों के मुहब्बत करने के यह मायने नहीं कि मैंने भी उनसे मुहब्बत की है।"

"तो क्या तुम्हारा इससे यह मतलब है कि तुम्हें किसी ने प्यार किया और तुमने उसकी ओर देखा भी नहीं।"

"बिल्कुल यही मतलब है।"

"वल्लाह! हमसे तो ऐसा हो नहीं सकता। और मैं समझता हूँ कि ऐसा होना भी नहीं चाहिए।"

"तुम तो फिर पूरे मैंसे ही हो। भाई जॉन! मन-पसन्द की चीज़ न हो तो मुहब्बत कैसे हो सकती है? यह तो पशुओं की बात हुई। जिस गाय-भैंस को देखा, वहीं पर इश्क सिर सवार हो गया।"

"मरहबा! कुर्बान जाऊँ तुम पर। पर दोस्त! यह तो बताओ कि तुम्हारे पसन्द की अभी कोई मिली भी है या नहीं?"

"नहीं। अच्छा भाई! यह तो बताओ कि हमारे पीर साहब ने अपने लिए इतनी बड़ी आरामगाह बना रखी है। क्या अकेले हैं या इनका बहुत बड़ा कबीला है?"

"कबीला तो लम्बा-चौड़ा नहीं, पर हकीकत यह है कि ये आजकल हिंदुओं के हमले से डरते बहुत हैं। इसलिए बहुत-से आदमी अपनी हिफ़ाज़त के लिए ऐसे ही रख छोड़े हैं। वैसे तो इनकी एक बीवी और एक लड़की थी। मगर वे एक हिन्दू के चुंगल में फँस गई थीं। हम

सब ने मिलकर उनको छुड़ाया और अब वे कहीं बाहर भेज दी गई हैं।"

"कहाँ?"

"यह तो हमें मालूम नहीं। सुना है कहीं हैदराबाद की तरफ हैं।"

"बहुत खूबसूरत है इनकी लड़की?"

"मैंने इतनी खूबसूरत औरत और कहीं नहीं देखी।"

"तुम्हारी बातें मेरे मन में गुदगुदी पैदा कर रही हैं।"

"यह अजीब आदमी हो। बिना देखे ही मुहब्बत करने लगे?"

"तुमने तो देखी है न?"

"देखी ही नहीं, बल्कि उसके खाविन्द के घर से उठाकर मैं ही नीचे मोटर तक लाया था।"

"ओह! तो सचमुच ही वह बहुत खूबसूरत है।"

"वल्लाह! कुछ न पूछो। पर हम ग़रीबों को उसका ख्याल मन में लाकर अपना दिमाग़ ख़राब नहीं करना चाहिए।"

"तो उसकी शादी किसी बहुत अमीर के साथ हुई है शायद।"

"नहीं, बहुत अमीर तो नहीं। परन्तु लड़का बहुत खूबसूरत है। सुना है कि बहुत शरीफ भी है।"

"तो फिर उसको वहाँ से निकाला क्यों?"

"वह था हिन्दू। ख्याल यह था कि इनकी लड़की उसे मुसलमान बना लेगी। मगर हुआ इससे उलटा। लड़की और उसकी माँ भी, दोनों खुद हिन्दू हो गई।"

नजीरुद्दीन ने आगे बात नहीं चलाई। वह चुपचाप अपना मन में कुछ सोचता रहा। उससे बातें करनेवाले ने यह समझा कि उस पर इश्क का भूत सवार हो रहा है। इससे मन ही-मन मुस्कराता हुआ उसके पास से चला गया।

इससे अगले दिन नजीरुद्दीन को पीर साहब ने बुलाया और अपने सामने बैठने को कहकर पूछा, "ज़ख्म का क्या हाल है?"

"अब तो ठीक मालूम होता है।"

"तुम मेहनत का काम कर सकोगे ?"

"जी हाँ। मैं समझता हूँ कि अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ।" इतना कहकर उसने अपना ज़ख़्मी हाथ उठाकर और दो-तीन बार ऊपर नीचे हिलाकर दिखाया।

"मेरा मतलब यह नहीं है। मैं तुमको गल्ला ढोने के काम में नहीं लगा रहा। मेहनत से मेरा मतलब है कि सफर पर जा सकते हो ?"

"जी हाँ, बखूबी जा सकता हूँ।"

"लेकिन तुम पर मैं कितना एतबार कर सकता हूँ ?"

"आज़मा कर देख लीजिए।"

"जो लोग मैंने यहाँ रख हुए हैं, वे सब बेवकूफ हैं। काम कम करते हैं और शोर ज्यादा मचाते हैं। देखो, एक बात मैं तुमको बताता हूँ। जो इन्सान अपने काम से वास्ता रखता है और फ़ज़ूल की बातों की ओर तवज्जो नहीं करता, वह हमेशा अपने मक़सद में कामयाब होता है। अगर तुम वायदा करो कि रास्ते में औरतों के पीछे नहीं भागते फिरोगे तो मैं तुमको अपने यहाँ नौकर रख सकता हूँ।"

"हुज़ूर! मैं जब ज़ख़्मी होकर इस दरगाह के फाटक पर आया था तो मेरा ख्याल था कि यह किसी अमीर का घर है। पहले दिन ही जब आपके दीदार हुए थ तो मैं समझता था कि किसी अमीर लखपति से गुफ्तगू कर रहा हूँ। पीछे मुझको मालूम हुआ कि आप कौन हैं और क्या हैं। जब से मुझको आपकी असली सिफ्त मालूम हुई है, तब से ही मेरे मन में हुज़ूर की खिदमत करने का ख्याल उठ रहा है। अब आपने मेरे सामने मेरे मन की बात कहकर मेरे रोएँ-रोएँ को खुश कर दिया है। मैं आपकी खिदमत बजा लाने के लिए अपनी जान तक हाज़िर करने को तैयार हूँ। हुक्म दीजिए और देखिए कि मैं कितनी जाँ फ़िशानी से हुक्म बजा लाता हूँ।'

"तुम बात करने में तो बहुत चालाक मालूम देते हो। अगर काम भी इतनी ही खूबी से कर सको तो मैं तुमको सोने का बना दूँगा।"

"हुजूर ! आजमा कर देखिए।"

"अच्छा तो यह लो। यह तुम इस ऊपर लिखे पते पर ले जाओ और तीन-चार दिन में इसका जवाब लेकर वापस आना चाहिए।"

१२

नजीरुद्दीन को एक चिट्ठी दी गई थी। उस पर हैदराबाद रियासत हौशगाबाद का पता लिखा था। उसको आने-जाने और रास्ते में खाने पीने लायक खर्चा दिया गया और लक्ष्य-स्थान पर पहुँचने का मार्ग बता कर रेल का टाइम-टेबल दे दिया गया। उसको यह बता दिया गया था कि उसने अपना काम अथवा लक्ष्य-स्थान किसी को नहीं बताना। नजीरुद्दीन पीर साहब से आज्ञा लेकर जब बाहर आया तो उसका हृदय धक धक कर रहा था। उसके मन में यह आशा अङ्कुर पकड़ती जा रही थी कि यह ज़रूर पीर साहब की लड़की के पास चिट्ठी लेकर जा रहा है। उसका बिस्तर सराय से पीर साहब ने मँगवा लिया था और यह उसे साथ ले जाने को दे दिया गया था। दरगाह में से जब वह जाने को तैयार हुआ तो सब उसके आसपास जमा हो गए और पूछने लगे कि क्या उसकी नौकरी नहीं लगी अथवा क्या पीर साहब ने उसकी मदद नहीं की ? उसने यह बताया कि हजरत ने उसको कुछ रुपये दिए हैं, जिससे वह बम्बई में कुछ दिन रहकर काम ढूँढ सके। अब वह काम ढूँढने की कोशिश करेगा।

"आज बम्बई में फ़साद की वजह से बेकारी बढ़ गई है और काम मिलना मुश्किल है।" उनमें से एक ने कहा। सब लोग उसके जाने से दुःख अनुभव कर रहे थे। वह तीन दिन में ही सब का प्रिय हो गया था। एक ने तो यहाँ तक कहा कि वह उस दिन न जाये और उस शाम को हजरत के आने पर वे सब उसकी सिफ़ारिश करेंगे परन्तु नजीरुद्दीन का यह कहना था कि अब वह हजरत से वायदा कर आया है कि नौकरी ढूँढने की पूरी कोशिश करेगा।

सराय में रहने वाले लोगों की संख्या ग्यारह थी। नजीरुद्दीन ने जाने से पहिले सबसे हाथ मिलाया और कई लोगों से गले मिला। इस प्रकार सबसे विदा लेकर दरगाह से बाहर निकल सीधा विक्टोरिया टर्मिनस की ओर चल पड़ा।

अगले दिन वह हैदराबाद जा पहुँचा। चिट्ठी पर लिखे पते पर पहुँच उसने देखा कि एक आलीशान मकान है। मकान के चारों ओर एक अहाता है। अहाते के फाटक पर चौकीदार ने उसे रोक लिया, और पूछा "कहाँ जा रहे हो ?"

"बीबी फातिमा के नाम की चिट्ठी है।"

"कहाँ से आए हो ?"

"बम्बई से।"

"भीतर जा सकते हो।"

नजीरुद्दीन अहाते में से निकल सामने तीन मंज़िली इमारत की ड्योढ़ी पर जा पहुँचा। वहाँ खाकी वर्दी पहिने चपरासी खड़ा था। उसके पास पहुँच उसने कहा, "भाई ! बीबी फ़ातिमा की चिट्ठी है।"

उसने भी वही प्रश्न किया, जो बाहर चौकीदार ने किया था। चपरासी ने उसका उत्तर सुन कहा, "चिट्ठी मुझको दे सकते हो।"

"हुक्म है कि बीबी फ़ातिमा को ही दी जावे।"

"तब तो यहाँ रहना पड़ेगा। जब तक मालिक नहीं आ जाते, वे चिट्ठी लेने बाहर नहीं आ सकतीं। मालिक शहर से बाहर गये हुए हैं।"

"मजबूरी है। चिट्ठी तो उनको ही दे सकता हूँ। हाँ ! आपके मालिक की इन्तज़ार कर सकता हूँ। वे कब तक आयेंगे ?"

"मोटर से गए हैं। रात को आ सकते हैं। नहीं तो कल आयेंगे।"

"तब तक तो बहुत देर हो जायगी। पर मैं कर भी कुछ नहीं सकता। यहाँ कोई और नहीं जो उनको यहाँ तक ला सके ?"

चपरासी ने सिर हिला दिया। इस पर नज़ीरुद्दीन ने कहा, "तो भाई ! कहाँ ठहरूँ ? कल का चला हुआ हूँ। सफ़र की थकावट से चूर

चूर हो रहा हूँ।"

"नाम क्या है?" चपरासी ने पूछा।

"नज़ीरुद्दीन।"

"*अच्छी बात है। तुम उस सामने के कमरे में आराम कर सकते हो।*"

"कुछ खाने-पीने और गुसल वगैरा का भी बन्दोबस्त हो सकेगा?'

"हाँ, कमरे के साथ संडास है। कमरे के पीछे नल लगा है। यहाँ एक और चपरासी है। उससे कहना, वह तुम्हारे खाने पीने का बन्दोबस्त कर देगा।"

नज़ीरुद्दीन ने बिस्तर कन्धे पर रखा और बताए स्थान पर जा पहुँचा। सत्य ही यहाँ एक और चपरासी बैठा था और उसने भी वही प्रश्न किए, जो चौकीदार ने और पहिले चपरासी ने किए थे। उसने भी पहिले की भाँति ही उत्तर दिया। चपरासी ने बताया कि मालिक फारम पर गये हुए हैं और अगले दिन सुबह आयेंगे। तब तक वह इस मेहमानखाने में रह सकता है। उसको एक खाट पर बिस्तर रख, गुसल वग़ैरा करने के लिए कह, पूछने लगा, "अभी सुबह से कुछ खाया है या नहीं?"

"भाइ! बिना टट्टी पेशाब किए खाने को तबीयत नहीं की।"

"तो तुम इससे फ़ारिग़ हो जाओ, तब तक मैं खाने के लिए जो कुछ इस वक्त मिल सकता है, लाने की कोशिश करता हूँ।"

नज़ीरुद्दीन ने स्नानादि से छुट्टी पा कपड़े बदल लिए। चपरासी *तीन तन्दूरी रोटियाँ और उस पर सलूना रखकर उसके लिए ले आया।* नज़ीरुद्दीन ने बायें हाथ में रोटी पकड़ ली और खाने लगा। चपरासी उसके लिए मिट्टी के मटकैने में पानी भर लाया। पानी उसके सामने रख स्वयं भी उसके सम्मुख बैठ गया। नज़ीरुद्दीन धीरे धीरे रोटी चबाते हुए चपरासी से बातें करने लगा, "बहुत बड़ी कोठी है आपके मालिक की।"

"हाँ! क्यों न हो! साहब पाँच सौ गाँवों के मालिक हैं।"

"ओह! यह इस्माइल मंज़िल उनके अपने नाम पर है?'

"नहीं! यह उनके वालिद शरीफ़ का नाम था। इनका नाम अब्दुल करीम खाँ है। बहुत बहादुर आदमी हैं। शेर से कम का शिकार नहीं करते। साथ ही चार बीवियाँ और दस लौंडियाँ हैं। दो बाँदियाँ तो अभी अभी बम्बई में लूट के वक्त मिली हैं।"

"ओह! तो हिन्दनी हैं दोनों!"

"हाँ। एक तो, सुना है, निहायत ही खूबसूरत है।"

"किससे सुना है?"

"मेरी बीबी ज़नान खाने में काम करती है। यह भीतर की सब बातें बताया करती है।"

"तब तो तुम बहुत खुशनसीब हो। तुम्हारे मालिक अच्छे हैं या बेगमें।"

"मालिक तो फ़रिश्ता हैं। जब भी मैंने कोई सवाल किया, उन्होंने इन्कार नहीं किया। आज से दो साल की बात है। मैंने उनकी सबसे बड़ी बेगम की बाँदी सुखिया को अपनी बीबी बनाने की इजाज़त माँगी। हुज़ूर ने मेरा सवाल मन्जूर कर लिया और उसका मुझसे निकाह पढ़ा दिया गया। हम दोनों बड़े मजे में हैं।"

"तो तुम्हारी बीबी अभी तक बड़ी बेगम की खिदमत में है।"

"हाँ! सुना है कि मँझली बेगम निहायत ही ज़ालिम है।"

"यह फातिमा नई बाँदी ही तो नहीं।"

"तो तुम नहीं जानते? यही तो है। सुना है कि पीर साहब ने डाके में उड़ाई हुई औरतों में से इनको इतना खूबसूरत पाया कि खाँ साहब के लिए भेज दिया है।"

"क्या पीर साहब ने इनका दाम वसूल किया है? कितना दाम लिया होगा।"

"यह तो मुझको पता नहीं। हाँ, इतना मैं जानता हूँ कि हमारे मालिक पीर साहब के मोतकिद हैं और दरगाह के लिए एक लाख रुपया सालाना देते हैं।"

"लाहौलविला। तब तो इनका क्या दाम लिया होगा।

"मगर यह क्या है कि फ़ातिमा बीबी की चिट्ठी बिना मालिक के उनको नहीं दी जा सकती।"

"सब बेगमों के लिए यही हुक्म है। अगर तुम चिट्ठी चपरासी को दे देते, तो वह मालिक के आने पर उनको दे देता और वे खुद ज़नाने में ले जाकर दे देते। जब तुमने कहा कि चिट्ठी फातिमा के हाथ में ही देनी है तो मालिक की इजाज़त के बिना ऐसा नहीं हो सकता।"

नज़ीरुद्दीन समझ गया कि इस जगह पर अभी तक सतरहवीं सदी के रिवाज चल रहे हैं। इससे वह ज़नानख़ाने के विषय में और प्रश्न करने लगा। उसने पूछा, "क्यों साहब! ये बेगमें लड़ती नहीं? इतनी इकट्ठी कर रखी हैं कि समझ नहीं आता कि इनका होता क्या होगा! बेगमों के अलावा कई बाँदियाँ भी हैं।"

"अजी मालिक बहादुर आदमी हैं। सब बेगमें, और सुना है बाँदियाँ भी खुश हैं।"

"इस बात पर यकीन करना बड़ा मुश्किल है।"

"मालिक की शक्ल और कदोकदामत देखोगे तो शक की गुंजाइश नहीं रहेगी।"

"तो फ़ातिमा बीबी खुद चिट्ठी लेने आयेंगी?"

"कह नहीं सकता। ऐसा कभी पहिले नहीं हुआ। होता यह है कि मालिक खुद चिट्ठी ले लेते हैं और बेगम के पास ले जाते हैं। वहाँ से जवाब ले आते हैं और चिट्ठी लानेवाले को दे देते हैं।"

"तब तो बहुत मुश्किल होगी। मुझे तो हुक्म है कि चिट्ठी बीबी फ़ातिमा के हाथ में ही दूँ। एक बात तुम कर सकते हो?"

"क्या?"

"तुम अपनी बीबी के हाथ फातिमा बीबी को कहला दो कि कश्मीर से उनके लिए कोई चिट्ठी लाया है। मैं समझता हूँ कि वे मालिक से कहकर चिट्ठी खुद वसूल करने की कोशिश करेंगी।"

"मगर यह नमकहरामी होगी। मुझसे यह नहीं हो सकता।"

"इसमें क्या नमकहरामी है? चिट्ठी तो मैं तुम से मांगता नहीं। सिर्फ इतना करना है कि उनको बता देना है। अगर उनको मालूम हो जाये कि उनकी चिट्ठी आई है और उनके सिवाय और किसी को नहीं मिलेगा तो वे अपना मुहब्बत के ख़ार से शायद चिट्ठी खुद पाने की कोशिश कर सकें।

"मगर इस काम के लिए मुझको क्या मिलेगा?"

"भाई! मेरे पास तो कुछ है नहीं। हाँ अगर फातिमा बीबी खुश हो गई तो वे तुम्हारी बीबी को खुश कर सकती हैं।"

"मैं अपनी बीवी से बात करके ही बता सकता हूँ।"

"खैर तुम अपनी बीबी से कह देना। उसकी ख्वाहिश होगी तो उनको खुश कर सकेगी। इससे फिर कभी फायदे की उम्मीद की जा सकती है।"

नसराली की बीबी फातिमा को खुश करने के लिए राजी हो गई।

१३

नजीरुद्दीन ने, जब वह अकेला था, चिट्ठी को निकाला और उसको बहुत ध्यान से देखा। उसने जेब से कलम निकाली और बहुत ही बारीक अक्षरों में लिफाफे के पिछले भाग पर एक कोने में कुछ लिख दिया। ऐसा मालूम होता था कि उसने अपने हस्ताक्षर किए हैं। पश्चात् उसने लिफाफे को फिर अपने सन्दूक में रख लिया और गम्भीर हो पीर साहब की लड़की को देखने की आशा करने लगा।

अब्दुल करीम खाँ उस रात नहीं लौटे। अगले दिन प्रातःकाल सब के साथ वो सीधे स्नानादि के लिए मंदिर चले गए। उस दिन तीसरे पहर नजीरुद्दीन को देखी हुई। उसने निवेदन कर दिया, "मैं हजरत इब्राहीम साहब पीर दरगाह शाह मुराद के पास से आया हूँ। मेरे पास उनकी लिखी एक चिट्ठी बनाम फ़ातमा बीबी है। मुझे हुक्म है कि यह

चिट्ठी उनके हाथ में ही दूँ।"

अब्दुल करीम खाँ यह सुन हैरान रह गया। उसे पीर साहब से यह उम्मीद नहीं थी। इस पर भी पूछने लगा, "क्या मुझ पर बेइतबारी है?"

"हुजूर! मैं यह नहीं जानता। गुस्ताखी के लिए मुआफी चाहता हूँ। मगर एक वफादार नौकर की तरह वही करना चाहता हूँ, जो मालिक ने करने कहा है।"

"लेकिन हमारे घर की औरतें कभी भी गैर-मर्द के सामने नहीं आईं।"

"तो हुजूर! एक बात हो सकती है। मैं आज वापस बम्बई चला जाता हूँ और वहाँ से हजरत की इजाजत ले आता हूँ। तब ही चिट्ठी किसी दूसरे के हाथ में दे सकता हूँ।"

"हम तुमसे जबरदस्ती छीन लें तो?"

"तो यह मजबूरी हो जायेगी, बेवफाई नहीं होगी। मैं आपके सामने खड़ा हूँ। आप किसी को हुक्म दे दीजिए कि मुझसे चिट्ठी छीन ले। मैं अपनी तरफ से पूरी कोशिश करूँगा कि वह छीन न सके। मगर आपके दरबार में हाजिर हूँ। आप कई आदमियों को लगा दीजियेगा तो चिट्ठी देने पर मजबूर हो जाऊँगा। मैंने अपना हक अदा कर दिया होगा और आपको चिट्ठी मिल जायेगी।"

"तो तुम महात्मा गांधी की तरह सत्याग्रह करोगे?"

"नहीं हुजूर! मैं लडूँगा झगड़ा करूँगा और कोशिश करूँगा कि मेरे जीतेजी, चिट्ठी न छिन सके।"

"शाबाश! क्या नाम है तुम्हारा?"

"नजीरुद्दीन हुजूर!"

"क्या तनखाह पाते हो?"

"अभी कुछ मुकर्रर नहीं हुई। हजरत फरमाते थे कि खाना खा लिया करूँ और छः महीने में नये कपड़े मिल जाया करेंगे।"

"हमारी नौकरी करोगे?"

"पहिले इस चिट्ठी का जवाब दे आऊँ?"

"हमारा मतलब यह है कि अगर तुम चिट्ठी दे दो तो हम तुमको नौकर रख लेंगे।"

"पर हुज़ूर! मेरा मतलब यह है कि चिट्ठी का जवाब बम्बई पहुँचा दूँ और पीछे अगर आपकी ख्वाहिश हो तो खिदमत में हाज़िर हो जाऊँगा।"

"क्या तनख्वाह लोगे?"

"जो हुज़ूर! खुश होकर दे देंगे।"

"कुछ पढ़-लिखे भी हो?"

"जी हाँ! उर्दू, हिन्दी अंग्रेज़ी और दसवीं पास कर चुका हूँ।"

"अच्छा तो मियां नज़ीर! चिट्ठी तो हम लेंगे। हाँ, हम तुमको नौकर रख सकते हैं। पचास रुपया महीना और खाना। बताओ मंज़ूर है।"

"चिट्ठी की शर्त के बिना नौकरी मंज़ूर है।"

"तो फिर तुम जा सकते हो। चिट्ठी इस तरह से नहीं ली जा सकती। रही तुम्हारी नौकरी। उसकी बाबत चिट्ठी वापस कर आना तो सोच लिया जायेगा।"

नज़ीरुद्दीन ने मुड़कर सलाम की और कमरे से बाहर निकल आया। मेहमानखाने के कमरे में पहुँच, अपना बिस्तर बाँधने लगा। इस समय चपरासी आया और पूछने लगा, "कहो जी, जा रहे हो? काम हो गया क्या?"

"अभी साहब कहाँ? बैरंग वापस आ रहा हूँ।"

"मेरा बाप ने तो फातमा बीबी से बात कह दी था।"

नज़ीरुद्दीन ने बिस्तर बाँधा और उसको उठाकर चपरासी से सलाम अलैकुम कर कोठी के फाटक की ओर चल पड़ा। फाटक पर चौकीदार ने उसका रास्ता रोक लिया और कहा, "जाने का हुक्म नहीं।"

"क्यों?"

"मैं क्या जानूँ?"

"किस का हुक्म कह रहे हो?"

"यहाँ सिरफ़ एक का ही हुक्म चलता है। मालिक का हुक्म है कि तुमको न जाने दिया जावे। अगर जबरदस्ती करो तो गोली से मार डाले जाओगे।"

"ज़बरदस्ती करने की क्या ज़रूरत है। मैं यहाँ बैठा हूँ।" इतना कहकर वह वहीं फाटक के एक ओर होकर भूमि पर बैठ गया। चौकीदार अपने स्थान पर बन्दूक लिए खड़ा रहा। कुछ काल के उपरान्त कोठी का चपरासी आया और नजीरुद्दीन से बोला, "चलो, मालिक बुलाते हैं।"

"क्यों, क्या बात है?"

"हम दलील नहीं किया करते। मालिक से तकरार नहीं हो सकती। चलो।"

नजीरुद्दीन उठा और चपरासी के साथ हो लिया। वह बैठकखान में, जहाँ मालिक से उसकी पहिले भेंट हुई थी, ले जाया गया। अब्दुल करीम खाँ वहाँ उसकी इन्तज़ार में खड़ा था। उसे आया देख बोला, "लो भाई! तुम जीते और मैं हारा। मैंने एक और तरकीब निकाली है। वे चिक के पीछे तुम्हारे सामने आकर खड़ी हो जायेंगी। तुम वह चिट्ठी उनको दे देना। मैं तुम्हारे पास खड़ा रहूँगा।"

"मुझे मंज़ूर है।"

इस पर मालिक नजीरुद्दीन को लेकर ज़नानखाने में चला गया। वहाँ एक कमरे में ले जाकर एक चिक के सामने खड़ा कर दिया और कहा, "अभी फ़ातिमा बीबी आयेंगी। तुम यह चिट्ठी उनको दे देना।"

यह कह अब्दुल करीम खाँ पीछे हट एक कुर्सी पर बैठ गया। उसको दो मिनट से अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। चिक हिली और उसके पीछे से आवाज़ आई, "क्या चाहते हो?"

"हुज़ूर! एक चिट्ठी फ़ातिमा बीबी के लिए बम्बई से लेकर आया हूँ। हज़रत का हुक्म है कि चिट्ठी उनके ही हाथ में दूँ। मैं आपको जानता नहीं, पहिचानता नहीं। इसस ख़ुदा परवरदिगार की क़सम देकर

कहता हूँ कि अगर यह चिट्ठी आपकी है तो ले लीजिए।' इतना कहकर उसने चिट्ठी चिक की तरफ़ बढ़ा दी। चिक के पीछे से एक हाथ निकला और चिट्ठी को लेकर पीछे हट गया। नजीरुद्दीन ने चिक की तरफ मुख कर और झुककर सलाम की और फिर मालिक-मकान की ओर देखकर बोला, "हुजूर! अब गुलाम को हुक्म दीजिए।'

अब्दुल करीम खाँ ने उसे यह कह कि वह बाहर बैठक में इन्तज़ार करे, स्वयं चिक के पीछे चला गया। फ़ातिमा शान्ति ही थी और उसने अब्दुल करीम खाँ को भीतर आते देख चिट्ठी बिना खोले ही उसको दे दी। अब्दुल करीम ने लिफाफ़ा खोल, चिट्ठी निकाल ली और उसको पढ़ने लगा। चिट्ठी पढ़कर पुनः लिफाफ़े में डालकर उसको देते हुए बोला, "तुम्हें पढ़कर अमल करने के लिए है।"

शान्ति ने चिट्ठी ले ली और अपने कमरे में चली गई। वहाँ जाकर उसने चिट्ठी खोल पढ़नी आरम्भ की। उसमें लिखा था, "मुझको यह जानकर बहुत खुशी हुई है कि अब तुम अब्दुल करीम खाँ साहब की बीवी बना ली गई हो। मेरी दुआ है कि तुम फूलो-फलो। अपने पिछले कर्मों को भूलकर अपनी ज़िन्दगी को खुशी और खुदा के नूर से पुर कर लो। तुम्हारी शादी, खाना आबादी करने वाली साबित हो। मैं कुछ दिनों में यहाँ आऊँगा, तुम्हारी माँ को ले जाऊँगा और तुमको इस ज़िन्दगी के फ़ायदे बताऊँगा। कभी कभी इन्सान अपने भले की बात खुद नहीं सोच सकता। उसे पकड़कर सीधे रास्ते पर लाने की ज़रूरत होती है। सो मैंने तुम्हारे लिए यह कर दिया है। खुदा हाफ़िज़।"

चिट्ठी पढ़कर उसने क्रोध में टुकड़े टुकड़े कर डाली और फेंक दी। लिफाफा उसके हाथ से नीचे गिर गया था। उसका ध्यान उस तरफ़ नहीं गया। वह पलंग पर लेट गई और उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। कितनी ही देर तक वह पलंग पर लेटी-लेटी रोती रही। उसकी माँ आई तो उसने मुख पर चादर डाल उसे छुपा लिया। माँ को मालूम नहीं था कि उसके पास बम्बई से कोई चिट्ठी आई है। इससे वह उसके

पास बैठकर उसके सिर पर हाथ फेरकर पूछने लगी, "बेटी ! क्या कोई नई बात हुई है ?"

इससे शान्ति और भी विह्वल हो रोने लगी। माँ ने प्यार से फिर पूछा, "क्या है बेटी ? क्यों रोती हो ? क्या वह पाजी फिर आया था ?"

शान्ति ने करवट बदलकर अपना मुख घुटनों में दे लिया और रोती रही। उसकी माँ भी दुखी हो रोने लगी थी। रोते-रोते उसकी नज़र नीचे गिरे लिफ़ाफ़े पर पड़ी। उसने उसको उठाकर देखना चाहा कि कहाँ से आया है। उर्दू भाषा में पता लिखा था। वह पता यहाँ का था। चिट्ठी शान्ति के यहाँ के नाम, फ़ातिमा के नाम थी। उसने लिफ़ाफ़े को उलटकर देखना चाहा कि कहाँ की मुहर लगी है। मुहर कहीं की नहीं थी। चिट्ठी दस्ती आई मालूम होती थी। एकाएक उसकी नज़र बहुत बारीक अक्षरों में एक लिखावट पर गई। उसने लिफ़ाफ़े को रोशनी में ले जाकर देखा। हिंदी में कुछ लिखा था। उसने बचपन में हिंदी पढ़ी थी और सदाशिव के घर में रहकर उसका अभ्यास किया था। इससे उसने पढ़ा। लिखा था, "सदाशिव की नमस्ते।"

वह पढ़कर चकित रह गई। उसने समझा कि यह चिट्ठी सदाशिव की आई है। इससे उसने शान्ति को हिलाकर पूछा, "अरी ! कहाँ है वह चिट्ठी ? क्या लिखा है उसने ? और फिर यह यहाँ आई कैसे ?"

शान्ति ने लेटे रहने का हठ किया। वह समझती थी कि उसकी माँ पीर साहब की चिट्ठी के विषय में पूछ रही है। माँ ने फिर उसे हिलाकर कहा, "बेटी ! अगर यहाँ पता चल गया कि सदाशिव की चिट्ठी आई है तो बहुत बुरा होगा। लाने वाले की शामत आ जायेगी।"

सदाशिव का नाम सुनकर शान्ति अचम्भे में अपनी माँ का मुख देखने लगी। माँ उसकी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देख रही थी। शान्ति ने पूछा, "कहाँ हैं वे ?"

"अरी पगली उनकी चिट्ठी आई है न ?"

"कहाँ आई है ?"

"इस लिफाफे में। देखो न उसकी नमस्ते लिखी है।"

"नमस्ते? कहाँ लिखी है?" वह उठकर बैठ गई। माँ ने लिफाफे पर हिन्दी में लिखा दिखा दिया। शान्ति उसे पढ़ एकदम गम्भीर विचार में पड़ गई। बहुत देर तक वह उस लिखावट को देखती रही। आखिर बोली, "यह उनकी लिखावट नहीं है। पर यह किसने लिखा है?"

"यह लिफाफा यहाँ पड़ा था।"

"पर यह पता तो हजरत की लिखावट में लिखा है। यह नहीं देखा तुमने माँ?"

माँ ने पुनः उर्दू की लिखावट को ग़ौर से देखा और कहा, "ठीक है, यह उस दुष्ट की ही लिखावट है। पर यह सदाशिव की नमस्ते कैसे आ गई?"

"मैं समझ गई हूँ। जो इस चिट्ठी को लाया है, वह शायद मुझको जानता है और उनसे मेरे सम्बन्ध को भी जानता है। नहीं तो उनकी नमस्ते न लिखता। अब मुझको समझ आया है कि क्यों यह इस बात पर हट कर रहा था कि चिट्ठी मेरे हाथ में ही दे।"

माँ उसकी बातों को नहीं समझी। उसने पूछा, "तुम क्या कह रही हो, मैं कुछ नहीं समझ रही।"

एकाएक शान्ति के मन में एक विचार आया। उसने माँ से कहा, "ज़रा ठहरो, अभी आती हूँ।" इतना कह वह उस नौकरानी की खोज में चली गई, जिसने उसे कहा था कि चिट्ठी स्वयं लेने का यत्न करे। अब उसे सब बात साफ-साफ समझ आ रही थी। वह नौकरानी बाहर से आती दिखाई दी तो उसने उसे रोककर कहा, "ज़रा मेरे कमरे में आओ।"

नौकरानी डर गई। उसका ख्याल था कि उसने जो बाहर की खबर बताई थी, वह नहीं बतानी चाहिए थी, इसके लिए उसको डाँट पड़ेगी। इससे काँपती हुई वह शान्ति के पीछे-पीछे उसके कमरे में आ पहुँची। शान्ति ने उसको अपने सामने भूमि पर बैठने को कहा। वह बैठने से डरती थी। काँपते हुए उसने कहा, "हुजूर! मेरा कसूर नहीं है। मैं तो "

"चुप रहो! देखो किसी से कहना नहीं। यह आदमी जो चिट्ठी लाया था, चला गया या है?"

"अभी मेहमानखाने में ठहरा है।"

"तुमने मुझको बताकर कोई बुराई नहीं की। व मेरे बाप का भेजा आदमी है। मैं उससे कुछ पूछना चाहती हूँ। पूछ दोगी?"

नौकरानी घबराई हुई सामने खड़ी रही। उसके मुख से आवाज नहीं निकली।

शान्ति ने फिर कहा, "देखो, अगर तुम इस चिट्ठी का जवाब ला दो तो तुमको एक रुपया दूँगी।"

नौकरानी ने जब यह बात सुनी तो उसकी जान में जान आई। उसकी मुस्कराहट निकल गई। उसने कहा, "बेगम साहिबा! हम ग़रीब आदमी हैं। हमको रुपये की बहुत ज़रूरत रहती है। मगर मेरी बात किसी से न कहियेगा। नहीं तो नौकरी छूट जायगी।"

"नहीं, डरो नहीं। मैं बड़ी बेगम से तुमको अपने लिए माँग लूँगी और तुमको इतना कुछ दूँगी कि तुम मालामाल हो जाओगी। बताओ करोगी?"

"बताइए।"

शान्ति ने वही लिफ़ाफ़ा फाड़कर, उसके एक छोटे से टुकड़े पर हिन्दी में लिख दिया, "तुम कौन हो?" यह काग़ज़ का टुकड़ा उसने नौकरानी को देते हुए कहा, "देखो सुखिया! अगर तुम वफ़ादारी से मेरा काम करोगी तो मैं तुमको मालामाल कर दूँगी।"

सुखिया ने यह काग़ज़ का टुकड़ा अपनी अँगिया में छुपा लिया और बोली, "अभी कुछ देर में बड़ी बेगम के काम से बाहर जाऊँगी, तो जवाब ले आऊँगी।"

उसे भेज शान्ति वापस अपने कमरे में आई और विस्मय में बैठी अपनी माँ को सब बात समझाकर बोली, "माँ! कोई उनका आदमी मालूम होता है।"

१४

अब्दुल करीम जनानखाने से बाहर आया तो बैठक में प्रतीक्षा कर रहे नज़ीरुद्दीन से बोला, 'देखो नज़ीर ! मैं तुम्हारी कारगुज़ारी देखकर बहुत खुश हूँ। शायद उस चिट्ठी का जवाब बेगम साहिबा देना चाहेंगी। वह तुम लेकर चले जाना। मगर मैं चाहता हूँ कि अगर हज़रत तुमको नौकर रखना ना चाहें तो तुम यहाँ चले आना। मैं तुमको नौकर रख लूँगा।"

"हुज़ूर का ऐन अनायत है। यूँ तो मैं अभी हज़रत वली साहब का पक्का नौकर नहीं हूँ। फिर भी मैं चाहता हूँ कि आपकी खिदमत में आने से पहिले उनको बता दूँ।"

"ठीक है, ठीक है ! मैं भी यही चाहता हूँ। पीर साहब की चिट्ठी का जवाब कल तक मिलेगा। तब तक तुम ठहरो।"

नज़ीरुद्दीन सलाम कर बैठक घर से बाहर आकर मैदान में खड़ा हो, मकान की बनावट को देखने लगा। कुछ देर तक देखकर वह मेहमानखाने में चला गया। वहाँ जाकर वह अपनी खाट पर लेट छत की तरफ़ देख उसकी धन्नियाँ गिनने लगा। इतने में वहाँ का चपरासी आया और उसको मकान से वापस आया जान पूछने लगा, "तो तुम चिट्ठी दे आए हो ?"

"हाँ यार ! मालूम होता है कि बेगम साहिबा ने खान साहब को राज़ी कर लिया है। मेरी तजवीज़ कामयाब हो गई है।"

"तो चिट्ठी तुमने अपने हाथ से दी है ?"

"हाँ, वे चिक के पीछे आ खड़ी हुई थीं। मैंने खुदा की क़सम डाल कर कहा कि अगर आप फ़ातिमा बीबी हैं तो चिट्ठी ले लें। चिक के पीछे से हाथ निकला और मैंने चिट्ठी दे दी।"

"तो तुम ठग लिए गए हो। वह ज़रूर कोई नौकरानी होगी। यहाँ बेगमों के इस तरह बाहर आने का रिवाज नहीं है।'

"कुछ हो, मेरा तो ज़मीर साफ़ है। मैंने तो क़सम देकर बात पक्की

कर ली थी।"

"कुछ भी हो, हमारे मालिक बहुत होशियार हैं।"

"तुम्हारी बीबी से पता चल जायेगा कि चिट्ठी वे खुद लेने आई थीं या कोई नौकरानी।"

"उसको कैसे पता चलेगा ! वह तो उस वक्त यहाँ पर थी। अभी अभी गइ है।"

"नौकरानियों के पेट में बात नहीं समाती। जब खाली बैठेंगी तो ज़रूर बातचीत होगी और तुम्हारी बीबी हमें असली बात बता देगी।"

रात का खाना खाते समय सुखिया आइ और नबीर से कहने लगी, "फ़ातिमा बीबी को आपकी चिट्ठी मिल गई है। आपको उसने यह बात लिखकर भेजी है और आपसे जवाब माँगा है।" इतना कह उसने वही लिफ़ाफ़े का टुकड़ा उसे दे दिया, जो शान्ति ने दिया था।

नबीर ने लिफ़ाफ़े के टुकड़े को हाथ में लेकर पढ़ा। पढ़कर उसको बहुत खुशी हुई। वह समझ गया कि उसका लिफ़ाफ़े की पीठ पर लिखा उन्होंने पढ़ लिया है। उसने जेब से एक टुकड़ा निकाला और पेंसिल से उस पर बहुत ही बारीक अक्षरों में लिख दिया, "उनका एक मित्र। उनकी ही आज्ञा से आया हूँ।" नबीर ने यह काग़ज़ का टुकड़ा सुखिया को देते हुए कहा, "देखो, बेगम साहिबा से कहना कि तुमने इनाम का काम किया है।"

"यह तो उन्होंने खुद ही कहा था।"

प्रात काल अब्दुल करीम फ़ातिमा के कमरे में आया और उससे पिछले दिन की चिट्ठी का उत्तर माँगने लगा, "क्या तुम भी चिट्ठी सीधे उसी के हाथ में दोगी ?"

"मैं इसकी ज़रूरत नहीं समझती। मैं आपसे डरती नहीं, क्योंकि मैं कोई नाजायज़ बात नहीं कर रही। जो मैं समझती हूँ, वह आपको कहती हूँ और वही लिख दिया है। आप पढ़ियेगा क्या ?"

"अगर तुम दिखाओ तो।"

फ़ातिमा ने अपने तकिए के नीचे से चिट्ठी निकालकर खाँ साहब के हाथ पर रख दी। उसने पढ़ी। लिखा था, "मुहतरम खालिद साहब! आपकी चिट्ठी मिली। आपकी दुआ के लिए शुकरिया। आपने पहिली शादी पर भी दुआ दी थी। दोनों में इख्तिलाफ़ हो गया है। देखूँ कौन-सी दुआ बर आती है। आपने बुढ़ापे में एक नौजवान लड़की की उमर बरबाद कर दी है। मगर यह तो आपका शेवा ही है, इसके लिए गिला करने की गुंजाइश नहीं है। आपने जिस आदमी से मेरी शादी की बात कही है, वह न तो मेरे लायक है और न ही किसी भी औरत से शादी करने के लायक। यह हकीकत में जेल का दारोगा है या भेड़ बकरियों को पालनेवाला गड़रिया। इस पर भी मुझको खुदा ने इतनी समझ दी है कि जैसा वह रक्खे, वैसा सबर से रहना चाहिए। आखिर रईसी की बेटी तो हूँ ही। माँ की ख्वाहिश थी कि एक नेक औरत बन ज़िन्दगी बसर करूँ मगर आपकी दुआ से एक पैरोवर की ज़िन्दगी बन गई है। खुदा आपका भला करे।

"माँ को लेने के लिए आने की ज़रूरत नहीं। वे आपके साथ नहीं आयेंगी।

"कभी-कभी लिखते रहियेगा। आपकी चिट्ठी देखने से बचपन की वे सब बातें याद आ जाती हैं, जो आपकी आरामगाह में दिल को मुसर्रत बख्शती रही हैं।"

इस चिट्ठी को पढ़कर खाँ साहब खिल खिलाकर हँस पड़े। चिट्ठी को बहुत एहतियात से लपेटकर उससे कहने लगे, "तुम्हारी तारीफ़ के लिए शुकरिया। अरे मैं गड़रिया तो तुम भेड़ तो बनीं। मैं जेल का दारोगा तो तुम चोर तो बनीं। देखो फ़ातिमा! मुझको मज़ाक बहुत पसन्द है। पीर साहब के नौकर ने मज़ाक किया। उसने कहा कि चिट्ठी सीधे तुम्हारे हाथ में देगा। मैंने कहा ठीक है, वह मेरी बीवी का हाथ देख सकता है। उसने अपने मालिक की वफ़ादारी में मेरी बेअदबी की। मैंने उसको अपना ही नौकर बना लिया। पीर साहब ने रोटी-कपड़े पर रखा था,

मैंने पचास रुपये साथ देन कबूल कर लिये हैं। अब तुम मुझको किसी भी औरत के लायक नहीं समझतीं और मैं तुमको सिरफ़ अपने ही लायक समझता हूँ।"

खाँ को इस प्रकार की बातों पर आर चिट्ठी लानेवाले नौकर को अपनी नौकरी में ले लेने के समाचार से शान्ति बहुत खुश हुई। खाँ ने यह देखा तो अपने को बहुत खुशनसीब मान यहाँ से चला गया।

शान्ति को सुखिया से लाया गया कागज़ का टुकड़ा मिल गया था। अब वह आशा कर रही थी कि शायद वह यहाँ से निकल सकेगी। इसके लिए वह सोचती थी कि किस प्रकार उस जेलखाने से निकलना सम्भव हो सकेगा। उसने नज़ार के जाने से पहिले एक सन्देश और भेजा। उसमें उसने लिखा, "सवाल बहुत मुश्किल है। उनके भरोसे पर ही ज़िन्दगी बसर हो रही है।" इससे अधिक लिखने का उसको साहस नहीं हो सका। उसे अभी सुखिया पर पूरा विश्वास नहीं था।

सुखिया को एक रुपया देते हुए उसने कहा, "अभी तुम यह रखो। बाखिद साहब कुछ दिन में आयेंगे। तुम्हें बहुत इनाम दिलवाऊँगी।"

शान्ति की माँ उससे अलग रहती थी। यूँ तो खाँ दोनों को अपनी बीवी बनाना चाहता था, मगर जब उसे मालूम हुआ कि फ़ातिमा उसकी लड़की है तो उसने उसको अपनी लड़की की ख़िदमत पर ही लगा दिया। इस पर भी उसे दूसरी लौंडियों से ऊँचे दर्जे पर रखा था।

आज शान्ति की माँ आई तो शान्ति ने दरवाज़ा बन्द कर उसको धीरे से कहा, "मैंने अपना सन्देश उनको भेज दिया है। पीर साहब का नौकर, जो उनकी चिट्ठी लाया है, उनका मित्र है। शायद हिन्दू है। कुछ भी हो मैंने यह ख़तरा तो सिर पर ले लिया है कि उससे सम्बन्ध बनाने का यत्न करूँ। इसके बिना कोई चारा ही नहीं।"

माँ ने कहा, "भली बेटा! साहस से काम लेना। परमात्मा हमारी सहायता करेगा। यदि कहीं इससे भी ज़्यादा कष्ट हुआ, तो धीरज से सहन करना, निराश नहीं होना। आत्मघात करना आदमियों का काम

नहीं। तुमने ही एक दिन ऐसा कहा था।"

"माँ! मुझको एक बात का ही डर है कि हम तो शान कोगम में डालकर यहाँ से निकलें और जब हम वहाँ पहुँचें तो वे मुझको भ्रष्ट ही गई समझकर स्वीकार ही न करें।"

"यह बात कितनी दुःख करती हो तुम! हमारा यहाँ से बचकर निकल जाना इसलिए भी ठीक है कि यह जलखाना है, यह दोजख है, यह बेइज्जती है। यहाँ रहकर हम अपनी आत्मा को पतित कर रही हैं। मैं सच कहती हूँ कि जिन दिनों मैं गाने बजाने का काम करती थी उन दिनों भी मैं अपने को इतना पतित हुआ नहीं समझती थी। वहाँ भी बहुत हद तक आजादी की जिन्दगी बसर करती थी।"

१४

नसीरुद्दीन बम्बई पहुँचा तो दरगाह जाने से पहिले खुशीराम के घर जा पहुँचा। खुशीराम उसे देख बहुत प्रसन्न हुआ और उठकर उससे गले मिला। पश्चात् अपने समीप आदर से बैठाकर पूछने लगा, "सुनाओ भाई! क्या हुआ?'

'अभी क्या पूछते हो? बात ही दाँव, पाओ बारह, पड़ा। मेरी बात चीत ने और मेरे रोब दाब ने ऐसा प्रभाव जमाया कि मुझको, उसी काम पर लगाया गया, जहाँ उनको नहीं लगाना चाहिए था। पीर साहब ने शान्ति देवी के पास ही चिट्ठी देकर भेज दिया। उस समय मैं विश्वास से नहीं जानता था कि मैं उनके पास आ रहा हूँ। यह तो वहाँ जाकर पता लगा।

"हैदराबाद में एक आदमी अब्दुल करीम खाँ भारी जागीरदार है। उसकी शरह के मुताबिक चार बीवियाँ हैं और प्रथा के अनुसार उसकी दस रखेल हैं। इन दस में एक शान्ति देवी भी हैं। रियासत का मामला है। कानूनी तौर पर कुछ भी हो सकना कठिन है।

"शान्ति देवी ने एक पंक्ति लिखकर भी दी है। यह यह है।' इतना

मैंने पचास रुपये साथ देने कबूल कर लिये हैं। अब तुम मुझको किसी भी औरत के लायक नहीं समझतीं और मैं तुमको सिरफ अपने ही लायक समझता हूँ।"

खाँ की इस प्रकार की वार्ता पर और चिट्ठी लानेवाले नौकर को अपनी नौकरी में ले लेने के समाचार से शान्ति बहुत खुश हुई। खाँ ने यह देखा तो अपने को बहुत खुशनसीब मान वहाँ से चला गया।

शान्ति को सुखिया से लाया गया कागज का टुकड़ा मिल गया था। अब वह आशा कर रही थी कि शायद वह वहाँ से निकल सकेगी। इसके लिए वह सोचती थी कि किस प्रकार उस जेलखाने से निकलना सम्भव हो सकेगा। उसने नज़ार के आने से पहिले एक सन्देश और भेजा। उसमें उसने लिखा, "सवाल बहुत मुश्किल है। उनके भरोसे पर ही ज़िन्दगी बसर हो रही है।" इससे अधिक लिखने का उसको साहस नहीं हो सका। उसे अभी सुखिया पर पूरा विश्वास नहीं था।

सुखिया को एक रुपया देते हुए उसने कहा, "अभी तुम यह रखो। वालिद साहब कुछ दिन में आयेंगे। तुम्हें बहुत इनाम दिलवाऊँगी।"

शान्ति की माँ उससे अलग रहती थी। यूँ तो खाँ दोनों को अपनी बीबी बनाना चाहता था, मगर जब उसे मालूम हुआ कि फ़ातिमा उसकी लड़की है तो उसने उसको अपनी लड़की की खिदमत पर ही लगा दिया। इस पर भी उसे दूसरी लौंडियों से ऊंचे दर्जे पर रखा था।

आज शान्ति की माँ आई तो शान्ति ने दरवाजा बन्द कर उसको धीरे से कहा, "मैंने अपना सन्देश उनको भेज दिया है। मीर साहब का नौकर, जो उनकी चिट्ठी लाया है, उनका मित्र है। शायद हिन्दू है। कुछ भी हो मैंने यह खतरा तो सिर पर ले लिया है कि उससे सम्बन्ध बनाने का यत्न करूँ। इसके बिना कोई चारा ही नहीं।"

माँ ने कहा, "देखो बेटा! साहस से काम लेना। परमात्मा हमारी सहायता करेगा। यदि कहीं इससे भी ज्यादा कष्ट हुआ, तो धीरज से सहन करना, निराश नहीं होना। आत्मघात करना आदमियों का काम

नहीं। तुमने ही एक दिन ऐसा कहा था।'

"माँ! मुझको एक बात का ही डर है कि हम तो जान जोखम में डालकर यहाँ से निकलें और जब हम वहाँ पहुँचें तो वे मुझको भ्रष्ट हो गई समझकर स्वीकार ही न करें।"

"यह बात कितनी दुःख करती हो तुम! हमारा यहाँ से बचकर निकल जाना इसलिए भी ठीक है कि यह जेलखाना है, यह दोज़ख है, यह बेइज़्ज़ती है। यहाँ रहकर हम अपनी आत्मा को पतित कर रही हैं। मैं सच कहती हूँ कि जिन दिनों मैं गाने बजाने का काम करती थी, उन दिनों भी मैं अपने को इतना पतित हुआ नहीं समझती थी। वहाँ भी बहुत हद तक आज़ादी की ज़िन्दगी बसर करती थी।'

१५

नसीरुद्दीन बम्बई पहुँचा तो दरगाह जाने से पहिले खुशीराम के घर जा पहुँचा। खुशीराम उसे देख बहुत प्रसन्न हुआ और उठकर उससे गले मिला। पश्चात् अपने समीप आदर से बैठाकर पूछने लगा, "सुनाओ भाई! क्या हुआ?

"अजी क्या पूछते हो? जाते ही दाँव, पाओ बारह, पड़ा। मेरी बात चीत ने और मेरे रोब दाब ने ऐसा प्रभाव जमाया कि मुझको, उसी काम पर लगाया गया, जहाँ उनको नहीं लगाना चाहिए था। पीर साहब ने शान्ति देवी के पास ही चिट्ठी देकर भेज दिया। उस समय मैं विश्वास से नहीं जानता था कि मैं उनके पास जा रहा हूँ। यह तो वहाँ जाकर पता लगा।

"हैदराबाद में एक आदमी अब्दुल करीम खाँ भारी जागीरदार है। उसकी शरह के मुताबिक चार बीवियाँ हैं और प्रथा के अनुसार उसकी दस रखैल हैं। इन दस में एक शान्ति देवी भी है। रियासत का मामला है। कानूनी तौर पर कुछ भी हो सकना कठिन है।

"शान्ति देवी ने एक पंक्ति लिखकर भी दी है। यह यह है।" इतना

कह उसने वह कागज़ का टुकड़ा दिखा दिया जो शान्ति ने मुखिया के हाथ भेजा था।

खुशीराम ने पूछा, "दास! तुम्हारा काम पीर साहब के यहाँ खतम हो गया है। इस पर भी मेरी राय है कि उनसे कहकर ही तुमको छोड़ना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि उनको सन्देह नहीं होना चाहिए कि हम किसी प्रकार की खबर पा गए हैं।"

"एक और मनोरंजक बात हो गई है। खाँ साहब मेरी बातों से इतने प्रभावित हुए हैं कि उन्होंने मुझको अपने पास नौकर रख लेने की ख्वाहिश ज़ाहिर की है। अब अगर आप कहें तो मैं इस बात के लिए यत्न करूँ।"

"पीर साहब की नौकरी तो छोड़ ही देनी चाहिए। उनसे कह देना कि खाँ साहब ने इसरार किया है कि तुम उनकी नौकरी में चले आओ। वह तुमको जाने की स्वीकृति दे देगा। तब तुम यहाँ आ जाना। उस समय तक हम अपनी अगली योजना बना रखेंगे।"

पीर साहब ने शान्ति की चिट्ठी पढ़ी तो आग-बबूला हो गए। वे पूछने लगे, "तो तुमने चिट्ठी उसके हाथ में दी थी?"

"हज़रत! मैं ठीक बात तो नहीं कह सकता। चिक के पीछे खड़ी थीं। मैंने कह दिया था कि यह चिट्ठी फ़ातिमा बीबी के लिए है। उन्होंने हाथ चिक के पीछे से निकाला और चिट्ठी ले ली। खुदा जाने मुझको धोखा दिया गया है या नहीं। अगले दिन खाँ साहब ने यह चिट्ठी मुझको देकर कहा कि उन्होंने दी है।"

"चिट्ठी तो उसके हाथ की ही लिखी है। मगर इस बदमाश सदाशिव ने उसके सिर पर ऐसा जादू किया है कि हर बात, जो मैं कहता हूँ, उसे उलटी ही समझ पड़ती है।"

"हज़रत! एक बात और है। खाँ साहब ने ख्वाहिश ज़ाहिर की है कि मैं उनके यहाँ नौकरी कर लूँ। इसमें मैं इजाज़त चाहता हूँ।"

"क्या तनख्वाह देने को कहते हैं?"

"मैंने पूछा ही नहीं। ये कुछ कहते ज़रूर थे, मगर मैंने उस ओर गौर ही नहीं किया। बात तो यह है कि आप क्या पसन्द करेंगे? बिना आपकी इजाज़त के मैं इसकी बाबत सोच भी नहीं सकता।"

"तुम क्या पसन्द करोगे?"

"बम्बई जैसे शहर में रहने की बजाय देहात में रहना ज़्यादा पसन्द करूँगा। मगर मैं आपके अहसान के नीचे दबा हूँ। मुझको मरते हुए आपने पनाह दी थी। मैं उसको भूल नहीं सकता।"

"मेरी तरफ से तुमको इजाज़त है। मैंने बम्बई छोड़ने का फैसला कर लिया है। इसी साल के जून जुलाई में मैं कराची चला जाऊँगा। मैं इस काफ़िरों के मुल्क में रहना नहीं चाहता।"

"हैदराबाद तो ठीक जगह मालूम होती है। वहाँ इस्लाम की हुकूमत है। और ख़ुदा का फ़ज़ल है कि एक दीनदार के हाथ में है।"

"ठीक है, ठीक है। यह लो।" पीर साहब ने पचास रुपये नसीरुद्दीन को देते हुए कहा, "अब तुम जा सकते हो। देखना, अगर हैदराबाद में रहना चाहो तो उस बेवकूफ लड़की का ख्याल रखना। मैंने बचपन से उसकी परवरिश की है और उससे मुहब्बत हो गई है। शायद ऐसा मौका आन पड़े कि वहाँ से भी मुसलमानों को कराची में आना पड़े तो उनकी वफ़ादारी से ख़िदमत सरंजाम देना। मैं इसका सिला दूँगा।"

नसीरुद्दीन ने घुटनों के बल हो पीर साहब के चोगे के किनारे को चूमा और सिर आँखों से लगाकर दुआ माँगी। यह पीर साहब ने दोनों हाथों को उसके सिर से कुछ ऊपर रखकर, मुख में बुदबुदाते हुए दी। नसीरुद्दीन दुआ ले उठकर दरगाह से बाहर आ गया।

वहाँ से वह सीधा खुशीराम के घर जा पहुँचा। वहाँ पर सदाशिव आया हुआ था। उसने नसीरुद्दीन के काम की प्रशंसा करते हुए कहा, "मदन भैया! तुमने तो कमाल कर दिया है। मगर अब आगे जो कुछ करने को है, वह तो इससे भी अधिक जान-जोखम का काम है। अब तुम सोच लो कि इसमें हाथ डालना चाहते हो या नहीं। मैं तो जान

हथेली पर रखकर वहाँ जा रहा हूँ। शायद कुछ और लोग भी मेरे साथ चलें। वहाँ से बिना लड़े काम बनता दिखाई नहीं देता।"

"सदाशिव भैया! मैं तो खाँ साहब की नौकरी करने आ रहा हूँ। यह बात कि वहाँ क्या करना होगा और फिर उसमें कितनी हानि लाभ की सम्भावना होगी, यह सब जब वहाँ आइएगा, विचार कर लिया जायगा। मुझको तो वहाँ जाना ही है।"

"इसके अर्थ यह हुए कि छुड़ाने का यत्न करना ही है। तुम ठीक कहते हो। एक बार पहिले दंगे-फ़साद से डरकर मैं एक निर्दोष बालिका को गुण्डों के हवाले कर बैठा था। अब मैं समझ गया हूँ कि डरनेवालों के लिए संसार में स्थान नहीं है।"

बात तय हो गई। ग़ज़ीफ़गीन, जिसका असली नाम मदन मोहन था, होशंगाबाद के लिए रवाना हो गया।

विष बीज

१

"जब मरहठों ने सन् १७५६ में हैदराबाद की सेना को पराजय दी थी, तब ही हिंदुस्तान से मुसलमानों के राज्य क उठ जाने की नींव पड़ी थी। मरहठे यदि अपनी जीत को उसके स्वाभाविक परिणाम तक ले जा सकते, अर्थात् हैदराबाद पर अपना अधिकार जमा लेते और निजाम हैदराबाद की हुकूमत को एक हिंदू राज्य में बदल सकते तो हिंदुस्तान में से मुस्लिम राज्य का बीज नाश हो जाता। ऐसा नहीं हो सका और शायद हो भी नहीं सकता था। उस समय का बच गया बीज आज एक सुदृढ़ पेड़ बनकर भारत के मुसलमानों को अपनी छाया म सुख और आराम से फलने फूलने का निमन्त्रण दे रहा है।"

एक वक्ता, बीस-पचीस आदमियों की सभा में, ऊपर लिखी बात कह रहा था। उसने अपना कथन जारी रखते हुए कहा, "सन् १७६१ के पानीपत के तीसरे युद्ध के पश्चात् मरहठों का सूय अस्ताचल की ओर चल पड़ा और अँग्रेजों का सूय उदयाचल की ओर से ऊपर उठना आरम्भ हो गया।

"१७५७ में पलासी का युद्ध हुआ। अँग्रेजों की विजय हुई, परन्तु यदि मरहठे पानीपत के युद्ध में परास्त न होते तो इस विजय से अँग्रेजी रा``य पूर्ण भारतवर्ष में न हो सकता। दिल्ली पर रा``य पा जाने से वे इतनी शक्ति पा जाते कि फिर उन पर अँग्रेजों की विजय प्राय असम्भव हो जाती। १७६१ में मरहठों की पराजय से अँग्रेज समझ समझ गये कि

मरहठों में किस बात की कमी थी। मुगल-साम्राज्य तो जर्जरीभूत हो चुका था। उस पर शक्ति व्यय करना व्यर्थ समझ, अँग्रेजों ने उसी दिन से अपना ध्यान मरहठों की ओर लगाया। सन् १७७६ में इनसे प्रथम युद्ध हुआ। यद्यपि इस युद्ध में अँग्रेजों की पराजय हुई तो भी मरहठों को इससे शक्ति नहीं मिली। तीन युद्धों में मरहठों को अँग्रेजों ने धराशायी कर दिया।

"अँग्रेजों की ताकत बढ़ती गई और इस बढ़ती ताकत को पहला धक्का १८५७ में पहुँचा। इस धक्के से अँग्रेज़ी-राज्य को बचाने के लिए ईस्ट इण्डिया कम्पनी को ब द कर भारत के रा य को अँग्रेज़ी सरकार ने पने हाथ में ले लिया। मलिका विक्टोरिया से घोषणा कराकर सरकार ने अपने राज्य को नया जीवन प्रदान किया। यह १८८५ तक चलता रहा। इस समय भारत के नीतिज्ञों ने देश में पुन जागृति उत्पन्न करने के दो आन्दोलन चला दिए। एक था राजा राममोहन राय की ब्रह्म समाज, दूसरा था, स्वामी दयानन्द की 'आर्य समाज'। इन दोनों प्रयत्नों से भारत की सरकार अनभिज्ञ नहीं थी। राजा राममोहन राय ने अपने पूरे बल से हिन्दुओं की कुरीतियों को दूर करने के लिए ब्रह्म-समाज का आ दोलन चलाना चाहा और दूसरी ओर स्वामी दयान द ने उसी अभिप्राय से आर्य-समाज का आ दोलन खड़ा कर दिया।

"भारत-सरकार ने इन दोनों आन्दोलनों को बेकार करने क लिए दो आ दोलन उठाए। एक से आय-समाज क आ दोलन को निर्जीव करने के लिए एक नई कौम के होने की सृष्टि कर दी। आय-समाज यह समझती थी कि भारतवष में रहने वाली जाति हिन्दू है, जिसका पुराना नाम आय था। सरकार के प्रयत्नों से कांग्रेस की नींव रखी गई, जिसका उद्देश्य यह था कि हि दुस्तान में रहने वाली जाति हि दुस्तानी कौम है और इसमें हि दू और मुसलमान दोनों सम्मिलित हैं।

"राजा राममोहन राय और उसके साथी सरकार द्वारा उठाए कांग्रेस के आ दोलन में सम्मिलित हो गए। इसके विरोध में सरकार न कलाम

बैंक द्वारा मुसलमानों की अलीगढ़-नीति की नींव रखवाई। अलीगढ़ नीति से यह अभिप्राय है कि मुसलमान और हिन्दू दो जातियाँ हैं और मुसलमान हिन्दुस्तान में हिन्दुओं पर हुकूमत करते रहे हैं। इससे हिन्दू मुसलमान के सामने अधिकार का तो प्रश्न ही नहीं रहता। राज्य होगा तो मुसलमानों का।

"हिन्दुस्तान में मुसलमानों की हुकूमत का बचा हुआ बीज हैदराबाद अलीगढ़-नीति का पोषक हो गया। हैदराबाद की रियासत ने अलीगढ़ की यूनिवर्सिटी को धन दिया और वहाँ के पढ़े ग्रेजुएटों को अपने यहाँ स्थान दिया। इसके प्रतिकार में हैदराबाद रियासत के रूप में मुस्लिम हुकूमत के बचे बीज की सिंचाई, अलीगढ़ के ग्रेजुएटों के रूप में, पानी से होने लगी। अलीगढ़ के देश घातक झरने का दूसरा मुख हैदराबाद के अन्दर ही बना दिया गया। यह उसमानिया यूनिवर्सिटी के रूप में और अधिक विषैला जल प्रस्तुत करने लगा।

"फिर यूरोप के प्रथम युद्ध के समाप्त होने पर हैदराबाद के राज्य परिवार के सिर पर एक और पंख लग गया। निज़ाम हैदराबाद के लड़के के साथ टर्की के खलीफ़ा की लड़की का विवाह हो गया। यदि महात्मा गांधी की खिलाफ़त मूवमेंट सफल हो जाती तो निज़ाम हैदराबाद का लड़का खलीफ़ा घोषित हो जाता और फिर मुस्लिम जगत के बल पर हैदराबाद दुनिया की एक प्रबल शक्ति बन जाती, जिसको न केवल हिन्दुस्तान के मुसलमान ही सहायता देते, बल्कि दूसरे मुसलमानी देशों के भी राज्य हैदराबाद की सहायता में खड़े हो जाते।

"जहाँ हैदराबाद को मुसलमानी राज्य के बीज के रूप में मराठों ने छोड़ दिया जहाँ इस बीज की सिंचाई और फिर मराई अलीगढ़ के कॉलिज के विद्यार्थियों और उसमानिया यूनिवर्सिटी के ग्रेजुएटों ने की, वहाँ महात्मा गांधी ने तो इस राज्य को न केवल हिंदुस्तान के सिर मढ़ने का, प्रत्युत् दुनिया के गले में फाँस बनाकर डालने का यत्न किया।

"महात्मा गांधी अपने इस अज्ञानतापूर्ण आन्दोलन में असफल हुए

तो संसार ने सुख की साँस ली। इस पर भी महात्मा गांधी अपनी मुसलमान पोषक नीति के कारण हैदराबाद की प्रशंसा करते रहे। यहाँ तक कि एक बार सन् १६४० में महात्माजी ने यह कह दिया कि यदि अँग्रेज हिंदुस्तान से चले गए और हैदराबाद, जो यहाँ पर सबसे बड़ी रियासत है, देश पर अधिकार जमा बैठी तो वे इसका स्वागत करेंगे।

"गांधी जी का खिलाफत आन्दोलन और यह वक्तव्य भारत में मुसलमानी राज्य स्थापित करने के यत्न का एक प्रबल प्रमाण है। इससे पहिले सन् १६३८ में, जब रियासत हैदराबाद का वहाँ के हिंदुओं पर अत्याचार बहुत बढ़ गया था और जब आर्य समाज और हिंदुओं ने सत्याग्रह आरम्भ कर दिया था, तो महात्मा गांधी ने इस रियासत के विरुद्ध सत्याग्रह का विरोध किया था। कहने का अभिप्राय यह है कि भारत में मुसलमानी राज्य के शेष बीज के बढ़कर पेड़ बनने में तथा पुनः मुसलमानी राज्य के स्थापित होने में कांग्रेस और महात्मा गांधी भरसक यत्न करते रहे हैं।

"यही कारण है कि आज हैदराबाद मुस्लिम लीग का एक भारी स्तम्भ बन रहा है। मुस्लिम लीग चाहती है कि भारत के एक टुकड़े में इस्लाम का राज्य स्थापित हो। साथ ही मुस्लिम लीग के कई-एक वक्ता तो यह भी चाहते हैं कि यह राज्य अर्थात् पाकिस्तान, तो एक पग और आगे कूदने का स्थान बने, जिससे वे पूरे हिंदुस्तान पर इस्लाम का हलाली झण्डा फहरा सकें।

"यह इतिहास की बात तो मैंने इस कारण बताई है कि हैदराबाद का बीज नाश करना देश से मुसलमानी हुकूमत का बीज नाश करना है। अब वर्तमान परिस्थिति का वर्णन कर देना आवश्यक समझता हूँ। हिंदुस्तान के वे सब लोग जो पाकिस्तान के हिमायती हैं और जो हिन्दुस्तान की हिन्दू कौम को नुकसान पहुँचाना चाहते हैं, सब हैदराबाद में एकत्रित हो रहे हैं। साथ ही देश भर की लड़कियाँ और औरतें भगा भगाकर यहाँ लाई जा रही हैं। यहाँ की रजाकार संस्था भी इसी प्रयोजन

से बनाई गई है।

"यदि आप इसका प्रमाण चाहते हैं तो यह हमारे शहर के ही जागीरदार अब्दुल करीम खाँ साहब की कोठी की तलाशी ले ली जाये। इनके पास जहाँ एक फ़ौज को खिलाने लायक अन्न जमा है जहाँ एक फौज के लड़ने लायक अस्त्र शस्त्र जमा हैं, वहाँ औरतों की एक फ़ौज भी रखी हुई है, जिनमें कई हिन्दू भी हैं। उनमें एक या शायद दो तो अभी अभी बम्बई के चलते में चोरी की हुई हैं।"

यह एक वक्तृता थी, जो एक नवयुवक साधू होशंगाबाद के एक मकान में वहाँ के नवयुवकों की एक मण्डली के सम्मुख दे रहा था। उसके मुख पर तेज और हाथों में स्फूर्ति दिखाई देती थी। नवयुवक साधू पंजाबी प्रतीत होता था। श्रोतागण बहुत उत्तेजित अवस्था में थे। एक तो देश का वायुमण्डल हिन्दू मुस्लिम झगड़े से भर रहा था और दूसरे, एक विशेष घटना होशंगाबाद में हो गई थी। अब्दुल करीम खाँ के एक बेरे की आशनाई शहर के एक बनिये की लड़की से हो गई थी। इस सभा से एक दिन पहिले पाँच-छः आदमी बलपूर्वक उस लड़की को उठाकर ले गए थे। खाँ साहब के एक नौकर ने, जिसका नाम नज़ीरुद्दीन था, बाज़ार में किसी से कहा था कि लड़की खाँ साहब की कोठी में मौजूद है और अगर दस-बीस आदमी रात के दस बजे बाद वहाँ पर सशस्त्र आक्रमण करें तो वह लड़की पकड़ी जा सकती है। उस लड़की का पिता भी उस सभा में उपस्थित था। साधूवक्ता कई दिन से होशंगाबाद के एक मन्दिर में आकर ठहरा हुआ था और हिन्दू संगठन का काम कर रहा था। उसका सब प्रयत्न रज़ाकार संस्था के विरोध में एक हिन्दू स्वयंसेवक दल बनाने का था। इस सभा में बहुत से युवक उसी दल के सदस्य थे।

लड़की के पिता ने कहा, "नज़ीरुद्दीन हर रोज मुझसे सौदा सुल्फ लेने आता है और एक बहुत ही भला आदमी मालूम होता है। उसका कहना है कि अभी तक लड़की का निकाह उस चपरासी से नहीं पढ़ा गया। इस कारण खाँ साहब ने उसको अपनी एक रखेल के पास

रखा हुआ है। एक दो दिन में यह चपरासी उस लड़की के लिए कपड़े वगैरा बनवा लेगा तो निकाह पढ़ा दिया जायेगा। ऐसी अवस्था में यदि कुछ करना है तो फ़ौरन करना चाहिए। कहीं निकाह पढ़ा दिया गया तो वह बेचारी न इधर की रहेगी, न उधर की।"

इस पर साधू ने कहा, "क्यों साहब! आप लोग इस जोखम के काम को करने के लिए तैयार हैं या नहीं?"

इस प्रश्न पर सब नवयुवकों ने हाथ उठा दिये और सब ने यह कहा, "हम सब हिन्दू औरतों को छुड़ाकर रहेंगे।"

"इसमें सम्भव है कि लड़ाई हो जाये और दोनों ओर से लोग घायल हों। जो अपनी जान तक इस काम में दे देना चाहते हैं, वे उठकर एक ओर हो जायें।"

एक दर्जन से ऊपर नवयुवक एक ओर होकर खड़े हो गये। उन सबसे यह शपथ ली गई कि वे खाँ अब्दुल करीम खाँ के घर से उन सब औरतों को बिना छुड़ाये दम नहीं लेंगे, जो पहिले हिन्दू रही हैं। अन्य उपस्थित लोगों से यह शपथ ली गई कि जो कुछ यहाँ हो रहा है, उसकी सूचना आक्रमण से पूर्व और पश्चात् किसी को नहीं देंगे और यहाँ उपस्थित लोगों में से किसी का नाम किसी को नहीं बतायेंगे।

२

नजीरुद्दीन अब्दुल करीम खाँ के यहाँ नौकरी पा गया था। उसमें एक विशेष गुण था। वह अपने मन की बात ऐसे ढंग से कहता था कि दूसरे को वह उसी के ही लाभ की प्रतीत होती थी। नजीरुद्दीन ने नौकरी के पहिले ही दिन मालिक से पूछा, "हुजूर! मेरे लिए क्या काम मुकर्रर किया है? मैं बेकार बैठना नहीं चाहता।"

"भाई! काम सोचकर बताया जायेगा। मैंने तुमको चपरासी बनाकर तो रखा नहीं। तुम्हारे लिए कोई अच्छा सा काम सोचना होगा।"

"तो इसका यह मतलब हुआ कि जब तक आप सोचियेगा, तब तक

का वेतन इनाम में मिलेगा। तब तक के लिए मेहमानखाने का ही इन्तजाम मेरे को करने दीजिये।"

"हाँ ठीक है। वह बहुत गन्दा रहता है। वहाँ का चपरासी बहुत काहिल मालूम होता है।"

उसी दिन से नसीरुद्दीन ने वहाँ के चपरासी से मिलकर वहाँ की झाड़-फूँक करनी आरम्भ कर दी। वहाँ की खाटें टूटी हुई थीं। उनकी मुरम्मत करने के लिए बढ़ई बुला भेजा। फ़रनीचर पर पॉलिश करने को सामान बाज़ार से ले आया। मेहमानखाने के सामने सब जगह गन्दी थी। उसने चपरासी की सहायता से साफ कर, वहाँ पर सुर्खी बिछा दी। इसके पश्चात्, वहाँ आसपास घास लगा, उसमें फूलों की क्यारियाँ लगा दीं।

अभी तक भी खाँ साहब यह नहीं सोच सके थे कि उससे क्या काम लिया जाय। एक दिन नसीरुद्दीन ने फिर पूछा, "हुजूर! मेरे लायक कोई काम तजवीज़ नहीं किया आपने?"

"अरे भाई! कुछ तो करते ही हो। अब कोई यह तो नहीं कह सकता कि नसीर हराम की खाता है।"

'यह तो हुजूर की मेहरबानी है कि इस मामूली-सी बात को काम समझते हैं। हकीकत में मैं इसने में अपनी तनख्वाह को हक की कमाई नहीं समझता।"

"यह मैं जानता हूँ कि तुम्हारी या किसी और नौकर की कितनी तनख्वाह होनी चाहिए। इसमें मैं तुम्हारी राय नहीं चाहता।'

इन दिनों में नसीरुद्दीन ने मुन्निया से गहरा मेल-जोल पैदा कर लिया था। वह उसे भाभी कहकर पुकारता था और वह उसे भैया कहती थी। इतने मात्र से ही वह शान्ति से चिट्ठी-पत्री कर रहा था। जब भी मुन्निया आती तो वह उससे पूछता, "भाभी! कहो, फ़ातिमा बेगम ठीक ठाक हैं?"

वह उत्तर देती, 'बेचारी बहुत उदास रहती हैं। लो, उन्होंने यह

चिट्ठी दी है। कहती थीं, पीर साहब की कोई चिट्ठी आई हो तो उनकी राजी खुशी की खबर लिखना।" नज़ीर चिट्ठी लेकर पढ़ता और झूठ-मूठ कह देता, "लिखती हैं कि खाँ साहब बहुत ही दयालु आदमी हैं। आज उन्होंने उनकी मुहब्बत से खुश होकर बहुत बढ़िया साड़ी ले दी है।" इस प्रकार की खबरें सुनकर सुखिया बहुत खुश होती। वह समझती थी कि अपने मालिक की प्रशंसा सुनकर उसे खुश होना चाहिए।

फिर जब वह एकान्त में होता तो चिट्ठी पढ़ता और पश्चात् उत्तर देता। एक दिन शान्ति की चिट्ठी आई, "क्या हो रहा है! यहाँ मेरा जीवन एक गुलाम औरत-सा हो रहा है। मैं यहाँ के मालिक को किसी भी बात में न नहीं कर सकती। मैं कितना भी शोर मचाऊँ, कोई सुनने वाला नहीं है। मकान ऐसा बना है कि भीतर यदि किसी को मार भी डाला जाये तो बाहर किसी को खबर तक भी नहीं हो सकती। जब वह भला मुझसे हमबिस्तर होना चाहता है और मैं इस बात से इन्कार करती हूँ तो वह मेरे से बलात्कार करता है और यदि चीख पुकार करूँ तो मेरी साथिनें वहाँ आ जमा होती हैं और मुझको रोते देख हँसती हैं। फिर मुझको मजबूर करने के लिए मेरी माँ को सामने खड़ा कर पीटा जाता है। भैया नज़ीर! अब इस दोजख से छुड़ाओ। उनको कहो कि जल्दी करें। नहीं तो जान तो एक दिन ऐसे ही निकल जायेगी।'

नज़ीरुद्दीन को खाँ साहब की नौकरी में आये हुए एक महीने से ऊपर हो चुका था। उसने एक लम्बी चिट्ठी लिखी, जो इस प्रकार थी, "बहिन! आज बहुत-सी बातें निश्चय हो गई हैं। यहाँ के कई नौजवान तुम्हारे लिए लड़ाई करने को भी तैयार हो गए हैं। उनकी योजना यह है कि बाहर किंचित् मात्र भी हल्ला-गुल्ला होने पर तुम अपने कमरे में घुस, भीतर से बन्द कर बैठ जाना और सब तक कोई बाहर से दो बार, तीन-तीन खट-खट न करे, तुम दरवाजा न खोलना। साथ ही महल के फाटक से लेकर अपने कमरे तक के मार्ग का मानचित्र खींचकर भेज दो। आक्रमण करने वाले एक क्षण भी व्यर्थ खोना नहीं चाहते।

"कल तक यह मानचित्र आ जाना चाहिए और मैं समझता हूँ कि उसके एक दिन पीछे उसे आज़ादी होगी।'

शान्ति ने मकान के भीतर का पूरा ब्यौरा लिखकर भेज दिया। इससे अगले दिन दोपहर के समय जब मुखिया आए तो नज़ीर का एक और पत्र लाए। उसमें केवल यह लिखा था, 'रात के दो बजे।' शान्ति इसका अर्थ समझ गई और उसके अनुकूल अपनी योजना बनाने लगी। सबसे प्रथम उसने अपनी माँ को बुलाकर सब बात बताई। उसने कहा, "माँ! बाहर से सन्देश आया है कि आज रात के दो बजे हमको छुड़ाने का यत्न किया जायगा। हमको तो सिर्फ यह करना है कि जब भी बाहर किसी प्रकार की हलचल देखें तो हम एक कमरे में आकर, भाग जाने के लिए तैयार बैठे रहें। इसके लिए मेरा कमरा तय हुआ है। उनके पास मेरे कमरे तक पहुँचने के मार्ग का मानचित्र है। माँ! तुम याद रखना कि कुछ भी सन्देह होने पर भागकर मेरे कमरे में चली आना। मुझको शीघ्र ही दरवाज़ा बन्द कर बैठे रहना है। दरवाजे पर संकेत के अनुसार ठप ठपाने पर ही दरवाज़ा खोलना है।"

शान्ति का मन कई प्रकार के विचारों में घूमने लगा। वह सोचती थी कि यदि योजना सफल न हुई तो क्या होगा। यदि कोई भी मर गया तो मारने वाले पर मुकद्दमा होकर फाँसी का दण्ड हो सकता है।

वह इस काम की भयंकरता देखकर काँपने लगी। वह सोचती थी कि क्या उसका जीवन इतना क़ीमती है कि उसके लिए कई नवयुवकों का जीवन स्वाहा किया जाय। साथ ही वह अपनी पतित अवस्था पर विचार करती थी। क्या उस जैसी नीच औरत के लिए इतना खून खराबा होना चाहिए? अभी समय था कि वह मुखिया के हाथ उनको कहला भेजे कि उसको न छुड़ाया जाय। इसके साथ ही वह अपनी मुसीबत और अपमान, जो प्रतिदिन की बात थी, की बाबत सोचती थी तो घुप कर जाती थी।

वह अपने मन के संशयों को लेकर अपनी माँ के पास पहुँची।

उसकी माँ ने उसके मन के विचार सुने और अपनी पीठ नंगी कर उस पर तीन दिन पीछे की मार के चिह्न दिखा दिए। उसकी माँ ने कहा, "देखो बेटी! देवता और असुरों में लड़ाई आदि काल से होती रही है। इस कारण लड़ाई करने में देवताओं पर दोषारोपण कोई नहीं करता। राम ने लंका पर हमला किया था और इस हमले में हजारों वानर मारे गए थे। परन्तु इसका अपराध राम के सिर नहीं लगा। दोषी तो रावण था। इसी तरह कृष्ण ने कंस की हत्या की थी, परन्तु हत्या का पाप कंस के अपने ऊपर था। कृष्ण ने पाप नहीं किया था। इसलिए तुम डरती क्यों हो? यह संसार की रीति है कि दुष्टों के नाश के लिए भले लोग अपने जीवन को भय में डालें।

"मैं तुमको एक कथा, जो मैंने अपने बचपन में अपने पिता से सुनी थी, सुनाती हूँ। कौरव अति दुष्ट थे। उन्होंने एक बार अपनी मामी द्रौपदी को भरी सभा में नंगा करने का यत्न किया था। पीछे जब उसके पाँच पतियों में और कौरवों में युद्ध होने लगा और जब कृष्ण युद्ध को रोकने के लिए, कौरवों के बड़े भाई दुर्योधन के पास जाने लगे तो द्रौपदी उसके सम्मुख उपस्थित होकर अपने केश दिखाकर बोली, 'देखो भैया कृष्ण! इन केशों को पकड़कर ही दुर्योधन के भाई दुःशासन ने मुझे भरी सभा में घसीटा था और मुझको नग्न करने का यत्न किया था। क्या संसार में इसके लिए कोई दण्ड नहीं है?'

'दण्ड है और दोषी को यह मिलेगा।' कृष्ण का उत्तर था। 'यदि दोषी को दण्ड न मिले तो संसार में इतनी दुर्व्यवस्था उत्पन्न हो जाये कि किसी भले आदमी का रहना दुर्भर हो जाय। तुम निश्चिन्त रहो द्रौपदी! परमात्मा भले लोगों की ओर होता है।'

"इस कारण मैं कहती हूँ कि जो कुछ हो रहा है, वह भगवान् की प्रेरणा से ही समझना चाहिए। इसमें हमारा हस्तक्षेप उसके न्याय-पथ में बाधा खड़ी करना होगा। जब हम समझते हैं कि एक दुष्ट को दण्ड देने का आयोजन हो रहा है, तो उस दण्ड के मार्ग में हम रुकावट बनने से

स्वय दण्ड के भागी हो जावेंगे।"

इस प्रकार शान्ति क मन को सान्त्वना दे उसकी माँ अपने कमरे में जाकर, भीतर से दरवाजा बन्द कर अति विनीत भाव से परमात्मा से प्रार्थना करने लगी।

३

शान्ति आज बहुत सहमी हुई प्रतीत होती थी और यह बात खाँ साहब से छिपी नहीं रह सकी। खाना खाते समय खाँ साहब ने उसके समीप बैठते हुए कहा, "फातिमा! आज तो तुम बहुत खूबसूरत मालूम हो रही हो। तुम्हारे मुख पर यह लाली, मैंने कई दिन के बाद आज देखी है।"

"मैंने अपनी माँ की पीठ पर उस दिन की मार के निशान अभी अभी देखे हैं।"

"तब तो तुम्हारा मन हमारी ताकत का अन्दाज लगा रहा होगा। तुम अब तो समझ रही होगी कि मेरा कहना मानने के सिवाय और कोई चारा नहीं है।"

शान्ति आज लड़कर झगड़ा खड़ा करना नहीं चाहती थी। वह जानती थी कि जिस दिन उसकी माँ पीटी गई थी, घर के भीतर रहनेवाले सब लोग रात के दो बजे तक नहीं सोए थे। आज वह ऐसी बात करना नहीं चाहती थी। वह चाहती थी कि दो बजे तक सारे घर में शान्ति हो जाय और सब लोग गहरी नींद सो जायँ, जिससे आक्रमण करने वालों को कम से-कम खतरे में अपना काम करने का अवसर मिल सके। इस कारण वह चुपचाप बैठी रही। इस पर खाँ बोला, "मेरा कहने की सचाई समझ आ गई न!"

शान्ति अभी भी चुप रही। इस पर उसने फिर कहा, "खामोशी नीम-रजा समझनी चाहिए। तो लो, हम एलान करते हैं कि आज हम फातिमा बेगम के मेहमान होंगे।"

शान्ति यह सुनकर काँप उठी। इस पर खाँ ने उसके गले में बाँह

डालकर उसका मुख चूम लिया। वह इस समय झगड़ा नहीं करना चाहती थी। इस पर भी उसने यह समझाने का यत्न किया कि उसको उस रात क्षमा कर दिया जाये। परन्तु खाँ साहब पर भूत सवार हो गया था। उसने कहा, "नहीं बेगम! आज हम तुमको प्रसन्न पाते हैं और हम तुमको खुश कर देना चाहते हैं।"

इतना कह वह उठकर चला गया। शान्ति इस नई परिस्थिति से घबरा उठी। वह समझने लगी कि पूरी योजना असफल हो जायेगी। जरा-सा भी शोर हुआ तो यह जाग उठेगा और फिर न जाने क्या कर देगा। वह खाने से उठकर सीधी अपनी माँ के कमरे में गई और उसको इस नई परिस्थिति से परिचित कर उसकी राय पूछने लगी। माँ ने एक क्षण सोचकर कहा, "बेटी! भगवान् की बातें हम क्या जान सकती हैं! हमें तो जो कुछ हो रहा है, उसमें ही अपना कर्तव्य बनाना और करना है। देखो, मैं रात-भर जागती रहूँगी। ठीक समय पर मैं तुम्हारा दरवाजा साधारण रूप में खटखटाऊँगी। तुम उठकर मुझे भीतर कर लेना। वहाँ हम यत्न करेंगी कि खाँ किसी प्रकार से भी आक्रमण करने वालों के मुकाबिले में न आ सके। तुम उसको वहीं अपने कमरे में सुला रखना।"

इस रात के शान्ति के व्यवहार से खाँ बहुत प्रसन्न था। रात के बारह बजे तक वह उससे प्रेम प्रलाप करता रहा। इसके पश्चात् वह सो गया। सोने से पूर्व उसने कहा कि अगले दिन वह उसे एक सहस्र निजामी स्वर्ण अशर्फियाँ देगा। शान्ति ने मन कड़ा कर अपना व्यवहार ऐसा बनाए रखा, जिससे वह अति प्रसन्न और सन्तुष्ट हो सो गया। उसे गहरी नींद में सोता देख शान्ति पलंग से उठी और समीप रखी कुर्सी पर बैठकर धक-धक करते हुए दिल से समय की प्रतीक्षा करने लगी। वह अँधेरे में बैठी हुई भय के मारे काँप रही थी।

अभी दो नहीं बजे थे कि उसका बाहर से दरवाजा खटखटाते हुए कोई जान पड़ा। उसने समझ लिया कि अवश्य उसकी माँ है। उसने उठकर आराम से दरवाजा खोल दिया। उसकी माँ ही थी। उसके हाथ में कुछ

था। शान्ति ने उसका एक कोने में ले जाकर पूछा, "यह क्या है माँ?"

"एक मजबूत रस्सा है। यह बहुत काम की चीज है। भागने के वक्त यह कई काम दे सकता है। मैं समझती हूँ कि इसकी जरूरत पड़ेगी।"

अब दोनों आराम से कुर्सियों पर बैठ गई। समय आ गया। बाहर घड़ियाल बजाने वाले ने दो बजाए। जैसे बिजली का स्विच दबाने से मशीन काम करती है, इसी प्रकार घड़ियाल का शब्द सुन दोनों खड़ी हो गइ। परन्तु बाहर कुछ नहीं हुआ। शान्ति अपने स्थान से चलकर दरवाजे के पास पहुँच, उससे कान लगा सुनने लगी। उसकी माँ पलग, जिस पर खान सो रहा था, के पास जा खड़ी हो गई। उसका खयाल था कि बाहर हल्ला गुल्ला होगा, इससे खान की नींद खुल जायेगी और वह उठकर बाहर भागेगा। उसका यह भी खयाल था कि उसे बाहर नहीं जाने देना चाहिए। अगर जरूरत पड़ी तो उसको रस्से से बाँधकर वहीं कैद कर रखना चाहिए।

लगभग दो बजने के पन्द्रह मिनट पश्चात् किसी ने दो बार तीन-तीन खट खट की। शान्ति दरवाजे के पास खड़ी थी। उसने धीरे से दरवाजा खोल दिया। पाँच आदमी भीतर आ गये। सदाशिव इनमें एक था। उसने धीरे से पूछा, "शान्ति।"

"मैं हूँ।" उसने उत्तर दिया। पश्चात् उसने बिजली का स्विच दबाकर रोशनी कर दी। इस समय खाँ जाग पड़ा और कमरे में रोशनी देख पूछने लगा, "क्या है बेगम?" परन्तु पूर्व इसके कि वह भली भाँति परिस्थिति को समझ सकता, सदाशिव पिस्तौल लेकर उसकी छाती की ओर निशाना बाँधकर खड़ा हो गया। सदाशिव ने कहा, "देखो, अगर जरा भी हिले तो काम तमाम कर दूँगा।'

खाँ अभी भी समझ नहीं सका था कि क्या हो रहा है। हाँ, उसने पिस्तौल का काला मुख अपनी ओर झाँकते हुए देख लिया था। इससे उसने समझ लिया कि बोलना और शोर करना खतरे से खाली नहीं।

उसने वैसे ही लेटे हुए कहा, "क्या चाहते हो ?"

"चाहते हैं कि तुम लेटे रहो और बोलो नहीं।" इस समय सदाशिव के साथियों ने खाँ के मुख में कपड़ा ठूँस दिया और उसके हाथ-पाँव बाँध दिये। उसको कसकर पलंग से बाँध उन्होंने बिजली बुझा दी और सब, शान्ति और उसकी माँ को लेकर कमरे के बाहर आ गये। कमरे के बाहर दो और युवक हाथों में पिस्तौल लिए हुए खड़े थे। कमरे से बाहर निकल शान्ति की माँ ने दरवाजा बाहर से बंद कर दिया।

बीस के लगभग युवक आये थे। फाटक पर चौकीदार को भी हाथ पाँव बाँध मुख में कपड़ा ठूँसकर और फाटक के साथ बाँधकर छोड़ आये थे। कोठी की ड्योढ़ी पर खड़े पहरेदार सो गये थे। इस कारण उनको काबू में कर लेना भी आसान ही रहा। थोड़ा सा झगड़ा एक चौकीदार के साथ, जो जनानखाने के बाहर खड़ा था, हुआ। वह शोर मचाने लगा था, परन्तु एक युवक ने अपने हाथ में पकड़ी बन्दूक के कुन्दे की चोट से उसको अचेत कर दिया। इस प्रकार बिना किसी प्रकार का शोर किये सब लोग कोठी में दाखिल हो गये। इस समय नज़ीरुद्दीन भी वहाँ आ गया। उसने मुखिया से भीतर की सब सूचना प्राप्त कर रखी थी। इस प्रकार उसने सदाशिव को तो शान्ति के कमरे की ओर भेज दिया और वह स्वयं विवाहित बेगमों की ओर जा पहुँचा। वहाँ चारों बेगमों को एक स्थान पर एकत्रित कर नज़ीरुद्दीन ने उनसे पूछा, "तुम में हिन्दू की लड़की कौन है ?" सबसे छोटी बेगम, जिसका विवाह पिछले वर्ष ही हुआ था, बोल उठी, "मैं हूँ।"

"किसकी लड़की हो ?"

"हैदराबाद के विख्यात वकील केलकर की। मेरा अपहरण खाँ साहब ने एक सिनेमा हॉल के बाहर किया था।"

"इधर हट जाओ।"

इसके पश्चात् उसने दूसरी बेगमों से कहा, "तुममें से कोई यहाँ से चली जाना चाहती है ?"

कोई नहीं बोली। अब नज़ीरुद्दीन ने युवकों को कहा, "इन सबके मुख, हाथ और पाँव बाँध दो और इन सबको इकट्ठा बाँधकर कमरे में बन्द कर दो।"

इस प्रकार जब सब लोग बाहर आ गये तो बनिया, जिसकी लड़की पर यह सब झगड़ा खड़ा हुआ था, कहने लगा, "पर नबीर बाबू। श्यामा तो मिली नहीं।"

"लाला जी! रात को तो महल में थी। अब कहीं दिखाई नहीं देती।"

इससे उसको बहुत निराशा हुई। वहाँ ठहरे रहने के लिए समय नहीं था। इस कारण सब तीन औरतों को साथ लेकर कोठी से बाहर निकल आये। कोठी के बाहर मोटर-गाड़ियाँ खड़ी थीं। शान्ति और उसकी माँ तथा सदाशिव एक गाड़ी में बैठ गये। सुखिया इनके साथ थी। वह गाड़ी हैदराबाद की सरहद की ओर तेज़ गति से चल पड़ी। दूसरी गाड़ी में छोटी बेगम और नबीरुद्दीन, साथ में वह पजाबी साधू, जो एक दिन होशगाबाद के युवकों की सभा में व्याख्यान दे रहा था, बैठ गये। उन्होंने वहाँ से हैदराबाद की ओर का रास्ता पकड़ा। अन्य युवक दो-दो तीन-तीन कर मण्डलियों में विभक्त हो गये और भिन्न भिन्न दिशाओं में पैदल चले गये।

४

प्रात काल होशगाबाद में यह विख्यात हो गया कि अब्दुल करीम खाँ की कोठी पर डाका पड़ा है। उस इलाक़े के थानेदार को यह समाचार मिला तो उसको विश्वास नहीं आया। उसके थाने में किसी प्रकार की भी रिपोर्ट नहीं लिखवाई गई थी। पहिले तो कुछ काल तक वह किसी के रिपोर्ट लिखवाने के लिए आने की प्रतीक्षा करता रहा। जब कोई नहीं आया तो वह स्वय पता करने खाँ साहब की कोठी में पहुँच गया। खाँ साहब से उसकी मेल-मुलाकात थी। जब वह कोठी में पहुँचा तो

उसने देखा कि लोग छोटी छोटी टोलियों में इधर-उधर खड़े हुए आपस में बातें कर रहे हैं।

थानेदार ने चपरासी से पूछा "खाँ साहब घर पर हैं ?"

"जी हुजूर! मगर तबीयत खराब है।"

"हमारी इत्तला कर दो।"

चपरासी गया और भीतर से खबर लाया कि खाँ साहब अभी आते हैं और दारोगा साहब बैठक में बैठें। दारोगा बैठक में जा बैठा। पन्द्रह बीस मिनट प्रतीक्षा करने पर खाँ आया। उसका मुख उतरा हुआ था। दारोगा ने उठकर सलाम की, हाथ मिलाया और खैर-खैरियत पूछी। इस पर खाँ ने कहा, "और तो सब खैर है मगर कल रात हमारे यहाँ से कुछ चीजें चुरा ली गई हैं। इस वजह से कुछ परेशानी हो हो रही है।"

"मगर उस चोरी की इत्तला आपने थाने में नहीं की ?"

"मैंने मुनासिब नहीं समझा।"

"क्यों ?"

"चोरी का माल चोरी गया हो तो कैसे इत्तला करता ?'

"तो आपके पास चोरी का माल रखा था ?"

"देखो जी मिस्टर यूसुफ! बात कुछ ऐसी ही है। आप तो दोस्त ठहरे। आपसे क्या छिपाना है। खुदा ने मुझको कुछ शौकीन-तबीयत बनाया है। इसलिए कुछ बढ़िया जवाहरात देखे तो तबीयत मचल गई। कुछ जवाहरात ऐसे भी होते हैं कि वे मोल पर नहीं मिल सकते। उन्हें हासिल करने के लिए हर किस्म के तरीके इस्तेमाल करने पड़ते हैं। उनमें एक तरीका चोरी करना भी है।"

दारोगा यूसुफ मियाँ अब्दुल करीम खाँ की युक्ति सुनकर हँस पड़ा। उसने कहा, "आपके रिश्वतखोरों जैसे ख्यालात सुनकर दिल बहुत खुश हुआ है। मगर हुजूर! एक बात मैं गुजारिश कर देना चाहता हूँ कि हमारा महकमा रिश्वतखोरी पर 'मबनी' नहीं है। हम तो इन्साफ के

लिए बने हैं।"

"वह तो भाई! बहुत अच्छी तरह मालूम है। उस दिन जब लम्भू बनिये को ब्लैक-मार्केटिंग करते पकड़कर भी छोड़ दिया था, तो इन्साफ का पालन ही तो किया था।"

"वह तो एक दूसरी बात है। उसमें बन्दा को खुरचन काफी मिली है। फिर एक बहुत जरूरी बात यह भी तो है कि शायद चोरी करनेवाले हिन्दू हों।"

"वह ठीक है। भाई! लम्भू बनिया भी तो हिन्दू ही था और वह अभी तक भी मुसलमान नहीं हुआ। खैर, छोड़ो इस बात को। मैं तो यह जानना चाहता हूँ कि क्या मुझसे भी खुरचन की उम्मीद में आए हो?"

"अजी तोबा करो। भला आपसे कैसे ले सकता हूँ? अगर आप इशारा कर देते तो हम इधर उधर हाथ मारते।" इतना कहकर उसने खाँ के मुख की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा।

खाँ ने उत्तर दिया, "मगर एक बात तुम्हारी अकल में नहीं आई मालूम होती। वह है चोरी हुई चीज में जिन्दगी का होना। अगर वह अदालत में पेश हो गई तो बोल उठेगी और उसके पहिले मुझसे चुराए जाने की बात बता देगी।"

"तो वह कोई औरत है? तब तो बात ठीक है। एक गई तो दूसरी आ जायेगी।"

"हाँ, तुम अब समझे हो। मेरे माल को कुछ भी नुकसान नहीं पहुँचा। किसी जान का नुकसान भी नहीं हुआ। कुछ थोड़ा-सा मेरी बहादुरी को बट्टा लगा है। पर मैं क्या करता? रात को सोया हुआ था कि कम्बख्तों ने आन दबाया। लेटे लेटे ही मुँह में कपड़ा ठूँस दिया और हाथ-पाँव बाँध दिए। चपरासी और चौकीदारों के साथ भी यही हुआ मालूम होता है। अब किस को कसूरवार कहूँ और किस को बेकसूर। गज़ब तो यह हुआ है कि एक शादी शुदा बेगम भी भाग गई है।"

"तो उसकी ही रिपोट लिखवा दीजिए।"

"यूसफ साहब! नहीं, वह हिन्दू की लड़की था और पिछले साल हैदराबाद के विक्टोरिया सिनेमा हॉल के बाहर से चुराई गई थी। यहाँ लाकर उससे शादी कर ली। यूँ तो वह बहुत खुश मालूम होती थी। क्या हुआ समझ नहीं आता। न जाने उसने क्या देखा है कि रात उन लोगों के साथ भाग गई है। दो औरतें और भागी हैं। एक तो मुसलमान की लड़की थी और उसके बाप ने ही उसके हिन्दू खाविन्द से चुराकर यहाँ भेजी थी। साथ उसके उसकी माँ भी थी। दोनों ही भाग गई हैं। असल में मैंने एक बहुत वफादारी दिखानेवाला नौकर रखा था। मालूम होता है कि वही इन सबको भगाकर ले गया है।"

"पर खाँ साहब! यह एक आदमी का काम तो मालूम नहीं होता। इसमें तो कोई बहुत बड़ी साजिश मालूम होती है।"

"अजी छोड़िए इस बात को। मैं रिपोट नहीं लिखवाऊँगा।"

थानेदार बहुत हैरान था और एक भारी आमदन का स्रोत हाथ से जाता देख, दुःखी हुआ था। वह वहाँ से वापिस आया तो नगर से एक और समाचार मिला। लोटन बनिये की लड़की छः दिन तक घर से गायब रहकर रात लौट आई है। लोटन ने उसके गायब हो जाने की रिपोर्ट थाने में नहीं लिखवाई थी। इससे वह उसके मिलने की सूचना भी देने नहीं आया। थानेदार इस समाचार से आग बबूला हो गया। उसने समाचार लानेवाले के सामने ही लोटन को गालियाँ देनी आरम्भ कर दीं, "बदमाश का बच्चा, क्या समझता है अपने को? घर में ही थानदारी खोल रखी है। घर में ही रिपोट लिख ली और घर में ही सुराग़ लगाना आरम्भ कर दिया' ओ! पीर दीन! जाना ज़रा लोटन को बुला लाओ।"

लोटन आया और थानेदार के सामने हाज़िर हुआ। थानदार का क्रोध अभी शान्त नहीं हुआ था। इससे कहने लगा, "क्यों बे लोटन के बच्चे! लड़की के ग़ायब हो जाने की ख़बर क्यों नहीं लिखवाई?'

"हुजूर! कोई नेकनामी की बात होती तो लिखाने आ जाता। अपने मुख पर आप ही कालिख कैसे पोत लेता?"

"अबे, थाने में रिपोट तो लिखवाई जाती है।"

"मुझे मालूम नहीं था। उमर भर में पहिली ही बार तो लड़की भागी थी। अब फिर कोई भागेगी तो ज़रूर लिखा दूँगा।"

"तो इसी की अब ही लिखा दो न?"

"अब क्या लाभ होगा?"

"अरे यह दस्तूर है।"

"न हुजूर! अभी तक तो सिरफ आपको ही पता लगा है और रिपोर्ट लिखाने पर तो सबको मालूम हो जायगा।"

"तो फिर चोर कैसे पकड़ा जायेगा।'

"वह चोर नहीं था साहब! लड़की कहती है कि कोई साधु-महात्मा थे। उन्होंने उसको बहुत भली भाँति रखा था। खाने पहरने और प्रत्येक प्रकार का आराम उसको दिया था।'

इस बात से तो थानेदार को भी हँसी निकल गई। उसने कहा, "ओ बेवकूफ़ लोटन! किसी के भी घर में लड़की को भेज दो। वह दो चार दिन तो उसकी ज़रूर खातिर करेगा।"

"यह नहीं दारोगा साहब! क्या मैं समझता नहीं हूँ? सब कुछ जानता हूँ। पाँच बच्चों का बाप हूँ। मैंने सब कुछ मालूम कर लिया है। उसको ले जाने वाला एक विशेष कारण से उसको ले गया था। वह कारण मुझको मालूम हो गया है।"

"देखो लोटन! तुमको वह कारण बताना होगा और उस साधु का नाम भी बताना होगा। नहीं तो तुमको अपनी लड़की से पेशा कराने के जुर्म में हवालात में रखना पड़ेगा।"

लोटन बनिया इससे घबराया। उसने हाथ जोड़कर कहा, "हुजूर! यह बहुत सख्त बदनामी का कारण बन जायेगा। मैं आपको विश्वास दिलाने के लिए यह कारण बता सकता हूँ, जिससे वह साधु लड़की को

अपने पास ले गया था। मगर मैं उस साधु का नाम नहीं बता सकता। न तो मैं उसका नाम जानता हूँ और न ही यह लड़की जानती है, इसलिए मैं क्षमा माँगता हूँ।

"मेरी लड़की ने मुझको बताया है कि खाँ साहब के बैरा रफ़ीक ने उससे विवाह कर लेने को कहा था। वह उसके साथ भाग जाने वाली थी कि खाँ साहब के एक और नौकर नसीरुद्दीन ने उससे पहले मिलकर उसको मना किया। जब वह नहीं मानी तो वह उसको धोखा देकर उसी साधु के पास ले गया। वहाँ उस साधु ने उसको अपने मकान में बन्द कर दिया। उसी नसीर ने मुझको बताया कि मेरी लड़की रफ़ीक बैरे से चुराई गई है। साथ ही मुझको कहा कि उसका अभी निकाह नहीं पढ़ा गया। इसके बाद उसने कहा कि वह उसके छुड़ाने का यत्न कर रहा है। अब आज सुबह वह स्वयं आ गई है। उसने कहा है कि साधु इतने दिन तक उसको समझाता रहा है कि उसको किसी मुसलमान से विवाह नहीं करना चाहिए। अब वह उस रफ़ीक से विवाह करना नहीं चाहती। उसका कहना है कि साधु और नसीर दोनों उससे सगे भाई का-सा सुलूक करते रहे हैं। अब दारोग़ा साहब! जो कुछ भी हुआ है, मैं उसको अदालत में घसीटकर अपने ही मुख पर कालख नहीं पोतना चाहता।

"मैंने नसीर को ढूँढने का यत्न किया है। वह न मालूम कहाँ चला गया है।'

यह कहानी सुनकर थानेदार ज़ोर से हँसा और बोला, "बहुत अच्छी तरह बेवकूफ़ बनाया है उन्होंने तुमको। छः दिन तक तुम्हारी लड़की का भोग किया और फिर हिन्दू और मुसलमान की बात बनाकर चल दिए। एक बात बताओ तो। कितना माल तुम्हारी लड़की घर से चुराकर ले गई थी?"

"सच बताऊँ हुज़ूर! कोई दो हज़ार का ज़ेवर ले गई थी, परन्तु वह सब-का-सब अपने साथ वापिस ले आई है।"

"तुम झूठ बोलते हो। मैंने इतनी उमर में कोई माल का लाल इतना

ईमानदार नहीं देखा, जो घर में आई औरत को छुए नहीं और इस तरह आए माल को वापिस कर दे। देखो लोटन! अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारी लड़की को अदालत में न घसीटूँ और उसका डॉक्टरी मुआइना न कराऊँ तो कुछ हमारा भी ख्याल करना होगा। पाँच सौ रुपया आज शाम तक यहाँ जमा करा दो। नहीं तो भाई खान! फिर न कहना। उस साधु और नजीर की तलाश तो हो रही है। उन्होंने खाँ साहब के घर डाका डाला है।"

"हाँ, कुछ उड़ती बात सुनी तो है। कुछ बहुत माल गया है उनके घर से?"

"उनकी बात छोड़ो तुम। वे बहुत अमीर आदमी हैं। तुम अपनी बात कहो। रुपया शाम तक आएगा या नहीं?'

"कहाँ से ढूँढता हूँ साहब!'

५

दिन निकलने से पूर्व सदाशिव, शान्ति और उसकी माँ को लेकर हैदराबाद की सीमा से बाहर निकल गया। मार्ग में शान्ति ने बम्बई 'मैरीन ड्राइव' वाले मकान से अपहरण होने के समय से लेकर छूटने के समय तक अपनी पूर्ण आप-बीती सुना दी। इस काल में इतनी करुणाजनक घटनाएँ हो गई थीं कि इनको सुनाते-सुनाते कई बार उसके आँसू बह निकले। सदाशिव दाँत पीस रहा था। शान्ति की माँ भविष्य के विषय में सोचती गम्भीर बैठी थी। शान्ति अपनी कथा सुना चुकी तो कहने लगी, "इस बदमाश पीर को मैं अपना बाप समझती थी। जब मुझको दरगाह की घृणित बातों का पता चला तो कई बार मेरे मन में उसके लिए घृणा उठी थी, परन्तु उसको पिता का आदर देकर अपने मन में कभी भी उसके विरुद्ध विचार आने नहीं दिया। उसने अपने मन की नीचता का परिचय उसके साथ भी दिया, जिसको वह अपनी लड़की कहता था।"

शान्ति इतना कह हिचकियाँ भर रोने लगी। तीनों पिछले दो मास की बातों से इतना दुःख अनुभव करने लगे थे कि उनको कुछ समझ ही नहीं आता था कि क्या करें। सबसे पहले शान्ति की माँ ने होश सम्भाली और उसने कहा, "बेटी! अब इस रोने धोने को छोड़ हमको आगे के विषय में विचार करना चाहिए। भगवान् का धन्यवाद है कि उसने पुनः हमारे लिए नया संसार खोल दिया है। इसमें हमको कहाँ, कैसे रहना होगा और अपनी बिगड़ी हालत को कैसे बनाना होगा, इस समय यही एक सोचने की बात है।"

सदाशिव ने कहा, "देखो माँ! मैंने इतना तो सोच रखा है कि अब बम्बई में नहीं रहूँगा। मैंने अभी यह विचार नहीं किया कि किस स्थान पर चलकर रहूँ। इस बात को सोचने को समय नहीं था। सबसे पहले तो तुम दोनों को छुड़ाने की बात थी, सो हो गई है। अब इसके आगे विचार करने का समय आ गया है। बम्बई पहुँचते ही अपना सामान ठीक कर चल देंगे।"

"यह तो ठीक है।" शान्ति ने कहा, "परन्तु मेरा आपके साथ रहना ठीक भी है या नहीं, मुझको समझ नहीं आ रहा। मैं अब वह बात नहीं रह गई। शायद मैं अब वेश्या का काम करने के लायक ही रह गई हूँ।"

"क्या हो गया है तुमको?" सदाशिव ने सचेत हो पूछा।

"बताया तो है। मेरे शरीर को उस शैतान के हाथ लग चुके हैं, यह अब गन्दा हो गया है।"

"शरीर गन्दा हो गया है या मन भी?"

"क्या मतलब?" शान्ति ने पूछा।

"मतलब तो साफ़ है। क्या तुम मन से भी कभी उसकी बीबी बनी हो?"

"उस पशु की? उसके लिए मेरे मन में पति की भावना कैसे हो सकती थी, जो मुझको वश में करने के लिए मेरी माँ को नंगा कर मेरे

सामने पीट सकता है। मैं इतनी मूर्ख नहीं हो सकती।"

"यही तो कहता हूँ कि तुम्हारा केवल शरीर ही पतित हुआ है। उसको साबुन मलकर साफ कर लूँगा। इस गन्दे शरीर की दुर्गन्ध निकालने के लिए खुशबूदार उबटन मल लूँगा। मन तो तुम्हारा मेरे से मुहब्बत करता है न! एक बात और बताऊँ शान्ति! हम हिन्दू तो मन की भी शुद्धि कर सकते हैं। उसके लिए प्रायश्चित करना होता है और वह भी शुद्ध हो जाता है।"

"यह बात पहले तो आपने कभी नहीं बताई। मैं समझती हूँ कि मेरा मन बहलाने के लिए ही आप कह रहे हैं।"

"मन बहलाना नहीं शान्ति! मन से भ्रम को दूर करना कहो तो ठीक है।"

"देखो बेटा सदाशिव! हम बदनसीबों के लिए तुम अपनी जिन्दगी खराब न करना। तुम कौंसिल के मेम्बर हो। बड़े आदमियों में तुम्हारा चलना फिरना है। हम नहीं चाहते कि तुमसे लोग घृणा करने लगें और कहीं वे तुमसे बात करना अथवा तुमसे मेल-जोल रखना न पसन्द करें। तुम हमको हमारे हाल पर छोड़ दो। हम किसी न-किसी तरह अपना निर्वाह कर लेंगे।

"देखो माँ! मैं तुम्हें बदनसीब नहीं समझता। जो कुछ हुआ है, वह आज इस देश में किसी भी औरत के साथ हो सकता है। यह हमारी सरकार की दुर्बलता के कारण हुआ है। तुम नहीं जानतीं क्या कि दरगाह में नित्य हिन्दू औरतों से क्या होता है? किस किस को बदनसीब कहूँ। उन औरतों का कुछ भी दोष नहीं है। देश में राज्य ही दुर्बल हो गया है। यह देश की बदनसीबी है। वह अब भी इस दरगाह की और उसके पीर की कथा पर विश्वास नहीं करेगा।"

"बेटा! मैं तो तुम्हारे भविष्य का विचार कर ही कह रही हूँ।"

"मैंने फैसला कर लिया है कि कौंसिल छोड़ दूँगा। इसलिए नहीं कि तुम्हारे साथ रहने के कारण मेरे पर लोग उँगली उठायेंगे, प्रत्युत्

इसलिए कि मुझको उन लोगों के साथ रहते लज्जा आती है। वे लोग इस प्रकार के नासमझ हैं कि उनकी बचपन की-सी बातों पर मुझको कई बार सिर झुकाना पड़ता है। उनकी नासमझी के कारण जो हानि देश और जाति को होने वाली है, उसके करने वालों में मैं अपना नाम लिखाना नहीं चाहता।

"शान्ति! मैंने सब कुछ जानते हुए तुमको छुड़ाने का इतना कठिन काम करने का साहस किया है तो सोच-समझकर ही किया है। मदन मोहन, जिसको तुम नज़ीर के नाम से जानती हो, तुम्हारे विषय में मुझको सब कुछ बता चुका था। इस पर भी मैंने यह षड्यन्त्र किया और अपने तथा खुशीराम जी के मित्रों की जानें खतरे में डालीं। हम सब यह भली भाँति समझते थे कि तुम सर्वथा पवित्र हो।"

शान्ति इसका उत्तर नहीं दे सकी थी। उसकी आँखों से टप-टप आँसू गिर रहे थे। उसकी माँ, जो उसके पास दूसरी ओर बैठी हुई थी, उसके गले में हाथ डालकर कहने लगी, "देखो बेटी! मैं कहती न थी कि सदाशिव ऐसा है। अब छोड़ो इस बात को। आओ सोचें कि बम्बई छोड़कर कहाँ चलना चाहिए और बम्बई से जाते समय ऐसे जाना चाहिए कि पीर का बच्चा हमको पा ही न सके।"

तीनों बम्बई में पहुँच तो अपने घर जाने के स्थान खुशीराम के घर चले गए। खुशीराम को अपनी योजना के सफल होने से बहुत प्रसन्नता हुई। उसने उनको अपने घर में रखा और उनके छूटने की पूर्ण कथा सुनी।

एक आध दिन में ही उनके बम्बई छोड़कर जाने का विचार हो गया। उन दिनों बम्बई की धारा सभा की बैठक हो रही थी। इस पर भी सदाशिव ने बम्बई को सदा के लिए छोड़ने का विचार कर लिया। उन सबका विचार पहले हरिद्वार जाने का ही ठहरा। पश्चात् दिल्ली में कोई काम कर लेने का विचार पक्का कर लिया।

बम्बई से विदा होते समय सदाशिव ने खुशीराम का धन्यवाद करते हुए कहा, "खुशीराम जी! मैं जीवन-पर्यन्त आपके हित को भूल नहीं

सकता । इस परिवर्तनशील काल ने मुझे यह शिक्षा दी है, जिससे मेरे में एक प्रकार की मानसिक क्रान्ति उत्पन्न हो गई है । मैं समझता हूँ कि मेरी दशा तथा जाति के विषय में धारणा अशुद्ध थी ।

"यद्यपि मैं यह नहीं समझ सका कि मुसलमान क्यों देश-हित का विरोध कर रहे हैं, इस पर भी यह बात तो स्पष्ट हो गई है कि वे प्राय सब अपने मजहब को देश से ऊँची पदवी देते हैं और मजहब को देश से ऊपर रखने के लिए प्रत्येक प्रकार के, उचित अथवा अनुचित उपायों को प्रयोग मे लाने में सकोच नहीं करते ।"

हरिद्वार में पहुँचकर सदाशिव ने एक मकान भाड़े पर ले लिया । उसका विचार था कि वह यहाँ कुछ दिन रहकर दिल्ली जाने की बात निश्चय करेगा परन्तु यहाँ उसको शान्ति नहीं मिली । रावलपिण्डी और मुलतान के हिन्दू अपना घर बार लुटाकर सहस्रों की सख्या में आने लगे थे ।

सदाशिव उनकी दुर्दशा की कथाएँ सुन सुनकर पागल हो रहा था । वह सोचता था कि क्या हिन्दुओं के लिए मुसलमानों के साथ रहने को स्थान नहीं ?

निर्भ्रान्त मन

१

अनिमा अपने पिता के देहान्त हो जाने से उदास तो थी ही, परन्तु जब उसे गिरीश के चक्षु विहीन हो जाने का समाचार मिला तो उसकी कमर ही टूट गई। कई दिन तक तो वह खाट पर से उठ ही नहीं सकी। सुधीर और उसके पिता के अन्य साथी उसका मन बहलाने का प्रयत्न करते रहे। गिरीश के पिता जब अपने पुत्र को वियाना ले जाने लगे तो उसने भी साथ जाने की इच्छा प्रकट की, परन्तु गिरीश की माँ तो, गिरीश की मुसीबतों का कारण उसे ही समझती थी। इससे उसने अनिमा को गिरीश से मिलने ही नहीं दिया और उसे साथ ले जाने से न कर दी।

जब गिरीश को हवाई जहाज़ के अड्डे पर ले जाया जा रहा था, तो अनिमा वहाँ पर जा पहुँची और उसकी माँ के मना करने पर भी उसके सामने जा खड़ी हुई, 'गिरीश जी!"

अनिमा इतना कहकर रुक गई। शब्द उसके गले में अटक गये। गिरीश ने हाथ फैलाते हुए कहा, "अनिमा! तुम हो!" अनिमा ने हाथ बढ़ाकर अपना हाथ गिरीश के हाथ में दे दिया। गिरीश ने टटोलकर अपना हाथ उसके कन्धे पर रख, उसका आश्रय लेकर खड़े हो कहा, "तुम इतनी देर तक कहाँ रही हो? पहिले मुझे बताया गया था कि तुम घायल हो गई हो, फिर तुम पिताजी के शोक में घर से नहीं निकलीं और पश्चात् तुम रुग्ण होकर दिल्ली चली गई हो।"

अनिमा ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर उसकी माँ की ओर देखा। वह लज्जा से आँखें नीची किये हुए खड़ी थी। अनिमा समझ गई कि उसने अपने पुत्र को उससे पृथक् रखने के लिए झूठ बोला है। उसने एक क्षण में अपने व्यवहार का निश्चय कर लिया और कह दिया, "हाँ, मेरी नानीजी आई थीं और एकाएक उनका मुझको ले जाने का विचार हो गया। मैं कल ही लौटी हूँ। यहाँ आकर पता चला कि आप विलायत जा रहे हैं, इससे मिलने यहाँ चली आई हूँ।"

"कितना अच्छा होता यदि तुम मेरे साथ चल सकतीं।"

"परन्तु अब इतनी जल्दी तो पासपोर्ट बन नहीं सकता।" अनिमा ने उसकी माँ की ओर घृणा की दृष्टि से देखते हुए कहा। गिरीश की माँ की आँखों से आँसू भर भर बह रहे थे। अनिमा ने अपना कहना जारी रखा, "मुझको बहुत शोक है कि मैं आपकी सेवा करने के लिए साथ नहीं जा सकी। अपना समाचार भिजवाने का यत्न करिएगा। मैं आपकी यहाँ प्रतीक्षा करूँगी।"

गिरीश ने टटोलते हुए अपना हाथ अनिमा के सिर पर रख दिया और आर्द्रता के भाव में सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "पत्र नहीं लिखूँगा। स्वयं लिख नहीं सकता और किसी दूसरे से लिखाना नहीं चाहता। तुम्हारा भेजा पत्र भी तो पढ़ नहीं सकूँगा। अतएव अब चलता हूँ। आशा करता हूँ कि याद रखोगी।" इतना कह उसने अनिमा के हाथ को अपने दोनों हाथों में दबाकर छोड़ दिया और अपने पिता का हाथ पकड़कर हवाई जहाज की ओर चल पड़ा।

अनिमा को गिरीश की माँ का झूठ बोलना बहुत बुरा प्रतीत हुआ। पर भी उसकी इच्छा नहीं हुई कि माँ पुत्र में वैमनस्य उत्पन्न कर दे। गिरीश आँखों के ऑपरेशन के लिए जा रहा था और उसकी माँ उसकी शुश्रूषा के लिए साथ जा रही थी। दोनों में मनमुटाव हो जाने से गिरीश को ही हानि थी।

जब पिता पुत्र आगे निकल गए तो गिरीश की माँ अनिमा के

पास रुक गई। जब वे आवाज़ सुनने की सीमा से दूर निकल गए तो उसकी माँ ने कहा, "अनिमा! मैं तुम्हारी कृतज्ञ हूँ और हृदय से धन्य वाद करती हूँ।"

अनिमा की आँखों से भी आँसू टपकने लगे थ। उसके मुख से केवल यह उत्तर निकला, "क्या लाभ होगा इससे?"

दो दिन पश्चात् अनिमा ने कलकत्ता छोड़ दिया। उसके ननिहाल दिल्ली में थे अवश्य, परन्तु वे इतने ग़रीब हो गए थ कि जब से अनिमा और उसकी माँ कलकत्ता गई थीं, तब से न तो कोई उनको मिलने गया था और न ही कोई चिट्ठी पत्री आती-जाती थी। अनिमा जब दिल्ली ननिहाल में पहुँची तो सब अचम्भे में उसका मुख देखते रह गए। उसकी नानी थी, नाना थे, दो मामा-मामियाँ और उनके बच्चे थे। सब मिलकर ग्यारह प्राणी थे। अब खाने को एक मुख और आता देख कोई नहीं जानता था कि क्या कहे।

सबसे पहिले नानी ने मुख खोला, "अनिमा! तुम अब काफ़ी बड़ी हो गई हो। तुम्हारा विवाह नहीं हुआ अभी?"

"माँ जी! नहीं!" अनिमा ने वास्तविक बात समझते हुए कहा, "मैं यहाँ केवल छः फुट भूमि रात को सोने को चाहती हूँ। इससे अधिक आप पर बोझा नहीं डालूँगी।"

नाना ने इस बात की कटुता का अनुभव कर कहा, "नहीं बेटी! यह बात नहीं। जैसा हम खाते-पीते हैं, वैसा तुम भी खा-पी सकती हो। हम इतने गए-गुज़रे नहीं कि दो वक्त अपनी बेटी को रोटी भी न दे सकें।"

अनिमा एक बिस्तर ही साथ लेकर आई थी। वह उसने अपने नाना के कमरे में एक कोने में रख दिया। अगले दिन से उसने नौकरी ढूँढनी आरम्भ कर दी। अपने घर का सब बचा हुआ सामान आदि बेचने से प्राप्त धन, लगभग एक हज़ार रुपया लेकर वह आई थी। इसको उसने सेविंग्स बैंक में हिसाब खोलकर जमा करा दिया। दिल्ली में शॉर्ट हैंड और टाइप करने का काम जानने से उसे नौकरी पाने में कठिनाई नहीं हुई।

दिल्ली में आये अभी एक सप्ताह भी नहीं हुआ था कि अनिमा ने एक सायंकाल अपने नाना को बताया कि उसे 'बनारसी दास देवड सन्स' कम्पनी में एक सौ पचास रुपया मासिक की नौकरी मिल गई है। नाना न उसके सिर पर हाथ फेरकर आशीर्वाद देते हुए पूछा, "यह कम्पनी कहाँ पर है बेनी ?"

"नई दिल्ली में बारहखम्बा रोड पर एक ठेकेदार हैं। कल उनका इश्तहार हिन्दुस्तान समाचार-पत्र में पढ़ा था। आज गई तो उन्होंने परीक्षा ली और रख लिया है।"

नाना को तो खुशी हुई ही, साथ ही दोनों मामियों के टेढ़े हुए मुख भी सीधे हो गये। बड़ी, जिसका नाम सन्त कुमारी था, इतने दिन के पश्चात् उसके पास आकर बैठी और घण्टा भर बातें करती रही। छोटी मामी प्रकाशवती, जिसकी पकी रोटी उसके नाना, नानी और वह स्वयं इतने दिन खाती रही थीं, उसकी ओर देखते समय माथे पर त्यौरी चढ़ा लेती थी, आज हँसकर बोली। अनिमा सब बात समझती थी। उसको मालूम हो चुका था कि उसके बड़े मामा केवल एक सौ दस रुपये महीना वेतन पाते हैं और उनके तीन बच्चे हैं। वे अपने पिता को पन्द्रह रुपया महीना देते थे और शेष में बहुत कठिनाई से खाना-पीना चलता था। छोटा मामा पौने दो सौ वेतन पाता था। वह अपने माता पिता को खाने को भोजन देता था। छोटी मामी बहुत फजूल-खर्च थी। इससे वेतन अधिक और बच्चे कम होने पर भी उसके पास बचता कुछ नहीं था।

अगले दिन अनिमा ने कुछ रुपये बैंक से निकलवाकर छोटी मामी के हाथ पर रखते हुए कहा, "अभी आप तीस रुपये खाने के लिए और दस रुपये मकान के किराये के हिसाब में रख लीजिए। फिर जो कुछ आवश्यकता होगी, बताइएगा। वेतन मिलने पर दूँगी।"

मामी ने एक-आध बार न की, परन्तु रुपये हाथ में लेते ही आँचल में बाँध लिये। अनिमा के नाना को यह बात पसन्द तो नहीं आई परन्तु

अपनी विवशता समझ वह चुप कर रहा।

अनिमा अब नित्य नौकरी पर जाने लगी। प्रात पाँच बजे उठकर स्नानादि से छुट्टी पा चौका-बासन में लग जाती। ठीक साढ़े आठ बजे भोजन तैयार कर मामा को खिला और स्वयं खाकर नौ बजे काम पर जाने को तैयार हो जाती।

काम से साय पाँच बजे वापस आती थी और फिर बच्चों को पढ़ाने लिखाने लग जाती थी। रात को खाना उसकी मामी पकाती थी। रात को दस बजे सोकर अगले दिन फिर पाँच बजे प्रात उठना और सदा की भाँति काम करना होता था। इस प्रकार दिन व्यतीत हो रहे थे। अब उसने एक बाइसिकल खरीद ली थी, जिस पर वह अपने घर से नई दिल्ली में काम पर जाया करती थी।

नवम्बर के दिन थे और गरम कोट पहनकर अनिमा बाईसिकल पर सवार, दरियागञ्ज से बारहखम्भा रोड की ओर जा रही थी कि एक तांगे में बैठे चेतनानन्द ने उसे पहचान लिया और ताँगा खड़ाकर, लपककर उतर उसकी बाइसिकल को रोक, खड़ा हो गया। अनिमा बाईसिकल से नीचे उतर, नमस्कार कर पूछने लगी, "आप यहाँ कैसे घूम रहे हैं!"

चेतनानन्द ने उत्तर देने के स्थान अपनी बात कह दी, "आ कलकत्ता से आई तो मिलकर भी नहीं आई। आपका धन्यवाद कर के लिए आपके मकान पर पहुँचा तो देखा कि आपके रहने मकान जलकर भस्म हो चुका है। एक दिन सुधीर बाबू से भेंट हो गई उनसे पता चला कि आप दिल्ली में हैं। मुझे दिल्ली में आये तीन दि हो चुके हैं। मुझको पूर्ण आशा थी कि आपसे चलते फिरते अवश्य भेंट हो जायेगी। मेरा अनुमान ठीक ही निकला है। बताइये आप क रहती हैं!"

"सुधीर बाबू ने क्या यह नहीं बताया कि पिताजी का देहान्त हो गया है और गिरीश बाबू की आँखें जाती रही हैं!"

"बताया था।"

"इस कारण मेरा यहाँ रहना असम्भव हो गया। यहाँ एक ठिकाना है, इस कारण यहाँ आ पहुँची हूँ। आप यहाँ कब तक रहियेगा।"

"अपने विचार से तो सदैव के लिए रहने आया हूँ। मैंने नौकरी छोड़ दी है।"

"नौकरी छोड़ दी है? क्यों?"

"मेरे मस्तिष्क में यह बात बैठ गई है कि बंगाल की सरकार एक शत्रु-जाति की सरकार है। मैं उसमें नौकरी नहीं कर सकता।"

अनिमा यह सुन गम्भीर विचार में पड़ गई। उसने अधिक गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं समझी। इससे बात बदल दी, "नसीम बहन साथ आई हैं क्या?"

"नहीं। उसका कहना है कि वहाँ तो मकान मिला है। यहाँ मैं मकान और काम का प्रबन्ध कर लूँ, तो वह आ जावेगी।"

"मैंने सुना था कि उसके भाई यहाँ रहते हैं।"

"हाँ, परन्तु वह अपने भाई के पास नहीं रहना चाहती।"

"विचित्र है। मैं तो अपने नाना के पास रहने लगी हूँ।"

"अनिमा देवी! उसमें और आप में अन्तर है न?"

"मैं अब काम पर जा रही हूँ। आप से फिर कहाँ भेंट होगी?"

"सायंकाल छः बजे। मैं रॉयल होटल में ठहरा हूँ। कमरा नम्बर सोलह है।"

"अच्छी बात है। आशा करती हूँ कि आज ही आप से भेंट होगी।"

अनिमा नसीम के अपने पति के साथ दिल्ली न आने में विशेष कारण मानती थी। केवल स्थान की असुविधा को वह कुछ अधिक महत्ता नहीं देती थी। इस प्रकार के विचारों में मग्न वह अपने काम पर चली गई।

कार्यालय में बनारसीदास का लड़का इन्द्रजीत काम की देखभाल करता था। वह अनिमा की विशेष प्रतिभा से बहुत प्रभावित हुआ था। इसका परिणाम यह हुआ था कि अनिमा दिन प्रतिदिन बनारसीदास के

घरवालों के निकट होती जाती थी। इन्द्रजीत की स्त्री कमला से उसका परिचय हो गया और दोनों परस्पर मिलती भी रहती थीं।

आज जब अनिमा कार्यालय में पहुँची तो उसकी मेज़ पर एक निमन्त्रण-पत्र पड़ा दिखाई दिया। निमन्त्रण इन्द्रजीत की स्त्री कमला की ओर से था। लिखा था, "पिताजी के मित्र और लाहौर के प्रसिद्ध रईस लाला जीवनलाल की पुत्री रेवा देवी अपने पति सहित हमारे यहाँ चाय पर आ रही हैं। अतएव अनिमा देवी से भी प्रार्थना है कि सायं चार बजे चाय-पार्टी में सम्मिलित होकर अनुगृहीत करें।"

अनिमा न नहीं कर सकी। उसका विचार था कि इस चाय-पार्टी में उसका जाना एक व्यावहारिक-सी बात है। वास्तव में कमला का आशय भी ऐसा था।

महेश और रेवा एक मास के लिए लाहौर से बाहर घूमने निकले हुए थे। उनका विचार था कि दिल्ली, अजमेर, चित्तौड़, बम्बई, नासिक, मद्रास, रामेश्वर इत्यादि स्थानों पर भ्रमण कर दिसम्बर मास के अन्त तक लाहौर लौट जायेंगे। सब स्थानों पर लाला जीवनलाल के परिचित लोग थे और उन सब के लिए महेश परिचय-पत्र लाया था। दिल्ली में वह लाला बनारसीदास के नाम पत्र लाया था। आज की चाय-पार्टी उस पत्र का परिणाम थी। महेश और रेवा नई दिल्ली में मरीना होटल में ठहरे थे।

पौने चार बजे कमला कार्यालय में आकर अनिमा को ले गई। कार्यालय घर के एक भाग में ही था। चार बजे रेवा और महेश आये। इन्द्रजीत और लाला बनारसीदास भी इस समय वहाँ आ गए। कोठी के ड्राइंग रूम में चाय-पार्टी का आयोजन था। लाला बनारसीदास रेवा को तो जानते थे, परन्तु महेश को उसने पहली बार ही देखा था। इस कारण उसका परिचय इस पार्टी में एक मुख्य बात हो गई। रेवा को कमला और अनिमा एक ओर लेकर बैठ गईं।

कमला ने अनिमा का परिचय रेवा से कराया, "ये हैं अनिमा देवी,

हमारे कार्यालय में स्टीनो-टाइपिस्ट। बहुत योग्य और समझदार काम करने वाली हैं।"

रेखा ने हाथ जोड़कर नमस्ते कर दी। नमस्ते करते समय जब अनिमा से उसकी आँखें मिलीं तो उसको पता चल गया कि यह कोई साधारण लड़की नहीं। वह उसमें पूर्व-परिचय पूछने लगी। अनिमा ने संक्षेप में अपना परिचय दे दिया। जब उसने अपने पिता का नाम बताया तो बनारसीदास, जो मेज़ के दूसरी ओर बैठा हुआ था, कान खड़े कर अनिमा की बात सुनने लगा। जब अनिमा अपना पूर्ण परिचय सुना चुकी, तो बनारसीदास ने पूछ लिया, "अनिमा देवी! आप गुरु धीरेन्द्रजी को जानती हैं?"

अनिमा ने अचम्भे में लालाजी का मुख देखा पश्चात् कुछ सोचकर कहा, "हाँ, एक गुरु धीरेन्द्रजी मेरे पिता के सहयोगी थे। उनका देहान्त हो गया है।"

"कब?"

"आध पाँच मास हो चुके हैं।"

"आप शंकर पण्डित को भी जानती हैं क्या?"

"जी हाँ, उनके भी दर्शन किए हैं।"

"मैं शिशिर कुमार जी को जानता हूँ।"

"उनका भी देहान्त हो गया है।"

"तो आप अपने नाना के यहाँ रहती हैं? बनारसीदास ने गम्भीर हो पूछा।

"मैं नहीं जानती थी कि आप मेरे विषय में इतना कुछ जानते हैं।"

"आपके विषय में तो नहीं, परन्तु आपके पिताजी को जानता हूँ। उनके कार्य को जानता हूँ और उनके मित्रों को जानता हूँ परन्तु अब तो समय बदल गया है।"

अनिमा विस्मय में लालाजी का मुख देखती रह गई। रेखा ने उसका ध्यान तोड़कर पूछा, "आपके पिता कोई धनी-मानी आदमी

रहे होंगे।"

"हम बहुत गरीब आदमी थे। पिताजी का काम छूटे तीन वर्ष से ऊपर हो चुके थे और हमारा निवाह मेरे वेतन पर चलता था। मेरी नौकरी भी, वहाँ कलकत्ता में, छूट चुकी थी। जब उनका देहांत हो गया तो मेरे लिए कलकत्ता में रहना कठिन हो गया। मैं अपने घर का सब सामान बेचकर ही यहाँ आ सकी थी।"

"अब यहाँ तो कोई कष्ट नहीं होगा?" रेवा ने पूछा।

"अब तो मैं अकेली हूँ। एक सौ पचास रुपये मासिक यहाँ से मिल जाते हैं। निर्वाह होकर भी कुछ बच जाता है।"

इस समय बनारसीदास महेश से व्यापार की बातें करने लगा था। इन्द्रजीत रेवा से बातें कर रहा था। चपरासी 'इवनिंग न्यूज़' पत्र दे गया। पत्र लेकर बनारसीदास ने पढ़ना आरम्भ कर दिया। उसमें एक विशेष समाचार लिखा मिला। 'भारत के डिप्टी प्रधान पर मुसलमान गुण्डों का आक्रमण' समाचार का यह शीर्षक था। बनारसीदास ने इस समाचार को ऊँचे ऊँचे पढ़ना आरम्भ कर दिया। समाचार आगे यह था, "जब मुस्लिम लीग के नेता शपथ उठाने वाइसराय की कोठी में जा रहे थे तो पण्डित जवाहरलाल नेहरू भी उस अवसर पर उपस्थित होने के लिए वहाँ गए। वह अपनी मोटर गाड़ी बाहर छोड़कर, जब भीतर गए तो कुछ मुस्लिम-लीगी गुण्डों ने पण्डितजी की गाड़ी पर जलते सिगरेट और दियासलाई फेंकीं, जिससे पण्डितजी की मोटर की गद्दियाँ जल गई। जब पण्डितजी शपथ लेने की रसम से लौटे, तो मुसलमान गुण्डों ने उन पर पत्थर फेंके। यदि सेक्रेटेरियट के हिंदू क्लर्क, जो तमाशा देखने निकल आए थे, उन मुसलमानों से न भिड़ जाते तो झगड़ा बढ़ जाने की सम्भावना थी।"

इस समाचार को सुन सब विस्मय में एक-दूसरे का मुख देखने लगे। बनारसीदास ने कहा, "मुसलमानों का साहस बहुत बढ़ गया है।"

"पर प्रश्न तो यह है कि क्या वहाँ पुलिस उपस्थित नहीं थी? और

यदि थी तो उसने कोइ गिरफ्तारी की है अथवा नहीं!" अनिमा ने पूछा।

"समाचार-पत्र में ऐसी कोइ बात नहीं लिखी।"

"मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह भी डॉयरेक्ट ऐक्शन का एक अंग ही है।"

"हो सकता है।' बनारसीदास का उत्तर था। इसी समय एक खद्दरधारी, लम्बे छरहरे शरीर का व्यक्ति, कमरे में प्रवेश करता हुआ बोला, ' हो सकता नहीं, असलियत में यही बात है।"

बनारसीदास ने आने वाले व्यक्ति को देखा तो प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "ओह! सम्रादत हुसैन साहब! सुनाओ भाइ! कहाँ रहते हो! कैसे आना हुआ है?"

"यही, जिस विषय में आप बात कर रहे थे। लालाजी! बात यह है कि कल मुस्लिम लीग के डॉयरेक्ट ऐक्शन का एक बहुत बड़ा दिन है, ऐसा हमें मालूम हुआ है। कल सेन्ट्रल असेम्बली की मीटिंग शुरू होगी और सुना है कि मुसलमान असेम्बली हॉल के सामने डिमॉन्स्ट्रेशन (प्रदर्शन) करेंगे। उस समय यदि मौका मिल गया तो पण्डितजी पर हाथ सफा करने की कोशिश की जायगी।

"यह हो सकता है।" लाला बनारसीदास ने कहा, "परन्तु हजरत! इस विषय की चर्चा करने के लिए तो आप को डिप्टी कमिश्नर साहब के पास जाना चाहिए। यहाँ आने से क्या लाभ होगा!"

"डिप्टी कमिश्नर तो एक अंग्रेज हैं न। उसके पास मैं गया था। हजरत कहते थे कि उसे इसका यकीन नहीं आता। इस पर मैंने कहा कि पुलिस का इन्तजाम तो हो जाना चाहिए, तो जनाब फरमाने लगे कि क्या मैं उसे इन्तजाम के मामले में सबक सिखाने आया हूँ? नतीजा यह हुआ कि मैं अपना-सा मुख लेकर चला आया हूँ।"

"तो आप होम मेम्बर को टेलीफोन कर दीजिए न?"

"कर दिया है और वह कहते हैं, चीफ कमिश्नर को कहूँ।'

' गजब है। कैसे आदमियों से वास्ता पड़ा है। हिन्दुस्तान पर राज्य

करने बैठे हैं या बच्चों का खेल खेल रहे हैं, अरे बाबा! ऐसे आदमी को तो हवालात में रात गुज़ारनी चाहिए। देखो न, आज पण्डितजी की गाड़ी पर पत्थर फेंके गए हैं और समीप खड़े पुलिस वाले किसी को भी पकड़ नहीं सके। अगर कोई आदमी हुकूमत करने वाला होता, तो आज पुलिस के कई अफसर डिसमिस हो चुके होते। जब अपने ही विषय में ये लोग इतने अयोग्य सिद्ध हो रहे हैं, तो प्रजा की ये क्या रक्षा करेंगे!"

"पर लालाजी! उनकी नीति की नुक्ताचीनी करने की जगह क्या यह अच्छा न होगा कि हम सोचें कि इस मामले में हम कुछ कर सकते हैं या नहीं?"

"हम क्या कर सकते हैं? हमारे पास कौन अधिकार है और फिर हमारी शक्ति ही क्या है?"

"मैं तो निराश होकर घर जा पहुँचा था, परन्तु वीणा ने मुझे आपके पास भेजा है। उसका कहना है कि आप आर्य-समाजी हैं। आप हिंदू सभा के भी कुछ हैं। आप यदि चाहें तो अपने छुपे हाथों से पण्डितजी की जान की हिफाज़त कर सकते हैं।"

इस प्रस्ताव से लाला बनारसी दास गम्भीर विचार में पड़ गया। उन्हें इस प्रकार चुप देख सआदत हुसैन ने कहा, "आपके ताल्लुक एक ऐसी पार्टी से हैं, जिसने एक बार एक हिंदू लड़की को, जिसे कुछ मुसलमान गुण्डे उड़ाकर लाहौर की एक दरगाह में ले गये थे, एक रात के अन्दर न सिर्फ ढूँढ निकाला था, बल्कि उसे छुड़ाकर दिल्ली पहुँचा दिया था।"

"हाँ, आप सत्य कहते हैं परन्तु अब वह नहीं है। वह हिंदू मुसलमान मित्रता की चट्टान से टकराकर चकनाचूर हो गई है।"

"क्या मतलब? क्या वह पार्टी अब नहीं है?"

कुछ सोचकर बनारसी दास ने कहा, "कम से-कम वह मेरे अधीन नहीं है और मैं नहीं कह सकता कि हिन्दू मुसलमान के झगड़े में वह अब कोई हस्तक्षेप करेगी या नहीं?"

"लेकिन एक हिन्दू लड़की को मुसलमानों के हाथ से छुड़ाने से क्या पण्डित जी की जान बचानी ज्यादा फिरकेदाराना बात है ?"

"मैं तो नहीं समझता, मगर जिसके अधीन वह है, उसके समझने की बात है।"

"तो वह कौन है ?"

"मैं उससे पूछकर बता सकता हूँ। मेरा उसमें अब कोई अधिकार नहीं है।"

इतना कह बनारसी दास उठकर साथ के कमरे में, जहाँ टेलीफोन रखा था, चला गया। सआदत हुसैन भी उनके पीछे-पीछे कमरे में चला गया।

उनकी बातें सुन और लाला बनारसी दास के मुख से गुरु धीरेन्द्र का नाम सुन अनिमा समझ गई कि स्वराज्य-सत्यशासन-समिति की बात हो रही है। उसे यह जानकर कि बनारसीदास जी इस संस्था से सम्बन्ध रखते हैं, बहुत प्रसन्नता हुई। वह अपने इनके यहाँ नौकरी पाने के संयोग पर बहुत विस्मय करने लगी। चाय समाप्त हो चुकी थी और इधर उधर की बातें हो रही थीं। अनिमा को अपने विचारों में खोया हुआ देख कमला ने पूछ लिया, 'अनिमा देवी! क्या विचार कर रही हैं ?"

"मैं सोच रही थी कि कौन-सी ऐसी संस्था है, जो एक ही रात में किसी लड़की को ढूँढकर लाहौर से दिल्ली पहुँचाने की शक्ति रखती है।"

कमला हँस पड़ी और बोली, "छोड़िये, इस बात को अनिमा देवी ! यह रेवा जी कहती हैं कि आप एक अति दृढ़ निष्ठावाली लड़की प्रतीत होती हैं।"

"रेवा बहिन की बहुत कृपा है, जो ऐसा समझती हैं। वास्तव में मैं एक निर्धन परिवार की लड़की हूँ। मुझे दृढ़ संकल्पवाली होना ही चाहिए, अन्यथा जीना ही दूभर हो जायेगा।"

"इसमें निर्धनता अथवा साधन-सम्पन्नता की बात नहीं।" रेवा ने

कहा, "मैं तो आपकी दृढ़ चिबुक देखकर कह रही हूँ। मैं फिजिओनौमी का अध्ययन कर चुकी हूँ और मेरा अनुमान है कि अनिमा बहिन सहस्रों लोगों के सामने भी अपने निश्चय और विश्वास से डिग नहीं सकतीं।"

इस समय बनारसीदास सआदत हुसैन के साथ कमरे में आ गया। लाला जी ने उसे चाय पर निमन्त्रित करते हुए कहा, "अब चिन्ता की आवश्यकता नहीं। जब शेखरानन्द जी ने कहा है तो यह कर दिखायेंगे।"

७

सआदत हुसैन ने जल्दी-जल्दी एक प्याला चाय पी और यह कहकर कि वह अपने साथियों की चिन्ता कम करने जा रहा है, चला गया। उसके जाने के पश्चात् कमला ने पूछ लिया, "तो शेखरानन्द जी मान गये हैं क्या?"

"बड़ा मज़ा हुआ।" लाला जी ने कहा, "शेखरानन्द जी कहने लगे, 'सआदत हुसैन साहब! वे हज़ारों वॉलण्टियर, जो अंग्रेज़ी सरकार की जेलें भर देते थे, कहाँ हैं अब?' इस पर यह बोले, 'वे तो लड़ना नहीं जानते। साथ ही यदि कांग्रेस के वॉलण्टियर लड़ने लगे तो महात्मा जी नाराज़ हो जायेंगे। उनका तो कहना है कि स्वराज्य मिल ही इसलिए रहा है कि कांग्रेस ने अहिंसा की नीति का अवलम्बन किया हुआ है'।"

अनिमा की हँसी निकल गई। रेखा विस्मय में उसकी ओर देखने लगी। बनारसीदास भी हँस रहा था। अनिमा ने अपने हँसने का कारण बताते हुए कहा, "रेखा बहिन! ये अहिंसा के देवता वास्तव में भीरुता की मूर्ति हैं। जब भी कभी कहीं मरने की आशंका होती है तो ये महात्मा जी की ओट में छुप जाते हैं। ये लोग अपने पाप-कर्मों का बोझा दूसरों पर लादने में बहुत चतुर हैं।"

बनारसीदास ने अनिमा का समर्थन करते हुए कहा, "देखो, बेटी

कमला ! अकर्मण्यता को वैराग कहनेवाले ससार में कम नहीं हैं। इसी प्रकार विवशता को अहिंसा का नाम देने वाले भी बहुत हो गये हैं। दोनों प्रकार के लोग महापातकी हैं। ये लोग चाहते तो हैं कि इनका नेता बच जाय, परन्तु यह भी चाहते हैं कहीं खून-खराबा हो जाये तो कांग्रेस का नाम न लगे।

"इस पर भी शेखरानन्द ने कहा है कि पण्डितजी के जीवन और मान की रक्षा तो करनी ही है, चाहे कुछ भी हो।"

अनिमा ने कहा, "यह तो ठीक ही है, परन्तु कलकत्ता और नोआखाली में मुसलमानों का व्यवहार देखकर भी कांग्रेस लीग की सहायता करनेवालों को राष्ट्रवादी कहती है और इसके ही नेताओं को मुसलमानों के हाथों से बचाने का यत्न करनेवालों को यह साम्प्रदायिक कहेगी।"

सत्य ही मुसलमानों ने शरारत करने का विचार कर रखा था। सआदत हुसैन भी असेम्बली का एक सदस्य था। यद्यपि शेखरानन्द ने उसे वचन दे रखा था कि यह पण्डितजी के जीवन और मान की रक्षा करेगा, इस पर भी सआदत हुसैन घबराया हुआ, बहुत सवेरे ही बनारसी दास जी के घर पहुँच गया। वहाँ जाकर लाला जी को विवश कर दिया कि शेखरानन्द को काम का स्मरण करा दें। लाला जी ने कहा भी कि इसकी आवश्यकता नहीं, परन्तु सआदत हुसैन की घबराहट देख लाला जी ने शेखरानन्द को टेलीफोन कर दिया। शेखरानन्द घर पर नहीं था। उसकी स्त्री ने टेलीफोन में उत्तर दिया कि वे बहुत प्रातःकाल के गये हुए हैं। उसने यह भी बताया कि वे दोपहर से पूर्व नहीं लौटेंगे।

शेखरानन्द के घर पर न मिलने से सआदत हुसैन की चिन्ता कम नहीं हुई। लाला बनारसीदास उसे घबराया हुआ देख कहने लगे, "आप चिन्ता न करें। वे अवश्य इसी के प्रबन्ध में लगे होंगे।" सआदत हुसैन को इससे सन्तोष नहीं हुआ। वह वहाँ से विदा होकर कौंसिल-चेम्बर में जा पहुँचा। वहाँ अभी चपरासी झाड़ फूँक कर रहे थे। वह पार्टी-रूम में गया। वहाँ भी कोई नहीं था। आधा घण्टा तक वह

अकेला बेचैन इधर-उधर घूमता रहा। सबसे पहिले श्री विश्वेश्वरन पार्टी के 'विप' आये। वह साआदत हुसैन को पार्टी रूम में घबराये हुए इधर से उधर घूमते हुए देख पूछने लगे, "मालूम होता है कि हालत ठीक नहीं !"

"कह नहीं सकता। डिप्टी कमिश्नर ने तो यह कहकर टाल दिया कि वह अपने काम को मुझसे ज्यादा अच्छी तरह जानता है। नगर के एक स्वयं सेवक दलवालों ने वचन दिया था, परन्तु अभी तक उनमें से कोई नहीं आया।"

"मैं समझता हूँ कि मुसलमानों के विषय में आपका भ्रम-मात्र भी तो हो सकता है। दिल्ली में ये लोग कोई शरारत करेंगे, मुझे विश्वास नहीं होता।"

"परन्तु आयगर साहब! मैं पक्के रूप में जानता हूँ कि वे आज शरारत करेंगे। इसमें उनका मकसद वही है, जो कलकत्ता में और नोआखाली में फ़साद करने का था। वे चाहते हैं कि हिन्दुओं को इतना डरा धमका दिया जाये कि वे उनकी सब माँगें मान लें।"

"यह तो ठीक है, परन्तु मैं कहता हूँ कि दिल्ली और बंगाल में बहुत अन्तर है। वहाँ की सरकार बदमाशों की सहायता कर रही थी।"

"और यहाँ की सरकार क्या कर रही है?"

"तो क्या हमारे होम मेम्बर यहाँ फ़साद चाहते हैं?"

"अभी होम-मम्बर साहब का राज्य नहीं हुआ। यहाँ राज्य चीफ़ कमिश्नर और डिप्टी कमिश्नर का है। दोनों अँग्रेज़ हैं और दोनों होम सेक्रेटरी के अधीन हैं। वह भी अँग्रेज़ है।"

"खैर, यह तो है ही। पर मैं पूछता हूँ कि क्या आपके पास कोई निश्चित प्रमाण है, जिससे झगड़े की आशंका हो रही है।"

"हाँ, मेरे खानसामे ने बताया है कि उनके पड़ोस की मस्जिद में परसों एक मीटिंग हुई थी, जिसमें उन्होंने यह फ़ैसला किया है कि पण्डित जी पर हाथ साफ़ किया जाये। इसी मतलब से कल उन्होंने यत्न

किया था। कुछ हिन्दू क्लर्कों ने उनकी कोशिश पर पानी फेर दिया। उसका कहना है कि आज काम पूरा कर दिया जायेगा। वह बेवकूफ समझता था कि मैं इससे खुश हुआ हूँ।"

इस प्रकार दोनों बातें करते हुए असेम्बली-चैम्बर के बाहर आ गए। वहाँ ड्योढ़ी में खड़े होकर वह लोगों की छोटी सी भीड़ को, जो इस समय तक एकत्रित हो गई थी, देखने लगे। सआदत हुसैन ने उन लोगों को देखकर कहा, "ये सब मुसलमान हैं। इनमें हिन्दू कोई नहीं और पुलिस वाला भी अभी कोई नहीं आया।"

मिस्टर आयगर ने हाथ पर बँधी घड़ी को देखकर कहा, "साढ़े दस बज गए हैं।"

"यही तो कह रहा हूँ। हिन्दू सेवक दलवाला ने धोखा दिया है।"

इस समय एक भारी शरीर का आदमी, सिर से पाँव तक खद्दर पहिन, ताँगे में से अहाते के बाहर ही उतरा और वहीं ठहर गया। मिस्टर आयगर ने पूछा, "इस आदमी को जानते हो?" इतना कह उसने खद्दरपोश की ओर संकेत कर दिया।

सआदत हुसैन ने उसकी ओर देखकर सिर हिला दिया और कहा, "नहीं। मैं नहीं जानता। देखने से हिन्दू मालूम होता है।"

सेक्रेटेरिएट के कुछ क्लर्क जाते-जाते रुककर तमाशा देखने लगे। इस प्रकार वहाँ खड़े लोगों के दो गिरोह बन गए। ज्यों-ज्यों समय समीप आने लगा, दोनों गिरोह बढ़ने लगे। एक ओर, हाथों में फाइलें लिए हुए क्लर्क मालूम होते थे और दूसरी ओर नगर के बदमाश और कोठियों के खानसामे और बैरे मालूम होते थे। इस परिस्थिति को देख सआदत हुसैन के माथे पर पसीने की बूँदें झलकने लगीं। उसने आयगर को भी दिखाया कि मुसलमानों की भीड़ में कई लोग लाठियाँ लिए हुए थे। एक मुसलमान हाथ में नंगी छुरी लिए दूसरों को दिखा रहा था। यह देख तो आयगर का दिल भी बैठने लगा। वह यह कह कि भीतर जाकर देखना चाहता है कि कौन-कौन आया है, सआदत हुसैन को वहीं छोड़,

भीतर पार्टी रूम में चला गया। सआदत हुसैन आ रहे सदस्यों से मिल रहा था। इस सब समय उसकी एक दृष्टि भीड़ की ओर थी। अभी तक पुलिस नहीं आई थी। तमाशा देखनेवालों की भीड़ बढ़ रही थी। इस समय तक बीच की सड़क छोड़कर सामने का फुटपाथ लोगों से भर गया था। अभी तक भी भीड़ में दो गिरोह स्पष्ट दिखाई देते थे। ज्यों-ज्यों कांग्रेसी मेम्बर आते-जाते थे, मुसलमान 'अल्ला-हू अकबर' का नारा लगाते थे और हिन्दू खड़े-खड़े ,महात्मा गांधी की जय' कहते थे।

ग्यारह बजने में केवल दस मिनट रह गए थे। इस समय भीड़ एका एक इतनी बढ़ गई कि लोग सड़क पार कर चेम्बर की ड्योढ़ी में भी एकत्रित हो गये। सआदत हुसैन को यह देख सन्तोष अनुभव हो रहा था कि हिन्दुओं की संख्या बहुत अधिक हो गई थी। अभी भी पुलिस के दो तीन कॉन्स्टेबलों के अतिरिक्त कोई नहीं था।

एकाएक मुसलमानों का वह झुण्ड, जो सबसे पहिले वहाँ पहुँचा था, सामने के फुटपाथ को छोड़, सड़क पार कर ड्योढ़ी के अन्दर घुस आया। ये मुसलमान आगे बढ़ने के लिए यत्न करने लगे। वे हिन्दू बलकों को, जो वहाँ पहिले ही खड़े थे, धकेलकर आगे आने लगे। सआदत हुसैन ने देखा कि वह आदमी जो अपने साथियों को छुरी दिखा रहा था, सबसे आगे की पंक्ति में खड़ा है। उसके दोनों हाथ ओवरकोट, जो वह पहिने हुए था, की जेबों में थे। सआदत हुसैन ड्योढ़ी में खड़ा था, परन्तु उसके चारों ओर लोग खड़े हो गए थे और वह दीवार के साथ ठसकर खड़ा, हिल नहीं सकता था।

इतने में मिस्टर लियाकत अली खाँ की मोटर आई, परन्तु वह ड्योढ़ी में खड़ी न होकर असेम्बली-चेम्बर का चक्कर काटकर पिछले दरवाज़े की ओर चली गई। इसी समय पण्डित जी की मोटर आई और ड्योढ़ी में आकर खड़ी हो गई। 'अल्ला-हू अकबर' और 'महात्मा गांधी की जय' के नारे लगे। ज्यों ही पण्डित जी गाड़ी से निकले कि एक मुसलमान ने हाकी निकाल, वार करने के लिए उठाई, परन्तु पीछे से

किसी ने हॉकी पकड़ ली। पण्डित जी सीढ़ियाँ चढ़ने लगे तो छुरेवाल ने अपने कोट की जेब से छुरीवाला हाथ निकाला और पण्डित जी पर लपका, परन्तु पूर्व इसके कि वह एक भी पग आगे बढ़ता, उसी भारी शरीर के खद्दरधारी ने उसका छुरीवाला हाथ पकड़ लिया। इसी समय उसके सिर पर किसी ने हॉकी से चोट की और वह घायल हो वहीं लुढ़क गया। इतने में पण्डितजी ड्योढ़ी की सीढ़ियाँ चढ़ भीतर जा पहुँचे। ड्योढ़ी में मुक्केबाजी आरम्भ हो गई।

एक दो मिनट में पाँच छः आदमी लहू लुहान हो भीड़ से निकलते दिखाई दिए। इस समय भीड़ तितर बितर होने लग गई। ठीक इस समय दो ट्रकों में पुलिस वहाँ आ पहुँची। पुलिस को देखते ही लोग भाग खड़े हुए और देखते-देखते चैम्बर के सामने का मैदान खाली हो गया।

सआदत हुसैन चाहता था कि उस भारी शरीरवाले आदमी से, जिसने छुरेवाले का हाथ पकड़ा था, मिले परन्तु जब तक उसके आगे से लोग हटते और वह हिल-डुल सकता, वह खद्दरधारी लापता हो गया। सआदत हुसैन ड्योढ़ी से बाहर निकल उस आदमी को ढूँढने लगा परन्तु उसका कहीं पता नहीं चला।

२

अनिमा अगले दिन सायंकाल रॉयल होटल में चैतनानन्द से मिलने गई। चेतनानन्द उसकी प्रतीक्षा पहिले दिन भी करता रहा था और उस दिन भी कर रहा था। अनिमा को आया देख उसने प्रसन्न होकर कहा, "शुक्र है। कल रात के आठ बजे तक बैठा रहा और मैंने मन में यह निश्चय कर लिया हुआ था कि जब तक आप नहीं आतीं, नित्य छः बजे से आठ बजे तक आपकी प्रतीक्षा किया करूँगा।"

"बात यह हुई कि कल हमारे लाला जी के लाहौर के एक मित्र, लाला जीवनलाल जी की सुपुत्री लाला जी के घर चाय पर आई थीं। लाला जी की पुत्र-वधू कमला देवी ने मुझे उस पार्टी में सम्मिलित होने

के लिए कहा तो मैं न नहीं कर सकी। यहाँ इतनी देर हो गई कि फिर यहाँ न आ सकी।"

चेतनानन्द अपने पिताजी का नाम सुन गम्भीर विचार में पड़ गया। फिर सोचकर बोला, "क्या नाम है उस लड़की का?"

"रेवा देवी!" इस समय अनिमा ने चेतनानन्द के मुख पर गम्भीर भाव देखा। इससे उसने पूछा, "चेतनानन्दजी! क्या बात है? आपका मुख मलिन क्यों हो गया है?"

चेतनानन्द ने गम्भीर भाव में धीरे धीरे कहा, "वह मेरी सगी बहिन है। उसके साथ उसका पति है क्या?"

"हाँ, महेशचन्द्रजी भी हैं।"

"कहाँ ठहरे हैं?"

"मरीना होटेल में।"

कुछ सोच चेतनानन्द अपने स्थान से उठ मैनेजर के कमरे में टेलीफोन करने चला गया। उसके चले जाने पर अनिमा ने उसके कमरे की ओर ध्यान किया। उसने देखा कि एक बिस्तर और एक छोटे से अटेची केस के अतिरिक्त और कोई सामान नहीं था। इस सबसे उसके मन में कई प्रकार की आशंकाएँ उठने लगीं। चेतनानन्द ने मैनेजर के कमरे से आकर कहा, "रेवा और महेश अभी आ रहे हैं।"

"कल से दो विचित्र घटनाएँ हुई हैं। एक तो आपकी बहिन के मेरे सम्पर्क में आने की घटना और दूसरा मुझे कल मालूम हुआ कि लाला बनारसीदास, जिनकी कम्पनी में मैं नौकरी करती हूँ, मेरे पिताजी को भली भाँति जानते हैं। कल मैं अपना परिचय रेवा देवी को दे रही थी कि लालाजी ने मेरे पिताजी का नाम सुन लिया और लगे अन्य परिचितों का नाम बताने। आज उन्होंने मुझको बुलाकर कहा है कि मैं उनको अपने पिता तुल्य ही मानूँ। उन्होंने अपनी पुत्र वधु को बुलाकर भी कह दिया है कि मैं उनके एक परम मित्र की लड़की हूँ। आज उनका पोता आकर बोला, "बाबा कहते थे कि तुम मेरी बुआ हो।"

"तो आज हम दोनों के लिए बहुत अच्छा दिन चला है।"

"खैर यह तो हुआ, पर मैं जो जानने के लिए उत्सुक हो रही हूँ, वह है आपके विषय में। आप नसीम बहिन को पीछे क्यों छोड़ आए हैं। और फिर आप उसके भाई के घर क्यों नहीं ठहरे?"

"इसमें विस्मय की क्या बात है, अनिमा देवी! नसीम के बच्चा होनेवाला है और उसके लिए इधर-उधर भागना अच्छा नहीं समझा गया। रहा उसके भाई के घर में रहना। जब वह स्वयं अपने भाई के घर नहीं रहना चाहती तो मेरे लिए भी वहाँ जाकर रहना ठीक नहीं रहा।"

"उसके बच्चा होनेवाला है! इससे तो और भी आवश्यक था कि वह अपने भाई के यहाँ आ जाती। वहाँ उसकी मामी है और अन्य स्त्रियाँ हैं। वहाँ वह अकेली है। खैर, छोड़िए इस बात को। आप नहीं बताना चाहते तो न सही। अब बताइए आप यहाँ काम की खोज में क्या कर रहे हैं? यदि आपकी इच्छा हो तो मैं लाला बनारसीदास जी से कहूँ। उनका काम बहुत बड़ा है। वे आपके लिए कुछ तो कर ही सकते हैं।"

चेतनानन्द ने हँसकर अनिमा की बात टाल दी और अपने विषय में कहने लगा, "मैं यहाँ आया तो था वकालत का काम आरम्भ करने के विचार से, परन्तु यहाँ पर कानूनी प्रोफेशन की दुर्गति देख मेरा विचार बदल गया है। कल से मैं सोच रहा हूँ कि अपने पिता जी से क्षमा माँग कर उनकी शरण में चला जाऊँ।"

"तो पिता जी से आपका कुछ झगड़ा था?"

"मुझे अब कहते लज्जा लगती है कि हाँ। मेरा उनसे राजनीति में और हिन्दू संस्कृति के विषय में मतभेद था। यह मतभेद बढ़ता बढ़ता कलह में बदल गया। अब मुझे अपनी भूल का भास हो रहा है। यह रेखा और महेश के यहाँ मिल जाने से, मेरा पिता जी से क्षमा माँग कर लेना सुगम हो गया है।"

इस आत्मा के विनीत भाव को देख अनिमा के मन में भाँति-भाँति के विचार उठने लगे और वह गम्भीर विचारों में डूब गई। चेतनानन्द

भी अपने मन में अपने भावों के सञ्चय में लग गया। इस प्रकार दोनों एक दूसरे से बिना बात किए अपने अपने विचारों में लीन थे कि महेश और रेवा आ पहुँचे। रेवा ने अनिमा को देखा तो विस्मय में उसका मुख देखती रह गई। उसने अनिमा की बाँह में बाँह डालते हुए कहा, "अनिमा जी ने बताया है कि हम यहाँ हैं?"

"मुझे क्या मालूम था कि ये आपके भाई हैं। मैंने तो साधारण रूप में बताया था कि हमारे लाला जी के एक मित्र, लाहौर के लाला जीवन लाल जी की लड़की दिल्ली में आई हुई हैं। इस पर ये कहने लगे कि आप इनकी बहिन हैं।"

जब रेवा और महेश बैठ गए तो अनिमा ने जाने की स्वीकृति माँग ली। इस पर चेतनानन्द ने आग्रह कर कहा, "अनिमा देवी! तनिक बैठो तो। आपसे मेरी कोई बात छिपी तो है नहीं। और फिर मैं आपका परिचय इनसे कराना चाहता हूँ।"

"सो तो हो गया है।" रेवा ने कहा, "परन्तु ये यहाँ बैठ सकती हैं।"

"नहीं, अब क्षमा करें। मुझे सायं होने से पहिले घर पहुँच जाना चाहिए। मैं घर कहकर नहीं आई।"

अनिमा चली गई। इस पर चेतनानन्द ने महेश और रेवा के दिल्ली आने के विषय में पूछा। पिताजी और रेवा के श्वसुर के स्वास्थ्य के विषय में पूछा। इसके उपरान्त महेश और रेवा चेतनानन्द के विषय में, भाभी नसीम के विषय में और उसके धाम के विषय में पता करने लगे। चेतनानन्द ने बताया, "यह लड़की, अनिमा देवी मेरे जीवन में क्रान्ति उत्पन्न करनेवाली हुई है। यह कलकत्ता में मेरे अधीन 'स्टीनो टाइपिस्ट' थी। इसने भारत के इतिहास को और फिर कांग्रेस की नीति को ऐसे ढंग से मेरे सामने रखा कि मुझको सब कुछ पहिले से उलट दिखाई देने लगा। मुझको नसीम की मुहब्बत और अपना पार्वती से व्यवहार भूल प्रतीत होने लगा है। जब मैं इसके कथन पर विचार कर

अपने जीवन का निरीक्षण करने लगा तो मेरे ज्ञान चक्षु खुल गये। इसके पश्चात् इसमें कथन का प्रमाण मुझे कलकत्ता के हिन्दू मुस्लिम फसाद के दिनों में मिला। इस लड़की की कर्मनिष्ठा और निर्भयता का परिचय मुझे उन दिनों में पता चला और साथ ही मुझको मुसलमानों (लीगी और नैशनलिस्ट दोनों) के दृष्टिकोण का ज्ञान हुआ। मैं अब पिताजी से अपने झगड़े में अपने को दोषी समझने लगा हूँ और जबसे यहाँ आया हूँ, लाहौर जाकर उनके चरणों पर सिर रख, उनसे क्षमा माँगने की बात सोच रहा हूँ।"

रेवा ने मुस्कराते हुए पूछा, "तो अब पार्वती और नसीम का स्थान यह अनिमा देवी लेने वाली हैं?"

"यदि यह हो सकता तो बहुत अच्छा होता। परन्तु रेवा! तुम इसका इतिहास नहीं जानतीं। यह एक पंजाबी सिख सुन्दर युवा से प्रेम करती है और उससे विवाह में भारी बाधा होने पर भी उसकी प्रतीक्षा कर रही है। इसके दृढ़ निश्चय को देख मैं इससे प्रेम करने का साहस भी नहीं कर सकता। हमारा सम्बन्ध भाई-बहिन का है। इसी नाते से इसने पिछले फसाद में अपनी जान को खतरे में डालकर मेरी रक्षा की थी। इसका प्रमाण, उसके कन्धे पर नसीम की गोली का निशान, सदैव के लिए बन गया है।"

"अनिमा के विषय में लाला बनारसीदास जी ने भी हमें बहुत सी बातें बताई हैं। भैया! हमें प्रसन्नता है कि आप अब इस प्रकार सोचने लगे हैं। मुझको पूर्ण विश्वास है कि पिताजी में और आप में मनमुटाव मिट जायेगा। मैं आपके लाहौर जाने के विषय में उनको आज ही लिख दूँगा।" महेश ने प्रसन्नता प्रकट कर कहा।

"पर नसीम के विषय में क्या होगा? क्या वह पिताजी के घर में रहना पसन्द करेगी?" रेवा का प्रश्न था।

"वह तो शायद मेरे साथ भी रहना पसन्द नहीं करेगी। उसके और मेरे में तलाक हुए बिना नहीं रहेगा। कठिनाई यह है कि उसके

बच्चा होनेवाला है। इसी कारण वह इस विषय में चुप है और बात इस नौबत तक नहीं पहुँची।"

"तब तो सुलह हो जाने में अभी आशा है।" रेवा का कहना था।

"मैंने उससे झगड़ा नहीं किया। उसे मुझसे निराशा हुई है। उसने मुझको जैसा देखा था, वैसा मैं नहीं रहा। इससे उसे मेरी संगति में मिठास मालूम नहीं होती।"

"उसे आपके बच्चे में मिठास प्रतीत होने लगेगी और वह आपको छोड़ नहीं सकेगी।" महेश ने कहा।

४

महात्मा गांधी नोआखाली से लौट आये थे। दो मास तक वे उस इलाके में पैदल घूमते रहे, जिससे वे वहाँ की देहाती जनता के हृदय तक पहुँच सकें। जहाँ जहाँ महात्मा जी गये, वहाँ-वहाँ ही लोगों की भीड़ उनके आगे-पीछे घूमती रही। गाँव गाँव में 'अल्लाह ईश्वर तेरो नाम' की धुन गाई जाती रही और महात्मा जी के चेले चपाटों के कथनानुसार महात्मा जी का यह प्रयास अति सफल रहा। देश भर में महात्मा जी को शान्ति का अवतार कहकर स्मरण किया गया।

जब नई दिल्ली, भंगी कॉलोनी में महात्मा जी अपनी राम धुन गा रहे थे, उनसे दो अढ़ाई मील के अन्तर पर हिन्दुओं के कत्ले आम की योजना बन रही थी। मुस्लिम लीग की मीटिंग, डायरेक्ट ऐक्शन की सफलता के कारणों पर विचार करने के लिए हो रही थी। मिस्टर जिन्ना प्रधान पद पर सुशोभित थे। भिन्न भिन्न प्रान्तों से आये हुए लोग अपना अपना अनुभव बता रहे थे। आसाम से एक दुबला-पतला व्यक्ति महात्मा जी के नोआखाली के दौरे के विषय पर एक प्रश्न के उत्तर में कह रहा था, "महात्मा जी के वहाँ जाने का नतीजा यह हुआ है कि हिन्दू लोग वहाँ से भागने बन्द हो गये हैं। हमारा ख्याल था कि नोआखाली के फसाद के बाद यह इलाका हिन्दुओं से बिल्कुल खाली हो जायगा

और अगर पाकिस्तान के मुतल्लिक वोट लिया गया तो वोट हमारे हक़ में होगा।

"आसाम में बंगाल के मुसलमान न भेजकर विहार के मुसलमान भेजने चाहिएँ। बंगाल में मुसलमानों की तादाद हिन्दुओं से कुछ ही ज्यादा है और विहार में हमारी तादाद कभी भी ज्यादा नहीं हो सकती। वहाँ कुछ और कम हो जाने से नुकसान नहीं हो सकता। विहार के फ़साद से भागे हुए जितने भी लोग इस वक्त कलकत्ता में पड़े हैं, सब आसाम में भेज देने चाहिएँ। यह हमारी खुशनसीबी है कि हमारे गवर्नर एक मुसलमान हैं और अगर उन पर ठीक ढंग से दबाव डाला गया तो वे इस मसला में हमारी मदद करेंगे।

"रहा आसाम में डायरेक्ट ऐक्शन। मैं समझता हूँ कि विहार के वाक़यात ने वहाँ के मुसलमानों को ऐसा डरा दिया है कि वहाँ इसका होना निहायत मुश्किल है। मुझको इसके हमारे सूबा में कामयाब होने का भी उम्मीद नहीं।"

इससे प्रधान इजलास तिलमिला उठा और बोला, "अगर वहाँ के लोग इतने बुज़दिल हैं तो पाकिस्तान में उनका शामिल होना, न होना एक बराबर है। अब आसाम के मसला को छोड़िये। मैं आपको बम्बई के मुतल्लिक कुछ वाक़यात बताना चाहता हूँ। बम्बई, कांग्रेस का मोदी है। कांग्रेस की सब मूवमेंटें बम्बई की मदद से चलती रही हैं। इसलिए कांग्रेस को किसी बात के लिए मजबूर करने के लिए बम्बई का गला दबाना ज़रूरी था। इसलिए बम्बई और अहमदाबाद में डायरेक्ट ऐक्शन जारी कर दिया गया है। वहाँ पर लगभग एक महीने से कारखाने बन्द पड़े हैं। बम्बई और अहमदाबाद के व्यापारी लोग अभी से कांग्रेस के पीछे पड़ रहे हैं। यह ठीक है कि बम्बई में हमारा भी बहुत नुकसान हुआ है मगर पाकिस्तान बनने में बहुत मदद मिली है। वाइसराय की कौंसिल में आधी सीटों का हमको मिलना, यह बम्बई और अहमदाबाद में डायरेक्ट ऐक्शन का पहिला नतीजा है।

"मैं चाहता हूँ कि वहाँ पर इतना फ़साद जारी रहना चाहिए, जिससे मिलें अभी कुछ देर तक बन्द रह सकें। बम्बई के मिल मालिक जब देखेंगे कि बिना पाकिस्तान बने उनका कारोबार चल नहीं सकेगा तो वे कांग्रेस को यह मानने पर मजबूर कर देंगे।"

इस समय बिहार का एक प्रतिनिधि उठकर कहने लगा, "पण्डित जवाहरलाल जी ने बिहार के हिन्दुओं को फ़साद करने पर बहुत कोसा है। महात्मा गांधी ने भी उनकी सख्त इलफ़ाज़ में निन्दा की है। ऐसे मौक़े से फ़ायदा उठाकर हमें सरकार की ओर से मज़लूम मुसलमानों की मदद करवानी चाहिए।"

"इसका इन्तज़ाम कर दिया गया है। वाइसराय की कौंसिल में मुस्लिम लीग के नुमाइन्दों ने सबसे पहिले इसी बात को छेड़ा था और उन्होंने इस मतलब के लिए पचास लाख मञ्जूर करवा लिया है।"

इसके बाद मीटिंग में पञ्जाब का मसला आरम्भ हुआ। पञ्जाब का नुमाइन्दा उठकर कहने लगा, "हमारे यहाँ तो जब तक यूनियनिस्ट पार्टी क़ायम है, डायरेक्ट ऐक्शन हो नहीं सकता।"

"तो फिर इस पार्टी को हटा दो।"

"इस मसला पर ग़ौर करने के लिए तो लिखा था।"

"तो आपकी कोई तजवीज़ नहीं है?"

"तजवीज़ तो है। अगर आप इजाज़त दें तो अर्ज़ करूँ। हमारा कहना है कि यूनियनिस्ट सरकार को बदलने के लिए पुर अमन हलचल करनी चाहिए। जुलूस, जलसे और, जैसा कि पञ्जाब में मशहूर है, 'सियापे' करने चाहिएँ। हिन्दू इस एजीटेशन की मुख़ालफ़त करेंगे और कुदरती तौर पर हिन्दू मुसलमान फ़साद हो जावेगा। वह हमारे डायरेक्ट ऐक्शन का आग़ाज़ होगा।"

"बहुत ख़ूब!" प्रधान ने कहा, "मुझको यह बात मन्ज़ूर है। शर्त सिर्फ़ यह है कि पंजाब को बिल्कुल ख़ाली करवाना है।"

"ऐसा ही होगा। हमारा बस चल गया तो दो महीने में पञ्जाब में

हिन्दू का नाम लेनेवाला नहीं रहेगा।"

प्रधान ने कहा, "मेरा ख्याल है कि सिंध में अभी हलचल नहीं होनी चाहिए। वहाँ के हिन्दू तो सौ फ़ीसदी मुसलमान हो जायेंगे। उनको निकालने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। एक बात और याद रखने की है कि सिक्ख कौम हमारी दुश्मन नम्बर एक है। उसके मरद, औरत व बच्चे, हर एक को मौत के घाट उतारना है। इस कौम का बीज नाश करना है।"

जिस समय ये योजनाएँ बन रही थीं, भंगी कॉलोनी में महात्मा जी हिन्दुओं को डाँट रहे थे। महात्मा जी की प्रार्थना में किसी ने कुरान के पढ़े जाने पर आपत्ति उठाई थी। कुरान पढ़ने के समय एक औरत ने उठकर कहा था, "यहाँ यह नहीं पढ़ा जाना चाहिए।"

"क्यों ?" महात्मा जी का प्रश्न था।

"यह एक हिन्दू मन्दिर है और इसमें कुरान का पढ़ना हिन्दू धर्म के विरुद्ध है।"

"मैं ऐसा नहीं समझता।"

"परन्तु आपको धर्म में व्यवस्था देने योग्य हम नहीं मानते।"

"तो इसमें उपस्थित लोगों का मत ले लिया जाये।"

"क्या धर्म के विषय में वोटों से निर्णय हो सकता है ? धर्म शास्त्रियों को बुलवाकर इस बात में मत लिया जाये।"

"आप मेरे धर्म में मदाखिलत कर रही हैं।"

"महात्मा जी ! यह नहीं। आप कोटि-कोटि हिन्दुओं के धर्म में नाजायज़ दखल दे रहे हैं।"

"मैं तो कुरान सुनूँगा।"

"मैं इसका विरोध करूँगी।"

इस पर दस-बारह नवयुवक उठ खड़े हुए और कुरान पढ़े जाने का विरोध करने लगे। जब यह झगड़ा हो रहा था महात्मा जी के भक्तों में से कोई उठकर गया और टेलीफ़ोन कर पुलिस को बुला लाया। पुलिस

आइ और कुरान पढने में विरोध करनेवाले युवकों को पकड़ कर ले गए और उनके खिलाफ दफा एक सौ सात का मुकद्दमा चला दिया।

उनके गिरफ्तार होने के पश्चात् महात्मा गांधी ने कुरान पढ़ने के लिए कहा और पीछे प्रार्थना में विघ्न डालनेवालों को डाँटना आरम्भ कर दिया।

५

यह वही दिन था, जिस दिन चेतनानन्द अपनी बहिन रेवा और महेश से मिला था। अगले दिन इस घटना को चेतनानन्द ने समाचार पत्र में पढ़ा तो उसका रक्त उबलने लगा। वह सोचता था कि दूसरे कांग्रेसी चाहे कितने भी खराब हों पर महात्मा गांधी तो शान्ति और सत्याग्रह के अनुयायी हैं। उसे पहिले तो यह समाचार असत्य ही प्रतीत हुआ। उसने बाजार में जाकर दूसरे समाचार पत्र खरीदे। सब में इस समाचार को एक समान लिखा पाकर क्रोध से उतावला हो वह महात्मा जी के निवास-स्थान पर जा पहुँचा। जाते ही उसने महात्मा जी के आस पास रहनेवाले लोगों से महात्मा जी से भेंट करने की स्वीकृति माँगी। यह सुन महात्मा जी के प्राइवेट सेक्रेटरी बाहर आ गए और पूछने लगे, "आप कौन हैं?"

चेतनानन्द ने भेंट की स्वीकृति प्राप्त करने के लिए कह दिया, "मैं बंगाल सरकार का पब्लिसिटी ऑफिसर हूँ।"

भेंट तुरन्त हो गई। चेतनानन्द देख रहा था कि कई खद्दरधारी वहाँ पर घण्टों से बैठे थे। उन सबको छोड़कर चेतनानन्द को भेंट का अवसर मिल गया।

"आपका इस्म शरीफ क्या है?" महात्मा जी का पहिला प्रश्न था।

"चेतनानन्द।"

"ओह! मैं समझा था कि आप कोई मुसलमान हैं। अच्छा खैर। आप जल्दी करिए, क्या काम है?"

चेतनानन्द इस बात से तो सन्न रह गया। उसने ज़रा थककर कहा, "यदि मैं मुसलमान होता तो आपको जल्दी नहीं थी क्या ? आपको एक हिन्दू से बात करने में भी दुःख होता है ?"

"नहीं! नहीं! यह बात नहीं। आप जानते हैं कि मुझे काम बहुत रहता है। इसलिए आप काम की बात करिए।"

चेतनानन्द ने भी समय व्यर्थ न खोने का विचार कर, इस बात को छोड़ दिया और अपने आने का उद्देश्य कहने के लिए, जेब से समाचार पत्र निकालकर महात्मा जी के सम्मुख रखकर पूछने लगा, "क्या यह सत्य है ?

"हाँ, यह सब सत्य है।"

"आपकी प्रार्थना में ये लोग पकड़े गए हैं ?'

"हाँ।"

"इन्होंने किसी को मारा-पीटा तो नहीं था ?"

"इन्होंने प्रार्थना में बाधा डाली थी।"

"पर इनके विरुद्ध तो दफा १०७ की कार्यवाही हो रही है।"

"यह देखना मेरा काम नहीं है।"

"पर यह तो अन्याय हो गया है और आपकी प्रार्थना में।"

"मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं सरकार नहीं हूँ। इन पर कौन दफा लग सकती है, यह देखना मेरा काम नहीं है।"

"पर महात्मा जी! आपकी प्रार्थना में से गिरफ्तारियाँ हों और आप सहन करें, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। शायद आप उन युवकों को छुड़ाने के लिए आमरण व्रत रखेंगे ?"

महात्मा जी चुप कर रहे। इसी समय महात्मा जी के प्राइवेट सेक्रेटरी ने चेतनानन्द को कहा, "आपका समय हो गया है।"

"पर मैं तो बहुत जरूरी बातचीत करने आया हूँ। मैं चाहता हूँ महात्मा जी सरकार के इस अनुचित हस्तक्षेप को हटवाने के लिए व्रत रखें। मैं तो उनके साथ व्रत रखने आया हूँ।"

"पर माई साहब ! सरकार तो अब अपनी है। जब बेगानी थी, तब तो सत्याग्रह ही ठीक था, परन्तु अब जो कुछ यह कर रही है, सब हमारी भलाई के लिए ही है।"

'तब तो और भी ज़रूरी है कि सत्याग्रह किया जाये। अपनी सरकार तो तुरन्त मान जायेगी। सब बहुत लम्बा नहीं चलेगा।"

"पर कोई बात भी तो हो ?"

"इससे भी बढ़कर कोई बात हो सकती है क्या ? महात्मा जी की प्रार्थना में पुलिस आए और प्रार्थना करनेवालों को पकड़ कर ले जाये। भला इस प्रकार काम कैसे चलेगा ? उन लड़कों को छुड़ाना चाहिए। उन्होंने कोई बुरी बात नहीं की।'

"अच्छा, अच्छा महाराज ! चलिए ! अन्य मिलनेवाले बहुत बाहर बैठे हैं।"

विवश चेतनानन्द बहुत निराश हो होटल को, जहाँ वह ठहरा हुआ था, लौट आया। मार्ग में और होटल में भी जब तक अनिमा नहीं आई, वह गम्भीर विचार में पड़ा रहा। वह सोचता था कि महात्मा जी तो विचार स्वतन्त्रता और सत्याग्रह के पुजारी हैं। उन्होंने सत्याग्रह करनेवाले लड़कों को पकड़वा दिया सो अत्यन्त विस्मय करने की बात है। सबसे बड़ी बात यह थी कि उन पर दफा १०७ का मुकद्दमा बनाया गया था। महात्मा जी जानते थे कि उन्होंने कोई फसाद नहीं किया। दूसरे शब्दों में उन पर अन्याय हो रहा है और महात्मा जी चुपचाप बैठे हैं। वह मन में सोचता था कि क्या महात्मा जी भी दूसरों की भाँति सत्य और न्याय का ढोंग करते हैं। जब वह इस परिणाम पर पहुँचता था तो काँप उठता था। जब महात्मा ऐसे हैं, तो उनके शिष्य क्या होंगे ? इन लोगों पर कितना भरोसा करना चाहिए और इनसे क्या आशा रखनी चाहिए।

आज सायं अनिमा आई तो उसे चेतनानन्द का मुख उतरा हुआ दिखाई दिया। उसने चिन्ता के भाव में पूछा, "यह आज क्या हो रहा है ?"

"आज मुझे जीवन की सबसे बड़ी बात में धोखा हुआ है। वकालत पास करने के बाद पाँच वर्ष मैंने एक थोथे आदमी के पीछे व्यर्थ खोए हैं। मैं उसे महात्मा समझता था, परन्तु वह तो सर्वथा साधारण-सा व्यक्ति ही निकला है। मुझे अपनी मूर्खता पर भारी पश्चात्ताप हो रहा है।'

"कौन हैं वे, जिनसे आपको इतना धोखा हुआ है?

"आज हिन्दुस्तान में केवल एक ही तो महात्मा हैं। मेरा मतलब महात्मा गांधी से है। कल उनकी सभा में कुछ लड़कों ने कुरान पढ़े जाने का विरोध किया। इस पर उनको पुलिस बुला पकड़वा दिया गया। जिस बात में महात्मा गांधी की महिमा थी, उसी में वे असत्य सिद्ध हुए। दूसरे राजनीतिक नेताओं की बात न मानकर महात्मा जी के पीछे तो मैं इसी लिए लगा था कि वे सत्य के साक्षात् अवतार और शान्ति के सबसे बड़े समर्थक हैं। मुझे आज पता चला है कि वे अपने विरुद्ध न तो सत्याग्रह सहन कर सकते हैं, न ही वे किसी दूसरे के दृष्टिकोण को समझने की क्षमता रखते हैं।'

"पर इसमें निराश और उदास होने की क्या आवश्यकता है? कई बार मनुष्य धोखा खाता है। जब किसी को ठीक वस्तु का ज्ञान प्राप्त हो तो उसे उदास होने के स्थान प्रसन्न होना चाहिए। महात्मा लोग भी तो संसार के मनुष्य ही होते हैं और भूल कर सकते हैं। यह बात निर्विवाद सत्य है कि महात्मा जी की पूर्ण योजनाएँ असफल हुई हैं। उनके प्रति पादित सिद्धान्त असत्य सिद्ध हुए हैं। अहिंसात्मक सत्याग्रह अफ्रीका में निष्फल हुआ, पश्चात् १९२१ में असफल रहा, १९३१-३२ का आन्दोलन व्यर्थ गया और १९४२ में भी चल नहीं सका। वास्तव में महात्मा जी स्वयं भी अपनी योजनाओं की व्यर्थता और अपने सिद्धान्तों की असत्यता को समझने लगे हैं। यद्यपि वे अपनी असफलता को मानते नहीं, इस पर भी उनकी अन्तरात्मा, इस असफलता का भान करती प्रतीत होती है। यही कारण है कि वे अपने विरुद्ध न तो किसी की बात सुन सकते हैं और न ही अपने पर आक्षेप सहन कर सकते हैं।"

"बहुत विचित्र है। महात्मा को तो मन, वचन और कर्म से समान होना चाहिए। इस पर भी, अनिमा देवी! आपकी सूझ और परन्तु स्थिति को समझने की शक्ति की मैं दाद दिए बिना रह न सकता। आज मैंने उनसे कहा कि आपकी प्रार्थना में सत्याग्रह करनेवाले पर दफा १०७ की कार्यवाही हो रही है तो बोले कि वे सरकार नहीं हैं। तो यह सुनकर चकित ही रह गया था। वे तो कभी भी सरकार नहीं हुए फिर पहिली सरकारों के विरुद्ध वे क्यों इतना झगड़ा करते रहे हैं? मुझे उनकी बात समझ नहीं आई थी, परन्तु आपके उनकी मानसिक अवस्था के विश्लेषण से मैं समझ गया हूँ कि उनकी अन्तरात्मा उनको कह रही है कि पहिले वे ग़लती करते थे।"

"केवल यही नहीं, प्रत्युत् यह भी है कि पहिले वे जानते थे कि सरकार नहीं थे और अब वे साक्षात् सरकार हैं। इसी से जो कुछ सरकार के विरुद्ध वे पहिले कर सकते थे, अब नहीं करना चाहते। उनके सत्याग्रह, सत्य इत्यादि सब बातें दूसरों के लिए थीं, अपने लिए नहीं।'

"बहुत विस्मयजनक बात है। समझ नहीं आता कि क्या मानूँ और क्या न मानूँ?"

"और भी देखिए। जो कुछ कांग्रेसी नेता कर रहे हैं, सब उनकी राय से कर रहे हैं। इस पर भी समय समय पर वे लोगों को कहते रहते हैं कि वे सरकार नहीं हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि कुछ खराबी हो गई तो उत्तरदायित्व उन पर न हो। जब कांग्रेस कमेटी नेताओं की बात को सुन रद्द करने लगी थी तो वे उनकी सहायता के लिए अपना मौन व्रत तोड़कर भी और कांग्रेस का मेम्बर न होते हुए भी सभा में जा पहुँचे। वैसे कहते रहते हैं कि वे पण्डित जवाहर लाल आदि से सहमत नहीं।"

"देखो अनिमा देवी! मेरा सब प्रयास विफल गया है। इन्हीं महात्मा जी की नीति का अनुकरण करते हुए मैं अपने पिताजी से लड़ पड़ा था। मैं तालीम से बिगाड़ कर बैठा और अब बेकार, बेमददगार और

अपने मन में ही अपने को दोषी अनुभव कर रहा हूँ।"

"रेवा देवी आज मुझे मिलने आई थीं और मेरा धन्यवाद कर रही थीं। मैंने कारण पूछा तो कहने लगीं कि आपसे पूछ लूँ।"

चेतनानन्द हँस पड़ा। अनिमा विस्मय में उसका मुख देखती रही। इस पर उसने कहा, "मैंने तो केवल इतना कहा था कि आपने मेरे विचारों में परिवर्तन उत्पन्न कर दिया है, जिससे मैं पिताजी से क्षमा माँगने लाहौर जा रहा हूँ। शायद इसी कारण वह आपकी सराहना करती होंगी। वास्तव में आप हैं भी इसी योग्य।"

३

लाला जीवनलाल को दो तार मिले। एक महेश का भेजा हुआ था और दूसरा लाला बनारसीदास का। महेश ने लिखा था, "भाई चेतनानन्द परेशानी में हैं। आ जाइए।" बनारसीदास ने कुछ व्याख्या में लिखा था, "चेतनानन्द चौराहे पर पहुँच गया है। आपसे पथ प्रदर्शन लाभ कर सकता है। ज़रूर आइए।"

जीवनलाल महेश के कहने पर शायद न भी आता, परन्तु बनारसीदास जैसे अनुभवी मित्र का कहना वह टाल नहीं सका। तार मिलते ही हवाई जहाज़ द्वारा दिल्ली पहुँच गया। हवाई जहाज़ के अड्डे से वह सीधा बनारसीदास की कोठी पर पहुँचा। बनारसीदास उसके आने की आशा अगले दिन करता था, परन्तु उसे उसी सायंकाल अपनी कोठी में प्रवेश करते देख समझ गया कि बाहरी कठोर आवरण के भीतर पिता का स्नेहमय हृदय अभी भी जीवित है।

बनारसीदास बाहर आकर जीवनलाल का स्वागत करने लगा। दोनों गले मिले और फिर कोठी में पहुँचे तो रेवा और महेश को टेलीफोन कर दिया। वे पिक्चर देखने के लिए जाने वाले थे कि उनको टेलीफोन मिला। वे तुरन्त पिता को मिलने चले आए।

स्वास्थ्य समाचार पूछने के पश्चात् जीवनलाल ने चेतनानन्द के

विषय में पूछा, "भाई बनारसीदास ! चेतनानन्द की क्या बात है ?"

"यह तो महेश जी बतायेंगे । तब तक हम चाय पी लें । फिर उससे मिलने चलेंगे ।"

सकेत पा महेश ने बता दिया, "हमको तो मालूम नहीं था कि भैया यहाँ दिल्ली में हैं । परसों हम चाय पर यहाँ आए तो इनके आफिस की एक स्टीनो-टाइपिस्ट श्रीमती अनिमा देवी को हमारा परिचय प्राप्त हो गया । वे भैया के अधीन कलकत्ते में स्टीनो रह चुकी थीं और यहाँ पर उनसे मिलती रहती हैं । कल वे उनसे मिलने गई तो रेवा के विषय में बात हो गई । इससे भैया को हमारे यहाँ होने का पता चल गया और उन्होंने हमको टेलीफोन कर दिया । हम दोनों कल उनसे मिले थे । भैया यहाँ एक छोटा सा अटैची केस और बिस्तर लेकर होटल के सबसे सस्ते कमरे में ठहरे हुए हैं । उस कमरे को ही देखकर अनुमान लग सकता है कि उनकी आर्थिक अवस्था बहुत दुर्बल है । भैया अपने पूर्व के व्यवहार पर पश्चात्ताप भी करते थे और मैंने उनसे वचन दिया था कि आपको पत्र लिखूँगा । आज जब लाला जी से मिलने आए तो हमने उनसे सब बात कही । इस पर उनकी सम्मति यह हुई कि आपको तार देकर यहाँ बुला लिया जाये ।'

महेश और लाला जीवनलाल इन्द्रजीत की गाड़ी में बैठकर रॉयल होटल में जा पहुँचे । अनिमा बैनर्जी चेतनानन्द से उस दिन की भगी कॉलोनी वाली घटना की विवेचना कर ही रही थी कि उसका पिता और रमेश कमरे के दरवाजे पर आ खड़े हुए । अनिमा की पीठ दरवाजे की ओर थी । चेतनानन्द ने पिताजी को देखा तो उठकर उनके पाँव पकड़ा । अनिमा उसे एकाएक उठ और दरवाजे की ओर जाते देख खड़ी हो, घूमकर देखने लगी और महेश के साथ एक साठ पैंसठ वर्ष की आयु के व्यक्ति को देखकर सब समझ गई ।

जीवनलाल ने चेतनानन्द को उठाकर पीठ पर हाथ फेर स्नेह से गले लगा लिया । पश्चात् कमरे में प्रवेश किया । इस समय महेश ने

अनिमा का परिचय कराया।

जीवनलाल ने होटल के कमरे के फरनीचर और चेतनानन्द के सामान पर एक नजर दौड़ाई तो रमेश के कहने की सत्यता जान गया। दो-तीन मिनट तक इधर उधर की बात चीत करने के पश्चात् जीवनलाल ने चेतनानन्द से कहा, "यहाँ आकर तुम बनारसीदासजी से मिलने नहीं गए। मेरा विचार है, तुमको उनसे मिलने चलना चाहिए। क्या अभी चल सकोगे?"

चेतनानन्द उठ चलने को तैयार हो गया। अनिमा भी उठ खड़ी हुई और विदा माँगने लगी। अनिमा के चले जाने के पश्चात् चेतनानन्द अपने पिता रमेश के साथ बनारसीदासजी की कोठी पर आ गया।

मार्ग में चेतनानन्द अपने विचारों का संकलन करता रहा। वह अपनी भूल को उपयुक्त शब्दों में अपने पिता के सम्मुख रखना चाहता था। जीवनलाल भी सोच रहा था कि यदि दिन भर का भूला रात को भी घर वापस आ जाय, तो प्रसन्नता की ही बात है।

बनारसीदास जी की कोठी में पहुँच चेतनानन्द ने अपने राजनीतिक विचारों में निर्भ्रान्त होने की पूर्ण कथा सुना दी। जब से वह बंगाल सरकार का पब्लिसिटी आफ़िसर बना था, तब से लेकर उस दिन के महात्मा गाँधी से भेंट करने तक का पूर्ण विवरण और अनुभव वर्णन कर उसने बताया, "पिताजी, मैं रुपये-पैसे से दुःखी होकर पश्चाताप नहीं कर रहा। अभी मेरा त्याग-पत्र बंगाल सरकार ने स्वीकार नहीं किया। इसके अतिरिक्त अभी भी, यदि मैं चाहूँ तो भारत-सरकार में कुछ-न-कुछ काम पा सकता हूँ। परन्तु मेरे दृष्टिकोण में इतना भारी अन्तर आ गया है कि मैं अब न तो कांग्रेस-सरकार से सहयोग कर सकता हूँ और न ही बंगाल की मुस्लिम सरकार से।

'मैं समझता था कि हिन्दू-मुसलमान एक ही जाति है, परन्तु कलकत्ता, नोआखाली और बम्बई के झगड़ों को देख मेरा भ्रम दूर हो गया है। इच्छित लक्ष्य और वस्तु स्थिति में अन्तर दिखाई देने लगा है।

"मैं समझता था कि कांग्रेस एक राष्ट्रीय संस्था है। आज मेरा यह भ्रम भी भंग हुआ है और मुझको दिखाई देने लगा है कि कांग्रेस एक सम्प्रदाय बन गई है। इस सम्प्रदाय के गुरु, पीर, मुर्शिद महात्मा गांधी हैं और उन पर सम्प्रदाय के लोगों की अगाध श्रद्धा है। यह कांग्रेसी सम्प्रदाय हिन्दू विरोधी और मुस्लिम-परस्त है।

"मैं समझता था कि मैं कांग्रेस में सम्मिलित होकर देश तथा जाति की सेवा कर रहा हूँ। मेरा यह भ्रम भी दूर हुआ है और मुझको ऐसा प्रतीत होने लगा है कि मैं देश का गला काटनेवाली छुरी की पैनी धार बना हुआ था।

'मैं अपने किए पर पश्चाताप कर रहा हूँ और अपने भावी जीवन के मार्ग को स्पष्ट देखने लगा हूँ। यह मार्ग गांधीवाद से दूसरी ओर जाता है।'"

"देखो चेतनानन्द! यदि वास्तव में तुम यह समझ गये हो तो मैं ईश्वर का धन्यवाद करता हूँ। मनुष्य को ज्ञान देनेवाला वही है परन्तु मैं तुमको एक बात और बताना चाहता हूँ। मेरी विचारधारा का आधार यही बात है। मैं समझता हूँ कि देश एक निर्जीव वस्तु है। यहाँ नदी नाले हैं। पहाड़ और झीलें हैं। हरे भरे मैदान और फूलों से लदी घाटियाँ हैं। ये सब बहुत सुन्दर हैं, परन्तु इनसे भी अधिक सुन्दर स्थान अन्य देशों में हो सकते हैं। अतएव देश प्रेम इन नदी-नालों और पर्वत झरनों से प्रेम को नहीं कहते। देश प्रेम यहाँ बसे हुए लोगों से प्रेम को कहते हैं। भारत में रहनेवाले हिन्दू हैं और जो संस्था उनका ही नाश करनेवाली है, वह देशहितैषी नहीं हो सकती। साथ ही यह भी याद रखना चाहिए कि हिन्दू एक जन-समूह है। यह पशुओं का झुण्ड नहीं है। प्रयोजन यह है कि हिन्दू भी अपना आचार व्यवहार और विचार रखते हैं। इस देश में रहनेवाले अरमी प्रतिशत लोगों, अर्थात् हिन्दुओं के आचार और विचारों की हत्या करनेवाली संस्था अथवा व्यक्ति देश का प्रेमी नहीं, देश का घातक बन जाना चाहिए।

'मैंने तुमको घर से नहीं निकाला। उस स
सब बातों को समझते नहीं थ, तब भी तुमको
कहता था। अब भी यही ही दे सकता हूँ। दान
दिया है। अब वापिस नहीं लूँगा।

"तुम युवा हो, समझदार हो, पढ़े लिखे हो
सीधा मस्तक कर चल नहीं सकते? चलो मेरे सा
डुबकी लगाओ। अभी भी इसके मंथन से रत्न नि